ज्ञान सरोवर

भाग 3

श्रावण 1886 (अगस्त 1964)

मूल्य—साढ़े चार रुपये

निदेशक, प्रकाशन विभाग, पुराना सचिवालय, दिल्ली-6, द्वारा प्रकाशित और
प्रबन्धक, भारत सरकार मुद्रणालय, फरीदाबाद, द्वारा मुद्रित

भूमिका

देश में हमारी अपनी सरकार के बनते ही उसका ध्यान जिन कामो की तरफ गया, उनमे से एक यह था कि नए और कम पढे लोगो के लिए ऐसी किताबे लिखवाई जाए, जिन्हे वे आसानी से पढ और समझ सके और उनसे लाभ उठा सके। हमारे देश मे हजारो वर्ष से किताबो के बिना पढाई का रिवाज रहा है। पर अब कई कारणो से उस तरह की पढाई उतना काम नही दे सकती, जितना पहले देती थी। अब किताबो की माग और उनका प्रभाव दिन-दिन बढता जा रहा है। इसलिए आम लोगो के लिए ठीक तरह की किताबो का तैयार किया जाना और भी ज़रूरी हो गया है।

सब लोगो को पढना-लिखना सिखाने की नई सरकारी नीति ने इस तरह की किताबो को जल्दी-से-जल्दी तैयार कराने की माग को और बढ़ा दिया है। पढे-लिखे लोगो की गिनती देश मे बढती जा रही है। अगर उन्हे अच्छी किताबे नही मिलेगी तो पढाई-लिखाई के फैलने से देश का बल बढने की जगह हमारी कठिनाइया बढ सकती है। इन नई किताबो के लिखवाने मे इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि जहा उन्हे पढ कर लोगो को अपनी सामाजिक और आर्थिक हालत सुधारने मे मदद मिले, उनमे बुद्धि और विज्ञान की कद्र बढे और उनमे वैज्ञानिक मनोवृत्ति का विकास हो, वहा ऐसा भी न हो कि भारत की पुरानी सभ्यता मे जो अच्छी बाते है उन्हे वे भूल जाए।

इस माग को पूरा करने के लिए भारत सरकार ने जनसाधारण के लिए 'ज्ञान सरोवर' नाम से एक विश्वकोश लिखवाने की व्यवस्था की है। इस विश्वकोश की तैयारी मे यह ध्यान रखा गया है कि आम लोग इसे पढ़े तो आजकल की दुनिया मे जो नए-नए आर्थिक और राजनीतिक विचार पैदा हो रहे है, उनको समझने लगे और विज्ञान तथा तकनीक मे जो दिन-दिन बढ़ोतरी हो रही है उसे भी जान ले। इस तरह अपनी जानकारी बढ़ाकर

हमारे देश के लोग नए भारत के और अच्छे नागरिक बन सकेंगे। इन सब बातो को इस विश्वकोश मे ऐसी भाषा मे बताने की चेष्टा की गई है, जो आम लोगो की भाषा है और जिसे सब आसानी से समझ सकते हैं। हमे आशा है कि यह विश्वकोश इन बातो को पूरा करेगा और हमारे देश के लोगो को इस तरह की बाते बताएगा, जिनसे वे अपनी पुरानी सभ्यता की सचाइयो को पूरी तरह समझते हुए आजकल के विज्ञान और वैज्ञानिक की कद्र करने लगे।

हुमायू कबीर

ज्ञान सरोवर—तीसरा भाग

विषय-सूची

शुक्र, मंगल, बृहस्पति, शनि और दूसरे ग्रह

प्राय सूर्योदय से कुछ पहले पूर्व में अक्सर एक बहुत चमकीला तारा दिखाई देता है। इसकी चमक इतनी तेज होती है कि एक बार पहचान लेने पर उसे भुलाया नहीं जा सकता, और कभी-कभी तो इसकी रोशनी में आदमी अपनी परछाईं तक देख सकता है। इसका नाम 'शुक्र' है। लोग इसे 'सुकवा' और 'भोर का तारा' भी कहते हैं। उत्तर-प्रदेश के पूर्वी इलाके में एक कहावत मशहूर है:

शुक्र जब सूर्य से पहले उगता है तब वह प्रात काल पूर्व मे दिखाई देता है। इसीलिए उसे 'भोर का तारा' कहते है। जब वह सूर्य के बाद उगता है, तब सूर्य के प्रकाश के कारण दिखाई नही देता। वैसी हालत मे वह दिन भर सूर्य के पीछे-पीछे पश्चिम की ओर चलता रहता है, और जैसे ही सूर्य डूबता है, वैसे ही दिखाई देने लगता है। शाम को दिखाई देने के कारण कुछ लोग उसे 'साझ का तारा' भी कहते है। और समझते है कि 'साझ का तारा' 'सुबह के तारे' से अलग है। इस भूल की एक वजह यह भी है कि शुक्र से कुछ ही कम चमकीला 'बृहस्पति' नाम का एक दूसरा ग्रह है, और वह भी कभी-कभी सवेरे पूर्व मे और शाम को पश्चिम मे दिखाई देता है। इनमे से जब एक सुबह और दूसरा शाम को दिखाई पडता है, तो देखने वाले अक्सर धोखा खा जाते है। वे 'भोर के तारे' और 'साझ के तारे' को अलग-अलग समझने लगते है। पर असल मे 'भोर का तारा' और 'साझ का तारा' दोनो शुक्र ही है।

कभी-कभी उस समय जब सूर्य के चारो ओर घूमते हुए तिरछे देखने पर उसके बहुत पास दिखाई पडता है, तब वह सूर्य से कुछ ही मिनट पहले उगता है और उस के डूबने के कुछ ही मिनट बाद डूब जाता है। ऐसी दशा मे वह न सुबह दिखाई देता है, न शाम को।

पृथ्वी और शुक्र दोनो ही सूर्य के चारो ओर घूमते है, इसलिए कभी-कभी यह होता है कि शुक्र, सूर्य और पृथ्वी के ऐसा बीच मे आ जाता है कि उस समय शुक्र हमे सूर्य के मुह पर एक काला धब्बा-सा दिखाई देता है, और हम उसे सूर्य पर चलता हुआ देख सकते है। जब कभी वह ठीक सूर्य के सामने पडता है तब उसे सूर्य के आर-पार की पूरी लम्बाई पार करनी पडती है। पर अक्सर वह सूर्य के किनारे के एक भाग को पार करता हुआ निकल जाता है। ज्योतिष के जानकारो ने

1889 में लिया गया शुक्र का चित्र
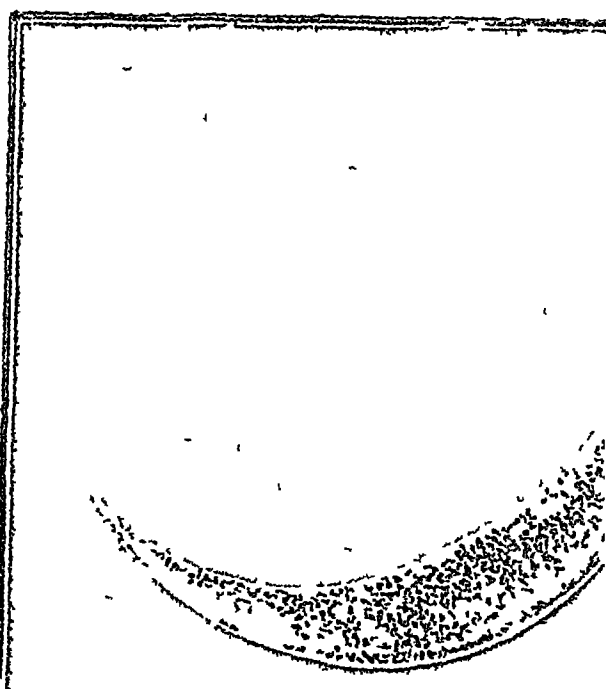
हिसाब लगाया है कि अगली बार सन् 2004 ई० मे शुक्र सूर्य के सामने आकर उसको करीव-करीव वीच से पार करेगा । इस काम मे उसे कुछ ही घटे लगेगे ।

1874 और 1882 म सूय पर से शुक्र का मार्ग

आख से देखने मे शुक्र इतना सुन्दर दिखाई देता है कि यूनानी लोगो ने उसका नाम 'वीनस' रख दिया था, जिसे वे सुन्दरता की देवी मानते थे ।

लेकिन दूरवीन से देखने पर शुक्र मे न तो कोई सुन्दरता दिखाई देती है और न कोई और खास चीज । केवल उसकी वहुत चमकीली और सपाट सतह नजर आती है । इसकी वजह यह है कि शुक्र घने वादलो से ढका है । वे वादल धूप मे खूव चमकते है, और उनका घना सिलसिला ही शुक्र की सतह मालूम देता है । आज तक कोई यह नही देख पाया कि उन वादलो के उस पार क्या है । या यह कि शुक्र की भूमि कैसी है ? दूरवीन से देखने पर शुक्र मे भी चाद की तरह कलाए दिखाई देती है यानी शुक्र भी चाद की तरह घटता-वढता रहता है । वह कभी दूज के चाद की तरह हसिया जैसा, तो कभी आधा और कभी पूरा दिखाई देता है ।

दूसरे ग्रहो की तरह ही शुक्र की चाल भी आसमान मे तारो के वीच एक जैसी और वरावर एक ही ओर को नही दिखाई देती । सूर्य के खिचाव के घेरे मे फसा होने के कारण मोटे तौर से वह वरावर गोलाई मे ही चलता रहता है, लेकिन चलती हुई ज़मीन से देखने पर वह कभी एक दिशा मे, कभी उल्टी दिशा मे, चलता हुआ जान पड़ता है । वह तारो के बीच आम तौर से पश्चिम से पूर्व की ओर चलता रहता है . पर वह कभी-कभी रुक कर पीछे की ओर भी चलता जान पडता है और फिर रुक कर आगे की ओर वढता हुआ दिखाई देता है । यहा यह याद रहे कि तारो के हिसाव से चलने की वात हो रही है । पृथ्वी के हिसाव से तो ग्रह और तारे सभी पूर्व से पश्चिम की ओर चलते रहते है और एक दिन मे पूरा चक्कर लगा लेते है । यहां एक चित्र दिया जा रहा है, जिसमे यह दिखाया गया है कि सन् 1956 मे 1 जुलाई से 18 नवम्वर तक शुक्र अपने रास्ते पर किस तरह चला । इसे देखने से शुक्र का आगे-पीछे चलना साफ मालूम हो जाता
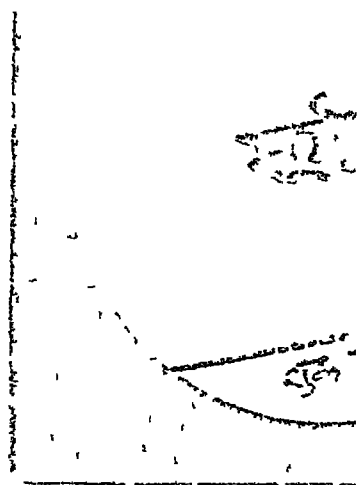
है। चित्र मे हर दस दिन के वाद शुक्र जितनी दूरी तै करता है, वह दूरी दिखाई गई है। चित्र को देखने से पता चलता है कि शुक्र कभी धीरे-धीरे चलता है तो कभी वहुत तेज। इस चित्र को देख कर यह पता चलता है कि शुक्र 9 अक्तूबर से 19 अक्तूबर तक वहुत धीरे-धीरे चला और उन दस दिनो मे उसने बहुत कम दूरी तै की। लेकिन 9 नवम्बर से 18 नवम्बर के बीच वह तेज चल कर काफी आगे वढ गया।

शुक्र लगभग सात महीने मे सूर्य के चारो ओर एक चक्कर लगा लेता है। पर यह ठीक-ठीक नही मालूम कि उसे अपनी धुरी पर एक चक्कर लगाने मे कितना समय लगता है। कुछ लोगो ने अनुमान लगाया है कि वह भी अपनी धुरी पर पृथ्वी की ही तरह 24 घटे मे एक चक्कर लगाता है। पर दूसरे लोगो की राय मे बुध की तरह शुक्र का भी एक ही रुख हमेशा सूर्य के सामने रहता है। उसका दूसरा रुख कभी सूर्य के सामने नही आता।

पृथ्वी की अपेक्षा शुक्र सूर्य के अधिक निकट है। इसलिए वहा सूर्य की गर्मी और प्रकाश अधिक पहुचता होगा। पर चूकि शुक्र घने वादलो से ढका हुआ है इसलिए यह भी सम्भव है कि वहा अधिक गर्मी न पडती हो और वहा भी पृथ्वी के जीव-जतुओ जैसे जीव-जतु रहते हो।

शुक्र की गति
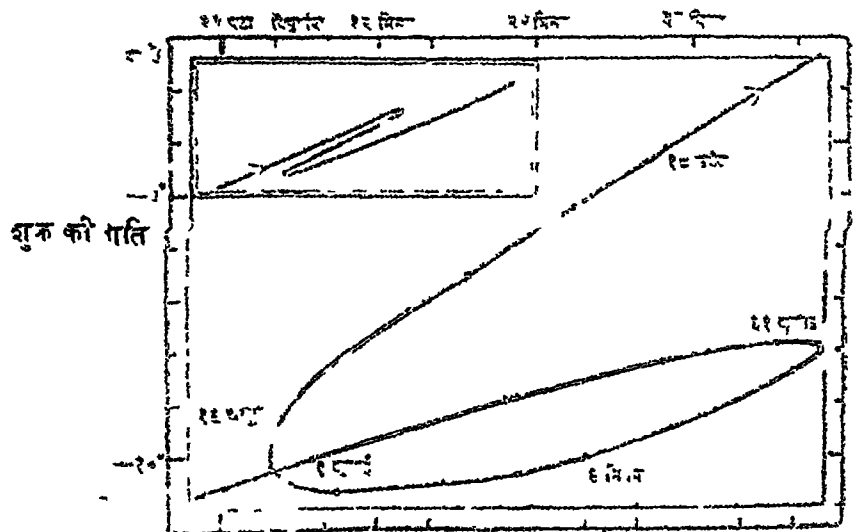
पृथ्वी

सूर्य से निकटता के हिसाब से ग्रहो मे तीसरा नम्बर पृथ्वी का है, जिसके बारे मे 'ज्ञान सरोवर' के पहले भाग मे लिखा जा चुका है ।

मंगल

आकाश मे मामूली तारो से अधिक चमकीला एक लाल तारा दिखाई देता है, जो असल मे तारा नही है, वह मगल ग्रह है । सूर्य से दूरी के हिसाब से वह चौथा ग्रह है । वह हमारी पृथ्वी का लगभग आधा है । उसके आर-पार की लम्बाई 4,216 मील है । वह सूर्य के चारो ओर लगभग दो साल मे एक चक्कर लगाता है । मगर हमारी पृथ्वी की भाति वह भी अपनी धुरी पर 24 घटे मे ही एक चक्कर पूरा कर लेता है ।

जिस प्रकार हमारी पृथ्वी का उपग्रह चन्द्रमा है, उसी प्रकार मगल के भी दो उपग्रह या चन्द्रमा है, जो हमेशा उसके चारो ओर चक्कर काटते रहते है । मगल के चन्द्रमा बहुत छोटे-छोटे है । उनके आर-पार की लम्बाई दस मील से अधिक नही है । उनमे आकर्षण शक्ति भी नाम भर की है । उन पर पहुच कर आदमी बहुत हल्का हो जाएगा । इतना हल्का कि यदि वह वहा से छलाग लगाए तो उसके पैर फिर उन चादो की सतह पर नही पडेगे, बल्कि वह उन्हे पार करके न जाने आकाश मे कहा-का-कहा खो जाए ।

पृथ्वी (बाए हाथ) के मुकाबले में मगल का आकार

बहुत बडी दूरबीन से देखने पर मंगल नारगी के रग का एक बडा-सा गोला दिखाई देता है। मगर शायद उसके दोनो ध्रुव बर्फ मे ढके है, इसलिए वे सफेद दिखाई देते है। जब वायुमडल बहुत साफ और स्थिर होता है तब हमे मगल पर काली-काली लकीरो का जाल-सा फैला हुआ दिखाई देता है। वे लकीरे लम्बी और सीधी मालूम होती है। मगर आम तौर से वे बडी-बडी दूरबीनों से भी साफ नही दिखाई देती, न वे मगल के फोटो मे ही नजर आती है।

कुछ लोगो का खयाल है कि मगल पर नहरे है और वे नहरे ही हमे काली-काली लकीरो जैसी दिखाई देती है। उनका कहना है कि अगर वहा नदी-नाले होते तो वे काली लकीरे सीधी न दिखाई देकर, टेढी-मेढी दिखाई देती। इसलिए वे प्रकृति की बनाई हुई नही हो सकती, और उन्हे जरूर उन लोगो ने बनाया होगा, जो वहा रहते होगे। इन लोगो का यह भी कहना है कि सूर्य के परिवार के सभी ग्रह लगभग एक ही साथ पैदा हुए होगे। शुरू मे पृथ्वी, मगल, आदि सभी ग्रह सूर्य से छिटके हुए पदार्थ से बने होगे। इसलिए मगल भी शुरू-शुरू मे वैसे ही चमकता-दहकता रहा होगा जैसे शुरू मे पृथ्वी तपती-दहकती थी। पर चूकि मगल पृथ्वी से छोटा है और पृथ्वी की अपेक्षा सूर्य से दूर भी है, इसलिए वह जल्दी ठडा हो गया होगा, और वहा पृथ्वी से पहले जीव-जतु भी पैदा हो गए होगे।

इसी तरह मगल पर का पानी भी पहले सूखा होगा। पृथ्वी पर तो, बहुत कुछ सूखने के बाद भी, अभी काफी पानी मौजूद है। पृथ्वी बडी है, इसलिए उसमे खीचने की शक्ति भी अधिक है। इस वजह से जो भाप पृथ्वी से उठती है वह बहुत दूर नही उड पाती। पर मगल छोटा है। इसलिए वहा पानी से उठी हुई भाप उड कर वहा की

1894 में बनाया गया मंगल का एक चित्र

हवा के घेरे से बिल्कुल बाहर हो जाती होगी और धीरे-धीरे वहा पानी की कमी पडने लगी होगी। तब पानी की उस कमी को पूरा करने के लिए वहा के इजीनियरो ने बडी-बडी नहरे बना कर मगल के उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवो से पानी लाने का प्रबन्ध किया होगा।

लेकिन आजकल के ज्योतिषियो की राय है कि मगल पर कोई नहर नही है। कही-कही धब्बे ज़रूर है, जो साफ नही दिखाई देते। उन्हे देर तक देखने की कोशिश मे आखो को यह धोखा हो जाता है कि वहा लकीरे है। इस बात को सिद्ध करने के लिए एक ज्योतिषी ने एक कागज पर अलग-अलग, बहुत से छोटे-छोटे धब्बे लगा दिए और उसको बहुत दूर रख कर उसने लोगो से देखने को कहा। बहुत दूर रखे जाने के कारण कागज के वे नन्हे धब्बे दूरबीन से भी अलग-अलग नही दिखाई दिए। ऐसा लगा कि कागज पर लम्बी सीधी लकीरे खिची है। इस तरह उस ज्योतिषी ने साबित किया कि मगल पर जो काली लकीरे दिखाई देती है, वे लकीरे नही है, बल्कि मगल की सतह के धब्बे है।

आजकल के ज्योतिषी यह भी नही मानते कि मगल पर जीव-जतु हो सकते है, क्योकि उनकी राय मे वहा की हालत ऐसी नही है जिसमे कोई जानवर जिन्दा रह सके।

इसमे कोई सदेह नही कि मगल बहुत ठडा है। वह पृथ्वी की अपेक्षा सूर्य से अधिक दूर है। पृथ्वी को सूर्य की जितनी गर्मी मिलती है, मगल को उसकी आधी भी नही मिलती। इसलिए मगल पर गर्मी की दोपहरी मे भी कम-से-कम उतनी ठड होती होगी, जितनी भारत मे फरवरी के महीने मे सुबह-शाम होती है।

मगल पर हवा का घेरा भी इतना पतला होगा कि वहा सास लेना नामुमकिन होगा। पृथ्वी के पाच ही मील ऊचे पहाडो पर चढने मे आदमी को नाक मे हवा से भरा हुआ तोबडा बाध कर, नकली तरीके से सास लेना पडता है। फिर मगल पर तो हवा इतनी पतली होगी जितनी पृथ्वी पर लगभग 11 मील की ऊचाई पर होती है।

यह सही है कि जब मगल के उत्तरी या दक्षिणी ध्रुव की बर्फ पिघलती दिखाई देती है, तब उसके निचले भाग की ओर हरियाली की लकीर-सी उभरती दिखाई देती है। इसका यह मतलब लगाया जाता है कि बर्फ पिघलने पर जब पानी ध्रुवो की ओर से बीच की ओर बहता है, तो वहा हरी काई, घास-पात या अनाज की फसलें उग जाती होगी। लेकिन इसका कोई पक्का सबूत अभी तक नही मिला है।

हो सकता है कि मगल पर हम लोगो जैसे जीव न हो, क्योकि वहा पानी की कमी है और सर्दी वहुत पडती है। पर हमारी पृथ्वी पर ऐसे भी जीव है, जो रेगिस्तान मे रहते है और लगभग विना पानी के ही जीते है। ऐसे पौधे भी है, जो वर्फ से भी ठडे जलवायु मे जीवित रहते है। इन सव वातो को देखते हुए इससे इन्कार नही किया जा सकता कि मगल पर जीव हो सकते है। कुछ भी हो, खोज जारी है, और खोज करने वाले कभी-न-कभी सचाई का पता लगा ही लेते है।

बृहस्पति

शुक्र की तरह बृहस्पति भी वहुत चमकीला ग्रह है। उसकी चमक शुक्र की चमक से थोडी ही कम है। उसे कही-कही गावो मे 'वीफै' कहते है। कभी-कभी लोग उसे ही शुक्र समझ बैठते है, क्योकि दोनो की चमक मे वहुत कम अन्तर है। लेकिन दोनो का अन्तर समझ लेना वहुत सरल है। शुक्र या तो सूर्य के उगने के पहले घटे, दो घटे तक पूर्व मे दिखाई देता है या घटे, दो घटे तक सूर्य डूवने के वाद पश्चिम मे। वह न तो आधी रात मे दिखाई देगा और न बीच आसमान मे। इसके खिलाफ, बृहस्पति कभी-कभी आधी रात मे और बीच आसमान मे भी महीनो दिखाई पडता है। यह जरूर सच है कि वह कभी सुवह को पूर्व मे और कभी शाम को पश्चिम मे भी दिखाई देता है, पर रात के पहले पहर और आखिरी पहर और आसमान के पूर्वी या पश्चिमी भागो के अलावा दूसरे समय और दूसरे भागो मे भी बृहस्पति को चमकते देख कर, धीरे-धीरे शुक्र और बृहस्पति का अन्तर आसानी से समझ मे आ जाता है। शुक्र केवल रात के पहले और आखिरी पहर मे और केवल पश्चिमी और पूर्वी आकाश मे घटे, दो घटे दिखाई देता है।

हिसाव लगाने पर पता चलता है कि बृहस्पति ग्रहो मे सवसे बडा है। सूर्य से बृहस्पति की दूरी पृथ्वी और सूर्य के बीच की दूरी से लगभग पाच गुनी है। बृहस्पति की चमक भी, शुक्र को छोड कर, और सव ग्रहो से अधिक है। पृथ्वी से उसकी दूरी घटती-बढती रहती है। बृहस्पति गोल नही है। वह नारगी की तरह चपटा है। गणित से मालूम हुआ है कि बृहस्पति जिस चीज से बना है वह चीज वज़न मे अपने ही बराबर

पानी की सवा गुनी है। इससे मालूम होता है कि बृहस्पति में गैस और दूसरी हल्की चीजें बहुत हैं।

बृहस्पति की हल्की धारिया छोटी-छोटी दूरबीनो से भी दिखाई देती है। पर बड़ी दूरबीनो से उन धारियो मे कही-कही काली या सफेद चित्तिया भी दिखाई देती है। ये चित्तिया टिकाऊ नही होती। लगभग पन्द्रह दिन देखते रहने से ही पता चल जाता है कि ये बनती-बिगड़ती रहती है। कभी धारियो का एक हिस्सा टूट जाता है और फिर बन जाता है, जिससे पता चलता है कि हम बृहस्पति का ठोस रूप नही देख पाते। उसका ठोस रूप हमेशा घने बादलो से ढका रहता है। हम उस पर छाए बादलो की केवल बाहरी सतह ही देख पाते है। उस सतह पर नए-नए रग भी दिखाई देते है। कुछ धारिया कभी हल्की नीली और कभी नारगी का पुट लिए हो जाती है। पर आम तौर से वे भूरी या सुरमई रग की ही रहती है। अनुमान लगाया जाता है कि बृहस्पति पर मौसम के बदलने से ही बदलते हुए रग दिखाई देते है।

बृहस्पति पर दिखाई पड़नेवाली चित्तियो से पता चलता है कि वह भी अपनी धुरी पर घूमता रहता है। लगभग 10 घटे मे वह एक चक्कर लगाता है। पृथ्वी अपनी धुरी पर 24 घटे में एक बार घूमती है। इसलिए स्पष्ट है कि बृहस्पति की चाल पृथ्वी की चाल से बहुत ज्यादा तेज है और बृहस्पति पृथ्वी से बहुत बड़ा भी है। यही कारण है कि वह पृथ्वी के मुकाबले मे बहुत चपटा हो गया है।

बृहस्पति के अपनी धुरी पर घूमने के बारे मे एक अजीब बात यह है कि पूरा ग्रह समान तेजी से नही घूमता है। धारियो और उनके बीच की चमकीली पट्टियो के घूमने मे अलग-अलग समय लगता है। अन्तर कुछ मिनटो का ही होता है, पर होता जरूर है। इससे भी पता चलता है कि हम बृहस्पति का ठोस रूप नही देख पाते।

पृथ्वी (बाए हाथ) के मुकाबले में बृहस्पति का आकार
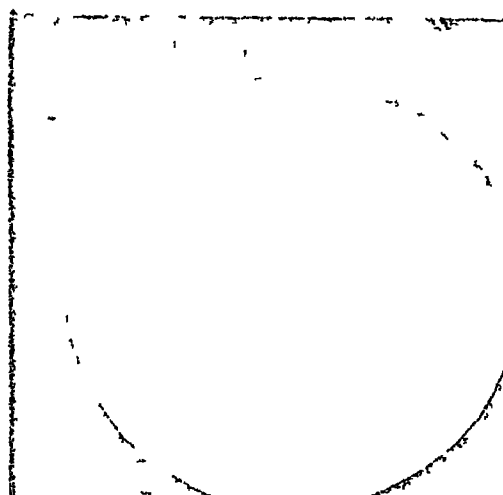
सन् 1857 में बृहस्पति पर एक बडी-सी लाल चित्ती दिखाई पडी थी। बीस साल बाद ज्योतिषियों के बीच वह चित्ती बहुत मशहूर हो गई। उसकी जाच बराबर होती रही, लेकिन उसके बारे में कुछ ठीक पता न लग सका। किसी साल उसका रग साफ लाल दिखाई देता था तो कभी वह ग्राखो से ग्रोझल हो जाती थी, ग्रौर कुछ साल बाद फिर साफ दिखाई देने लगती थी। इससे यह ग्रदाजा लगाया गया कि बृहस्पति की सतह से उभरा हुग्रा वह कोई ऊचा पहाड था जो बादलो को चीर कर ऊपर उभर ग्राया था। लेकिन खोज के बाद यही मानना पडा कि बृहस्पति की धुरी पर इस लाल चित्ती के चक्कर लगाने की मुद्दत तै नही है, इसलिए वह चित्ती बादल का ही टुकडा होगी। लेकिन उसकी लम्बाई तीस हजार मील ग्रौर चौडाई सात-ग्राठ हजार मील है। ग्रगल-बगल की धारिया उसकी वजह से ऊपर-नीचे हट गई हैं। जब वह चित्ती दिखाई नही देती थी तब भी धारियो के बीच की खाली जगह से मालूम होता रहता था कि वह गायब नही हुई है। बृहस्पति की सतह पर के दूसरे सब चिह्न बनते-बिगडते रहते हैं, लेकिन वह लाल चित्ती ग्रभी तक बनी हुई है।

बृहस्पति की रोशनी की जाच से पता चलता है कि वहा के हवा के घेरे में ग्रमोनिया ग्रौर मिथेन नाम की गैसे बहुत हैं। ग्रमोनिया वही गैस है जो नौसादर ग्रौर चूने में थोड़ा-सा पानी मिलाने से निकलती है ग्रौर जिसकी महक इतनी तेज होती है कि सूघने पर ग्राख-नाक से पानी ग्राने लगता है। मिथेन वह गैस है जो पोखरो या दलदलो में सडी पत्तियो से निकलती है। बृहस्पति कितना ठडा है, इसका भी पता लगाया गया है। वहा का तापमान लगभग −140 डिग्री सेंटीग्रेड होगा। बर्फ का तापमान 0 डिग्री सेंटीग्रेड होता है ग्रौर खौलते पानी का 100 डिग्री सेंटीग्रेड। −140 डिग्री सेंटीग्रेड

बृहस्पति की बड़
लाल चित्तं

का मतलब हुआ कि बृहस्पति वर्फ से भी कही अधिक ठडा है। उस ठडक में अमोनिया गैस भी जम जाएगी। इसी से समझा जा सकता है कि हमें जो कुछ दिखाई देता है वह जमे हुए अमोनिया के कणो का ढेर है।

बृहस्पति भीतर से ठोस है या नही, इस प्रश्न का उत्तर ठीक-ठीक नही दिया जा सकता। हो सकता है भीतरी भाग ठोस हो। लेकिन ऐसा भी हो सकता है कि गैस और वर्फ की मिलावट गाढी होती हुई बीच तक चली गई हो और भीतरी भाग मे राव जैसी वर्फ वगैरह चीजो की वहुत गाढी और वहुत ठडी मिलावट हो। अगर उसका भीतरी भाग ठोस है तो उस ठोस भाग मे पत्थर और धातुए आदि होगी। बृहस्पति के नाप के हिसाव से उसका ठोस भाग छोटा ही होगा। उस ठोस भाग के ऊपर वर्फ की मोटी तह होगी और उसके ऊपर गैस और जमी अमोनिया के कणो की गाढी मिलावट होगी।

वह मिलावट गाढी इसलिए होगी कि बृहस्पति की गैसे खूब दव गई होगी। बृहस्पति का वजन वहुत होने की वजह से उसकी आकर्षण शक्ति भी वहुत अधिक होगी और आकर्पण शक्ति अधिक होने से गैसे दव जाती होगी।

केवल चाद ही पृथ्वी का एक उपग्रह है, पर बृहस्पति के 11 उपग्रह है। अगर बृहस्पति पर आदमी होते तो उन्हे ग्यारह चाद दिखाई देते। उनमें 4 उपग्रह तो इतने वडे है कि छोटी दूरवीन से भी वे हमे अच्छी तरह दिखाई दे जाते है। वे बृहस्पति का चक्कर

लगाते रहते है। उस चक्कर मे कभी उनमे से एक पीछे पड जाता है तो कभी दूसरा। कभी कोई वृहस्पति के पास आ जाता है तो कभी दूर। जब उनमे से दो उपग्रह एक ही ओर सबसे अधिक दूरी पर रहते है तो तेज निगाह वाले कोरी आख से भी उनकी झलक देख सकते है। वृहस्पति के चार बडे उपग्रहो मे से तीन तो हमारे चन्द्रमा से भी बडे है, चौथा कुछ ही छोटा है।

शनि

पुराने जमाने मे जितने ग्रह मालूम थे, उनमे शनि ही सबसे धीमा चलने वाला था। सूर्य के चारो ओर एक चक्कर लगाने मे उसे लगभग तीस साल लगते थे। इसी वजह से भारत के ज्योतिषियो ने उसका नाम 'शनैश्चर' रखा। 'शनै' का मतलब होता है धीरे-धीरे, 'चर' का चलने वाला। शनैश्चर शब्द से ही शनि या सनीचर बना है।

शनि का रग कुछ-कुछ पीला है और उसकी चमक कुछ घटती-बढती रहती है। जिन दिनो वह आधी रात को बीच आसमान मे पहुचता है, उन दिनो उसकी चमक मामूल से ज्यादा होती है। इसकी वजह यह है कि उन दिनो शनि पृथ्वी के निकट रहता है, और ऐसा कभी-न-कभी हर साल होता है।

शनि सूर्य से लगभग 90 करोड मील दूर है, जबकि पृथ्वी से सूर्य की दूरी केवल 9 करोड मील है। इसलिए मोटे हिसाब से हम मान सकते है कि शनि पृथ्वी के चारो ओर चक्कर लगाता है।

दूरबीन से देखने पर पता चलता है कि शनि की शक्ल दूसरे ग्रहो से बिल्कुल भिन्न है। उसके बीच का भाग वृहस्पति के भाग की तरह नारगी जैसा कुछ चपटा गोल है। उस गोले को घेरे हुए चूडियो जैसी तीन चीजे है, जो मिल कर छोटी दूरबीन मे एक गोल चबूतरे की तरह दिखाई देती है। उन्हे 'शनि की चूडिया' कहते है। और उन सबकी सतहे एक ही सीध मे है। अपनी चूडियो के कारण शनि बहुत सुन्दर दिखाई देता है।

शनि की वाहरी चूडी कम चमकीली है। उसके वाद वाली वीच की चूडी सवसे अधिक चमकीली है। तीसरी और आखिरी चूडी तो इतनी कम चमकीली है कि आज से लगभग 200 साल पहले तक उसकी चमक का हमे पता तक न था। वाहरी चूडी की चौडाई लगभग दस हजार मील है। उसके वाद लगभग दो हजार मील की खाली जगह है। आखिरी चूडी की चौडाई कोई ग्यारह हजार मील है। तीनो चूडियो की मोटाई कुल 10 मील के लगभग है, पर उनकी वनावट ऐसी है कि उनके आर-पार दिखाई देना है। आखिरी चूडी के आर-पार तो साफ दिखाई देता है। इसी से फोटो मे वह खुद साफ नही दिखाई देती।

शनि की चूडिया किसी ठोस या पिघलने वाली चीज से नही वनी है। वे अनगिनत रोडो, ढोको और जर्रो के ढेर से वनी है। ऐसा खयाल है कि वे ढेर वहुत दूर और काफी अलग-अलग है, पर हम चूकि उन्हे वहुत दूर से देखते है इसलिए वे एक चौडी गोल पट्टी जैसी दिखाई देती है। 1875 मे ब्रिटिश वैज्ञानिक मैक्सवेल ने गणित की सहायता मे सावित किया कि अगर चूडिया ठोस होती तो शनि के आकर्पण की वजह से जरूर चूर-चूर हो जाती। ऐसा मम्भव है कि चूडिया शनि के जन्म के समय या उसके वाद किसी उपग्रह के चूर-चूर हो जाने से वनी हो। शनि के वीच वाला गोला वृहस्पति से भी अधिक चपटा है। उसके मध्य और ध्रुवीय व्यास क्रमानुसार 75,000 और 67,000 मील है (उसके आर-पार की नापे 75,000 और 67,000 मील है)।

शनि पानी से हल्का है और वह पृथ्वी से 750 गुना अधिक जगह घेरे है। अगर काफी चौडा और वडा पानी का कुड वना कर शनि को उसमे डाला जा सकता तो वह पानी पर दिखाई पडता।

शनि पर धारिया है जो वहुत साफ नही है। उनमे कभी इतने साफ धव्वे नही दिखाई देते है, जिनसे यह ठीक-ठीक मालूम किया जा सके कि शनि अपनी धुरी पर एक वार कितने समय मे घूमता है। तो भी ऐसे अवसर आते जरूर है जव धव्वे दिखाई पडे, और ऐसे ही अच्छे अवसरो पर देखने से पता चला है कि शनि लगभग सवा दस घटे मे अपनी धुरी पर एक वार घूमता है और शनि का चपटापन इस वात का प्रमाण है कि अपनी धुरी पर शनि तेजी से नाच रहा है। इस वात के भी प्रमाण मिले है कि वृहस्पति की तरह शनि के भी अलग-अलग भाग अलग-अलग समय पर घूमते है। शनि के वीच के भागो के घूमने का समय कुछ है, तो ध्रुवो वाले भागो के घूमने का समय कुछ।

शनि

अदाजा लगाया जाता है कि शनि की बनावट भी वृहस्पति जैसी ही होगी। शायद उसके अन्दर का छोटा-सा केन्द्रीय भाग ठोस होगा, जिसके ऊपर बर्फ की मोटी तह होगी। फिर अमोनिया और मिथेन नाम की गैसो की गाढी परत होगी, जिसमे जमी हुई अमोनिया के कण मिले होगे। उसमे हाइड्रोजन गैस भी होगी। शनि वृहस्पति से अधिक ठडा है, क्योकि वृहस्पति की अपेक्षा वह सूर्य से अधिक दूर है।

शनि के भी कम-से-कम 9 उपग्रह है। शनि के सबसे बडे उपग्रह के आर-पार का नाप लगभग 3,000 मील है। वह हमारे चन्द्रमा से काफी बडा है, क्योकि हमारे चन्द्रमा की नाप लगभग 2,000 मील ही है। वह केवल हमारे चन्द्रमा से ही बडा नही, बल्कि सूर्य के कुटुम्ब का सबसे बडा उपग्रह है। उस पर हवा का घेरा भी है, जो दूसरे किसी उपग्रह पर नही है। कम वज़न के पिडो मे आकर्षण की अधिक शक्ति नही होती, इसलिए उन पर हवा के घेरे का होना सम्भव नही है। इसीलिए न हमारे चन्द्रमा पर हवा का घेरा है न बुध पर।

शनि के बाद तीन और छोटे-छोटे ग्रह है   वारुणी (यूरेनस), वरुण (नेपच्यून) और यम (प्लूटो)। वे इतने छोटे है कि आख से दिखाई नही देते। वारुणी का पता

शनि की चूड़ि

सन् 1882 ई० में लगा था, वरुण का 1846 में और यम का 1930 में। ये शनि से भी धीमे चलते हैं। यहां तक कि यम सूर्य के चारों ओर एक चक्कर लगाने में करीब-करीब ढाई सौ साल ले लेता है। उसके मार्ग का व्यास शनि के मार्ग के व्यास से 4 गुना बड़ा भी है।

दुमदार तारे या 'बढ़नी' भी सूर्य ही के कुटुम्ब के हैं। लेकिन वे सूर्य के चारों ओर गोलाई में चलने के बदले बहुत लम्बे अण्डाकार रास्ते में चलते हैं। सूर्य इस रास्ते में एक कोने में पड़ जाता है। दुमदार तारे हमें तभी दिखाई देते हैं जब वे सूर्य के पास आ जाते हैं। अधिकतर दुमदार तारे इतने लम्बे रास्ते पर चलते हैं कि न वे कभी लौट कर आए हैं और न यह समझा जाता है कि वे लौट कर आएंगे। लेकिन कुछ दुमदार तारे बार बार लौट कर आते देखे गए हैं। उनमें एक बहुत प्रसिद्ध तारा 'हैली' दुमदार तारा है जो हर पचहत्तर साल बाद लौटा करता है। दुमदार तारों में जो दुम जैसी चीज दिखाई देती है वह सूर्य की गर्मी और रोशनी की वजह से निकली गैस है। जब दुमदार तारे सूर्य से बहुत दूर रहते हैं तो या तो उनकी दुम होती ही नहीं, या बहुत छोटी होती है।

दुमदार तारे का सिर कोई बड़ा-सा ठोस पिंड नहीं होता। वह ढोकों और रोड़ों का ढेर होता है, जो एक-दूसरे से बहुत पास होते हैं। उनमें से कुछ रोड़े पीछे छूट जाते हैं या दूसरे पिंडों के खिंचाव के कारण इधर-उधर भटक जाते हैं। जब पृथ्वी चलते-चलते

हैली दुमदार तारा

टूटे तारे का भाग

किसी रोड के पास पहुच जाती है या रोडा पृथ्वी के पास आ जाता है तो पृथ्वी के खिचाव की वजह से वह रोडा पृथ्वी की ओर बहुत तेजी से गिरता है। उस समय वह पृथ्वी से रगड खाने के कारण इतना गर्म हो जाता है कि उसमे चमक पैदा हो जाती है और उसमे से निकली गैसे जल उठती है। तभी वह हमे टूटते तारे या लूक के रूप मे दिखाई देता है। अधिकतर टूटते तारे या लूक हवा के घेरे मे ही जल कर भस्म हो जाते है। लेकिन जो बडे होत है उनका बचा-खुचा भाग पत्थर के बहुत भारी ढोको की शक्ल मे पृथ्वी पर आ गिरता है। ऐसे बहुत से ढोके दुनिया के अजायबघरो मे और दूसरी कई जगहो पर मौजूद है और देखे जा सकते है।
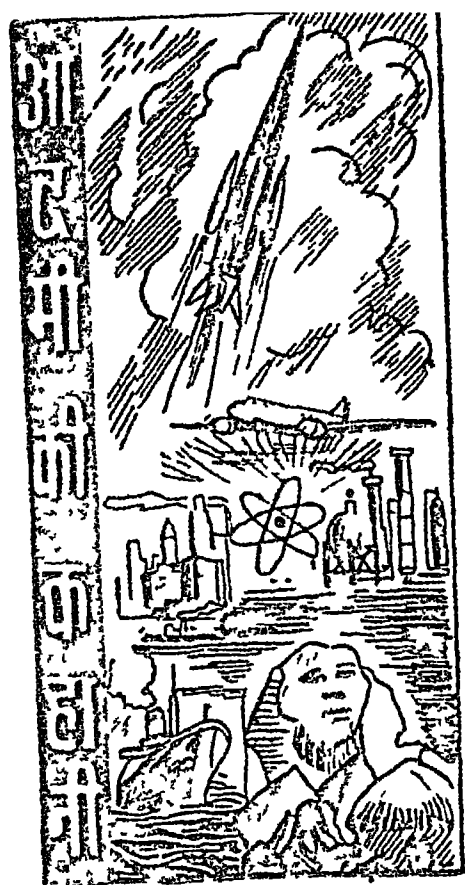
सभ्यता का विस्तार

*

जब हम इतिहास के बारे मे सोचते है, तो हमारा ध्यान तुरन्त भिन्न-भिन्न देशो और जातियो की ओर जाता है। उनमे भी सबसे पहले और सबसे अधिक हमारा ध्यान अपने देश और अपनी जाति की ओर जाता है। किन्तु मानवता को इस प्रकार अलग-अलग देशो और जातियो मे बाट कर देखने से एक हानि यह होती है कि बहुत-सी अच्छी और सच्ची बाते हमारी आखो से ओझल हो जाती है। हर सभ्यता ने दूसरी सभ्यता को क्या दिया और उससे क्या लिया, इसकी असलियत हमारी समझ मे नही आती। इसलिए देखना यह चाहिए कि कुल ससार मे सभ्यता किस तरह फैली और इसके फैलने मे किस जाति ने क्या विशेष भाग लिया।

मानव-सभ्यता का विस्तार देखने के लिए पश्चिम एशिया बहुत उपयुक्त जगह है। पश्चिम एशिया मे फिलस्तीन, शाम, ईराक, अरब और तुर्की के देश शामिल है। तुर्की का पश्चिमी सिरा यूरोप से मिल जाता है। फिलस्तीन और अरब के पश्चिम मे मिस्र है। पश्चिम एशिया से आसानी से यूरोप और अफ्रीका जाया जा सकता है। इसी तरह ईरान और अफगानिस्तान होकर भारत पहुचना, और ईरान के उत्तर की ओर मुड़ कर तुर्किस्तान होते हुए चीन तक पहुच जाना भी आसान है। यूरोप और अफ्रीका के बीच भूमध्य सागर है, जो अधिक चौड़ा नही है। प्राचीन काल से ही इस सागर के रास्ते व्यापार होता रहा है। अरब और अफ्रीका के बीच मे लाल सागर है,

जाते ही थे, वे पश्चिम की ओर ईराक और मिस्र तक भी पहुच जाते थे । शाम और फिलस्तीन के किनारो पर फिनिशी नाम की एक जाति रहती थी, जो व्यापार मे बहुत चतुर थी । उस जाति के लोग पश्चिम एशिया के देशो का बढिया माल यूरोप की बदरगाहो मे पहुचाते थे, और यूरोप से कच्चा माल पश्चिम एशिया के शहरो को ले आते थे । कहते है कि उन लोगो ने अफ्रीका का पूरा चक्कर भी लगाया था । इसी तरह अरब

फिनिशी जहाज
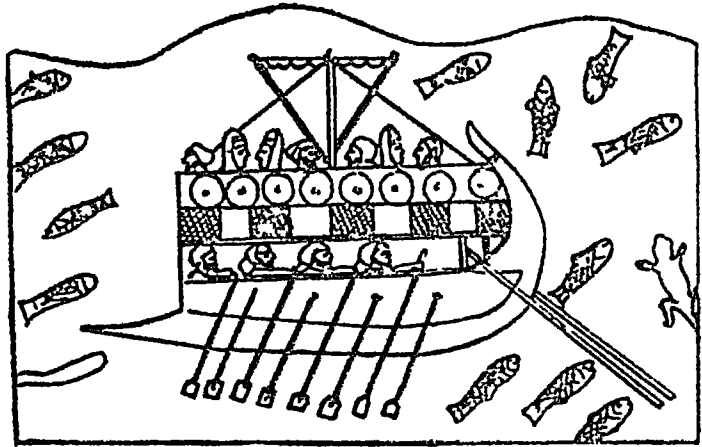
और ईराक के सौदागर भी बडा हौसला रखते थे । वे समुद्र के किनारे-किनारे मलाबार, श्रीलका, जावा, सुमात्रा और चीन तक पहुचते थे । आजकल भी चीन के लगभग सभी बडे-बडे व्यापारिक केन्द्र समुद्र के किनारे है । परन्तु चीन का भी अधिकतर व्यापार पश्चिम एशिया से खुश्की के रास्ते होता था । पुराने जमाने मे जब चीनियो ने रेशम के कीडे पालना और रेशम तैयार करना शुरू किया, तो उनका व्यापार पश्चिम एशिया के रास्ते यूरोप के देशो मे भी खूब फैला । इस तरह अनेक देशो और कई महाद्वीपो का व्यापारिक केन्द्र होने के कारण, पश्चिम एशिया मानव सभ्यताओ का चौराहा बन गया था । जल और स्थल के बडे-बडे मार्गो द्वारा ही सभ्यता फैली, और सौदागरी के माल के साथ-साथ एक देश से दूसरे देश मे पहुची ।

सभ्यता फैलाने मे व्यापार के मार्गो ने वही काम किया है, जो मनुष्य के शरीर के अन्दर रक्त का सचार करने मे धमनिया करती है । दुनिया मे जितने साम्राज्य बने, वे व्यापार के मार्गो से ही बने । उनमे से कुछ साम्राज्य खुश्की के रास्ते कायम हुए और कुछ जलमार्गो से । जो साम्राज्य खुश्की के रास्ते कायम हुए वे बहुत लम्बे-चौडे थे, क्योकि खुश्की के मार्गो को दूर-दूर तक सुरक्षित रखने के लिए साम्राज्य को भी

मिस्र का 3,800 वर्ष पुराना भित्ति चित्र

दूर-दूर तक फैलाने की जरूरत होती थी । यही, कारण है कि ईरान और ईराक मे वडे-वडे साम्राज्य कायम हुए, क्योकि व्यापार के मार्गो पर वे दूर-दूर तक कब्जा कर सकते थे । इसके विपरीत, जलमार्गो से कायम हुए साम्राज्यो के केन्द्र वदरगाहे होती थी, और वदरगाहो को सुरक्षित रखने के लिए साम्राज्य को फैलाने की जरूरत नही होती थी और न यह उतना आसान ही होता था, इसलिए भूमध्य सागर के किनारे जो साम्राज्य वने, उनके लिए वदरगाहो पर अधिकार रखना ही काफी होता था ।

व्यापार के रास्तो से वहुत-सी मानव-जातिया जीवन-निर्वाह के साधन ढूढती हुई इधर-उधर फैलती गई । प्राचीन सुमेरी और मिस्री लोग इसी प्रकार दूसरे इलाको से आ-आकर सुमेरिया और मिस्र मे आवाद हुए थे । मिस्र मे वेनी हसन नाम के कस्वे के पास एक स्थान पर शुरू मे आई किसी घुमक्कड जाति के वनाए हुए लगभग 3,800 साल पुराने भित्ति चित्र पाए गए है । अव से कोई 4,000 वर्ष पहले वे जातिया, जिनको आर्य कहते है, दक्षिण पूर्वी यूरोप, पश्चिम एशिया, ईरान और भारत मे आकर वसी थी । आर्य जाति के लोग शुरू मे खानावदोश थे, और उन जातियो से, जो पहले से उन देशो मे आवाद थी, उनकी वरावर लडाई होती रहती थी ।

मिस्र का एक फराऊन

दारा का साम्राज्य

दुनिया का सबसे पहला साम्राज्य मिस्र मे कायम हुआ, जो उत्तर मे भूमध्य सागर तक और दक्षिण मे नील नदी के किनारे-किनारे फैला हुआ था। फराऊन कहलाने वाले प्राचीन मिस्री सम्राटो ने व्यापार के मार्गो का सहारा लेकर धीरे-धीरे पूर्व मे शाम तक अपना अधिकार बढा लिया। फिर एक जमाना आया जब आर्यो के एक कबीले ने उन्ही व्यापारिक मार्गो पर चल कर खुद मिस्र पर अधिकार कर लिया। उस कबीले के लोगो ने लगभग २०० वर्ष तक वहा राज किया। बाबुल मे भी कई साम्राज्य कायम हुए, जिनमे सबसे बडा साम्राज्य असुर कहलाने वाली एक जाति ने कायम किया था। वह साम्राज्य किसी समय काबुल से फिलस्तीन तक फैला हुआ था।
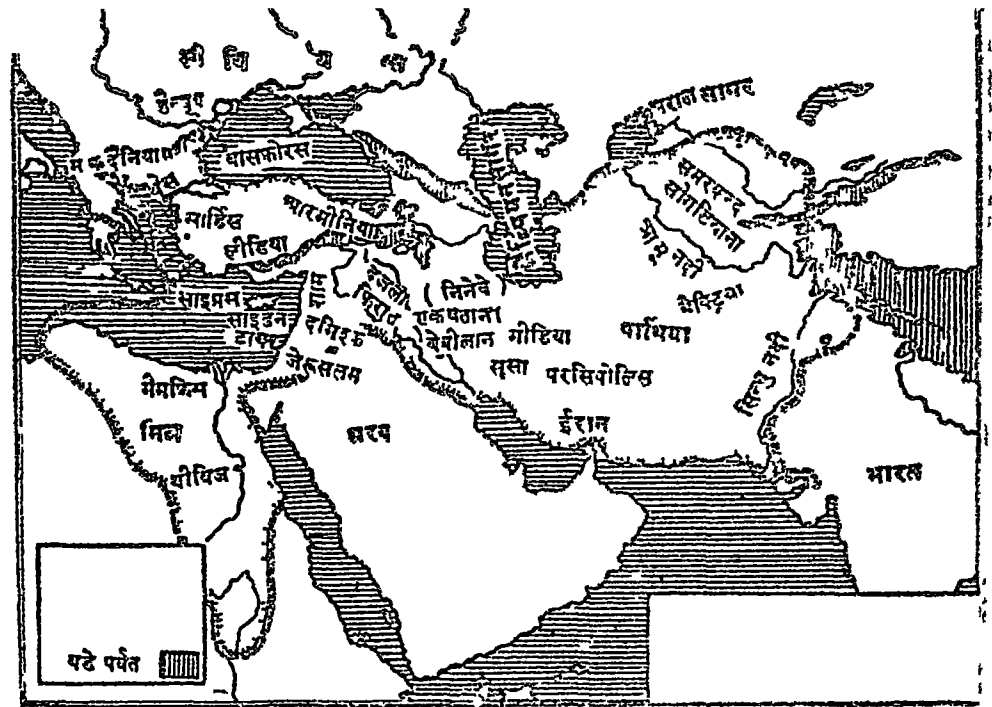
किन्तु ऊपर जिन साम्राज्यो का जिक्र किया गया है, उनमे सबसे बडा कयानी साम्राज्य था। कयानी साम्राज्य को साइरस नाम के एक ईरानी बादशाह ने अब से कोई ढाई हजार वर्ष पहले कायम किया था। साइरस का असली ईरानी नाम 'कुरू' था। यूनानियो ने उसे 'साइरस' कहना शुरू कर दिया। साइरस के साम्राज्य मे पश्चिम एशिया, शाम, मिस्र, अफगानिस्तान और सिध की घाटी भी शामिल थी। साइरस के कोई लडका न था, इसलिए उसका विशाल साम्राज्य दारा को मिला जो साइरस के खास सलाहकारो मे से था। इससे पता चलता है कि उस समय के लोग उन सभी देशो के व्यापारिक मार्गो से परिचित थे, क्योकि उन सभी देशो को मिला कर एक साम्राज्य बनाने और उन देशो के लोगो के आर्थिक और सामाजिक जीवन को एक सूत्र मे पिरो कर सगठित करने की बात तभी ध्यान मे आ सकती थी।
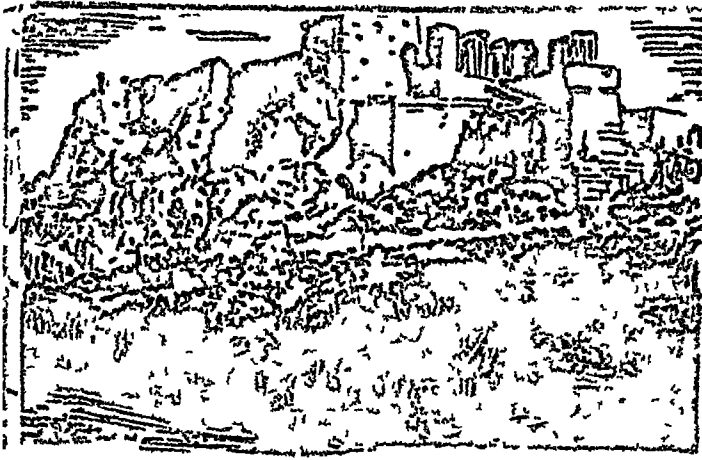
एथेन्स का एक्रोपोलिस

जिम समय ईरान का कयानी साम्राज्य उन्नति कर रहा था, उसी समय दक्षिण-पूर्वी यूरोप के देश यूनान मे एक नए ढग के नगर राज्यो की स्थापना हो रही थी। यूनान के उन नगर राज्यो, में एथेन्स का राज्य इतिहास मे सबसे प्रसिद्ध राज्य है। वहा राज्य के कई तरीके चला कर उनका प्रयोग किया गया और अन्त मे गणतन्त्री राज्य का तरीका सबसे अच्छा माना गया। जब एथेन्स के लोगो ने अपना व्यापार पूर्वी भूमध्य सागर मे फैलाया, तव कयानी सम्राटो से उनकी मुठभेड हुई। उस मुठभेड मे एथेन्स वाले जीते। फल यह हुआ कि एथेन्स की सभ्यता ने बहुत उन्नति की। एथेन्स का किला बहुत ऊची सतह पर बना था। किले की ऊचाई 150 फुट थी। कयानी साम्राज्य के इस प्रकार कमजोर हो जाने से यूनान के बादशाह सिकन्दर ने, यूनानी सभ्यता फैलाने के विचार से, उन सब देशो पर अधिकार कर लिया, जो पहले कयानी साम्राज्यो मे शामिल थे। उसके बाद सिकन्दर भारत विजय करने के विचार से सेनाए लेकर व्यास नदी के किनारे तक पहुच गया।

भारत मे आर्य कहलाने वाली जाति अब से कोई 4,000 वर्ष पहले आकर बस गई थी। कहा जाता है कि सिध की प्राचीन भारतीय सभ्यता को इन्ही लोगो ने आकर मिटाया था। ये आर्य पहले पजाब मे बसे, फिर धीरे-धीरे पूर्व की ओर बढे, और अन्त मे उन्होने गगा-यमुना के मैदान को अपना केन्द्र बना लिया। आर्यो को नागरिक जीवन पसन्द न था, इसलिए उन्होने राज्यो की स्थापना नही की। उनका इतिहास हमें बहुत कम मालूम है। फिर भी व्यापार उन्नति करता रहा। सिकन्दर के आक्रमण के बाद मगध मे मौर्य-राज्य कायम हुआ। वह भारत का सबसे

सिकन्दर

पहला साम्राज्य था । चन्द्रगुप्त मौर्य ने गगा-यमुना और सिध के पूरे मैदान पर कब्जा करके सिकन्दर के सेनापति से अफगानिस्तान का भी एक भाग छीन लिया ।

चन्द्रगुप्त मौर्य के पोते अशोक के समय मे दक्षिण को छोड कर पूरे भारत का एक राज्य वन गया था । अशोक ने वौद्ध धर्म का प्रचार करने के लिए वहुत-सी आज्ञाए जारी की । उसने ईरानी सम्राटो की तरह व्यापारी मार्गो की ओर भी वहुत ध्यान दिया, और उनके दोनो तरफ छायादार पेड लगवाए ।

अशोक का साम्राज्य

जिस समय अशोक भारत मे यह सव कुछ कर रहा था, उसी समय चीन का सम्राट शीह-ख्वाग-तीह अपने देश को सगठित कर रहा था । उसने उत्तर की खाना-वदोश जातियो से अपने देश को वचाने के लिए एक वहुत लम्वी दीवार वनवाई, जो अभी तक मौजूद है । चूकि चीन के पढे-लिखे लोग उन दिनो पुरानी कितावो के हवाले दे-देकर देश मे फूट पैदा करते थे, इसलिए उसने सभी पुरानी कितावे इकट्ठी करके जलवा दी । लडाई वन्द करने के विचार से उसने लोगो से हथियार छीन कर गलवा दिए । उसने सारे देश मे नाप और तौल का एक नियम वना दिया । उसने व्यापार की उन्नति के लिए भी तरह-तरह के काम किए । उसने यह आज्ञा भी जारी की कि सव गाडियो के धुरो की लम्वाई एक-सी होनी चाहिए, जिससे गाडिया सभी रास्तो पर आसानी से आ-जा सके और वे देश के एक भाग से किसी भी दूसरे भाग मे पहुच सके ।
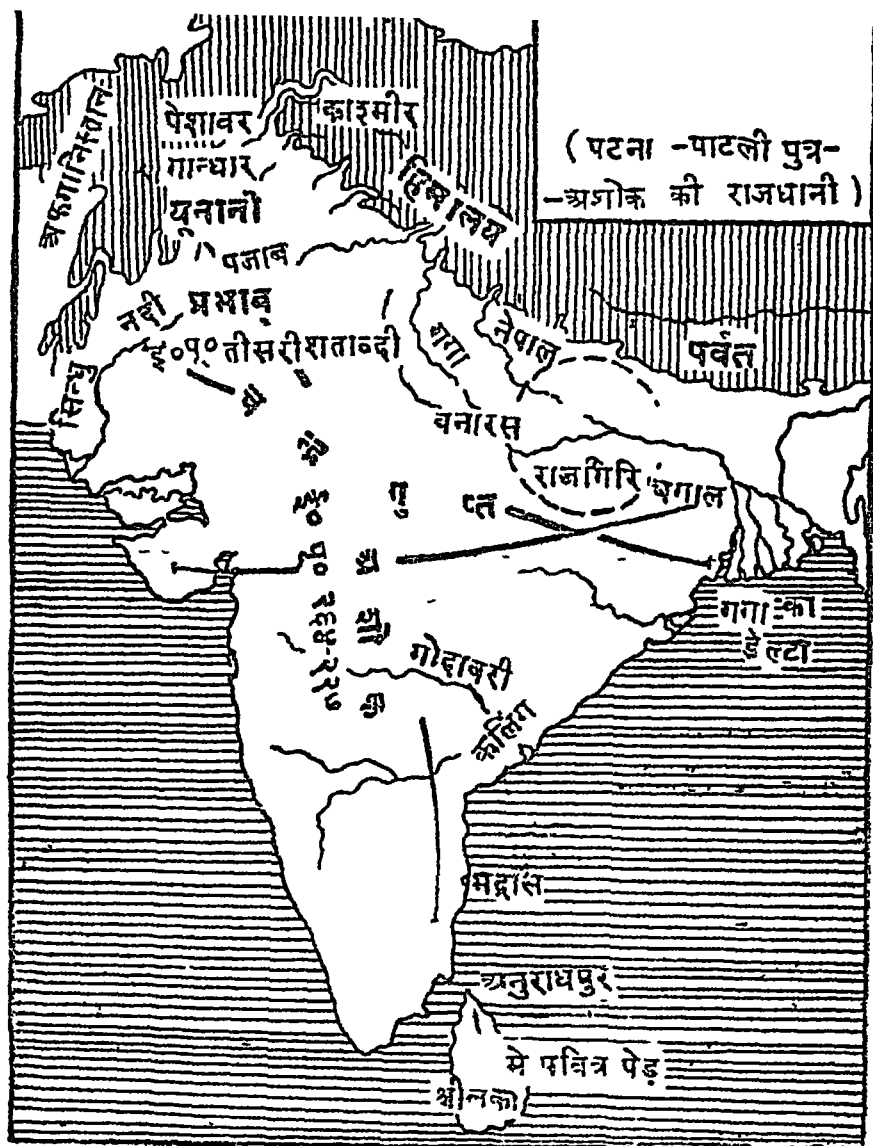
इस तरह उस जमाने मे साम्राज्यो के द्वारा मनुष्यता का सगठन हुआ। मनुष्यता का सगठन एक दूसरे तरीके से भी हुआ, यानी धर्म और उसके नियमो के जरिए। धर्मो का आरम्भ और प्रचार एक बहुत ही मनोरजक विपय है, जिस पर हम आगे चल कर प्रकाश डालेगे।
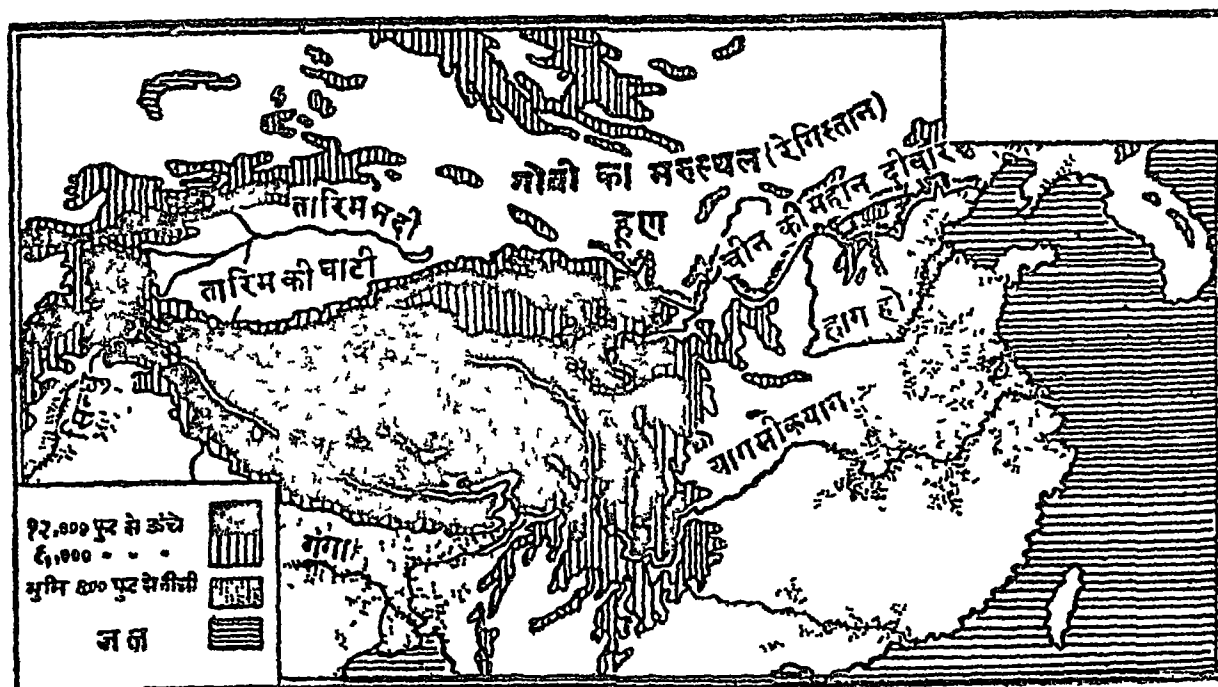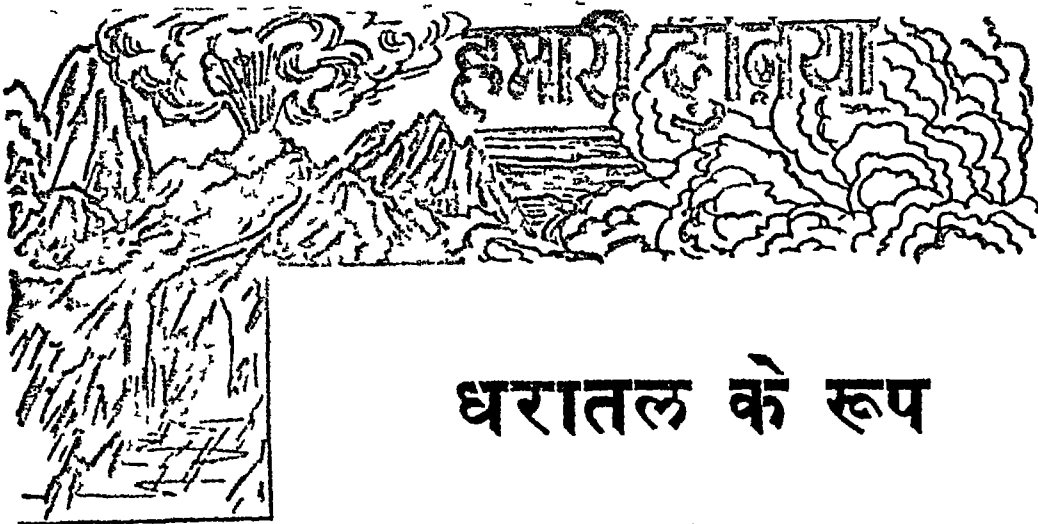
धरातल के रूप

इस धरती के तल पर तरह-तरह के एक-से-एक विचित्र दृश्य देखने को मिलते है। कही ऊचे-ऊचे पर्वत है, तो कही ऊबड-खाबड पठार। कही दूर-दूर तक फैले हुए घने जगल है, तो कही लहलहाते हुए हरे-भरे उपजाऊ मैदान। कही मीलो तक फैले रेगिस्तान है, तो कही ऊची-नीची ढलुवा चट्टाने और गहरी घाटिया। कही अथाह सागर हिलोरे मार रहा है, तो कही बारहो महीने बर्फ से ढके रहने वाले मैदानी और समुद्री हिस्से है। पर मानव जीवन के लिए धरती के तल का मैदानी भाग सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। धरती के तल का कुल विस्तार लगभग 1970 लाख वर्गमील है। इसका लगभग 29 प्रतिशत भाग ही ऐसा है जो पानी से नही ढका है। बाकी सब पानी मे डूबा हुआ है।

धरती के तल को अच्छी तरह से समझने के लिए यह जान लेना जरूरी है कि बिल्कुल शुरु-शुरु मे धरती बहुत ही गर्म और चमकती हुई गैस का गोला थी। धरती के अन्दर पाए जाने वाले खनिज पदार्थ, ककड, पत्थर, जल आदि उस गैस मे मौजूद थे। धीरे-धीरे गैस का वह गोला ठडा होने लगा। उस समय न तो पानी था, न कोई जीव-जतु।
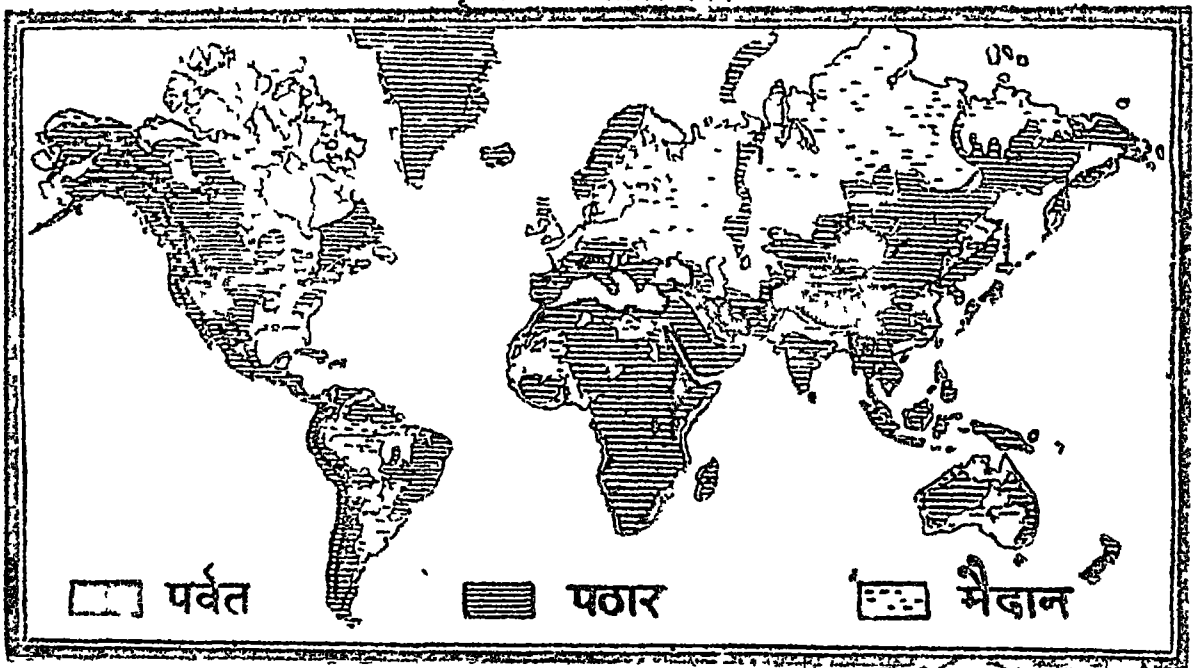
पृथ्वी का भौगोलिक चित्र

खुश्की और समद्र की बनावट

जब गैस का वह गोला काफी ठडा हो गया तो जहा उसने एक ओर ठोस धरा का रूप धारण किया, वहा दूसरी ओर उसने पानी का रूप भी धारण किया। उस पानी से धरातल मे जो नए बडे-बडे गड्ढे बने थे, वे भर गए। इस प्रकार सागर और महासागर बने। ठडे होकर ठोस होने की इस क्रिया मे धरातल मे झुरिया पड गई। इन झुरियो के ऊचे भाग पहाड और पठार आदि बन गए, और गहराई वाले भाग घाटिया।

परन्तु ठोस धरती का भीतरी भाग अभी तक गर्म है और वहा गैसे मौजूद है। इस प्रकार जो गैसे ठडी नही हुई वे आज भी पृथ्वी को वायुमण्डल के रूप मे घेरे हुए है। पृथ्वी का ठोस चिप्पड जिन वस्तुओ से बना है, उन्हे हम चट्टान कहते है। पृथ्वी के ठडे होने से जो चट्टाने शुरू-शुरू मे बनी, वही असली चट्टाने है। सबसे प्राचीन चट्टाने आग से पैदा होने के कारण प्राथमिक और आग्नेय चट्टाने कहलाती है। ससार के ज्यादातर खनिज पदार्थ इन्ही गहरी हरी या कत्थई रग की कडी और दानेदार चट्टानो मे पाए जाते है। ससार के पुराने पठार भी इनसे ही बने है।

आग्नेय चट्टानें
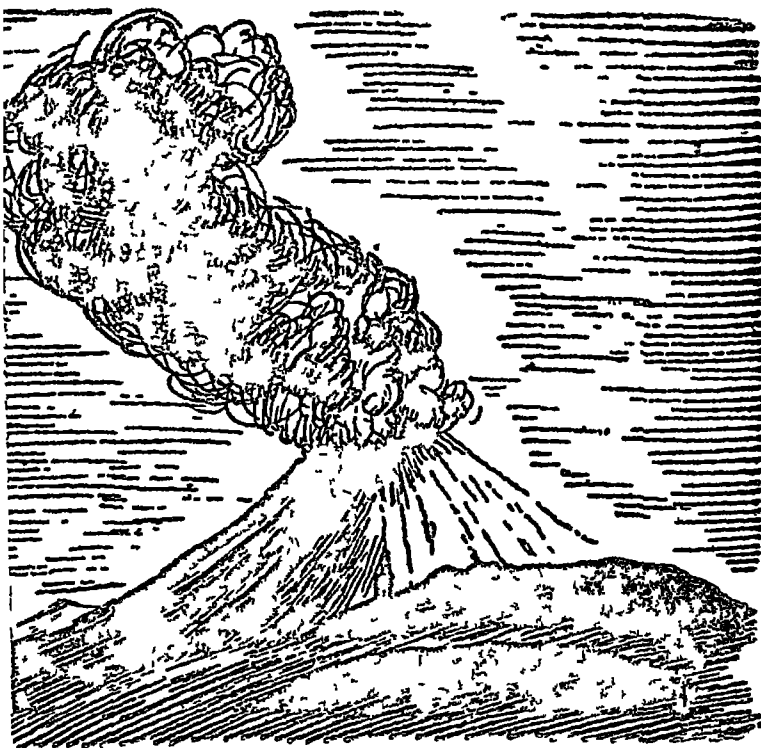
दूसरे प्रकार की चट्टाने परतदार है। ये प्राथमिक चट्टानो या आग्नेय चट्टानो के टूटने-फूटने से बनी है, और परत-पर-परत जमती गई है। ससार के बडे-बडे मैदान तथा ऊचे-ऊंचे नए मोडदार पर्वत उन्ही से बने है। तीसरे प्रकार की चट्टाने वे है जो पृथ्वी के भीतर की गर्मी और दबाव के कारण परतदार और प्राथमिक चट्टानो के आकार मे परिवर्तन होने से बनी है, जैसे खडिया और चूने का पत्थर

वदल कर सगमरमर, चीका मिट्टी और सलेटी पत्थर बन जाता है या मुलायम कोयले से कडा कोयला या हीरा वन जाता है।
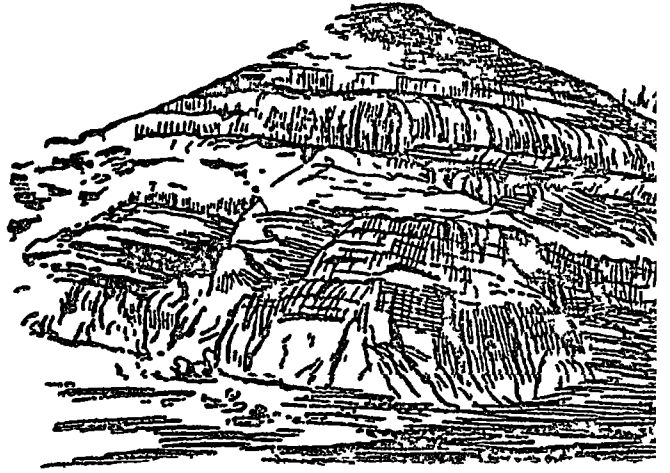
परतदार चट्टानें

धरती के चिप्पड की सतह ऊची-नीची है। वह कही मुलायम है, कही कडी, कही एक रग की है, तो कही दूसरे रग की। धरती पर अनेक प्रकार की चट्टाने होने के कारण ही ऐसा होता है। विभिन्न महाद्वीपो की रूप-रेखा को देखने से पता चलता है कि आज से लाखो साल पहले वे सब एक ही स्थल खण्ड के भाग थे, जो वाद मे फट कर या टूट कर एक-दूसरे से अलग हो गए। नक्शे को देखने से साफ मालूम होता है कि अगर अमरीकी और अफ्रीकी महाद्वीपो को एक-दूसरे से अलग करने वाले अतला-तिक महासागर को उनके बीच से हटा कर यूरोप और अफ्रीका से मिला दिया जाए तो अफ्रीका के बाहर को निकले हुए उत्तर-पश्चिमी कधे और खाचे अमरीका तथा यूरोप दोनो महाद्वीपो के कधो तथा खाचो मे लगभग ठीक-ठीक बैठ जाएगे। इसी आधार पर भू-वैज्ञानिको ने यह नतीजा निकाला कि पृथ्वी के विशाल खण्ड कभी एक थे, पृथ्वी के भीतर होने वाली प्रतिक्रियाओ के कारण टूट कर तैरते हुए वे एक-दूसरे से हट गए और धीरे-धीरे उनके बीच हजारो मील चौडी एक खाई वन गई। इस खाई मे जल भर कर महासागर बन गया।

धरती की सतह सब कही समतल या सपाट नही है। वह कही मीलो ऊची है, तो कही केवल कुछ सौ फुट ही। भूमि की ऊचाई की माप समुद्र की सतह से की जाती है। नक्शे मे धरती के विभिन्न भागो की अलग-अलग ऊंचाइया दिखाई जाती है। समूची धरती का 20 प्रतिशत भाग 600 फुट से भी कम ऊचा है, लगभग 20 प्रतिशत भाग 600 से 1,500 फुट और 20 प्रतिशत भाग 1,500 से 3,000 फुट ऊचा है। वाकी 30 प्रतिशत 3,000 से 6,000 फुट और 10 प्रतिशत भाग 6,000 फुट से भी अधिक ऊचा है। यदि पर्वतमालाओ तथा पठारो को नष्ट-भ्रष्ट करके धरती के सारे स्थल भाग को किसी प्रकार समतल और सपाट कर दिया जाए, तो
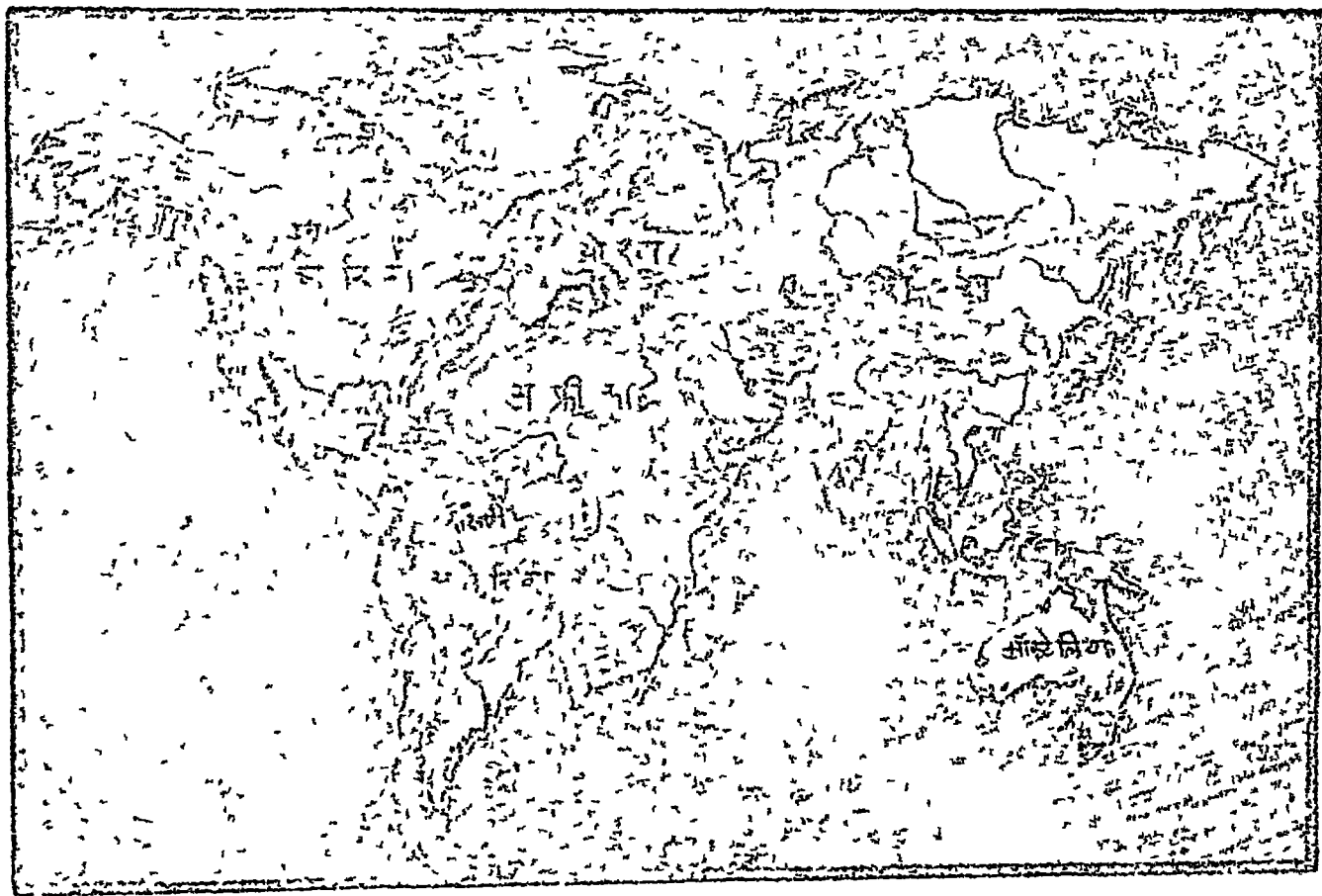
अगर नई और पुरानी दुनिया को मिला दिया जाए

स्थल की औसत ऊंचाई केवल आधा मील के लगभग रह जाएगी। इसी प्रकार यदि पानी वाले भागो के तल को भी समतल कर दिया जाए, तो समुद्रो की औसत गहराई लगभग ढाई मील रह जाएगी।

पृथ्वी के धरातल का जो रूप पहले था, वह अब नही है। इसी प्रकार जो रूप आज है, वह आगे नही रहेगा। धरातल का रूप सदा बदलता रहता है। नदिया कठोर तथा कोमल चट्टानो को घिसाती तथा काटती, और टूटे-फूटे टुकडो को बहा कर समुद्र मे इकट्ठा करती रहती है। इन्ही से फिर चट्टानो का निर्माण होता है, और वे ही पहाडो, पठारो तथा मैदानो के रूप मे समुद्र मे से उभर आते है। दूसरी ओर, पृथ्वी की भीतरी शक्तिया भी उन्हे तोड-फोड कर समतल बनाती रहती है, और उन

टूटे-फूटे, घिसे हुए पदार्थो से नए स्थल भागो का निर्माण होता रहता है। यह सिलसिला कभी बन्द नही होता।

पर इन सब परिवर्तनो के होते हुए भी धरती की रूप-रेखा के मुख्य अग पर्वत, पठार और मैदान ही रहेगे। हो सकता है कि जहा आज पर्वतमालाए है वहा रेगिस्तान वन जाए, और जहा रेगिस्तान है वहा उपजाऊ जमीन निकल आए तथा बस्तिया आबाद हो जाए। अब हमे स्थल के तीन मुख्य अग—पर्वत, पठार और मैदान—और उनके भिन्न-भिन्न रूपो को भी समझने का प्रयत्न करना चाहिए।

पर्वत पृथ्वी तल के उन भागो को कहते है जो समुद्र की सतह से प्राय 3,000 फुट से अधिक ऊचे होते है। पर्वतो की ऊची चोटियो का विस्तार बहुत कम होता है। अधिकतर पहाड धरती के गर्भ मे होने वाली भीतरी हलचल के कारण वनते है। कुछ

भूमि की सतह की ऊचाई दर्शाने वाला चित्र
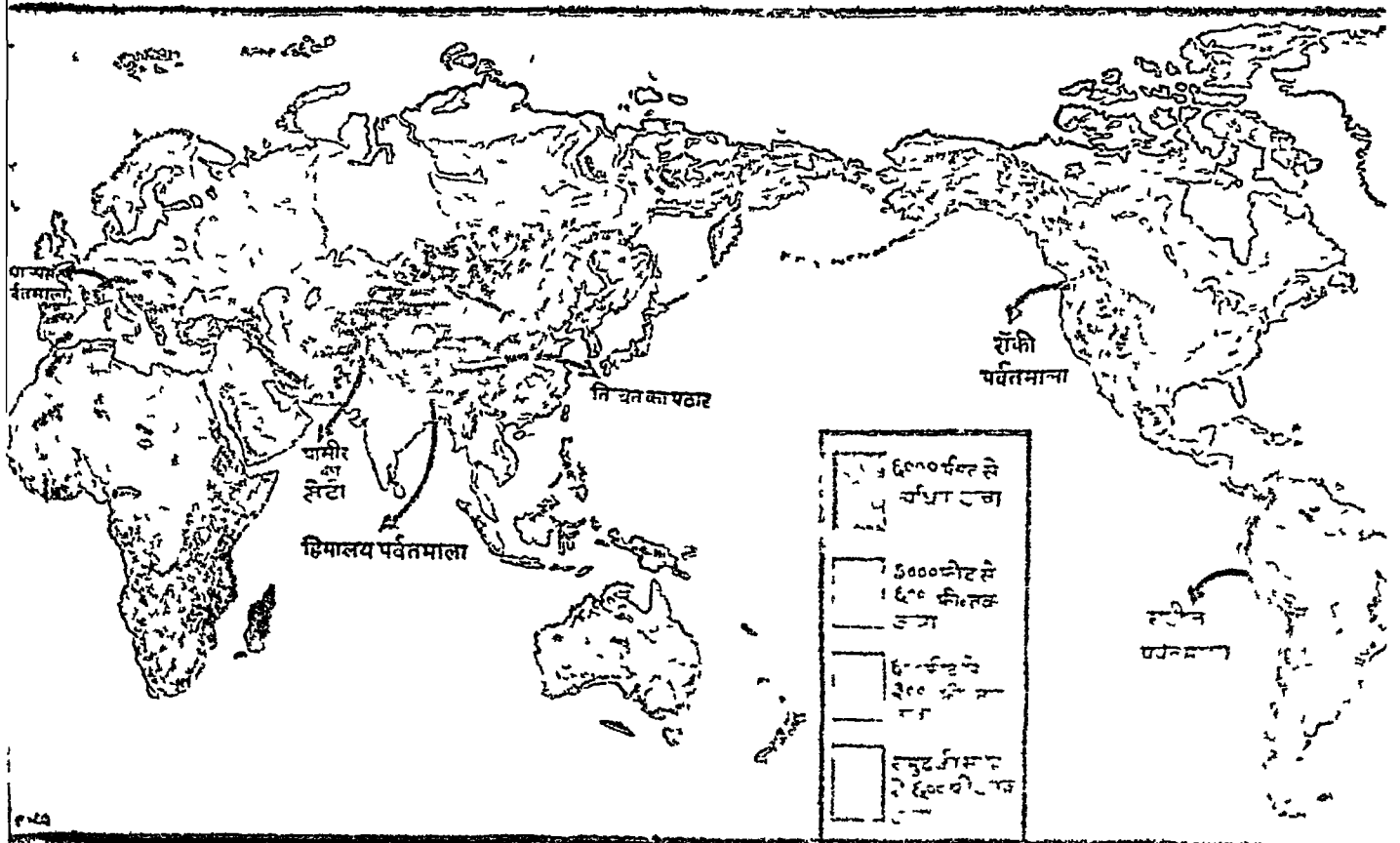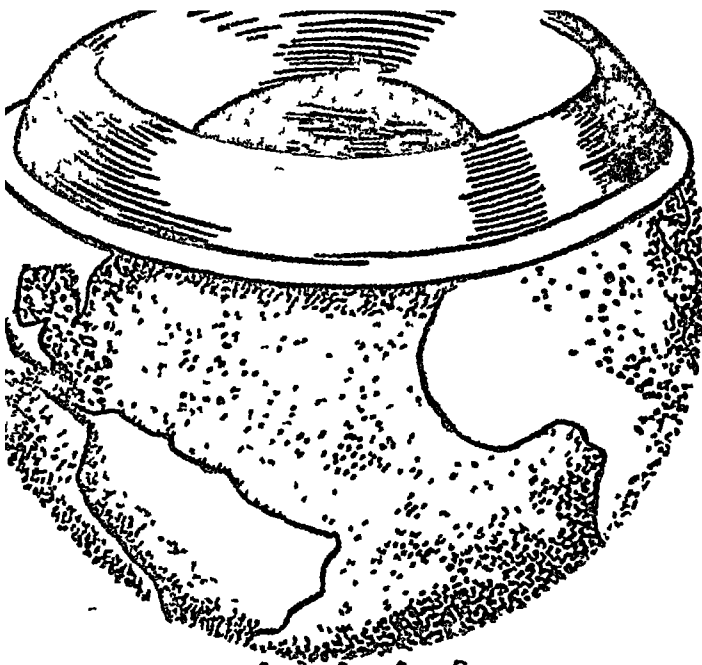
धरती के बीच की शक्तिया

ऐसे भी पर्वत है जो हवा, पानी और वर्फ जैसी वाहरी शक्तियो के प्रभाव से वनते है। वनावट के आधार पर पर्वतो की पाच मुख्य किस्मे मानी जाती है। उनमे से तीन मोडदार पर्वत, अवरोधी पर्वत और गुम्वदनुमा पर्वत भूगर्भ की हलचलो के कारण वने है। वाकी दो अवशिष्ट पर्वत और सचय पर्वत पृथ्वी की वाहरी शक्तियो के कारण वने है। मोडदार किस्म के पर्वत पृथ्वी की भीतरी शक्तियो की हलचल के कारण मुडने से वनते है। जव कोई परतदार चट्टान दो चट्टानो के वीच होती है और एक तरफ की चट्टाने भीतरी हलचल के कारण उसको ढकेलती है और दूसरी तरफ जव अच्छी तरह जमी दूसरी अत्यन्त कठोर चट्टान उसे रोकती है तव वीच की परतदार मुलायम चट्टान मे सलवटे पड जाती है। इस प्रकार कुछ भाग धनुप की शक्ल मे ऊपर उठ जाते है। ससार मे इस तरह वने पर्वत वहुत अधिक और ज्यादा पुराने नही है। इसीलिए उन्हे नवीन मोडदार पर्वत कहा जाता है। ऐसे पहाडो मे कई समानान्तर पर्वतमालाए पाई जाती है, और उनकी ऊचाई भी वहुत अधिक होती है। हिमालय, आल्प्स, राकीज तथा एंडीज ऐसी ही पर्वतमालाए है। उनके वनने से पहले उनके स्थानो पर लम्वे, सकरे और गहरे सागर थे, जिन्हे 'टिथीज' कहा जाता है। इन सागरो मे नदिया मिट्टी आदि लाकर जमा करती रहती है और उनका पेटा मुलायम परतदार मिट्टी से भरता रहता है। एक समय 'टिथीज' के उत्तरी किनारे का अगारा प्रदेश दक्षिणी किनारे के गोडवाना प्रदेश की ओर सरकने लगा। तव टिथीज के उत्तर का सारा प्रदेश अगारा प्रदेश मे शामिल था और गोडवाना प्रदेश मे आस्ट्रेलिया, दक्षिणी भारत, अरव और अफ्रीका के पठार शामिल थे। लेकिन इस

मोडदार पर्वत
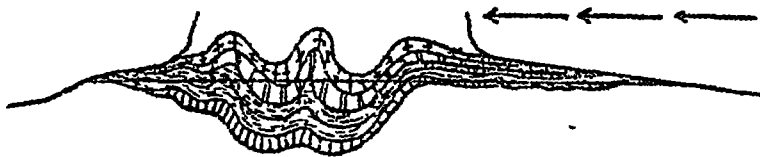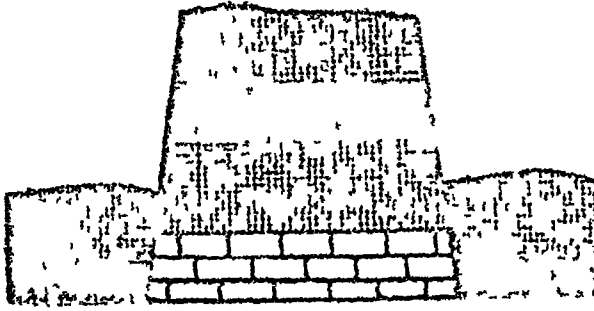
अवरोधी पर्वत

स्थलखण्ड का एक भाग नीचे दब जाता है और दूसरा भाग स्थिर रह जाता है, या कोई भाग भूगर्भ की हलचलों के कारण ऊपर उठ आता है और उसके आसपास की भूमि पहले जैसी ही रह जाती है, तो इस प्रकार ऊपर उठे भाग को अवरोधी पर्वत कहते है। भारत के पश्चिमी घाट और विन्ध्याचल पर्वत, तथा यूरोप का ब्लैक फारेस्ट इसी प्रकार के पर्वत है। इसी प्रकार धरती की सतह ऊपर-नीचे होने से दरारे बन जाती है। जब दो दरारों के बीच का भाग नीचे धस जाता है और आसपास के भाग ऊचे रह जाते है, तो नीचे धस जाने वाले भाग को 'रिफ्ट' या 'दरार' घाटी कहते है। प्राचीन काल मे अफ्रीका की महान दरार घाटी इसी प्रकार बनी थी, जो पश्चिम एशिया के 'डैड' या मृत सागर से फिलस्तीन तथा जोर्डन की घाटियो से होती हुई, पूर्वी अफ्रीका की रुडोल्फ, न्यासा और टागानिका झीलो तक लगभग 4,000 मील की लम्बाई मे फैली हुई है। दरार घाटियो मे कही-कही झीले भी बन जाती है। इन को 'रिफ्ट लेक' या 'दरार झील' कहते है।
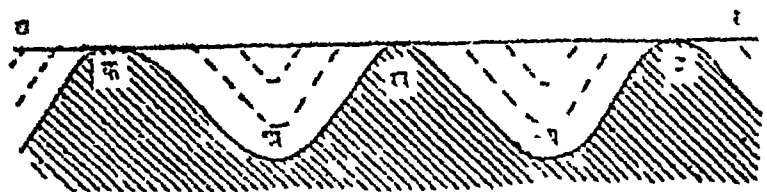
दरार घाटी

जब पृथ्वी के भीतर से पिघला हुआ लावा, गैस आदि पदार्थ ऊपर निकलने का प्रयत्न करते है और उन्हे निकलने का रास्ता नही मिलता, तब उनके धक्के से धरती के कुछ भाग ऊपर उठ आते है। ये उभरे हुए भाग गुम्बदनुमा पर्वत कहलाते है। अमरीका के ऊटा राज्य का हेनरी पर्वत इसका सबसे अच्छा उदाहरण है। चौथे
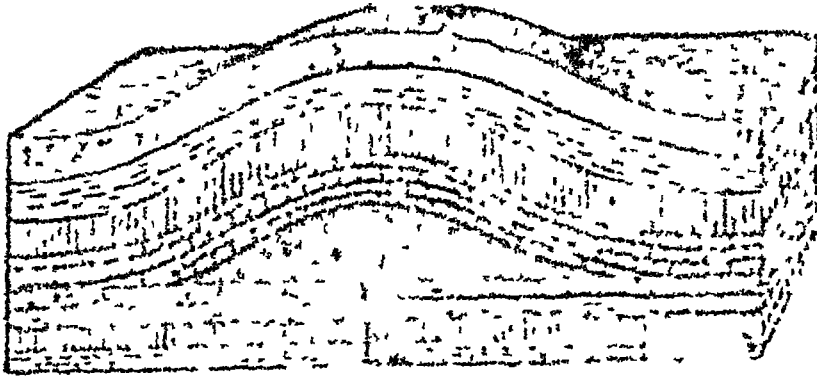
गुम्बदनुमा पर्वत

पर्वत मनुष्य के विकास में अनेक प्रकार से सहायक भी होते हैं और बाधक भी। पहाड़ी प्रदेशों की भूमि पथरीली और ऊंची-नीची होती है। वहां मिट्टी की परतें बहुत पतली होती हैं। इसलिए वहां खेतीबाड़ी का काम करना बहुत कठिन होता है। इसीलिए वहां पहाड़ी प्रदेशों की जन-संख्या भी बहुत कम होती है। कहीं-कहीं ढलानों पर चरागाहें भी होती हैं, जहां पशु चरा कर लोग अपना जीवन बिताते हैं। इसके अलावा संसार के भिन्न-भिन्न भागों में पर्वतों की ढलानों पर बड़े-बड़े वन पाए जाते हैं, जिनकी लकड़ी तरह-तरह के कामों में इस्तेमाल होती है। बहुत से पर्वतों पर बहुमूल्य खनिज पदार्थ भी मिलते हैं। पर्वतों का देश के जलवायु पर भी भारी प्रभाव पड़ता है। यदि भारत के उत्तर में हिमालय न होता तो मानसूनी हवाएं सीधे मध्य

तथा उत्तरी एशिया मे पहुच कर पानी वरसाती, और भारत एक रेगिस्तान वन जाता। हिमालय पर्वत जाडो मे उत्तरी एशिया से आने वाली वेहद ठडी हवाओ से भी भारत की रक्षा करता है। पर्वतो का वारिश से तो गहरा सम्वन्ध है ही, छोटी-वडी अनेक नदिया भी उन्ही से निकलती है। साथ ही वे अपने साथ मिट्टी लाकर मैदानो को उपजाऊ भी वनाती है। इन नदियो से सिचाई होती है, विजली पैदा की जाती है, और यातायात का भी काम लिया जाता है। पर्वत यातायात मे वाधक होते है, पर वे वाहरी हमलो से देश की रक्षा भी करते है। इसके अलावा चूकि पहाडी प्रदेशो के दृश्य मनोहर और वहा का जलवायु स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होता है, इसलिए लोग वहा मैदानो की प्रचड गर्मी से वचने और अपनी सेहत सुधारने के लिए जाते है।

पठार धरातल के उन भागो को कहते है जो पहाड से कम और मैदानो से अधिक ऊचे होते है। इनकी सतह प्राय एक-सी ऊची पर ऊवड-खावड होती है। पठार की ढाल चारो ओर होती है। आम तौर से समुद्र की सतह से 1,000 से 3,000 फुट तक ऊचाई वाले भूभाग को पठार कहते है। पर कई पठार पहाडो से भी ऊचे है। ससार के अधिकाश पठार समुद्र से लगभग 2,000 फुट की ऊचाई पर है। पर ऐसे पठार भी है, जो समुद्र की सतह से 10,000 से 12,000 फुट तक ऊचे है, जैसे तिव्वत और वोलेविया के पठार। ससार के सवसे विस्तृत पठार वहुत पुरानी कडी चट्टानो के वने है। ऐसा समझा जाता है कि वे पृथ्वी के पैदा होने के साथ ही वने थे। इस प्रकार के पठारो के तीन वडे चबूतरे—लौरेंगियल ढाल अथवा कनाडा का पठार, वाल्टिक ढाल अथवा स्कैंडेनेविया का पठार, और अगारा ढाल अथवा साइवेरिया का पठार—कनाडा, यूरोप और एशिया के महाद्वीपो के उत्तर मे फैले हुए है। एक और विशाल प्राचीन पठार, जिसका नाम गोडवानालैण्ड है, दक्षिण मे फैला हुआ था। आस्ट्रेलिया का पश्चिमी पठार, दक्षिण भारत का पठार, अरब का पठार, अफ्रीका का पठार और व्राजील का पठार उसी विशाल पठार के वचे-खुचे भाग है। किसी-किसी पठार के चारो ओर पर्वतमालाए होती है। उन्हे पर्वत प्रान्तीय पठार कहते है। ससार के ऊचे-ऊचे पठार इसी प्रकार के है। ऐसे कई पठार पर्वतो से इस तरह घिरे हुए है कि उनकी नदियो का निकास भीतर की ओर ही होता है। हिमालय और क्युनलुन पर्वतो के बीच मे 12,000 फुट की ऊचाई पर तिव्वत का पठार तथा दक्षिणी अमरीका मे 10,000 से 15,000 फुट की ऊचाई पर वना वोलेविया का

पठार, इसी किस्म के पठार है। मेक्सिको, मगोलिया, कोलम्बिया, और बिलोचिस्तान के पठार भी ऐसे ही पठार है।

'पीडमाट' पठार ऊचे पर्वतो और मैदानो के बीच अथवा मैदान और समुद्र के बीच किसी ऊचे पर्वत के सहारे फैले होते है। दक्षिणी अमरीका मे पैटेगोनिया का पठार इसका सबसे अच्छा उदाहरण है। पूर्वी अमरीका मे अपेलेचियन पर्वत के पूर्व का पठार और इटली के पठार भी इसी कोटि मे आते है। जो पठार समुद्र के किनारो या मैदानी भूमि से एकदम ऊचे होते है, वे महाद्वीपीय पठार कहलाते हैं। उन पठारो के सिरे पर पर्वत नही होते। वे लावा के फैलने या पृथ्वी के धरातल के ऊपर उठने से बनते हैं। उनकी ऊचाई समुद्र की सतह या मैदानो से एकदम शुरु होती है। अफ्रीका, दक्षिणी भारत, अरब और स्पेन के पठार महाद्वीपीय पठारो के उदाहरण है। कभी-कभी मैदान-का-मैदान ही ऊपर उठ जाता है, या पर्वत की घाटियो मे लावा भर जाने से एक ऊचा समतल मैदान उभर आता है।

कटावदार पठार
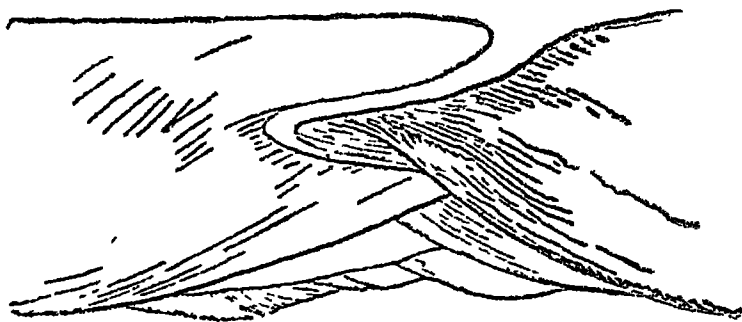
जिन पठारो पर अधिक वर्षा होती है या तेज नदिया बहती है, उन पर पानी के बहाव से गहरी और तग घाटिया बन जाती है, जिससे पठार कट जाते है। ऐसे पठारो को कटावदार पठार कहते है। वेल्स और स्काटलैण्ड के पठार इसी प्रकार के है। अधिकतर पठारो का निर्माण पहाडी प्रदेशो के घिसने तथा कटने से होता है। कभी-कभी वे घिसते-घिसते बेहद नीचे हो जाते है। ऐसे नीचे पठारो को 'पैनीप्लेन' कहते है। सूखे प्रदेशो के पठारो मे वर्षा बहुत कम होती है। इस कारण उनकी सतह मे टूट-फूट नही होती। वे समतल ही रहते है। कही-कही पृथ्वी के छिल्पड की दरारो से लावा निकलता है, जो आसपास की भूमि पर फैल कर कत्थई या गहरे रग की ठोस तह के रूप मे जम जाता है। लावा की इस जमावट से भी

पठार बन जाते है । उत्तर-पूर्वी आयरलैण्ड और बम्बई के पूर्वी पठार लावा से ही बने हैं । ग्रीनलैण्ड और एटार्कटिका बर्फ से ढके हुए पठारो के उदाहरण है ।

खनिज सम्पत्ति की दृष्टि से पठारो का बहुत महत्व है । पश्चिमी आस्ट्रेलिया, दक्षिणी अफ्रीका, बोलेविया और मध्य भारत के पठारो मे क्रमश. सोना और ताबा, टीन और मैंगनीज़ आदि खनिज पदार्थ पाए जाते है। इसी प्रकार, अन्य प्राचीन पठारो मे भी बहुत से बहुमूल्य खनिज पदार्थ भरे पड़े है। उष्ण कटिबन्ध के पठारो का जलवायु ऊचाई के कारण मैदानो के जलवायु से ठडा है । इसलिए उस भाग के कई पठारो पर यूरोपियन लोग जाकर बस गए। इस तरह ब्राजील, पूर्वी अफ्रीका और टागानिका के पठारो का अच्छा विकास हुआ । उष्ण कटिबन्ध के पठारो पर सवाना (बड़ी घास) के मैदान पाए जाते है। उनका अभी बहुत कम विकास हुआ है। पर कई स्थानो पर अच्छी खेती होती है और जानवर पाले जाते है। आस्ट्रेलिया तथा पेटेगोनिया जैसे शीतोष्ण जलवायु के पठारो पर स्थित घास के मैदानो मे भेड़े पाली जाती है, और ऊन तथा मास के व्यापार से इन पठारी प्रदेशो को काफी आय होती है।

मैदान पृथ्वी के उन भागो को कहते है जो नीचे और समतल होते है। उनकी ऊचाई समुद्र की सतह से 1,000 फुट तक होती है । खास तौर से ऐसे मैदान चौरस होते है। क्षेत्रफल के लिहाज से मैदानो का विस्तार सबसे अधिक है, क्योकि मैदान धरती के अधिकाश भाग पर फैले हुए है। चट्टानो के कट-कट कर नीची भूमि बन जाने और नीची भूमि मे चट्टानो का चूरा जमा होने से मैदान बनते है। सब मैदान एक-से नही होते । वे कई तरह के होते है। सबसे पहले तो वे मैदान है, जिन्हे नदियो ने पर्वतो तथा पठारो को काट-छाट कर बनाया है। इस प्रकार के मैदानो को 'पैनीप्लेन' कहते है । फिनलैण्ड के मैदान, हडसन की खाडी के चारो तरफ के मैदान, मध्य रूस के मैदान, पूर्वी इग्लैण्ड के मैदान, फ्रास मे पेरिस के मैदान, दिल्ली के पश्चिम मे अरावली के कटने-छटने से बने हुए मैदान, और यूगोस्लाविया मे चूने की चट्टानो के कटने-छंटने से बने हुए कास्ट के मैदानं ऐसे ही मैदान है । पर ससार के अधिकाश मैदान नदियो द्वारा लाई हुई मिट्टी से बने है। उन्हे दुमट मिट्टी के मैदान कहते है । नदिया दुमट मिट्टी को अपने साथ बहा कर लाती और मार्ग मे जमा करती रहती है, जिससे मैदान बन जाते है। ऐसे मैदान अत्यन्त उपजाऊ होते है। वे शुरू मे कम चौडे और ढालू होते है। पर ज्यो-ज्यो नदी नीचे समतल भू-भाग की ओर बढती जाती है, वे अधिक चौड़े और सपाट होते जाते है।

नदी मे बाढ आने के समय ऐसे मैदान और भी चौडे हो जाते है, और उपजाऊ मिट्टी बाढ के समूचे क्षेत्र मे बिछ जाती है। नदी ज्यो-ज्यो पुरानी होती जाती है, त्यो-त्यो उसकी घाटी चौडी होती जाती है। इस प्रकार घाटी का एक किनारा दूसरे किनारे से मीलो दूर हो जाता है, और बीच मे नदी के साथ बह कर आई मिट्टी से बने लम्बे-चौडे समतल मैदान बन जाते है। गगा और सिध के मैदान, ईराक मे दजला और फरात के मैदान, उत्तरी चीन के मैदान, दक्षिणी अमरीका मे लाप्लाटा का मैदान और आस्ट्रेलिया के मरें डालिग के मैदान इसी तरह के है। जब नदी समुद्र मे गिरने लगती है तो वह अपने साथ लाई हुई मिट्टी वही जमा कर देती है। इस प्रकार एक तिकोना डेल्टा वन जाता है। पर सारी नदिया डेल्टा नही वनाती। डेल्टाई मैदानो पर हर साल मिट्टी जमा होती रहती है। इस कारण ये मैदान बहुत उपजाऊ और बहुत घने आबाद होते है। कई जगह डेल्टाई भागो मे नदियो की धाराए मिट्टी को एक ओर फेंक देती है, जिससे एक प्रकार की छिछली-सी झील वन जाती है। इसे लैगून कहते है। नील नदी के डेल्टा मे ऐसी वहुत-सी झीले पाई जाती है। जब नदी अपनी निचली घाटी मे से गुजरती है, तव उसकी चाल बहुत धीमी हो जाती है, और उसमे काटने-छाटने की शक्ति नही रह जाती। इस कारण नदी का मार्ग टेढा-मेढा हो जाता है। नदी अपने इस टेढे मार्ग के कारण कही-कही धनुष या घोडे की नाल के आकार की झीले बना देती है।
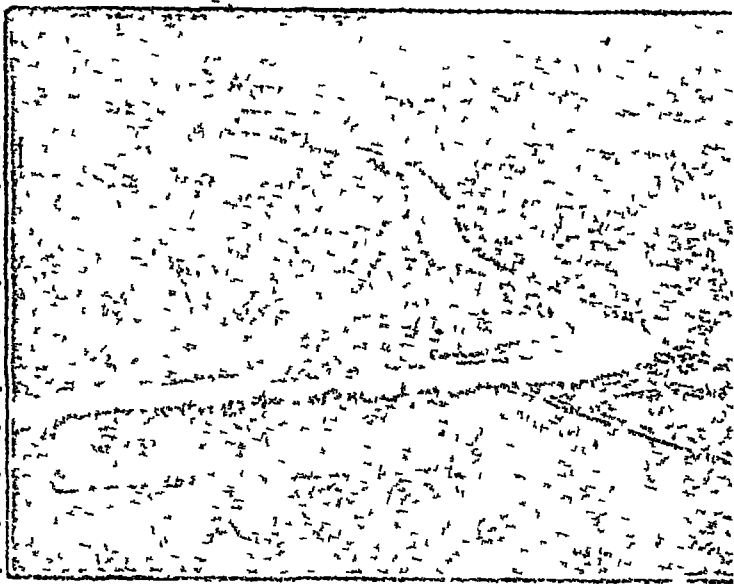
निचली घाटी में से गुजरती नदी

कुछ मैदान प्राचीन झीलो के भर जाने से भी बने है। जब कोई नदी किसी झील मे प्रवेश करती है, तो वह अपने साथ लाई हुई मिट्टी और कूडा-कर्कट आदि झील की तलहटी मे जमा कर देती है। इस प्रकार धीरे-धीरे झील भर जाती है और उसकी जगह एक मैदान बन जाता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि झील की तलहटी भूगर्भ की हलचलो के कारण ऊपर उभर आती है, और उसकी जगह

मैदान बन जाते हैं। कश्मीर की घाटी, हंगरी का मैदान, कनाडा के प्रेरीज और अमरीका के मैनीटोवा के मैदान इसी प्रकार बने हैं।

यूरोप तथा एशिया के उत्तरी मैदान तथा कनाडा के विस्तृत मैदान हिम-नदियो द्वारा लाई हुई रेत, बालू तथा ककड-पत्थर के जमा होने से बने है। ऐसे मैदानो मे जगह-जगह मीठे पानी की अनेक छोटी-छोटी झीले भी पाई जाती हैं। कभी-कभी पृथ्वी की गति के कारण समुद्र का उथला भाग समुद्र की सतह के ऊपर उठ आता है, अथवा समुद्री लहरो या समुद्र मे गिरने वाली नदियो द्वारा लाई हुई मिट्टी के तट पर जमा होते रहने के कारण बहुत समय बाद किनारे पर मैदान बन जाते हैं। अमरीका के फ्लोरिडा के मैदान तथा भारत के दक्षिण-पश्चिमी तट के मैदान इसी प्रकार बने हैं। कुछ मैदान ज्वालामुखी विस्फोट के समय निकलने वाले लावा के जमने से बने है। ज्वालामुखी के विस्फोट मे निकली हुई राख, लावा आदि आसपास की ऊची-नीची भूमि को समतल बना देती है, और इस प्रकार अत्यन्त उपजाऊ मैदान बन जाते है। इटली मे नेपल्स के पास के मैदान विसूवियस ज्वालामुखी की राख और लावा से ही बने हैं। दक्षिण भारत मे काली मिट्टी का क्षेत्र, अमरीका का वाशिगटन क्षेत्र, और जावा के मैदान इसी प्रकार बने हैं। पृथ्वी के रेगिस्तानी हिस्सो मे कई स्थानो पर रेत के विस्तृत मैदान पाए जाते हैं। हवा मे उड कर दूर-दूर तक रेत के फैलते रहने से कई जगह बालू के टीले बन जाते हैं। लीबिया और अरब के मैदान ऐसे ही रेगिस्तानी मैदान हैं। पानी की कमी के कारण ऐसे मैदान उपजाऊ नही होते। वहा केवल नखलिस्तानो मे कुछ पैदावार होती है। उत्तर-पश्चिमी चीन का लोयस का मैदान भी कुछ इसी प्रकार का है। वहा मिट्टी पहले नदियो द्वारा लाई गई थी, लेकिन अब हवा द्वारा जमा होती रहती है।

मैदान शुरू से ही मनुष्य की लीला-भूमि रहे हैं। ससार की तीन चौथाई से अधिक आबादी मैदानो मे ही बसी हुई है। ससार की प्राचीन सभ्यताओ का जन्म तथा विकास भी मैदानो मे बहने वाली नदियो की घाटियो मे ही हुआ। जैसे सिधु, नील, दजला और फरात की घाटियो की सभ्यताए। इसी कारण मैदानो को 'सभ्यता का पालना' कहा जाता है। समतल तथा उपजाऊ होने के कारण मैदान ही मुख्य रूप से खेतीबाडी का घर होते हैं। वर्षा कम होने पर मैदानो मे आसानी से और कम खर्च मे सिचाई के साधन बनाए जा सकते हैं। नदियो का बहाव भी उनमे धीमा होता है, इस कारण नावे तथा

जहाज आसानी के साथ चल सकते है। मैदानो मे रेलो और सडको का जाल भी सहज ही विछ सकता है। जिन मैदानो के निकट कोयला, दूसरे खनिज पदार्थ तथा कच्चा माल पाया जाता है, वहा उद्योग-धधो के केन्द्र वन गए है, और वडे-वडे नगर वस गए है।
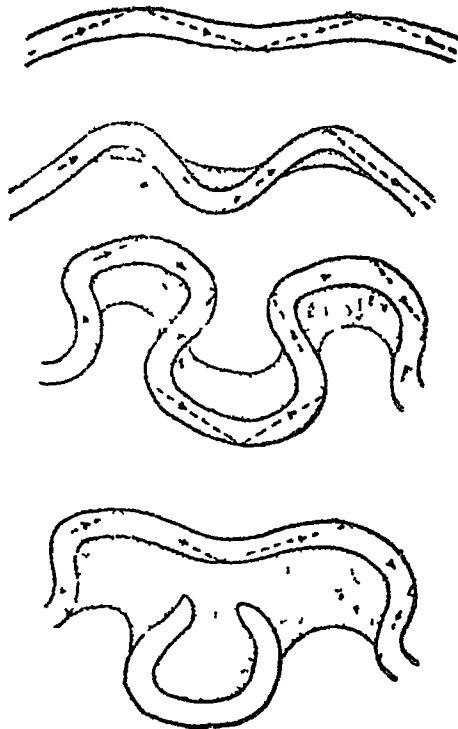
धनुषाकार झील का प्रादुर्भाव

(1

अरब देश

पश्चिम एशिया मे अरब देश भारत का करीबी पडोसी है। भूमध्य सागर से लेकर अरब सागर तक और लाल सागर से लेकर फारिस की खाडी तक यह देश फैला हुआ है। इस चौहद्दी के अन्दर सऊदी अरब, ईराक, शाम, कुवैत, लेबनान, जोर्डन और यमन की आजाद अरब रियासते है। ये सब रियासते आज सयुक्त राष्ट्र सघ की सदस्य है। इनके अलावा बहरीन, कतार, और दक्षिण अरब फेडरेशन की रियासते भी, जो न पूरी तरह आजाद है न पूरी तरह गुलाम और जो एक हद तक अग्रेजो के मातहत है, विशाल अरब देश मे शामिल है। इन सब प्रदेशो के रहने वालो का खान-पान रहन-सहन एक-सा है। ये सभी विशाल अरब कौम के अंग है।

अरबो को अपनी भाषा और अपनी भाषण शक्ति पर अभिमान था। वे अपने देश को 'अरब' और बाकी दुनिया को 'अजम' यानी 'गूगा' कहते थे। यह एक तरह से सही भी था। अरब देश ने 'अलिफ लैला' नाम का वह महान ग्रन्थ दिया, जो अब विश्व-साहित्य का भाग बन चुका है। 'अलिफ' का अर्थ हज़ार और 'लैला' का अर्थ रात है। 'अलिफ लैला' ग्रन्थ एक हजार कहानियो का सुन्दर सग्रह है। संसार की लगभग सभी भाषाओ मे उसका अनुवाद हो चुका है। 'अलिफ लैला' की कहानियो से भी बहुत पहले अरब देश ने एक दो नही बल्कि बहुत से पैगम्बरो को जन्म दिया, जिनमे हजरत इब्राहीम, हजरत मूसा, हजरत ईसा, और
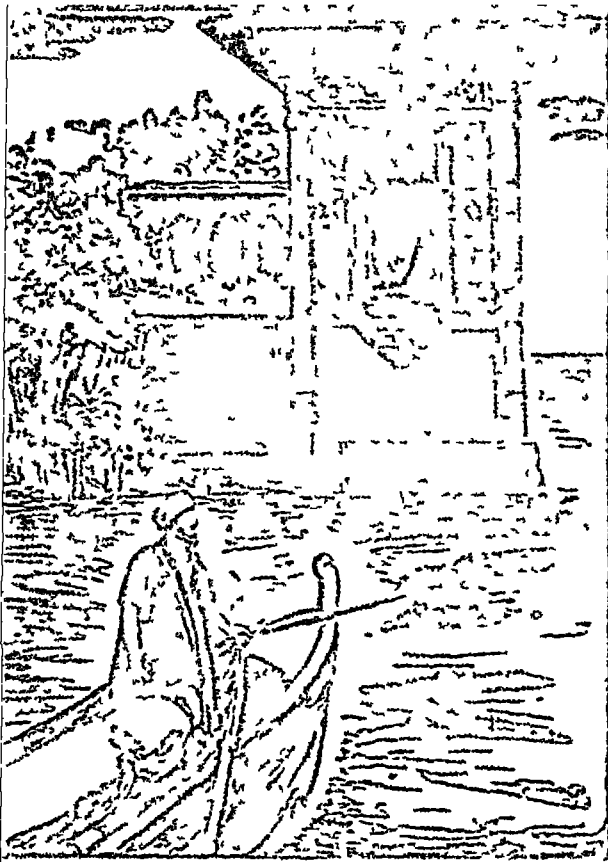
अलिफ लैला से एक दृश्य

हजरत मुहम्मद के चलाए हुए धर्म आज भी ससार मे फैले हुए है। भारत के इसराइली, यहूदी, ईसाई और मुसलमान इन्ही धर्मो के मानने वाले है।

यह एक दिलचस्प वात है कि तीन ओर, वल्कि चारो ओर पानी से घिरे होने के वावजूद अरव अधिकतर एक वडा रेगिस्तान है। वीच-वीच मे पानी और हरियाली के टुकड़े है, जिन्हे 'नखलिस्तान' कहते है। सवसे वडा और अच्छा नखलिस्तान यमन मे है, जहा वढिया-से-वढिया अगूर और अनार तक होते है। देश के वाकी हिस्सो का सवसे वडा मेवा खजूर है। दूर-दूर तक चले जाइए, पानी का कही निशान तक नही मिलता। वहा न अधिक अनाज पैदा हो सकता है, और घास-चारे की कमी के कारण न अधिक पशु ही पाले जा सकते है। यही वजह है कि वहा के निवासी अपने डेरे उठाए पानी और हरियाली की खोज मे जगह-जगह घूमते फिरते थे। इन्ही में से कुछ लोग, हजरत ईसा से साढे तीन

हजरत मूसा पहाड से नीचे उतरत है

रेगिस्तान का एक दृश्य

हजार साल पहले, पानी और हरियाली की खोज मे घूमते हुए उस इलाके मे जा निकले जिसे आज ईराक कहते है और जहा दजला और फिरात नाम की दो वडी नदिया वहती है। वहा जितना पानी वह रहा था, उतना पानी उन्होने पहले कभी नही देखा था। सवने वही अपने डेरे गाड दिए और वही वस गए। आगे चल कर ईराक मे उन लोगो ने अश्शुर और वावुल जैसी महान् सभ्यताओ की नीव डाली और उनको परवान चढाया। इन सभ्यताओ को ससार की पहली सभ्यताए माना जाता है और उनके खण्डहर वगदाद से थोडी दूर आज भी अपने सिरजने वालो के गुण गा रहे है।

उसी नस्ल की दूसरी शाखाओ ने अपने घरो से निकल कर शाम, फिलस्तीन, मिस्र और हब्श (इथियोपिया) आदि मे अपनी वडी-वडी वस्तिया वसाई और उन जगहो पर अपनी सभ्यता के गहरे निशान छोडे। इजील, तौरेत (यहूदियो की पुस्तक) और कुरान मे हमे उन धर्म सभ्यताओ का हाल मिलता है। इनमे से मिस्र और हब्श अफ्रीका महाद्वीप मे है।

हजरत मुहम्मद से पहले के ठेठ अरब निवासियो का खास प्रदेश हेजाज था, जिसमे मक्का और मदीना के शहर है। वे सैकडो छोटे-बडे कवीलो या विरादरियो मे वटे हुए थे। इन कवीलो मे आए दिन लडाइया होती रहती थी

ऊट की पीठ पर वना एक अरव क घर

जो छोटी-छोटी बातो पर एक-दूसरे की जान के ग्राहक और खून के प्यासे हो जाते थे, हजरत मुहम्मद की तालीम से एक गुथे हुए राष्ट्र की तरह आपस मे मिल-जुल कर रहने लगे। आपस की दुश्मनी और वैर की जगह उनके दिलो मे एक-दूसरे के लिए प्रेम पैदा हो गया, और आत्मविश्वास की एक नई शक्ति उनके अन्दर उभरी। हजरत मुहम्मद के धार्मिक आन्दोलन ने अपने देश पर ही नही, सारे ससार पर प्रभाव डाला। हजरत मुहम्मद का धर्म उनकी जिन्दगी मे ही सारे देश मे फैल गया। सन् 632 ई० मे वह परलोक सिधारे। इसके बाद तीस बरस बीतते-न-बीतते, अरब के अलावा ईरान, आर्मीनिया, मिस्र, उत्तर अफ्रीका और स्पेन तक अरबो की हुकूमत फैल गई। इनमे से अधिकतर देशो मे अरबी बोली जाने लगी, और उनकी सभ्यता बदल कर अरब सभ्यता के साचे मे ढल गई। यही कारण है कि मिस्र और उत्तर अफ्रीका के देशो की भाषा आज भी अरबी है और वहा के रहने वाले अपने को अरब कहते हैं। अरबो ने दिन दूनी रात चौगुनी तरक्की की। देखते-देखते वे तुर्किस्तान, मगोलिया और चीन तक पहुंच गए, जहा आज भी मुसलमानो की बहुत बडी आबादी मौजूद है।

बगदाद, जो आज ईराक की राजधानी है, सातवी सदी ई० मे पहली बार अरब साम्राज्य की राजधानी बना। उस जमाने मे बगदाद दुनिया के सबसे अधिक प्रगतिशील नगरो मे था। और बातो के अलावा वहा यूनानी और सस्कृत भाषाओ की बडी-बडी पुस्तको के अनुवाद किए गए और अनेक विषयो पर नई-नई पुस्तके लिखी गई। खासकर विज्ञान और तिब (यूनानी चिकित्सा-पद्धति) के मैदान मे अरबो ने नए-नए प्रयोग किए, जिनसे सारे ससार को भारी लाभ पहुचा। बगदाद के

बगदाद का एक दृश्य
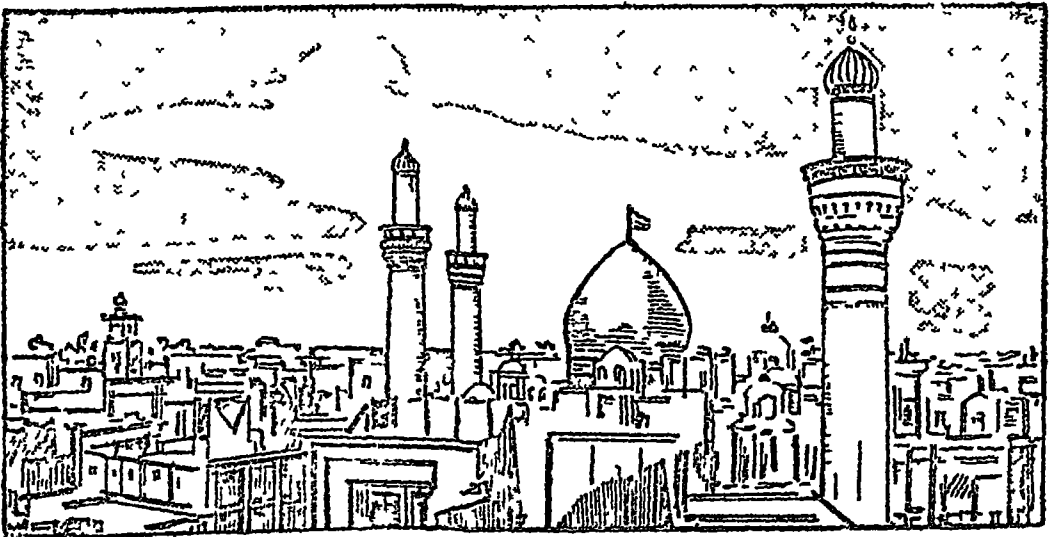
मशहूर सम्राट् हारू रशीद का सन् 809 ई० मे देहान्त हुआ । उसके कुछ अरसे वाद वगदाद की भी अवनति शुरू हो गई ।

जब सन् 1914 ई० की वडी जग शुरू हुई, उस समय सारे अरव देश पर तुर्को का झडा लहरा रहा था । तुर्को ने अरव देश को अलग-अलग सूबो मे वाट रखा था । हर सूबे को वे एक 'विलायत' कहते थे, और हर विलायत का एक वाली या गवर्नर होता था । अरवो के साथ तुर्को का व्यवहार देर तक अच्छा न रह सका । बीसवी सदी शुरू होने से पहले अरवो ने तुर्को की गुलामी से छुटकारा पाने की कोशिशे शुरू कर दी ।

सन् 1918 ई० के महायुद्ध मे तुर्को ने जर्मनी का साथ दिया और मित्र राष्ट्रो यानी अग्रेजो, फ्रासीसियों, और रूसियो के विरुद्ध लडाई का ऐलान कर दिया। उस समय हेजाज की विलायत मे तुर्को की तरफ से शरीफ हुसैन वहा का हाकिम था । शरीफ हुसैन तुर्क नही, अरव था। मक्का हेजाज की राजधानी थी। मक्का मे ही कावा था और कावा की रखवाली भी शरीफ हुसैन के सुपुर्द थी । यह वहुत वडे सम्मान की वात थी। शरीफ हुसैन तुर्को की गुलामी के जुए को उतार फेकना चाहता था । अग्रेजो ने इससे लाभ उठाया और अरवो को तुर्को के खिलाफ विद्रोह करने के लिए तैयार कर लिया ।

मित्र राष्ट्रो ने शरीफ हुसैन से यह सन्धि कर ली कि भूमध्य सागर से लेकर अरव सागर तक, और लाल सागर से फारिस की खाडी तक एक अरव राज्य रहेगा और यह सारा देश आजाद होगा । लेकिन लडाई खत्म होने के वाद उन्होने उसे बहुत-से भागो मे वाट कर उसके कई अर्ध-स्वतन्त्र राज्य वना दिए और उन पर अग्रेजो और फ्रासीसियो की प्रभुता कायम कर दी।

वात यह थी कि अरव देश पर अग्रेज़ो की दृष्टि बहुत पहले से थी, जिसके दो मुख्य कारण थे। एक तो यह कि भारत और दूसरे एशियाई देशो का दरवाजा स्वेज अरव के किनारे था। दूसरे, वहा की तेल की दौलत पर अग्रेजो की बहुत दिनो से आख थी । वैसे तो अरब देश अधिकतर रेगिस्तान है, और उसमे सिवा खजूर के और कुछ वहुत कम पैदा होता है, पर इस देश को प्रकृति ने मिट्टी के तेल की बहुत वडी दौलत दी है। आज अरब देश मे ईराक, सऊदी अरब, कुवैत, वहरीन आदि मे दूध की नही तो पेट्रोल की नदिया अवश्य वह रही है । वहा के शासको को इससे आए साल खरवो रुपये की आमदनी होती है।

तेल पाइप

अरबी पोशाक

आज अरव देश मे 7 आजाद रियासते हैं ईराक, सऊदी अरव, यमन, कुवैत, शाम, जोर्डन और लेवनान । अदन पर अग्रेजो का अधिकार है। पूर्व मे वहरीन और अन्य छोटी-छोटी रियासते हैं । उन पर भी अग्रेजो का जवरदस्त असर है।

दूसरे रेगिस्तानी देशो की तरह अरवो का जीवन भी शुरू से विल्कुल सीधा-सादा रहा है। अरव लोग आम तौर से टखनो तक लम्वा कुर्ता पहनते हैं, जिसके ऊपर उतना ही लम्वा एक कपडा होता है, जिसे, वे अवा कहते हैं। अवा आम तौर से ऊट के वालो से वुना हुआ होता है। सिर पर एक वडा-सा चौकोर रख कर वे उसे ऊट के वालो की एक दोहरी रस्सी से कस लेते हैं। यह पहनावा उनको गर्मी मे रेगिस्तान की गर्म रेत और जाडो मे तेज ठडी हवा दोनो से वचाता है। औरतो का भी यही पहनावा है। उनके बदन पर अवा की जगह एक लम्वी काली चादर होती है, जो कही-कही कुर्ते का भी काम दे देती है।

अरबी घोडे दुनिया मे प्रसिद्ध है और एक समय अरवो की आमदनी का सबसे बडा साधन रहे है। आज भी अरवो को घोडे का अच्छा पारखी और माहिर समझा जाता है। वे अच्छे घुडसवार भी होते है। लेकिन उनका सवसे वडा साथी ऊट है, जिसे रेगिस्तान का जहाज कहा जाता है। ऊट जाडो मे पचीस दिन और गर्मियो मे पाच-पाच दिन तक विना पानी पिए रह सकता है। खजूर के अलावा, ऊटनी का दूध अरवो का मुख्य भोजन है। ऊट के वालो
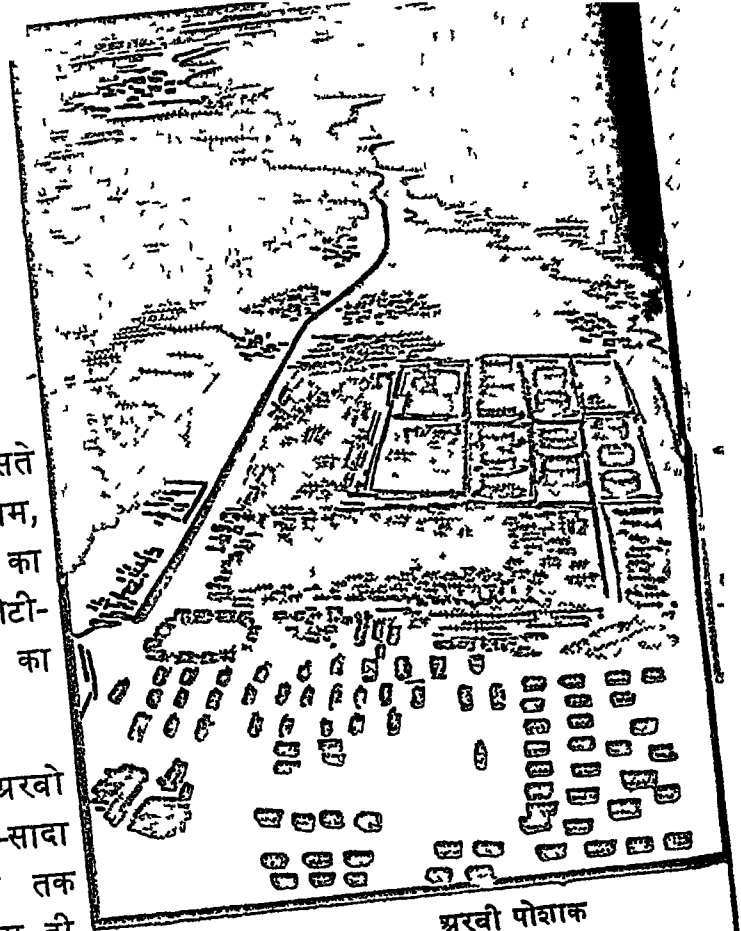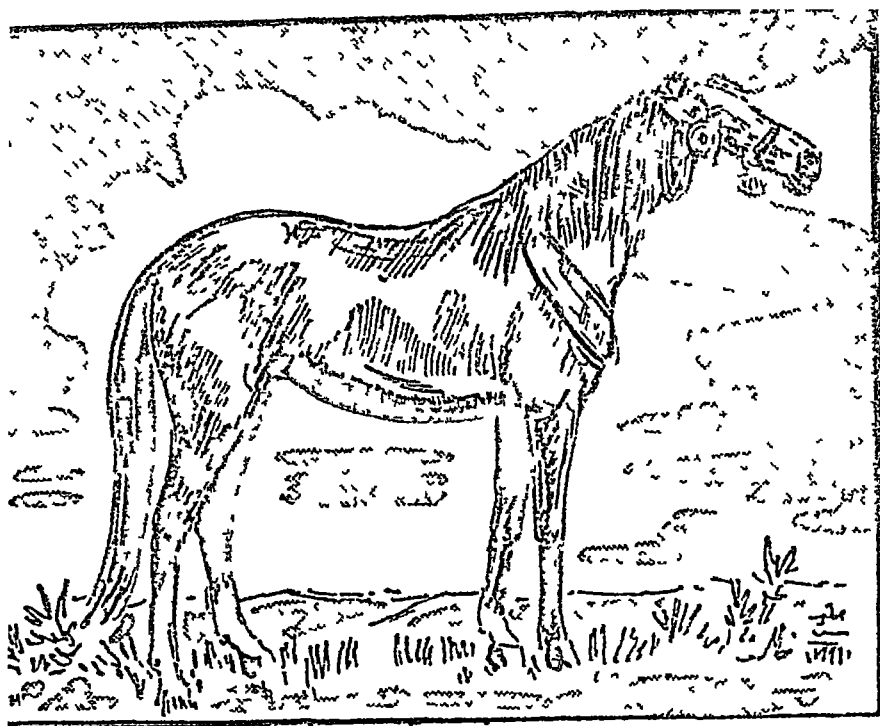
अरबी घोडा

से वे अपने कपडे और तम्बू बुनते हैं। उसकी खाल से वे घोडो और ऊटो की काठी और दूसरी चीजे बनाते हैं।

अतिथि का सत्कार करना अरबो का सबसे बडा गुण है। जब कोई अतिथि उनके घर आ जाता है तो उसका सत्कार करने मे वे कुछ उठा नही रखते। और अगर उनके पास कुछ और नही होता तो वे अपने ऊट तक को, जो उनके जीवन का सबसे बडा सहारा होता है, मेहमान के लिए जिबह कर देते है। जब तक मेहमान घर मे रहता है, उसकी इज्जत को वे अपनी इज्जत समझते हैं, और अगर कोई उस पर किसी तरह का हमला करता है तो उसके बचाव के लिए वे अपनी जान तक दे डालते हैं।

अरबो का सामाजिक जीवन भारत से कई बातो मे मिलता है, जैसे मर्द रोजी कमाते हैं और औरते गृहस्थी के कामो की जिम्मेदार होती हैं। शादी-ब्याह की रस्मे बहुत सादी और भारतीय मुसलमानो की रस्मो से मिलती है। औरते आम तौर पर बुर्का ओढती हैं। घर के काम-काज के सिलसिले मे वे बाहर निकलती हैं, पर बुर्का ओढ कर।

अरबो का जीवन अब तेजी से बदलता जा रहा है। खानाबदोशी की जगह अब वे एक जगह बस कर रहने के आदी होते जा रहे हैं। इसका बडा कारण यह है कि गरीब अरबो को, जो अब तक पानी और भोजन की खोज मे फिरा करते थे, तेल के कारखानो मे अब अच्छी मजदूरी मिलने लगी है। इसके साथ ही, उनके रहन-सहन का स्तर भी ऊचा होता जा रहा है।

अरब खानाबदोश

अरब लोग आज नखलिस्तान मे कबीले बना कर रहते है । वे लम्बे, गोरे, मजबूत और मेहनती होते है। अरब स्त्रिया भी मेहनत से जी नही चुराती, बल्कि अपना काम बडी बुद्धिमानी और मुस्तैदी से करती है। हर घर मे एक मुखिया होता है, जिसकी बात घर के सभी लोग मानते है। पूरी बस्ती का भी एक मुखिया होता है जिसे वे शैख कहते है । धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक मामलो मे बस्ती के सब लोग अपने शैख की राय मान कर चलते है। भारतवासियो के साथ अरबो का सम्बन्ध आज पूरी मित्रता का सम्बन्ध है।

पालकी में बैठी अरब औरतें

(2)

तिब्बत

भारत के वहुत से रहने वाले दलाई लामा और पचेन लामा के नामो को जानते होगे। दलाई लामा तिव्वत के शासक थे और पचेन लामा वहा के सवसे वडे धार्मिक नेता या पुरोहित है। पुराने तिव्वतियो का विश्वास था कि हर दलाई लामा मरने के तुरन्त वाद फिर किसी वच्चे के रूप मे जन्म लेता है। इसलिए दलाई लामा के मरने पर देश के कोने-कोने से सभी नए पैदा हुए वच्चो का पता लगा कर उनकी सूची तैयार की जाती थी। फिर देश के वडे-वडे लामा और राज्य के अधिकारी कई दिन तक प्रार्थना करते थे। उसके वाद सवकी राय से तीन वच्चो के नाम सूची मे से चुन लिए जाते थे और अलग-अलग पर्चियो पर तीनो नाम लिख कर उन पर्चियो को एक सोने के वर्तन मे डाल दिया जाता था। उस वर्तन को खास उसी काम के लिए पुराने समय मे किसी सम्राट् ने वनवाया था। इसके वाद तिव्वत के वहुत से लोग जमा होकर सात-आठ दिन तक प्रार्थना करते थे। तव यह जानने के लिए कि कौन वच्चा दलाई लामा का अवतार है, एक आदमी आख मूद कर उस वर्तन मे से एक पर्ची निकाल लेता था। उस पर्ची पर जिस वच्चे का नाम होता था, उसी को 'दलाई लामा' मान लिया जाता था।

तिव्वत के इतिहास की पुरानी वातो की जानकारी अव भी वहुत कम है। पर जहा तक मालूम हो सका है, वहा के सवसे पुराने राजा 'वोन' कहलाते थे। वे टोने-टोटको मे विश्वास करते थे और अनेक रहस्यपूर्ण देवी-देवताओ को मानते थे। उन्ही

राजाओ मे से एक राजा ने दो विवाह किए थे। उसकी दोनो रानिया बौद्ध धर्म को मानती थी। कहा जाता है कि उन्ही के प्रभाव से राजा, दरबारियो और सारी प्रजा ने भी बौद्ध धर्म स्वीकार कर लिया था।

आठवी शती के अन्त मे 'पद्मसम्भव' नाम के एक भारतीय तिब्बत बुलाए गए। पद्मसम्भव ने वहा बौद्ध धर्म का बडा आन्दोलन चलाया। परन्तु उन्होने शीघ्र ही यह समझ लिया कि तिब्बत के लोग बौद्ध धर्म के असल रूप को स्वीकार नही करेगे। इसलिए उन्होने बौद्ध धर्म के साथ वहा के पुराने पूजापाठ को भी जोड दिया। इस प्रकार तिब्बत मे बौद्ध धर्म का वह रूप चल पडा जिसे हम 'लामा पथ' कह सकते है।

लामा पथ चलाने वाले को तिब्बत मे 'गुरु रिम्पोच' यानी महान् गुरु कहते है। वे उसे 'चेनरेजी' का अवतार मानते है, और उसकी पूजा करते है। 'चेनरेजी' उस देवता का नाम है, जिसे वहा के लोग अपने देश का सिरजनहार और रक्षक समझते है। लामा पथ के अनुसार 'आदि बुद्ध' यानी ससार मे सबसे पहले जन्म लेने वाले बुद्ध, हर तरह से पूर्ण है। ससार की कोई भी बात उनसे छिपी हुई नही है। उनके पाच रूप है, जिन्हे 'ध्यानी बुद्ध' कहा जाता है। 'ध्यानी बुद्ध' बहुत ही सूक्ष्म और पवित्र माने जाते है। उन पाच 'ध्यानी बुद्धो' की पाच सन्ताने हुई, जिन्हे 'ध्यानी बोधिसत्व' कहते है। प्रत्येक 'ध्यानी बोधिसत्व' को एक ब्रह्माड का सिरजनहार और कर्ता-धर्ता माना जाता है। दलाई लामा भी 'ध्यानी बोधिसत्व' के एक अवतार माने जाते है। इसीलिए उन्हे ससार के सब अधिकार प्राप्त होते है और उन्हे तिब्बत का एकछत्र शासक माना जाता है।

शक्तिशाली मगोल राजा, 'अत्तिला खा' ने सन् 1571 ई० मे तीसरे महान् लामा को दलाई की उपाधि दी थी। 'दलाई' का अर्थ है समुद्र। तब से शासन करने वाले तिब्बत के हर लामा को 'दलाई लामा' कहा जाता है।

लगभग 100 वर्ष बाद पाचवे 'दलाई लामा' ने समूचे तिब्बत का राजा होने का ऐलान किया। उनके इस दावे को चीन के सम्राट् ने भी स्वीकार कर लिया। उन्ही पाचवे दलाई लामा ने अपने प्रिय और पूज्य गुरु को 'पचेन रिम्पोच' की उपाधि दी। 'पचेन रिम्पोच' का अर्थ है 'महान् पवित्र गुरु'। पचेन रिम्पोच को दलाई लामा ने ध्यानी बुद्ध का अवतार भी मान लिया। इसलिए पचेन रिम्पोच का वारिस भी वही होता है, जिसको उनका अवतार मान लिया जाता है। पचेन रिम्पोच

दलाई लामा

को ही 'पचेन लामा' भी कहते है । 'पचेन रिम्पोच' या 'पंचेन लामा' धर्म और दर्शन के मामले मे दलाई लामा से बडा होता है। पर उसे राजकाज के मामलो मे कोई अधिकार नही होता । यही कारण है जो 'पचेन लामा' की स्थिति अक्सर डावाडोल रहती है । यहा तक कि पिछले 'पचेन लामा' को सन् 1923 ई० मे चीन भागने के लिए मजवूर होना पडा था। उनकी मृत्यु भी वही हुई। मौजूदा पचेन लामा को भी चीन के लोगो ने ही 'तशील लुम्पो' के मठ मे पिछले पचेन लामा का उत्तराधिकारी बनाया था । वर्तमान दलाई लामा तिब्बत के चौदहवे दलाई लामा है।

चारो ओर पहाडो से घिरा हुआ तिब्बत ससार का एक वहुत ऊचा पठारी प्रदेश है । उसका क्षेत्रफल हमारे देश के क्षेत्रफल से दो-तिहाई से कुछ कम, लगभग साढे सात लाख वर्गमील है। वहा की कुल आबादी 60 और 70 लाख के बीच है, और हमारे देश की आबादी लगभग 44 करोड है। तिब्बत के अधिकतर लोग दक्षिणी और पूर्वी इलाको मे रहते है। पश्चिमी भाग मे आबादी वहुत ही कम है।

-तिब्वत का अधिकतर भाग समुद्र के धरातल से 16,000 फुट की ऊचाई पर है । इसलिए वहा सर्दी खूब पडती है । उत्तर-पश्चिमी भाग मे तो लगभग सारे साल वर्फ जमी रहती है। गर्मी के दिनो मे ऊचे पठार के कारण वहा तेज और सख्त धूप होती है। दक्षिण-पूर्वी भाग मे सर्दी कुछ कम होती है। मानसूनी वादल हिमालय को पार नही कर पाते, इसलिए तिव्वत मे वर्षा नही होती । केवल गर्मी के दिनो मे दक्षिण-पूर्वी इलाके मे थोडी वर्षा हो जाती है।

तिब्बत को प्राकृतिक वनावट के हिसाब से तीन भागो मे वाट सकते है। देश के उत्तरी भाग मे लगभग 16,000 फुट की ऊचाई पर चाग ताग के पठार है। उनके

पचेन लामा

उत्तर मे 'क्युनलुन' के पर्वत है और दक्षिण मे 'सागपो' नाम की नदी वहती है। वहा वहुत सी झीले है, जिनका पानी खारा है। झीलो के खारी पानी से नमक वनाया जाता है। उस इलाके मे जगल नही है, हा कही-कही घास जरूर पैदा होती है। ठडे जलवायु के कारण उस भाग मे पशु वहुत कम है, इसलिए घास की थोडी उपज भी काफी होती है। कही-कही मूली और वालू के खेत भी उस भाग मे दिखाई देते है, पर अनाज नही पैदा होता। इसलिए खाने के लिए दक्षिण-पूर्वी मैदानो से जौ लाया जाता है। वहा के रहने वाले अधिकतर खानावदोश है, जो याक और भेडो के झुड लिए चरागाहो की खोज मे घूमा करते है। याक हमारे यहा के बैल जैसा एक पशु होता है, जो हल चलाने तथा सामान ढोने के कम आता है।

मैदानी इलाका

उत्तरी पठार के दक्षिण का इलाका मैदानी है। उसमे सिधु, सतलुज और सागपो नदिया वहती है। तिव्वती भाषा मे 'सागपो' का अर्थ है, 'पवित्र करने-वाला'। धार्मिक दृष्टि से हमारी गगा की भाति ही तिव्वत मे सागपो नदी पवित्र मानी जाती है। वही सागपो नदी जव भारत की सीमा मे दाखिल होती है तो वह 'ब्रह्मपुत्र' कहलाने लगती है। उस नदी के विषय मे दो वाते वडी ही दिलचस्प है। एक तो यह कि उसकी सहायक नदिया उसकी उल्टी दिशा से यानी पूर्व से पश्चिम की ओर वह कर उसमे मिलती है। दूसरी यह कि 12,000 फुट की ऊचाई पर वहते हुए भी यह नदी इतने धीमे-धीमे वहती है कि उसमे वडी आसानी से नाव चला सकते है।

तिब्बत की नावे हमारे यहा की नावो जैसी नही होती। तिव्वत के मल्लाह वास या लकडी के ढाचे पर याक की खाले मढ कर अपनी नाव बनाते है। कुछ लोग वृक्षो की लचीली और मजवूत टहनियो को वट कर उनसे भी नाव तैयार कर लेते है।

याक
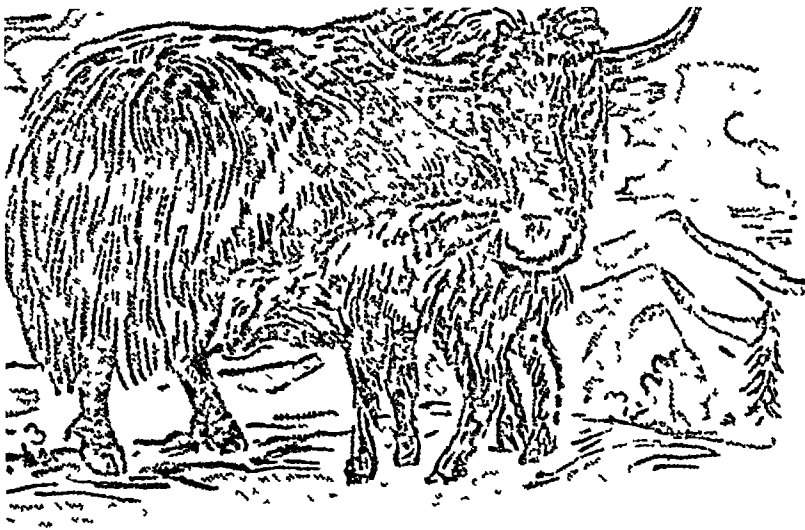
ल्हासा, शिगात्सी और जियात्सी, इस भाग के प्रसिद्ध नगर है। यह तिब्बत का मुख्य भाग है। यही पर दलाई लामा और सरकारी कर्मचारी लोग रहते है।

चाग तांग और चीन के बीच का इलाका

चाग ताग के पठार तथा खास चीन के बीच कुछ पहाड और घाटिया है। वहा एवाग हो, याग्त्सी, क्याग, मीक्याग और सालवीन नदिया वहती है। पहली दो नदिया चीन और वाकी दोनो स्याम और वर्मा मे वहती हुई चली जाती है। याग्त्सी, क्याग, मीक्याग और सालवीन तिब्वत मे एक-दूसरे से लगभग सट कर वरावर-वरावर वहती है। उस इलाके के कुछ जिले औरो के मुकावले मे सभ्यता मे आगे वढे हुए है। 'दरगी' वहा का सवसे अधिक सभ्य जिला है।

तिब्वत वहुत ऊचा-नीचा देश है, इसलिए वहा रेले नही है। सवारी के लिए आम तौर से टट्टू और खच्चर काम मे लाए जाते है। माल ढोने का काम कुलियो और याक से लिया जाता है। ऊचे-ऊचे पहाडो मे अलग-अलग दर्रे है। यात्री और व्यापारी उन्ही मे से होकर आते-जाते है। हाल ही मे चीन की नई जनवादी सरकार ने तिब्वत से वरावर सम्वन्ध वनाए रखने के लिए तिब्वत से चीन तक एक नई सडक वनवाई है।

दलाई लामा का महल

तिब्वत में खनिज पदार्थ वहुत मिलते है। सोना, चादी, तावा, लोहा आदि लगभग सभी तरह की धातुए वहा पाई जाती है। परन्तु अभी उनके निकालने का कोई खास प्रवन्ध
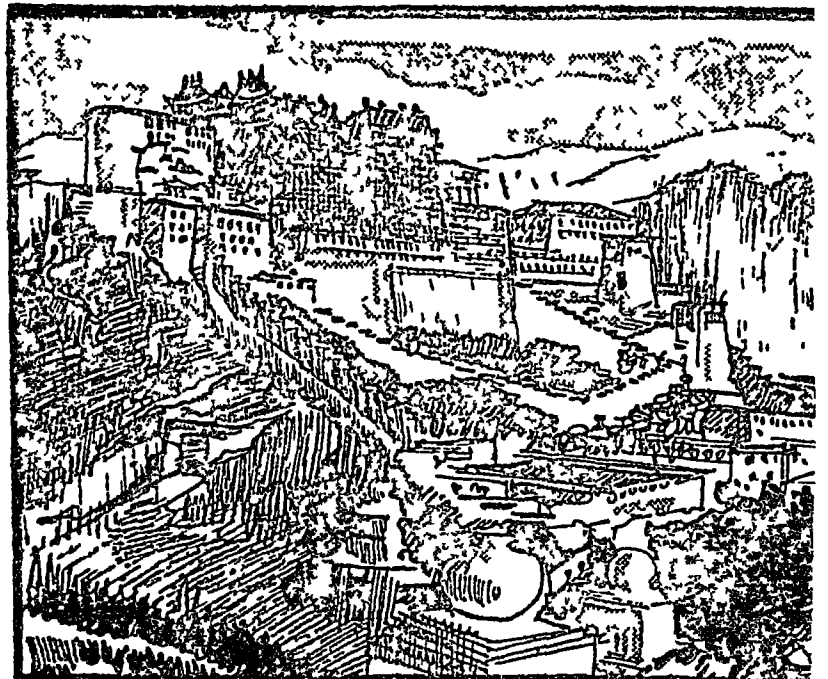
घोड पर सवार एक तिब्बती

नही हो सका है । देश के दक्षिण-पूर्वी और बीच के भागो मे गेहू, जौ, मटर, कपास और कही-कही मक्का और चावल भी पैदा होते है। इस इलाके मे जगल भी है, जिनमे चीड, अखरोट, बास तथा दूसरी कीमती लकडिया मिलती है। जानवरो मे आमतौर से भेड और बकरिया बहुत पाली जाती है, इसलिए ऊन की कताई-बुनाई का काम वहा का एक खास घरेलू धधा है।

तिब्बत के निवासी शक्ल-सूरत और आदतों मे बहुत कुछ साइबेरिया के मैदानो (स्टेपीज) के चरवाहो से मिलते है । उनमे सर्दी और भूख सहने की शक्ति बहुत होती है। वहा के सभी निवासी किसी-न-किसी रूप मे किसी मठ या विहार से सम्बन्धित होते है।

तिब्बती पुरुष ठिगना होता है। अक्सर उसका कद 5 फुट 5 इच होता है। केवल पूर्वी तिब्बत मे पौने छ फुट कद के आदमी मिलते है । औरतो का कद और भी छोटा होता है। औरतो का सिर ऊपर से चपटा और लम्बा होता है, और उनके बाल लम्बे, काले और किसी-किसी के घुघराले भी होते है। उनकी आखे भूरी, नाक मोटी और चपटी, नथुने चौडे, गाल की हड्डी उठी हुई, दात मजबूत मगर ऊचे-नीचे, कान बडे और उठे हुए, हथेली गोल, कधे चौडे और पाव के पजे छोटे और चौडे होते है। पुरुषो और स्त्रियो दोनो के शरीर का रग हल्का भूरा होता है ।

पुरुषो और स्त्रियो, दोनो की पोशाक एक लबादे जैसी होती है, जिसमे पूरी गर्दन और कलाई तक हाथ ढके रहते है। आम तौर से पुरुषो का लबादा घुटनो तक और स्त्रियो का टखनो तक होता है । पर रईसो और पुरोहितो के लबादे भी टखनो तक होते है। गर्मियो मे मामूली आदमी सूती कपडे और बडे आदमी रेशमी लबादे बनवाते है। जाडो मे लबादे के अन्दर भेड की खाल का अस्तर लगा दिया जाता है । मध्य तिब्बत मे स्त्रिया भडकदार चूनरी जैसी पोशाक भी पहनती है। इधर कुछ दिनो से वहा कमीज और पाजामे का रिवाज भी चला है, लेकिन तिब्बती कमीज-पाजामे की काट यूरोप के ढंग की नही होती । तिब्बती लोगो के जूते कपडे,

चमडे या ऊन के वने होते हैं। वे लोग रंग-विरंगे जूते वहुत पसन्द करते हैं।

दूध से वनी हुई चीजे, मास, जौ का आटा, पनीर और चाय उनका रोज का खाना है। आपस के व्यवहार मे वे अदव-कायदो का वहुत ध्यान रखते हैं। छोटे और वड़े सवसे वातचीत करने के कुछ नियम होते हैं, जिनका पालन सवको करना पडता है।

तिव्वत मे रमते हुए व्यापारियो का एक वर्ग है। वे काले याक (तिव्वती वैल) के वालो के वडे-वडे तम्वू लिए घूमते रहते हैं। उत्तर मे जाकर वे झीलो से नमक निकालते हैं, पूर्व की ओर चीन के भिन्न-भिन्न भागो मे जाकर चाय का व्यापार करते हैं और दक्षिण की ओर से भारत मे आकर ऊन, खाल तथा चीनी रेशम की तिजारत करते हैं। वाल्मीकि रामायण मे चीनाशुक (चीनी रेशमी कपडा) को वडा पवित्र माना गया है।

तिव्वती लोग केवल उन्ही पहाडों के नाम रखते हैं जिनकी वे पूजा करते हैं। कोमलहारी पहाड (देवताओ का पहाड) वहुत पवित्र माना जाता है। यह पहाड 'तुना' और 'फारी' के मैदानो के साथ-साथ पचास मील तक चला गया है। उसी तरफ और भी कई ऐसे पहाड हैं जिनकी पूजा की जाती है।

तिब्वती स्त्रियां

खेतो में काम करती
तिब्बती स्त्रिया

तिब्बत के मेले बहुत प्रसिद्ध है। कुछ मेले धार्मिक और कुछ मौसमी होते है। धार्मिक मेलो मे लामा लोगो का बडा सम्मान किया जाता है। बडे लामा पूजा में सबसे आगे रहते हैं। पूजा के बाद नाच होता है। नाच मे लामा लोग भी भाग लेते है। लोग तरह-तरह के स्वाग बना कर नाचते हैं। स्वागो मे अधर्म और अन्याय पर धर्म और न्याय की विजय दिखाई जाती है। मेले के अन्तिम दिन आटे का एक पुतला बना कर लामा लोग उसके आगे-पीछे नाचते है। इस नाच मे राक्षस को मारने का स्वाग रचा जाता है। तिब्बती नाचो मे तरह-तरह के बाजे भी बजते है। उनमे से कोई-कोई बाजे नौ फुट से भी अधिक लम्बे होते हैं। मेलो मे स्त्री-पुरुष सभी एक साथ भाग लेते हैं।

तिब्बत बहुत पुराने समय से चीन का एक भाग रहा है। वहा के शासक चीन के सम्राट् को कर देते रहे हैं। उसके बदले मे चीन के सम्राट् पर तिब्बत की रक्षा की जिम्मेदारी होती थी। सन् 1950 ई० मे चीन की नई सरकार ने फौज भेज कर तिब्बत को सीधा अपने अधिकार में ले लिया।

अब तिब्बत पर दलाई लामा का शासन नही रहा। दलाई लामा इस समय भारत मे रहते हैं और हजारो तिब्बती भारत भाग आए है। तिब्बत अब चीन का एक प्रदेश है।
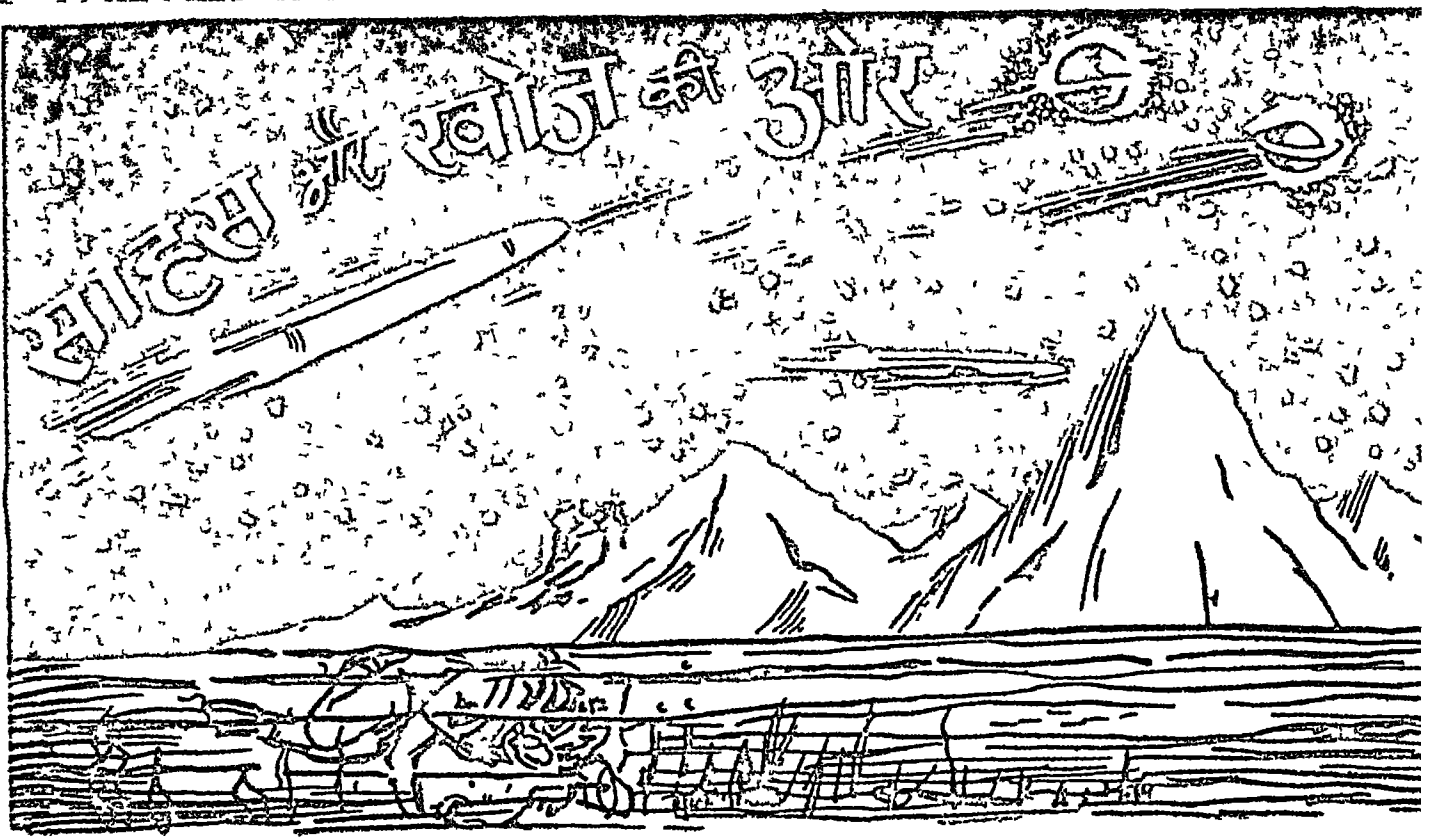
हुएनसांग

बौद्ध धर्म के मानने वालो के लिए भारत उतना ही पवित्र देश है जितना कि मुसलमानो के लिए अरब या ईसाइयो और यहूदियो के लिए फिलस्तीन। इसलिए दूसरे देशो के बौद्ध मतावलम्बी भारत की यात्रा के लिए बहुत पहले से आते रहे है। हुएनसाग की भारत-यात्रा भी इसी सिलसिले की एक कडी थी।

हुएनसाग एक चीनी यात्री था। वह बौद्ध धर्म को मानता था। वह सातवी सदी ईसवी के शुरू मे भारत आया था। बौद्ध धर्म के बारे मे जो प्रश्न उसके दिल मे उठे, उनको हल करने के लिए उसने यह यात्रा की थी। उसने उस समय के भारत का आखो देखा हाल लिखा है। हुएनसाग से भी पहले सन् 400 ईसवी मे फाहियान नाम का एक और चीनी यात्री भारत आ चुका था। चीन से भारत आने वाला वह शायद पहला यात्री था। उसने भी अपनी भारत-यात्रा का हाल लिखा है। उसकी यात्रा का हाल पढ कर हुएन-साग के दिल मे भारत आने की इच्छा और बढी।

सन् 603 ई० मे चीन के हुनाग सूबे के एक बौद्ध घराने मे हुएनसाग का जन्म हुआ था। 13 साल की उम्र मे उसने बौद्ध मत की दीक्षा ली और बौद्ध भिक्षु बन गया। तब ही से

उसने बौद्ध धर्म की पुस्तके पढनी शुरू कर दी । उन दिनो चीन मे 'सू' राजकुल का अन्त होने पर जो उथल-पुथल मची, उसके कारण हुएनसाग इधर से उधर मारा-मारा फिरता रहा । इसी भाग-दौड मे एक जगह उसे फाहियान की वह पुस्तक मिल गई जिसे पढ कर उसके दिल मे भारत आने और बौद्ध धर्म को समझने का विचार पैदा हुआ । पर चीन मे उन दिनो जो राजा था, उसे हुएनसाग का यह इरादा पसन्द न आया और उसने उसे भारत जाने की आज्ञा नही दी । लेकिन हुएनसाग भी अपनी धुन का पक्का था । वह लाचू पहुचा । लाचू चीन का एक शहर था, जहा तिब्बती व्यापारियो का आना-जाना रहता था । हुएनसाग ने उन व्यापारियो को बौद्ध मत की पुस्तके पढने को दी और उनको भारत की यात्रा करने का अपना इरादा भी बताया । उन लोगो ने उसकी यात्रा के लिए आवश्यक प्रबन्ध कर दिया । इस तरह हुएनसाग सन् 629 ई० मे भारत की ओर चल पडा । गोबी के विशाल रेगिस्तान और उत्तर एशिया के देशो को पार करता हुआ हुएनसांग उत्तर-पश्चिम की ओर से भारत मे दाखिल हुआ ।

भारत के सम्बन्ध मे उसने लिखा है कि यह देश तीन ओर समुद्र से और उत्तर मे बर्फीले पहाडो से घिरा हुआ है। इसका उत्तरी भाग चौडा और दक्षिणी भाग सकरा है, जैसे आधा चद्रमा । हुएनसाग के बयान के अनुसार उस समय भारत 70 प्रदेशो मे बटा हुआ था । उसने इन सब भागो का इकट्ठा और अलग-अलग हाल पूरे ब्यौरे के साथ दिया है । हुएनसाग की यात्रा-वर्णन से उस युग की जो बाते हमे मालूम होती हैं, उनमे से कुछ नीचे दी जाती हैं ।

शहरो और बडे-बडे गावो, दोनो के चारो ओर ऊची और चौडी दीवारे खडी की जाती थी । उनमे जाने के लिए बड़े-बडे फाटक होते थे । बधिक, मछेरे, नचनिए, जल्लाद, भगी और इसी तरह के दूसरे लोग अछूत माने जाते थे। उनके घर आबादी के भीतर ही होते थे, लेकिन उन्हे हमेशा सडक के बाईं ओर ही चलना पडता था। घर कच्ची ईंटो और खपरैल से बनाए जाते थे और मिट्टी मे गोबर मिला कर दीवारो पर पलस्तर कर दिया जाता था ।

बैठने और आराम करने के लिए, क्या राजा और क्या प्रजा, सभी लोग चटाई इस्तेमाल करते थे । बडे आदमियो की चटाइयां कामदार होती थी । राजा की गद्दी पर बहुमूल्य ओहार डाला जाता था । उसमे हीरे, जवाहर और मोती टके रहते थे ।

अधिकतर लोग धोती, लुंगी और चादर की तरह के बिना सिले कपडे पहनत थे । फूलदार या कढे हुए कपड़ो की किसी को चाह न थी । मर्द कमर के चारो ओर

धोती लपेटते थे। औरते साडी पहनती थी, जिससे उनका सारा शरीर ढका रहता था। उत्तर भारत मे, जहा जाडा अधिक होता है, बडी पहनने का रिवाज था। कुछ लोग खडाऊ पहनते थे, मगर अधिकतर लोग नगे पाव ही आते-जाते थे। लोग सफाई का खास तौर से ध्यान रखते थे। दातुन, स्नान, और भोजन के बाद कुल्ला आम तौर से सब करते थे।

शिक्षा आम थी और सात साल की उम्र से शुरू होती थी। हिन्दू धर्म-शास्त्रो की शिक्षा केवल ब्राह्मणो को ही दी जाती थी। बौद्ध मत मानने वालो के लिए शिक्षा का अलग प्रबन्ध था। देश भर मे बौद्धो के 18 बडे-बडे विद्यालय थे।

लोग आम तौर से ईमानदार, सच्चे और नेक थे। लेन-देन मे किसी तरह का छल-कपट न था। न्याय करने मे वे सचाई से काम लेते थे। लोगो मे चालबाजी और मक्कारी बिल्कुल न थी। सब लोग बात के धनी होते थे। लोगो की रोजमर्रा की बातचीत मे लोच और रस होता था। राजकीय कानूनो की पाबन्दी का बडी सख्ती से पालन किया जाता था। किसान अपनी पैदावार का केवल छठा भाग मालगुजारी के रूप मे देते थे। बाकी कर नाम मात्र को थे। व्यापारी मामूली चुगी देकर पानी और खुश्की के रास्ते चाहे जहा से माल लाते और ले जाते थे।

हुएनसाग ने भारत के जिन राजाओ के नाम लिखे है, उनमे राजा हर्षवर्द्धन का नाम खास है। हर्षवर्द्धन बौद्ध धर्म का मानने वाला था, परन्तु उसकी प्रजा अधिकतर हिन्दू थी। हर्ष की राजधानी कन्नौज थी, जो आज भी उत्तर प्रदेश का एक प्रसिद्ध शहर है। हर्ष कवि और लेखक भी था। उसकी राजधानी मे कवियो और लेखको का जमघट रहता था। धर्म के सम्बन्ध मे उसने अपनी प्रजा को पूरी आजादी दे रखी थी। वह अपनी हिन्दू प्रजा के त्योहारो और मेले-ठेलो मे बढ-चढ कर हिस्सा लेता था। हर्षवर्द्धन के समय मे भी प्रयाग में उसी तरह कुम्भ का मेला लगता था जैसे आज लगता है। हुएनसाग ने यह मेला देखा था। उसने लिखा है कि प्रयाग हर्षवर्द्धन के राज्य मे था। हर्ष सारे भारत के लोगो को इस मेले मे आने का न्योता देता था। जो लोग मेले मे जाते थे, वे सब राजा हर्षवर्द्धन के मेहमान होते थे। उनके भोजन आदि का सारा प्रबन्ध राज्य की ओर से किया जाता था। लगभग एक लाख आदमी दोनो समय भोजन करते थे। उनमे साधारण लोग भी होते थे और राजे-महाराजे भी।

हुएनसाग ने कुछ बाते ऐसी भी लिखी है, जो बहुत ही अजीब और अनहोनी मालूम होती है। इस तरह की एक बात अपराध की जाच और छानबीन के बारे मे है।

इसके लिए अपराधी को एक
बोरे मे बद करके और उस
बोरे से पत्थर बाध कर उसे
पानी मे फेक दिया जाता
था। अगर अपराधी डूब
जाता और पत्थर तैरता
रहता तो उसका अपराधी
होना मान लिया जाता
था, और अगर अपराधी
पानी पर तैरता रहता
और पत्थर डूब जाता तो
अपराधी बेकसूर समझा
जाता था। उसी तरह, लोहे
एक चादर को आग
लिया जाता था।
पर अपराधी को बैठा
जाता था। अगर
पर आग का कोई
होता तो उसे
। जाता था,
उसके बदन
का असर होता
जाता था कि वह
।

629 ई० मे
से भारत-यात्रा
था। 17
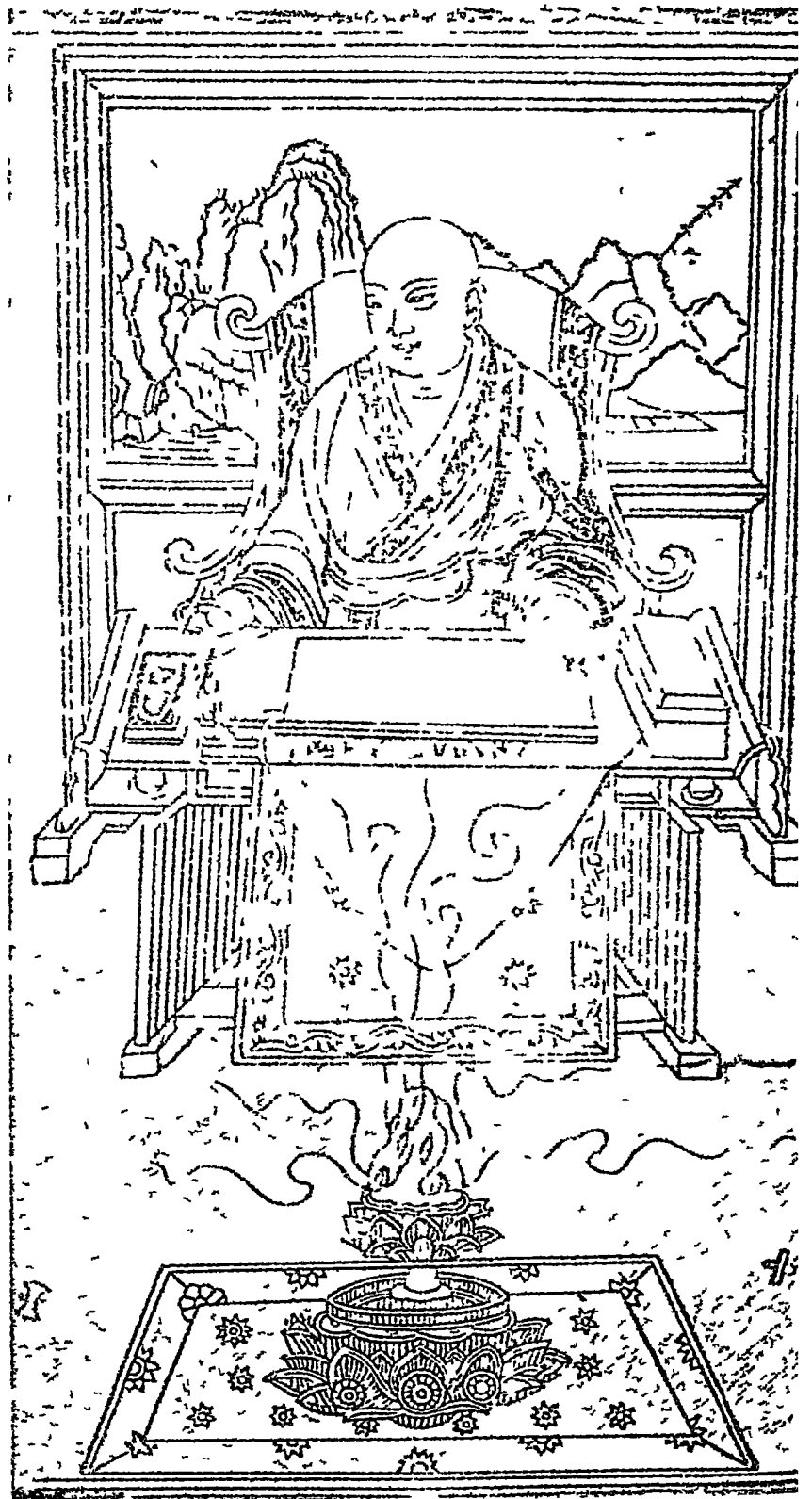
हुएनसाग

वर्ष के वाद वह अपने देश को वापस लौटा। वापसी मे वह कश्मीर के ऊचे पहाड पार करके काशगर और खुतन होता हुआ चीन पहुचा। उस समय चीन मे 'ताग' खानदान का राजा सी-आन-फो राज कर रहा था। उसने इस महान् यात्री का चीन मे शानदार स्वागत किया, जो भारत की मधुर स्मृति के साथ-साथ और भी वहुत से वहुमूल्य उपहार भारत से अपने देश ले गया था। इन उपहारो मे बौद्ध धर्म की 24 पुस्तको के अलावा महात्मा बुद्ध की 5 मूर्तिया भी थी—दो सोने की, एक चादी और दो चन्दन की।

(1)

इख़नातन

इखनातन वह पहला राजा था जिसने स्वय अपना एक धर्म चलाया । उसका नाम सुलेमान, अशोक, हारूअल-रशीद और शार्लमान आदि ससार के दूसरे बुद्धिमान राजाओ के साथ लिया जाता है। इखनातन का जन्म इन सब राजाओ से पहले ईसा से लगभग तेरह सौ साल और आज से कोई 33 सौ साल पहले हुआ था।

इखनातन ने जग नही जीता, लडाइया नही लडी, और न उसने अपना राज्य वढाने के लिए इसान का खून बहाया। उसने कमजोर इसानो को नही, वल्कि ऐसी देवी-देवताओ और उनके शक्तिशाली पुजारियो को जीता, जिन्हे जीतना असम्भव समझा जाता था। मिस्र के पुराने

धर्म मे अनगिनत देवी-देवताओ की पूजा होती थी । इखनातन ने देवी-देवताओ के उस लश्कर को मिटा कर एक नया धर्म चलाया। सबसे बडी वात यह है कि उसने अपना धर्म तब चलाया जव वह केवल पन्द्रह साल का लडका था।

जब केवल पन्द्रह साल के एक लडके के कारण बडे-बडे शक्तिशाली पुजारियो का रौब उखडने लगा, तो उन्होने उसको पागल और दीवाना कहा। मगर न वह पागल था, न दीवाना। वह दीवाना था तो सचाई का।

इखनातन वड़े घराने का बेटा था। मिस्र का राजा तीसरा आमेनहोतेप उसका पिता था, उसकी नसो मे शायद सीरिया के मितन्नी आर्यो का खून वहता था। उसकी मा का नाम तीई था। उसकी रगो मे जगली जातियो का रक्त वहता था। इससे यह समझा
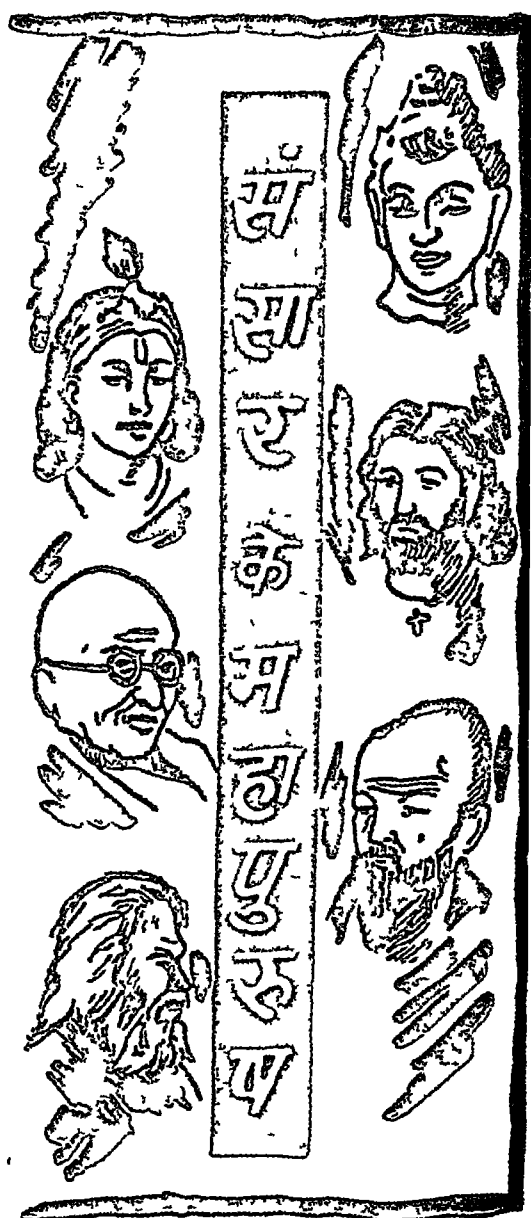
इखनातन

जा सकता है कि इखनातन की आत्मा मे जो बेचैनी और तडप थी, वह स्वाभाविक थी। दो खून और दो ताकते मिल कर उस बालक मे उमड रही थी। शायद यही कारण था कि वह केवल पन्द्रह साल की उम्र मे एक शानदार मजहब चलाने मे सफल हुआ। उसका तूफानी जीवन केवल 26-27 साल की उम्र मे खत्म हो गया। पर अपने जीवन के 13वे से लेकर 26वे वर्ष तक के 13 वर्षो मे ही उसने वह कर दिखाया जो सौ-सौ बरस जीने वाले न कर सके।

इखनातन ने होश सम्भालते ही मिस्र के पुराने इतिहास पर नजर डाली। उसने अपने पुरखे फराऊनो के लम्बे इतिहास का भी परिचय प्राप्त किया। उसने देखा कि देवी-देवताओ की बढती हुई सख्या और उनके पुजारियो की बढती हुई शक्ति के सामने उसके पुरखे 'फराऊन' किस प्रकार बेबस और तुच्छ बनते गए। यह देख कर उसके जी को गहरी चोट पहुची। जब भी वह सोचता, देवी-देवताओ की वह भीड और उस भीड के कारण फैली हुई गडबडी उसे बौखला देती। वह चाहता था कि पुजारियो की मनमानी और अन्धविश्वासो की बजाय देश मे एक समझदारी का धर्म और उसके साथ ईमानदारी फैले। उसे पता था कि उसके पुरखो ने सारे मिस्र और उत्तर अफ्रीका से लेकर पश्चिम एशिया मे सीरिया, फिलस्तीन और ईराक तक का भाग जीत कर अपने राज मे मिला लिया था। वे सब देश एक शासन की छाया मे शान्ति से रहते थे। यह बात उसके मन मे बैठ गई और उसने अपने उसी युग को फिर वापस लाना चाहा।

उसने सोचा, जैसे नील नदी के विकास की जगह से लेकर फिलस्तीन और सीरिया तक एक ही फराऊन का राज है, वैसे ही देवताओ की झूठी भीड की जगह फराऊनी साम्राज्य के समूचे ओर-छोर मे क्यो न एक ही देवता की पूजा हो। पर वह एक देवता कौन हो ? वह सोचता रहा। अन्त मे एक दिन सोचते-सोचते उसकी दृष्टि

देवी-देवताओ की भीड को पार करके, आकाश मे चमकते-दमकते गोले की ओर गई। उसकी आखो मे चमक पैदा हुई और उसने सूर्य को अपना देवता वना लिया।

पुरानी जातियो के विश्वास मे सूरज के गोले का हमेशा एक खास स्थान रहा है। उसे जानने-पहचानने की कोशिश सभी जातियो ने की। यूनानियो का प्रोमेथियस् उसी को जानने के लिए उडा था और अपने पख झुलसा कर धरती पर लौटा था। इस प्रकार उसको यह जानकारी तो हो गई कि सूरज का गोला वहुत ही गर्म है। पर वह यह न जान सका कि सूरज के पीछे कौन सी शक्ति है। फिर भी इतना तो वह समझ ही गया कि उसके पीछे कोई-न-कोई शक्ति है जरूर। आज से हजारो साल पहले के उपनिषदो का भी यही विचार था। वे सूरज के गोले को ब्रह्म की आख कहते थे।

उपनिषदो के ऋषियो की तरह, लेकिन उनसे लगभग एक हजार साल पहले, इखनातन को भी कुछ ऐसा ही लगा कि सूरज के गोले के पीछे जरूर कोई शक्ति छिपी है। इखनातन के दिल मे यह वात बैठ गई कि प्रकृति की सवसे वडी सचाई सूरज के गोले के पीछे की वह सत्ता है, जिसे हम नही जानते। पर किसी चीज को न जानना उसके न होने का सबूत नही हो सकता। शक्ति की पूजा तो हो ही सकती है, चाहे उसकी मूर्ति न वन सके। उसने सोचा, भले ही वह शक्ति हमारी समझ के वाहर हो, हमारी बुद्धि भले ही उस तक न पहुच पाए, लेकिन चमकते-दहकते सूर्य के रूप मे उसकी ज्योति तो दुनिया मे वरस ही रही है। इस तरह सूर्य के गोले के पीछे की सत्ता इखनातन के विश्वास की दैवी शक्ति वनी, और उसी को उसने पूजा। उसने उस शक्ति को 'अतन' नाम दिया।

पर दैवी शक्ति को जान लेना और वात है, और उस जानकारी को दूसरो मे फैलाना और वात है। जव सचाई का बोध होता है तब यह सवाल उठता है कि उस सचाई की जानकारी को अपने तक ही रखा जाए या उसे दुनिया मे फैलाया जाए। बुद्ध को जव 'बोध' हुआ था, तव यही सवाल उनके सामने भी उठा था, और उन्होने उसे दूसरो मे फैलाना तय किया था। इतना ही नही, वल्कि बौद्ध धर्म मे अकेले निर्वाण पाने की कोशिश को समझदारो ने 'हीनयान' कहा, यानी छोटा वाहन, जिस पर कोई एक खास मनुष्य ही सवार होकर निर्वाण का पथ पार कर सकता है। बोधिसत्व ने कहा था कि जव तक 'निर्वाण' एक भी मनुष्य, वल्कि एक भी तुच्छ कीट की पहुच से वाहर रहेगा, तव तक
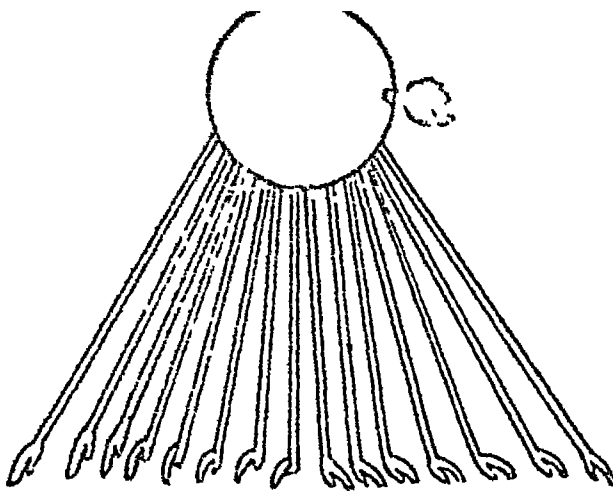
में निर्वाण नही लूगा। इस विचार को 'महायान' यानी वडा वाहन कहा गया, जिसमे सवार होकर दुनिया के सभी मनुष्य 'निर्वाण' पा सके।

कहते है कि जो पाता है, वह देता भी है। इखनातन ने भी पाया था और पाई हुई चीज को अपने तक ही रखना उसे स्वार्थ लगा। उसने तय किया कि वह देकर रहेगा, मगर मिस्र की दुनिया मे उस नई सचाई को फैलाना आसान न था। सामने अन्धविश्वासो, रीति-रिवाजो, देवताओ और उनके शक्तिशाली पुजारियो की मजबूत दीवारे थी, पर उनसे भी मजबूत था इखनातन का विश्वास और उसका इरादा। इसलिए उसने पुजारियो से लोहा लेना तय किया। नए विचारो ने पुराने विश्वासो पर चोट की। नए और पुराने के वीच घमासान युद्ध छिड गया।

इस लडाई में एक औरत ने इखनातन की जी-जान से सहायता की। उसका नाम था नेफरतीति। वह पहले इखनातन की वहन थी, वाद मे पत्नी वनी। इखनातन के पास एक ही हथियार था—सूर्य के पीछे की जो सत्ता थी, उसकी जानकारी। उस हथियार पर उसे पूरा भरोसा था। और उसने उसका भरपूर इस्तेमाल भी किया। इखनातन उस हथियार से पुराने देवताओ की भीड छाटने लगा। पुराने देवता गिरने लगे। यहा तक कि रूहो और दोजख का देवता ओसिरिस भी न वच सका। इन पुराने देवताओ मे 'रा' और 'आमेन' ऐसे नाम थे जिनका मतलव भी सूर्य ही होता था और जिनकी पूजा सदियो पहले से मिस्र मे होती आई थी। इसलिए वे लाखो लोग, जो 'रा' और 'आमेन' को मानते थे, उनकी समझ मे नही आया कि एक नए सूर्य देवता 'अतन' की क्या जरूरत है और उसे क्यो माना जाए? आम लोगो को इसका सूक्ष्म भेद वताना कठिन था कि 'अतन' स्वय वह देवता नही है, जो दुनिया की हर चीज मे रह रहा है, जो एक है, और जिसके परे कुछ नही है, जो अपनी ही ज्योति से प्रकाशित है, वल्कि 'अतन' उस देवता का, उस सत्ता का एक रूप है।

इखनातन पत्नी और बच्चो के साथ

शंकराचार्य के 'अद्वैत ब्रह्म', इजील के नवियो के 'एकेश्वरवाद', मुहम्मद के 'ला एलाह इल्लल्लाह ' जैसे धार्मिक विश्वासो से सदियो पहले इखनातन लगभग वैसे ही विचारो के वीज वो रहा था, और वह भी केवल पन्द्रह साल की आयु मे। पन्द्रह साल की आयु मे इखनातन ने 'अतन' के 'एकेश्वरवाद' का आन्दोलन चलाया। इतिहास मे वह पहला व्यक्ति था, जिसने एक भगवान को सभी जड और चेतन चीजो के जन्म-मरण का कारण माना। उसका धर्म पहला धर्म था, जिसने दुनिया को एक भगवान का विश्वास दिया।

मिस्र के पुराने राजाओ की राजधानी का नाम थीव्स था। इखनातन ने सूर्य के नाम पर अपनी नई राजधानी वसाई, जिसका नाम 'अखेतेतन' पडा। उस राजधानी के वाहर वह कभी न निकला, क्योकि उसने अशोक से भी हजार वरस पहले यह तय कर लिया था कि देश जीतने और लडाई लडने के लिए राजधानी से वाहर नही जाएगा। दूर के प्रान्तों मे वगावते हुईं, पर वह अपनी जगह से नही हिला। वह चुपचाप अपने नए धर्म का प्रचार करता रहा।

जव इखनातन ने अपने नए धर्म का प्रचार किया, तो पुराने देवताओ के पुजारियो ने ऐलान किया कि इखनातन काफिर है,। जवाव मे इखनातन ने उनकी माफिया छीन ली, उनको बेघर कर दिया और उनके देवताओ को दिए गए इलाके भी ले लिए।

रा
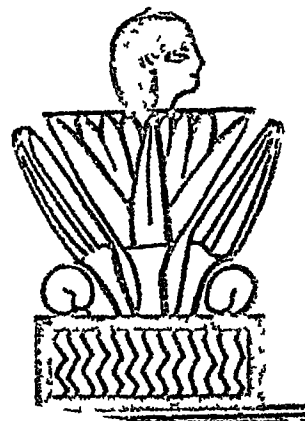
आमेन

इसमे सन्देह नही कि इखनातन मे जवरदस्त कट्टरता थी और उसने काफी सख्ती से काम लिया। उसने अपने पूरे राज्य मे पुराने देवताओ की पूजा वद कर दी, उनके मन्दिर उजाड दिए। उसने हर जगह लेखो में से अपने देवता 'अतन' के दुश्मन 'आमेन' नाम के देवता का नाम मिटवा दिया। यहा तक कि उसके वाप के नाम आमेनहोतेप मे जो 'आमेन' लगा हुआ था, उसने उसे भी मिटा दिया।

एक भगवान या एक खुदा को मानने वाला वह पहला मजहव, जिसे इखनातन ने चलाया था, तेरह साल तक कायम रह कर उसकी मृत्यु के वाद खत्म हो गया। इखनातन के दुश्मनो ने उसे मिटा दिया। पर इखनातन का नया धर्म, धर्म के इतिहास मे अमर हो गया। अपने देश के धार्मिक विचारो और विश्वासो मे सुधार करने के अतिरिक्त, इखनातन ने और भी कई वडे-वडे काम किए। उस समय और देशो की तरह मिस्र के राजा लोग भी एक खास ढग का जीवन विताते थे। कोई राजा विना सवारी के महल से वाहर नही निकलता था। इखनातन ने ऐसे रिवाजो को तोड फेका। वह मामूली प्रजा की तरह रहने लगा। वह अपनी तीन वर्ष की वच्ची की उगली पकड कर मिस्र की गलियो मे घूमा करता। अगर कोई उससे पूछता तो वह कहता कि क्या राजा आदमी नही होता। उसने दूर के इलाको, सीरिया आदि मे रहने वाली अपनी फौजो को वापस वुला लिया। जव मन्त्रियो ने वताया कि ऐसा करने से राज्य के वे इलाके आपके अधिकार से निकल जाएगे, तो उसने उत्तर दिया—"हमे किसी प्रदेश पर वहा के रहने वालो की इच्छा के विरुद्ध राज करने का अधिकार नही है। जवरदस्ती किसी पर राज नही करना चाहिए।" यद्यपि कही-कही इससे वगावते भी हुई, पर इखनातन अपने इरादे से नही हटा।

इखनातन कवि भी था और उसने अपने देवता सूर्य की शोभा का वर्णन करने के लिए कविताए भी लिखी। ये उपनिषदो की कविताओ से कम चमत्कारी नही थी। ये सुनने और पढने वालो के दिलो मे वैठ जाती थी। इखनातन की लिखी हुई कविता की कुछ पक्तिया तेल एल-अमरना की चट्टानो पर खुदी मिली है। इनमे से कुछ ये है —

जव तू पश्चिमी आकाश के पीछे डूव जाता है,
दुनिया अन्धेरे मे छिप जाती है, मुर्दो की तरह,
हर शेर तव अपनी माद से निकल पडता है,
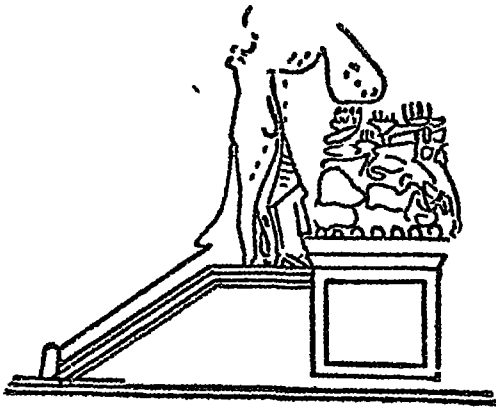
इखनातन का पूजा स्थान

साप अपने बिलो से बाहर आ जाते है, डसने लगते है;
अन्धेरे का राज फैल चलता है, सन्नाटा दुनिया
पर अपनी काया डालता चला जाता है ।
चमक उठती है धरती, जब तू आसमान मे निकल पड़ता है,—
जब तू आसमान की चोटी पर अतन की आख से दिन मे देखता है,
अन्धेरा लुप्त हो जाता है ।
जब तेरी किरणे फैलने लगती है, इसान मुस्करा उठता है,
जाग उठता है, अपने पैरो पर खडा हो जाता है, तू ही उसे जगाता है ।
अपने शरीर को वह धो डालता है, कपडे पहन लेता है,
फिर उगते हुए तेरे लाल गोले को हाथ उठा कर पूजता है,
तेरे आगे सिर नवाता है ।

× × ×

नावे नील की धारा मे चल पडती है, धारा के साथ भी, विरुद्ध भी ।
सडके और पगडडिया खुल पडती है, कि तू उग चुका है ।
तेरी किरणो को छूने के लिए नदी की मछलिया उछल पडती है,
तेरी किरणे फैले हुए समुद्र की छाती मे कौध जाती है ।
तू ही मा के गर्भ मे बच्चे को सिरजता है,
आदमी मे आदमी का बीज रखता है,
तू ही कोख मे बच्चे को प्यार से पालता है, जिससे वह रो न पडे,
तू ही धाय है, कोख के बालक के लिए ।
और तू ही जिसे सिरजता है उसमे सास डालता है,
और जब वह मा की कोख से धरती पर गिरता है,
(तू ही) उसके गले में आवाज डालता है,
उसकी जरूरते पूरी करता है ।

× × ×

तेरे कामो को भला कौन गिन सकता है?
और तेरे काम हमारी दृष्टि से ओझल है, दृष्टि से परे ।

ओ मेरे देवता, मेरे एक देवता, जिसकी शक्ति का कोई दावेदार नही।
तूने ही यह धरती सिरजी, अपनी इच्छा के अनुसार।
× × ×
तू मेरे हिए मे वसा है, तुझे कोइ दूसरा जानता भी नही,
अकेला मै, वस मै, तेरा वेटा इखनातन, जान पाया है तुझे।
और तूने ही उसे इस योग्य बनाया हे कि वह तेरी हस्ती को जान ले।

(2)

कार्ल मार्क्स

इतिहास में ऐसा तो अनेक वार हुआ है कि आत्मा और परमात्मा, पाप और पुण्य की वाते वताने वाले महान् पुरुपो और पैगम्बरो के विचार सारे ससार में फैले, और दुनिया के कोने-कोने में लाखो मनुप्य उनके भक्त और शिप्य बने। पर राज-काज और रोटी-कपडे की वात वताने वाले महापुरुपो मे कार्ल मार्क्स के सिवा आज तक कोई और ऐसा नही हुआ, जिसके विचार सारे ससार मे फैले हो, और जिसके मानने वाले लगभग हर देश मे हो, और करोडो की सख्या में हों।

कार्ल मार्क्स ने ही कम्युनिस्ट विचारधारा को जन्म दिया था। उन्होने कम्युनिस्ट रीति-नीति का व्यौरा तैयार किया और कम्युनिस्ट सगठन की नीव डाली। आज दुनिया
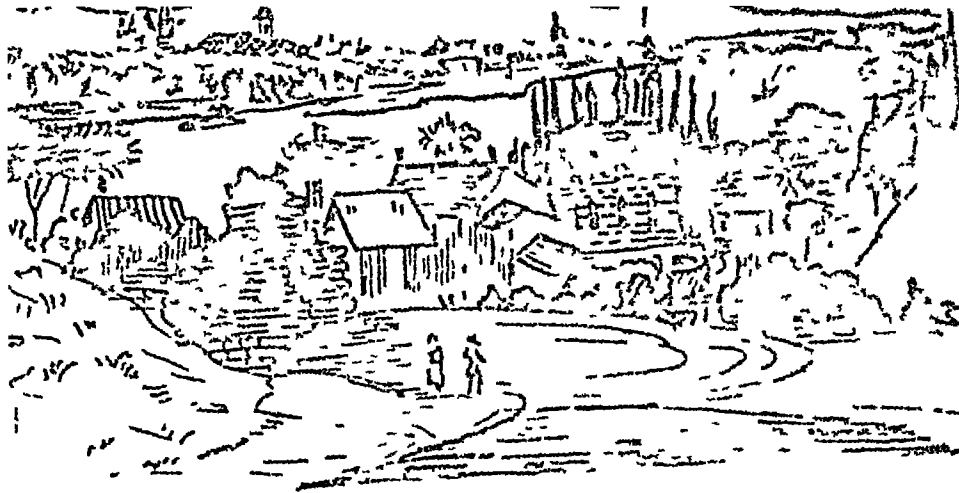
ट्रिएर नगर, जहा मार्क्स का जन्म हुआ

के एक-तिहाई भाग मे कम्युनिस्ट सरकारे है, और जहा कम्युनिस्ट सरकारे नही है, वहा भी मार्क्स के विचारो का कुछ-न-कुछ असर है।

मार्क्स का जन्म जर्मनी के ट्रिएर नगर में 5 मई सन् 1818 ई० को हुआ था। मार्क्स के पिता की गिनती अच्छे वकीलो मे थी। 12 वर्ष की आयु मे मार्क्स अपने शहर के विद्यालय मे भर्ती हुए। अन्तिम परीक्षा मे पास होने के लिए एक लेख लिखना पड़ता था। मार्क्स ने भी एक लेख लिखा। उसका विषय था "अपना व्यवसाय चुनने पर एक युवक के विचार"। वह लेख अब भी मौजूद है। उसे पढ़ने से पता चलता है कि सत्रह साल की कच्ची आयु मे भी मार्क्स के विचार कितने पक्के थे। उन्होने उस लेख में लिखा था कि "बिना स्वार्थ के मानवता की सेवा करना ही जीने का उद्देश्य है।" एक कहावत है कि पूत के पाव पालने मे ही पहचान लिए जाते है। मार्क्स के बारे मे यह कहावत सही उतरी।

स्कूल की शिक्षा पूरी करके मार्क्स बॉन नगर के विश्वविद्यालय मे भर्ती हुए। लेकिन वहा उनका जी न लगा और वह शीघ्र ही बर्लिन चले गए। बर्लिन विश्वविद्यालय मे भर्ती होकर उन्होने न्याय-शास्त्र की पढाई शुरू की।

बर्लिन मे उन दिनो प्रसिद्ध दार्शनिक हीगेल के विचारो का जोर था। मार्क्स पर भी उनका प्रभाव पडा, मगर मार्क्स अन्धविश्वासी नही थे। वह हर बात पर गहराई से सोचते थे, और जिस नतीजे पर पहुचते थे उसे खुल कर कहने मे कभी नही हिचकते थे। हीगेल के विचारो पर उन्होने खूब सोचा और उनके विरुद्ध एक लम्बा लेख लिखा। वह लेख इतना महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ कि अप्रैल सन् 1841 मे येना के विश्वविद्यालय ने उसी लेख पर मार्क्स को डाक्टर की उपाधि दी।

मार्क्स पढ-लिख कर बॉन विश्वविद्यालय मे प्रोफेसर बनना चाहते थे। पर वहा पहले ही गर्म विचार के प्रोफेसरो को निकाला जा रहा था। इसलिए मार्क्स ने अपना इरादा बदल दिया और अप्रैल सन् 1842 मे कोलोन के एक अखबार मे नौकरी कर

हीगेल

ली। उस अखबार का नाम 'राइनिशे त्साइतुग' (राइन समाचार) था। छ महीने बीतते-न-बीतते मार्क्स उस अखबार के सम्पादक हो गए।

उस समय जर्मनी की सभी रियासतो मे राजतन्त्र प्रचलित था। राजा लोग मनमाने ढग से शासन करते थे। उनके कर्मचारी, फौजी अफसर और धनी लोग गरीबो को सताते थे। गरीबो से हमदर्दी प्रकट करने वालो पर भी कडी निगाह रखी जाती थी। मार्क्स ने निडर होकर अपने अखबार मे उन अत्याचारो के विरुद्ध लिखना शुरू किया। उन्होने जनता के दुख-दर्द को निकट से देखा और अत्याचार करने वालो के हथकडो की पोले खोली। पर एक साल भी न बीतने पाया था कि सरकार ने मार्क्स के अखबार को बद कर दिया।

अखबार से अलग हो जाने के बाद मार्क्स ने विवाह कर लिया। उनकी पत्नी का नाम जेनी था। विद्यार्थी जीवन मे ही मार्क्स की उनके साथ सगाई हो चुकी थी।

नवम्बर सन् 1843 मे मार्क्स फ्रास चले गए और पेरिस मे रहने लगे। वही अगस्त सन् 1844 मे जर्मन विद्वान् फ्रेड्रिक एगेल्स से मार्क्स की दूसरी बार भेट हुई। दो वर्ष पहले वे दोनो जर्मनी मे मिल चुके थे। तब से दोनो में पत्र-व्यवहार जारी था। एगेल्स केवल दस दिन पेरिस मे रहे। उन दस दिनो में ही मार्क्स से उनकी गहरी मित्रता हो गई। दोनो ने अनुभव किया कि उनके विचार एक है और दुनिया में एक ही तरह का काम वे करना चाहते है। उसके बाद लिखने-पढने से लेकर सगठन बनाने तक हर काम में दोनो जीवन भर एक-दूसरे की पूरी मदद करते रहे।

पेरिस मे एक मित्र की सहायता से मार्क्स ने जर्मन भाषा मे एक पत्र निकालना शुरू किया। मार्क्स ने उन्ही दिनो एडम स्मिथ और रिकार्डो नाम के दो अग्रेज विद्वानो की पुस्तके पढी। उस समय के समाजवादी केवल बाते किया करते थे, काम नही। मार्क्स और एगेल्स ने समाजवाद स्थापित करने का व्यावहारिक रास्ता तय किया। वे स्पष्ट कहते थे कि किसी देश की अवस्था उस समय तक नही बदल सकती जब तक कि उस देश का धन केवल कुछ गिने-चुने आदमियो के ही हाथो मे रहता है। जनता का सच्चा राज्य केवल समाजवाद मे ही सम्भव है, और समाजवाद सम्पत्ति और राज्य
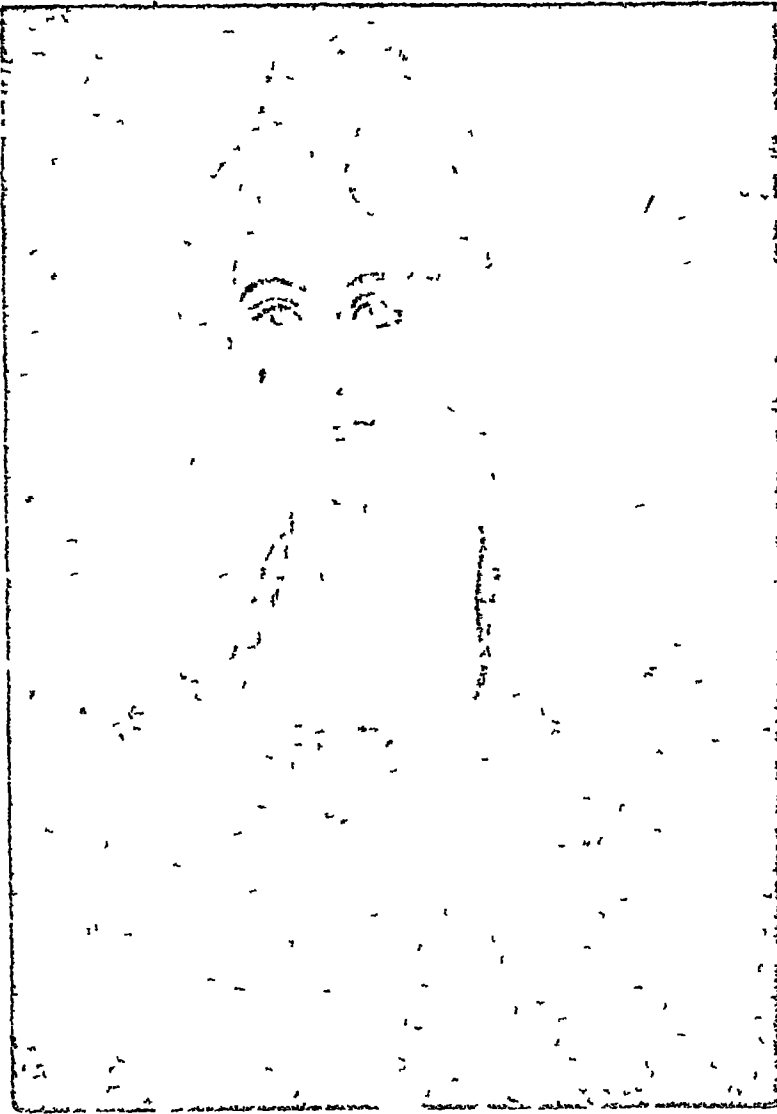
पर मजदूरो का अधिकार होने पर ही कायम हो सकता है। उस समय के समाजवादी मजदूरो को निरीह मान कर उनकी बेबसी पर आसू बहाया करते थे। मार्क्स ने ही पहले-पहल कहा कि "एक दिन मजदूर बलवान बनेगा, उसमे अच्छी समझ-बूझ भी पैदा होगी और वही दुनिया मे ऐसे परिवर्तन करेगा जो आज असम्भव माने जा रहे है।"

जेनी

मार्क्स के इन विचारो के कारण फ्रास की सरकार ने उनको देश से निकल जाने की आज्ञा दी। फरवरी सन् 1845 में उन्हे पेरिस छोडना पडा और वे बेल्जियम देश के ब्रुसेल्स नामक नगर मे जाकर रहने लगे। प्रशा (जर्मनी) की सरकार ने बेल्जियम पर दबाव डाला और माग की कि मार्क्स को जबरदस्ती प्रशा भेज दिया जाए क्योकि वह प्रशा के नागरिक थे। पर यह नौबत आने से पहले ही मार्क्स ने प्रशा से अपने सब नाते तोड लिए। उसके बाद मार्क्स लगभग तीन वर्ष तक ब्रुसेल्स मे रहे। उन्ही दिनो मार्क्स और एगेल्स ने मिल कर दो पुस्तके लिखी। उन पुस्तको के नाम है 'जर्मन आइ-डियालोजी' (जर्मन सिद्धान्त) और 'पावर्टी आफ फिलासफी' (दर्शन की दरिद्रता)।

उन पुस्तकों में यह सिद्ध किया गया है कि अवस्था के बदलने पर समाज बदलता है, इसान बदलता है, और विचार भी बदल जाते है। यही विचार मार्क्सवाद की रीढ है। मार्क्स ने लिखा कि दूसरे सभी पुराने युगो की तरह पूजीवादी युग भी मिट कर रहेगा, और मजदूर वर्ग ही उसे मिटा कर समाजवाद स्थापित करेगा। देश की सम्पत्ति पर पूरे समाज का अधिकार होगा। समाजवाद के युग मे हर मनुष्य केवल अपने लाभ के लिए नही, बल्कि अपने और सबके लाभ के लिए मेहनत करेगा। और उस मेहनत के
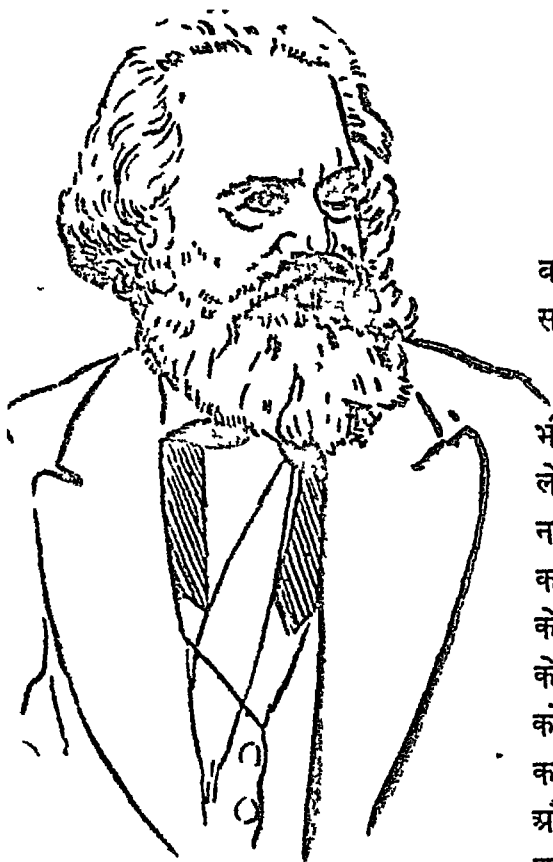
मार्क्स (1872 में)

बदले मे हर एक को उसकी आवश्यकता के अनुसार सब चीजे मिलेगी और सबकी जरूरते पूरी होगी।

मार्क्स ने उन समाजवादी विद्वानों के विरुद्ध भी लेख लिखे, जो गरीबों के दुख का रोना रोते थे लेकिन उनकी अवस्था को बदलने का कोई तरीका नही बताते थे। मार्क्स सिर्फ तरीका बताना ही काफी नही समझते थे। इसके लिए उन्होने मजदूरो के सगठन बनाने की भी कोशिश की। उन्होने यूरोप के सभी देशो के मजदूर सगठनो और उनके नेताओ को पत्र लिखे। फरवरी सन् 1847 मे लदन मे कम्युनिस्ट विचार मानने वालो की पहली कांफ्रेंस हुई और जून सन् 1847 मे कम्युनिस्ट लीग बनी। लदन की काफ्रेंस मे मार्क्स ने एक नारा मजूर कराया था—"दुनिया भर के मेहनत करने वालो एक हो जाओ"। यह नारा आज दुनिया भर के मजदूरो का नारा हो गया है। इस नारे के द्वारा मार्क्स ने राष्ट्रीयता से ऊपर उठ कर अन्तर्राष्ट्रीयता की नीव रखी।

सन् 1847 के अन्त मे लंदन मे कम्युनिस्ट लीग की दूसरी काफ्रेस हुई, जिसके लिए मार्क्स और एगेल्स ने मिल कर 'कम्युनिस्ट घोषणापत्र' तैयार किया। यही 'घोषणापत्र' आज ससार भर मे कम्युनिस्ट आन्दोलन का पथ-प्रदर्शन करता है।

मार्क्स के विचारो से डर कर बेल्जियम की सरकार ने मार्क्स को गिरफ्तार कर लिया। फरवरी सन् 1848 मे उन्हे देश से निकल जाने की आज्ञा दी गई। उन दिनो फ्रास मे राजतन्त्र के विरुद्ध आन्दोलन चल रहा था। इसलिए मार्क्स पेरिस की ओर चल पडे। दो महीने बाद जर्मनी के राज्यो मे भी उसी तरह के आन्दोलन शुरू हो गए। तब मार्क्स और एगेल्स अपने कुछ साथियो को लेकर जर्मनी के लिए रवाना हुए।

मार्क्स ने अपने साथियो को राजतन्त्र के विरुद्ध होने वाले आन्दोलनो मे सम्मिलित होने की सलाह दी। आन्दोलन के लिए जगह-जगह डेमोक्रेटिक लीग बन रही थी। मार्क्स भी अपनी जन्मभूमि राइन की राजधानी कोलोन की डेमोक्रेटिक लीग मे शामिल हो गए। जून सन् 1848 मे उन्होने 'नाय राइनेशि त्साइतुग' (नया राइन

एगेल्स

समाचार) नाम से फिर एक अखबार निकाला। उस अखबार मे मार्क्स ने राजतन्त्र के विरुद्ध और लोकतन्त्र के पक्ष में लेख लिखने शुरू किए। मार्क्स का अखबार शीघ्र ही लोकप्रिय हो गया। सरकार ने कई बार उसे बंद कर देने की कोशिश की, पर जब तक आन्दोलन तेजी पर रहा, तब तक मार्क्स के अखबार को बंद करना आसान न था।

सन् 1849 मे प्रशा और पूरे जर्मनी मे जनता के उस आन्दोलन को कुचल दिया गया। उसके बाद सरकार ने मई सन् 1849 मे मार्क्स के अखवार को भी बंद कर दिया और मार्क्स को विदेशी कह कर देश से निकल जाने की आज्ञा दी। मार्क्स अब फिर पेरिस चले आए पर फ्रास की सरकार ने उन्हे वहा भी रुकने नही दिया। तब वह लदन गए। सन् 1851 से सन् 1862 तक मार्क्स ने लदन में रह कर बहुत लेख लिखे, जो अमरीका के अखबार 'न्यूयार्क डेली ट्रिब्यून' मे छपते रहे।

यह मार्क्स के जीवन का सबसे कठिन समय था। यूरोप भर मे पत्र-पत्रिकाओ, प्रकाशन-सस्थाओ और विश्वविद्यालयो के दर्वाजे मार्क्स के लिए बद थे। गरीबी और अभाव के थपेड़े उन्हे सास नही लेने देते थे। लेकिन मार्क्स को अपने उद्देश्यो की पवित्रता मे पूरा विश्वास था। उन कठिन दिनो मे एगेल्स से उन्हे वडी सहायता मिली। 1850 ई० मे एगेल्स ने मानचेस्टर मे नौकरी कर ली और मार्क्स तथा उनके परिवार का सारा भार अपने कन्धो पर उठा लिया।

उन दिनो ससार भर मे वडी-वडी घटनाए हो रही थी। भारत मे 1857 वाली आजादी की पहली लड़ाई छिडी, चीन मे विदेशियों के विरुद्ध ताइपिङ विद्रोह

हुआ, स्पेन मे क्राति हुई, अमरीका मे हब्शियो को दासता से मुक्ति के लिए युद्ध छिड गया। मार्क्स ने बडी बारीकी और गहराई के साथ इन तमाम घटनाओ का अध्ययन किया। उन्होने अपने लेखो मे हर जगह आजादी के लिए लडने वालो का समर्थन किया।

उन्होने जो लेख भारत पर लिखे, उनमे भारत की आर्थिक और सामाजिक अवस्थाओ तथा अग्रेज साम्राज्यवादियो की लूट-खसोट का सच्चा ब्यौरा मौजूद है। उन्होने इग्लैण्ड के राजनीति के पाखड की पोल खोली, और उन 'मजदूर रईसो' का भी भडा फोड किया, जो गुलाम देशो की लूट मे हिस्सा बाट कर अपने मजदूर भाइयो और क्राति को धोखा दे रहे थे।

सन् 1857 मे मार्क्स ने राजनैतिक अर्थशास्त्र पर अपनी एक प्रसिद्ध पुस्तक लिखी और 'अतिरिक्त मूल्य' के सिद्धान्त को ससार के सामने रखा। अतिरिक्त मूल्य का सिद्धान्त यह है कि मज़दूर जितनी मजदूरी पाता है, उससे कही अधिक वह खटता है। मालिक विना कोई मुआवजा दिए उस अधिक खटनी की कमाई को हडप जाता है। मजदूर की अधिक खटनी से जो आमदनी होती है, उसी का नाम मुनाफा है। वही 'अतिरिक्त मूल्य' है। यह सिद्धान्त मार्क्स के आर्थिक विचारो की रीढ है।

मार्क्स जव किसी विपय पर लिखने की तैयारी करते थे, तो वह उस विपय के हर पहलू पर वरसो विचार करते थे। अध्ययन और गहरी छानबीन से जिन नतीजो पर वह पहुचते थे, उनकी सचाई की फिर वहुत सख्ती और ईमानदारी से जाच करते थे। इसीलिए अपने सिद्धान्त को अन्तिम रूप देने मे उन्हे वरसो लग जाते थे।

अथक अध्ययन और लगातार मेहनत करके मार्क्स ने 'पूजी' नाम की महान् पुस्तक लिखी। उस पुस्तक ने अर्थशास्त्र के विद्वानो मे एक क्राति मचा दी। इस पुस्तक ने अर्थशास्त्र को एक नया विज्ञान का रूप दिया। मार्क्स का 'पूजी' नाम का यह ग्रथ समाजवाद का आधार है।

मार्क्स ने 'पूजी' ग्रथ का लिखना उन्ही दिनो शरू किया था जब वह 'अतिरिक्त मूल्य' के सिद्धान्त पर अपनी पुस्तक लिख रहे थे। 'अतिरिक्त मूल्य' पर उन्होने जो पुस्तक लिखी, उसे उस समय कोई छापने को तैयार नही हुआ। और वह उनकी मृत्यु के बाद 1905 मे 'पूजी' नाम के महान् ग्रथ के चौथे भाग के रूप मे ही प्रकाशित हो सकी।

'पूजी' का पहला भाग 16 अगस्त, 1867 को छप कर तैयार हुआ था। उसके वाद मार्क्स जीवन भर दूसरे, तीसरे और चौथे भाग की तैयारी मे लगे रहे। लेकिन साथ ही अमली क्रातिकारी कामो से भी वह अलग नही रहे। 'पूजी' के पहले भाग के

प्रकाशन के बाद ही प्रशा और फ्रास के बीच लडाई हुई और पेरिस के मजदूरो ने विद्रोह करके अपना 'कम्यून' अथवा क्रांतिकारी पचायत कायम की। उस बीच मार्क्स मजदूरो के सगठनो का मार्ग-दर्शन करते हुए चौतरफा क्रातिकारी कामो मे लगे रहे। इसलिए वह सन् 1872 से पहले 'पूजी' के दूसरे भागो को लिखने की ओर ध्यान न दे सके।

फल यह हुआ कि बाकी भागो का प्रकाशन वे नही देख सके। उनके गहरे मित्र एगेल्स ने उनके लिखे हुए नोट्स को इकट्ठा करके उनका सम्पादन किया, और मार्क्स के मरने के बाद 'पूजी' का दूसरा भाग सन् 1885 मे और तीसरा भाग 1894 ई० मे प्रकाशित कराया।

'पूजी' के चौथे भाग का प्रकाशन एगेल्स भी नही देख सके। वह उनकी भी मृत्यु के बाद सन् 1905 मे 'अतिरिक्त मूल्य' के सिद्धान्त के नाम से प्रकाशित हुआ।

वैसे तो 'पूंजी' मे ससार के हर विषय पर गहरी दृष्टी डाली गई है, पर मुख्य रूप से उस महान् ग्रथ मे पूजीवाद के आर्थिक सिद्धान्तो की वैज्ञानिक जाच की गई है। उसमे पूजी की उत्पत्ति और उसके विकास के कारणो पर प्रकाश डाला गया है। मज़दूरो के शोषण की सचाई को खोल कर रखते हुए उस ग्रथ मे यह सिद्ध किया गया है कि पूजीवाद स्वय अपने अन्त की सामग्री पैदा कर देता है, जिसके बाद समाजवाद का स्थापित होना अनिवार्य है।

अर्थशास्त्र सम्बन्धी खोज के कामो मे दिन-रात लगे रह कर भी मार्क्स इतिहास, गणित, और विभिन्न विज्ञानो का अध्ययन करते रहते थे। गणित मे तो उन्होने कुछ स्वतन्त्र खोज के काम भी किए। गणित और इतिहास पर उनके बहुत से लेख और टिप्पणियो को देखने से प्रकट होता है कि उनकी जानकारी एक जीते-जागते विश्वकोष जैसी थी।

मार्क्स इतना अधिक दिमागी काम करते हुए भी मज़दूर वर्ग को सगठित और शिक्षित करने मे जुटे रहते थे। मजदूरो का सबसे पहला अन्तर्राष्ट्रीय सगठन सन् 1864 ई० मे स्थापित हुआ, जिसे अब 'प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय' कहते है। मार्क्स ही उसकी नीव डालने वाले और सगठनकर्त्ता थे, और अन्त तक वह ही उसके नेता और उसकी आत्मा बने रहे। उसके सारे महत्वपूर्ण दस्तावेज भी मार्क्स ने ही तैयार किए थे।

'प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय' की एक आम सभा मे मार्क्स ने 'श्रम, मूल्य और लाभ के प्रश्न पर अपना ऐतिहासिक भाषण दिया था। वह भाषण दुनिया के मजदूर-आन्दोलन की

एंगेल्स

एक अनमोल निधि है। उसे मार्क्स की बेटी इलीनोर ने सन् 1896 ई० मे प्रकाशित कराया।

सन् 1870-71 मे फ्रास और प्रशा के बीच लड़ाई हुई। यह लडाई 'प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय' के लिए अग्निपरीक्षा थी। मार्क्स ने कहा कि "यह लुटेरो की लडाई है और नेपोलियन को अपनी गद्दी से इसका मोल चुकाना पडेगा।" प्रशा की सरकार को भी उन्होने 'लुटेरी सरकार' कहा। फ्रास और जर्मनी दोनो देशो के अगुआ मजदूरो को उन्होने यह कह कर लडाई से अलग रखा कि मजदूरो का नारा 'शान्ति' है। समाजवादी दुनिया मे लडाइया नही होगी क्योकि हर देश का शासक मजदूर होगा, और हर देश के मजदूर के हित एक है।

मार्क्स की भविष्यवाणी सच निकली। नेपोलियन को गद्दी से हाथ धोना पडा। तब मार्क्स ने जर्मन मजदूरो से कहा कि 'सम्मान के साथ सुलह' के लिए आन्दोलन करो, और फ्रास के नए जनतन्त्र को अपनी जर्मन सरकार से मान्यता दिलवाओ।

फ्रास के मजदूर विद्रोह करने को उबल रहे थे। मार्क्स ने चेतावनी दी कि इस तरह बेमौके विद्रोह करना भूल होगी। फिर भी 28 मार्च, 1871 को विद्रोह हो ही गया। मार्क्स विद्रोहियो की मदद को दौड पडे। उन्होने दुनिया भर मे सैकडो चिट्ठिया भेजी और 'अन्तर्राष्ट्रीय' की शाखाओ को मदद भेजने के लिए कहा। उन्होने कहा, "यह दुनिया की पहली मजदूर क्राति है"। फ़ास मे कुछ दिन के लिए 'कम्यून' कायम हो गया।

मार्क्स खुद उस 'कम्यून' को परामर्श देकर भूलो से बचाते रहे। पर पेरिस चारो ओर से घिरा हुआ था और उनके परामर्श समय पर नही पहुच पाते थे। और भी कई कारणो से ढाई महीने बाद ही फ्रास के 'कम्यून' का अन्त हो गया।

मार्क्स ने पेरिस के मजदूरो की बहादुरी की सराहना की, और उनके 'कम्यून' की हार से कई महत्वपूर्ण नतीजे निकाले। मार्क्स ने बताया कि शासन के पुराने ढाचे के रहते मजदूरो की क्राति टिकाऊ नही हो सकती। मार्क्स की उसी सीख के आधार पर आगे चल कर रूसी क्राति ने 'सोवियत प्रथा' चलाई। दूसरा नतीजा मार्क्स ने यह निकाला

कि किसानो और खेतिहर मजदूरो को साथ लिए बिना केवल औद्योगिक मजदूरो की जीत टिक नही सकती। रूसी क्राति ने इस सीख से भी पूरा लाभ उठाया।

मार्क्स और एगेल्स, मार्क्स की पुत्रियो क साथ

फ्रास के 'कम्यून' की हार से 'प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय' के बुरे दिन आ गए। एक ओर देश-देश की सरकारे कार्यकर्त्ताओ को सताने लगी और दूसरी ओर खुद 'अन्तर्राष्ट्रीय' के अन्दर झगडे और मनमुटाव उठ खडे हुए। 'अन्तर्राष्ट्रीय' को अब और चलाना सम्भव नही रहा। अब उसकी जरूरत भी नही थी, क्योकि वह समाजवाद के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सघर्ष की नीव डालने का अपना काम पूरा कर चुका था। नीव पक्की हो चुकी थी। इसलिए मार्क्स ही के प्रस्ताव से 'प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय' भग कर दिया गया। लेकिन उसके भग होने पर भी मार्क्स सभी देशो के मजदूरो के नेता बने रहे। वह हर देश की आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक और दूसरी परिस्थितियो को अच्छी तरह जाच कर, उनके अनुसार सबको सलाह देते थे।

लदन मे मार्क्स का जीवन तपस्वियो का-सा जीवन था। वह सवेरे नौ बजे पढने-लिखने बैठ जाते थे और बहुत रात बीते तक काम करते रहते थे। बीच मे सिर्फ भोजन के लिए उठते थे। इतवार के दिन वह पत्नी, मित्रो और तीनो पुत्रियो के साथ लदन के हैम्पस्टेड पार्क मे घूमने जाते थे। उन्हे प्रकृति, कविता, और साहित्य से भी बहुत प्रेम था। वह यूरोप की सभी भाषाए तो जानते ही थे, यूनानी और लातीनी (लेटिन) भाषाए भी उन्हे अच्छी तरह आती थी। प्राचीन यूनान के नाटक लेखक अ० स्काइलस और अग्रेजी नाटककार शेक्सपीयर के नाटको के बहुत से अग उन्हे जबानी याद थे। फ्रांसीसी उपन्यास लेखक बालजक की रचनाए भी मार्क्स को बहुत पसंद थी।

मार्क्स की कब्र

गरीबी, मुसीबतो और परिश्रम के कारण मार्क्स का स्वास्थ्य बिगडता गया। सन् 1857 से वह बीमार रहने लगे थे। स्वास्थ्य सुधारने के लिए वह जर्मनी के कार्ल्सबाद नामक स्थान को गए, पर जर्मनी की सरकार ने उनको वहा ठहरने नही दिया।

लदन मे मार्क्स के तीन बच्चो की मृत्यु पहले ही हो चुकी थी। 2 सितम्बर, 1881 को मार्क्स की पत्नी जेनी की भी मृत्यु हो गई। मार्क्स एक तो स्वय बीमार थे, उस पर ये दुर्घटनाए। उनका स्वास्थ्य और बिगडने लगा। कुछ ही समय बाद उनकी विवाहिता पुत्री की भी मृत्यु हो गई। इन सब दुखो के कारण उनकी हालत और खराब होती गई।

14 मार्च, 1883 को उन्हे ऐसा मालूम हुआ कि जैसे वह स्वस्थ हो रहे हो। वह पढने-लिखने के कमरे मे पहुचे और पढते समय जिस कुर्सी पर बैठते थे, उस पर बैठे, और जिस मेज पर लिखते थे उस पर सिर रख कर कुछ सोचने लगे। किन्तु वहा से वह फिर न उठ सके, सदा के लिए सो गए। लदन के हाई गेट कब्रिस्तान मे 17 मार्च को उन्हे दफनाया गया। पति-पत्नी की कब्रे पास-पास आज भी मौजूद है। एगेल्स उस समय लदन मे ही थे। यह शोक समाचार उन्होने ही मार्क्स के सब मित्रो को भेजा। एक पत्र मे एगेल्स ने लिखा—"अब हमारी पार्टी के सबसे बडे दिमाग ने सोचना और सबसे मजबूत दिल ने धडकना बन्द कर दिया है।"

यूनानी और रोमन

पौराणिक कथाएं

आदमी जब सभ्य नही हुआ था, तब भी वह कुछ विश्वास रखता था। उसके ये विश्वास सोचे-समझे हुए भी थे, और अन्धविश्वास भी। उनमे से कुछ सगत थे, कुछ असगत।

जब हम तर्क या बुद्धि का उपयोग किए बिना ही केवल इस कारण कि हमारे बाप-दादा उसे मानते थे। कोई विश्वास बना लेते है, तब उसे अन्धविश्वास कहते है। आदिम मानव के पास इस तरह के अन्धविश्वासो का एक भडार था। वह देखता था, अचरज करता था। वह अचरज की चीज का सही अर्थ या कारण जानने की कोशिश करता था, पर जान नही पाता था। तब वह भयभीत होता था, और अटकल लगाता था। उसकी वह अटकल चूकि अक्सर भय से उपजी होती थी, इसलिए वह घटनाओ या चीजो का जो अर्थ लगाता था, वह अधिकतर खयाली होता था। उसका कोई सोचा-समझा हुआ बुद्धिसगत आधार नही होता था।

फिर भी मानव सोचता था, सुनता था, रहस्यो की गाठो को खोलने की कोशिश करता था। वह सोचता कि जब नदी बहती है, और झरना गिरता है, तब उसके पीछे कोई-न-कोई कारण जरूर है। वह सोचता कि जब बीज मिट्टी मे पडता है और जमीन

की छाती वेध कर उसका अकुरा निकल आता है, पौधे लहलहाने लगते है और वे देखते-न-देखते बडे पेड वन जाते है, तव इनके पीछे कुछ-न-कुछ है जरूर। आदिम मानव जल मे, थल मे, जगल मे, हवा मे, सर्वत्र उस 'कुछ' को खोजता था, उससे डरता था, कापते हृदय से उसे पूजता था, और उसे प्रसन्न करने के लिए अपनी सन्तान तक की वलि चढा देता था।

इस प्रकार आदमी ने देख कर नतीजा निकाला कि वहने वाले जल, बढने वाले पेड, अन्न उगलने वाली जमीन, तडपने वाली विजली, गरजने वाले वादल, सवके भीतर कोई-न-कोई शक्ति अवश्य है और वह शक्ति उसकी अपनी शक्ति से वडी है, क्योकि वह उसके सुख-दुख का कारण होती है। इसलिए वह उन्हे देवता मान कर पूजने लगा। प्रकृति की डरावनी और सुहावनी शक्ति के रूप उसके भले और बुरे देवता बने, जिनको उसने देख कर नही, वल्कि उनके असर से पहचाना, और उन्हे अपना रक्षक देवता और सहारकर्ता माना।

मानव जमीन, जल, बिजली, बादल, आदि को देवता मान कर उनकी पूजा करने लगा

कहावत है कि मानो तो देवता, नही तो पत्थर। फिर भी सीधे-सीधे पत्थर को देवता मानना कठिन होता है। इसीलिए आदमी उस पत्थर की तरह-तरह की शक्ले गढता है। आदिम इसान ने भी अपनी कल्पना के देवताओ की शक्ले गढी और चूकि दिखाई देने वालो मे आदमी अपने से वढ कर और कुछ नही देखता था, इसलिए उसने अपने देवताओ और प्रकृति की छिपी शक्तियो को आदमी का ही रूप और रग दिया। उन्हे शक्ति मे अपने से कही अधिक महान् मानते हुए भी उसने अपने देवताओ मे इसान की इसानियत, उसके राग-द्वेष, काम-क्रोध जन्म-मरण, सव कुछ भर दिए। ऐसे ही

काल्पनिक विश्वासो को पौराणिक विश्वास और उन विश्वासो के सहारे वनी कहानियो को पुराणो की कहानिया कहते है ।

यूनानियो और रोमनो के पौराणिक विश्वास करीब-करीब एक ही है, क्योकि रोमनो की सस्कृति यूनानियो के वाद की सस्कृति है और उसका अधिकतर विकास यूनानी सस्कृति से ही हुआ है। यूनानी सस्कृति के कमजोर हो जाने पर रोमनो ने उसे अपना कर आत्मसात् कर लिया। लगभग सभी यूनानी देवता नए नाम धारण करके रोमनो के देवता वन गए, और यूनानी देवताओ की कहानिया भी रोमन देवताओ की कहानिया वन गई। अन्तर वस इतना है कि जहा यूनानियो की अनेक जातिया, अनेक वस्तिया, अनेक नगरिया थी, वहा रोमनो की प्राय एक ही जाति थी जो अधिकतर एक ही तग घाटी मे वसी थी। इसलिए जहा यूनानियो के देव-परिवारो, विश्वासो और पुराणो मे विविध प्रकार के रग मिलते है, वहा रोमनो के विश्वास और पुराण अधिकतर एक ही रग के है ।

और सब जातियो की पौराणिक कहानियो की तरह यूनानियो और रोमनो की पौराणिक कहानियो मे भी उनके देवताओ के घरेलू जीवन, राग-द्वेष, और हार-जीत का वर्णन है। यूनानियो का खयाल था कि धरती और उस पर रहने वालो को सिरजने वाले देवता थे। उन्होने अपने चारो ओर फैली हुई धुध को ठोस वना कर पृथ्वी की रचना की, और उसे समुद्र से घेरा। फिर जव फैली हुई धुध मिट गई और पृथ्वी की रचना हो गई तव उसके ऊपर विस्तृत आसमान उभर आया। तव जाकर देवताओ ने जमीन-आसमान के बीच मे और जमीन के नीचे पाताल मे निवास करना शुरू किया ।

यूनान मे ओलिम्पस नाम का एक पहाड है, जिसकी कमर के चारो ओर कुहरा छाया रहता है, और जिसकी चोटी वादलो को छेद कर उन पर अपना साया डालती रहती है। यूनानियो का विश्वास था कि इसी ओलिम्पस की वर्फ की सफेद चोटी पर देवताओ का आवास है, वहा से वे मानव के कारनामे देखते रहते है। जियस इन देवताओ का राजा था। जियस को रोमन लोग जूपिटर कहते थे। जियस के साथ ग्यारह देवी-देवता और ओलिम्पस पर रहते थे। उनके नाम थे, हिरा, हर्मिस, अथेनी, अपोलो, आर्तेमिस, अरेस, अफ्रोदीती, हैफ़ाइसतस, हेस्तिमा, पोसिदन और दिमीतर ।

यूनान की पौराणिक कहानियो मे ऐसे देवताओ का भी जिक्र आता है, जो आदमी से देवता बन गए थे, और ऐसे देवताओ का भी वर्णन आता है जिन्होने मनुष्य जाति

ओलिम्पस

से विवाह करके सन्ताने पैदा की और आदमी के पुरखे वन गए। ऐसी हालत मे आदमी और देवताओ का व्यवहार वरावर वालो जैसा होता था। देवताओ के पुत्र अनेक वार यूनानी कथाओ मे घटनाओ के नायक होते है, और वे ससार के नागरिको के साथ लड कर अनेक लडाइया हारते और जीतते है। ट्राय की इतिहास प्रसिद्ध लडाई मे कई देवताओ के बेटो ने भाग लिया था, जिनकी गाथा कवि होमर ने अपने अमर काव्य 'ईलियद' मे गाई है। उदाहरण के लिए अकिलीज़ को, जो उस महाकाव्य की नायिका हेलेन का प्रेमी था, देवता का पुत्र वताया गया है। ट्राय के युद्ध की कहानी मे देवताओ और इसान की औलाद एक-दूसरे से पूरी तरह गुथी हुई है, ठीक उसी तरह जैसे महाभारत की कहानी मे देवपुत्र पाडव आदमियो की सन्तान के साथ घुलमिल गए है।

कुछ देवता ऐसे भी है, जो केवल रोमनो के देवता है, जिनका यूनानियो के यहा कोई जिक्र नही मिलता। जानस एक ऐसा ही देवता है। रोम के देवताओ मे उसका वहुत ऊचा और महत्वपूर्ण स्थान था। दुनिया की सारी चीजो का वही मूल कारण माना जाता था। वर्षो और ऋतुओ का वही विधाता था। वही भाग्य का वनाने और विगाडने वाला था, और उसी की दया से मानव-जाति और उसकी कलाओ का विकास होता था।

लोक-कथाओ के अनुसार जानस लातियम का राजा था उसने उस सुनहर युग। मे राज किया था, जव देवता और आदमी कन्धे-से-कन्धा मिलाकर धरती पर विचरते

होमर

थे । उसने बडे-बडे आलीशान और एक-से-एक सुन्दर मन्दिर खडे किए थे। उसने इसान को अनेक लाभकर कलाए सिखाई थी। जानस के नाम पर ही वर्ष के पहले महीने का नाम जनवरी पडा ।

यूनानी लोग शान्ति के प्रेमी थे, युद्ध क नही, गो उन्हे अनेक लडाइया लडनी पडी थी, और वे लडने मे प्रवीण भी थे। पर रोमन लोग युद्धप्रिय थे, और साम्राज्य का विस्तार उनका परम ध्येय था । अपने जमाने का दुनिया का सबसे बडा साम्राज्य उन्होने ही खडा किया था । उन्हे आए दिन लडाइया लडनी पडती थी । उनकी सस्कृति मे सेना की व्यवस्था और सचालन का महत्व असाधारण था, और जानस युद्ध मे जीत का देवता माना जाता था। वह रोमन जनता के साथ खुद भी मैदान मे खडा होता था—ऐसा रोमनो का विश्वास था। इसलिए जब भी रोम पर कोई सकट आता, जानस के मन्दिर के द्वार खुले रहते थे। जानस के बारे मे भी अनेक कहानिया मौजूद है। चारणो और कवियो के लिए तो युद्ध सम्बन्धी उसकी कहानिया विशेष प्रेरणा की चीज बन गई थी ।

हेलेन
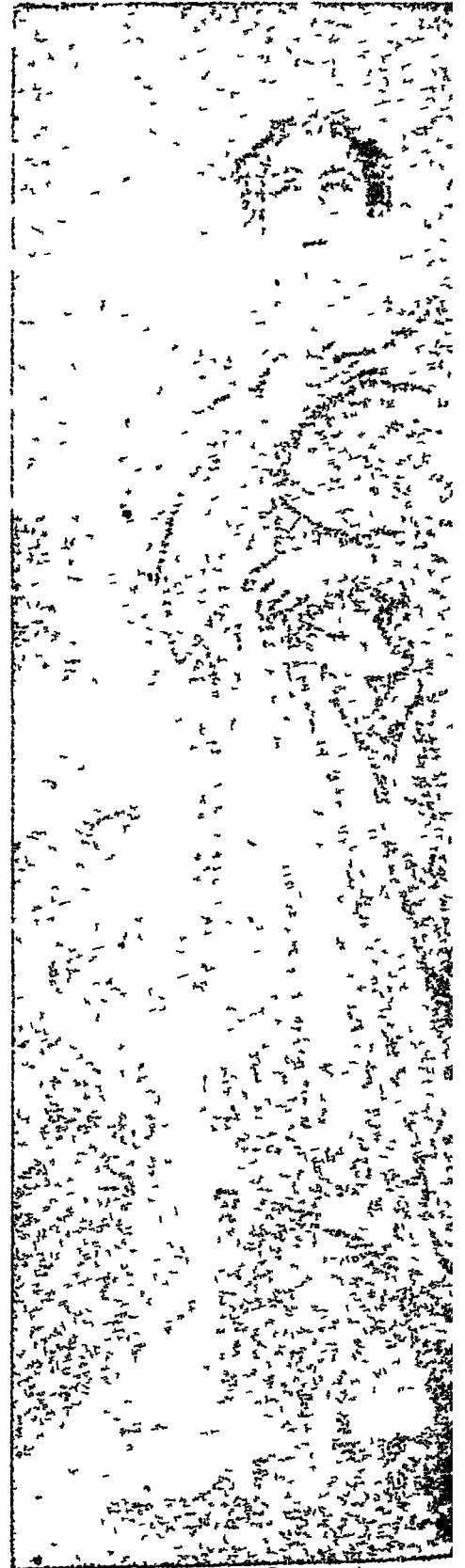
(1)

जियस की कहानी

आकाश का देवता यूरेनस यूनानियो का सबसे पहला देवता था। धरती की देवी गाइया उसकी मा थी। यूरेनस ने गाइया से ब्याह कर लिया। उस ब्याह से कुछ देवता और दैत्य पैदा हुए, जो तितान, खेकातोचीरी, और कीक्लोप कहलाए। तितान छ थे। वे अपने पिता के नाम पर यूरेनिदाई कहलाए। उन्होने अपनी छ बहनो से विवाह कर लिए। यूरेनस डरा कि कही उसके लडके तितान उसे मार कर उसकी गद्दी न छीन लें। इसलिए उसने उन्हे पकड कर पाताल मे कैद कर दिया। गाइया को बहुत दुख हुआ। उसने उनको छुडाने की ठानी। क्रोनस उसका सबसे छोटा बेटा था। गाइया ने उसे एक हसिया बना कर दिया और बाप से लडने को उक्साया। क्रोनस ने अपने पिता यूरेनस को घायल कर अपने तितान भाइयो को आजाद करा लिया। यूरेनस की खून की बूदो से गिगान्ती कुल के देवता पैदा हुए। तितानो का कुल गिगान्तियो के योग से और बढ चला, और देवताओ के अनगिनत कुल पैदा हो गए।

क्रोनस

सबसे छोटा तितान क्रोनस जब पिता को हरा कर उसकी गद्दी पर बैठा, तब उसने अपनी

दिमीतर

बहन रिया से शादी की। उस शादी से उसके दो बेटे और तीन बेटियां हुई। बेटियो के नाम थे हेस्तिया, दिमीतर और हिरा। एक दिन क्रोनस ने भविष्यवाणी सुनी कि "जैसे तुमने अपने पिता को गद्दी से उतार दिया है, वैसे ही तुम्हारे बेटे भी तुम्हे गद्दी से उतार देगे।" क्रोनस इतना डरा कि वह झट अपने पाचो बच्चो को निगल गया। उसके बाद उनका छठा बेटा जियस पैदा हुआ। वह इतना सुन्दर था कि मा का प्यार बरबस उस पर उमड आया और उसने निश्चय किया कि ज़ान की बाजी लगा कर भी वह अपने बेटे की रक्षा करेगी। जब क्रोनस नए पैदा हुए बच्चे को देखने आया तब रिया ने एक पत्थर को कपडो मे लपेट कर उसके सामने कर दिया। क्रोनस ने उसे ही अपना नया बेटा समझ कर चबा डाला। यह कहानी मथुरा के कस की कथा से बहुत कुछ मिलती-जुलती है। इस तरह पति को धोखा देकर रिया ने जिस लडके को बचाया था, उसका नाम जियस पडा। जियस को उसकी मा ने क्रेते के टापू मे भेज दिया। वहा वह एक गुफा मे छिप कर रहा, वन की देवियो ने उसे दूध पिलाया, मधुमक्खियो ने उसे शहद लाकर दिया, और गरुड ने स्वर्ग का अमृत पिला कर उसे अमर बना दिया। रिया के अनुचर ज़ियस के चारो ओर नाच-नाच कर अपनी तलवारो और ढालो की झकार मे उसकी आवाज डुबा देते, जिससे क्रोनस उसे सुन न पाए और बच्चे की जिन्दगी को कोई खतरा न पहुचे।

जियस सयाना होकर मा के पास गया। उसने मा से मिल कर एक षड्यन्त्र रचा और पिता को मजबूर कर दिया कि वह अपने निगले हुए बच्चो को उगल दे। इस तरह उसने अपने भाइयो को फिर से जिला लिया और उनकी मदद से क्रोनस को गद्दी

से उतार कर स्वर्ग का सिहासन खुद हथिया लिया। क्रोनस के दूसरे भाई इसे न सह सके, और ज़ियस के देवताओ और दैत्यो (तितानो) मे घमासान युद्ध छिड गया ।

लडाई एक अरसे तक चलती रही। यूनानी पुराणो का कहना है कि यह प्रलयकर लडाई थेसाली के मैदान मे हुई थी। ओलिम्पस पहाड की चोटी पर देवराज जियस का सिहासन चमचमा रहा था, और उसके सामने ओथ्रित पर्वत की चोटी पर तितानो के नेता जापेतस ने अपना डेरा जमाया था । ज़ियस को उस लडाई मे भारी कठिनाइया झेलनी पडी। अन्त मे उसे यूरेनस से पैदा हुए खेकातोचीरी और कीक्लोप कुल के देवताओ की याद आई, जिन्हे तितानो ने कभी पाताल लोक मे कैद कर दिया था। जियस ने उनसे मदद लेने का निश्चय किया। वे अब भी पाताल लोक मे कैद थे। उसने उन्हे मुक्त कर दिया और वे भयकर हथियारो के साथ जियस की मदद को आ पहुचे। बिजली, वज्र और भूकप उनके हथियार थे। इन हथियारो के सामने तितान लोगो के घुटने टूट गए। इस प्रकार जियस की विजय हुई और तितानो को चट्टानो के नीचे लोहे की दीवारो से घिरे उस नरक मे डाल दिया गया, जहा सदा सर्दी और अन्धेरे का राज रहता है, और जहा पाताल लोक की देवी हिकेत का राज्य है। यूनानी देवताओ और दैत्यो की इस लडाई की कहानियो को लेकर कवियो ने अनेक काव्य और गीत लिखे है।

ज़ियस

अफ्रोदीती का सिर

(2)

अफ्रोदीती की कहानी

प्रेम की देवी अफ्रोदीती का यूनान की पौराणिक कथाओ मे बडा मनोरजक स्थान है। अफ्रोदीती को ही रोमन पुराणो मे वीनस कहा गया है। अफ्रोदीती का जन्म समुद्र के नीचे फेन से हुआ था। इटली के प्रसिद्ध चित्रकार बोतीचेली ने अपने एक बहुत ही सुन्दर चित्र मे अफ्रोदीती के जन्म का चित्रण किया है। उस चित्र मे उसे सीप पर सवार समुद्र के 'फेन' से निकलते हुए दिखाया गया है। प्रेम की देवी अफ्रोदीती असीम आकर्षण की प्रतिमा है। देवता और मनुष्य दोनो ही उसके प्रेम के भूखे है। यो तो रोमन पौराणिक कथाओ मे अफ्रोदीती के कई पति और प्रेमी बताए गए है, पर उनमे अदोनिस नाम का एक युवा गडरिया सबसे सुन्दर है। अफ्रोदीती उसे प्यार करती थी, पर एक जगली सूअर ने उसे मार डाला। अपने प्रेमी की मृत्यु से अफ्रोदीती के हृदय मे पहली बार प्रेम का ऐसा दर्द उमडा, जो किसी तरह कम न होता था। रह-रह कर वह अपने प्रेमी की लाश को चूमती और किसी प्रकार उसे छोडने को तैयार न होती। अन्त मे देवताओ को दया आई और उन्होने वरदान दिया कि वह गडरिया नौजवान फिर से जीवित हो कर साल का आधा भाग ऊपर की दुनिया मे अफ्रोदीती के साथ बिताया करेगा और आधा पाताल की देवी पर्सिफोन के साथ।

अफ्रोदीती
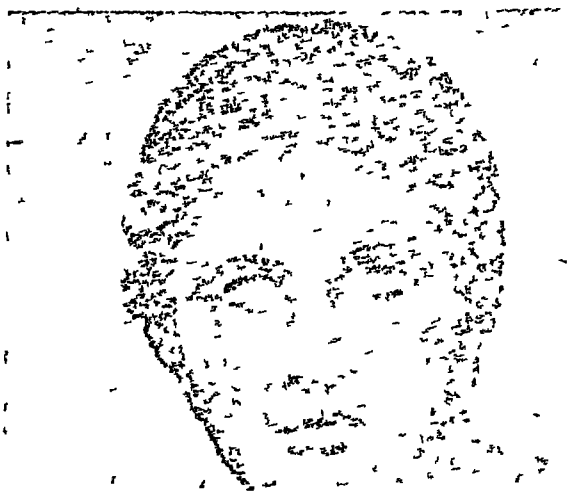
अदोनिस तब से यूरोप की सुहावनी ऋतु का प्रतीक और वसन्त का हरकारा माना जाता है। यूनानियों के विश्वास के अनुसार इटली में अप्रैल के महीने में जब फल और पौधे वसन्त को निहाल करने लगते हैं, तब अदोनिस पाताल से निकल कर ऊपरी दुनिया में लौटता है और अफ्रोदीती के साथ वन-कानन में रमता है, लोग इस अवसर पर प्रेम की देवी की पूजा में विभोर हो उठते हैं। यूनान, इटली, मिस्र, सीरिया आदि में अफ्रोदीती और वीनस के अनेक मन्दिर बने हुए हैं।

पर्सिफोन

(3)

इरास और साइकी की कहानी

अपोलो

अफ्रोदीती का एक और प्रेमी या पति था, जिसका नाम अरेस था। अरेस से अफ्रोदीती के एक पुत्र हुआ, जिसका नाम इरास पडा। इरास यूनानी देवताओ मे सबसे सुन्दर और सबसे युवा माना जाता है। वह पख और धनुष धारण करता है। मूर्तियो मे उसका रूप अक्सर एक बालक जैसा गढा जाता है।

साइकी क्रेत नाम के एक टापू के राजा की बेटी थी। उसे देवताओ ने ऐसी सुन्दरता दी थी कि उससे अफ्रोदीती को भी अपना मुह छिपाना पडता था। इसी से अफ्रोदीती उससे डाह करती थी। होते-होते अफ्रोदीती की डाह इतनी बढी कि उसने अपने पुत्र इरास द्वारा साइकी का नाश कराना चाहा। पर उसका नाश करने की बजाय इरास उसके प्रेम का शिकार हो गया। साइकी के रूप का उस पर ऐसा जादू हुआ कि वह उसके प्रेम मे दीवाना-सा हो गया। उन्ही दिनो साइकी के पिता ने अपोलो से शकुन विचरवाया। शकुन मे यह निकला कि साइकी को मातमी लिबास पहना कर उसे एक खास चट्टान के पास ले जाकर छोड दिया जाए। वहा एक डैनोवाला दैत्य आएगा। उसके आने पर साइकी

इरास

साइकी
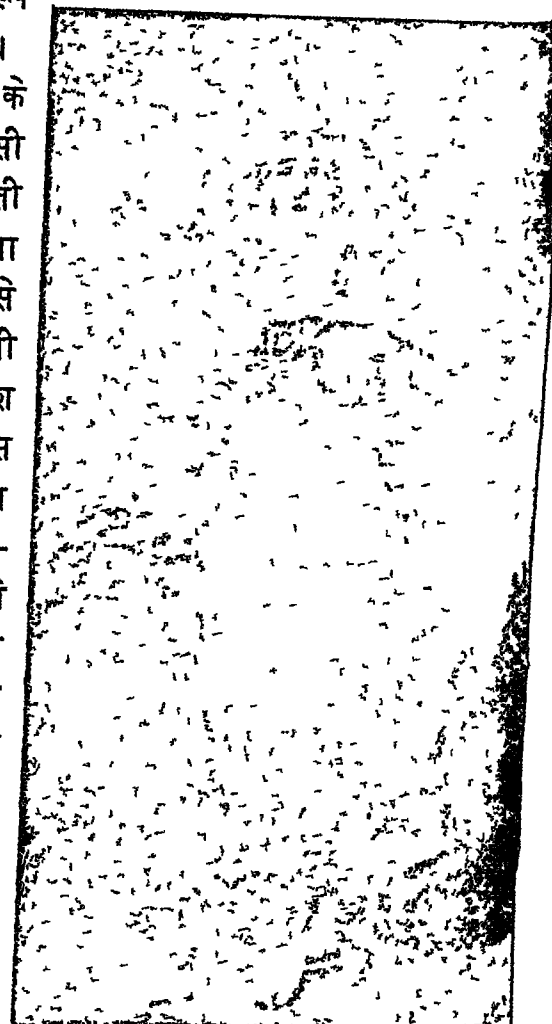
उसकी पत्नी वन जाए । शकुन मे निकले भाग्य के इस कठिन आदेश का साइकी के पिता को पालन करना पडा ।

जैसे ही साइकी को चट्टान के पास अकेले छोडा गया, उसे वादल के एक टुकडे ने ढक लिया, और हवा का एक हल्का झोका आकर उसे अपने साथ उडा ले गया । इस प्रकार हवा के हिडोले मे झूलती वह एक सुन्दर महल मे पहुची । रोज दिन डूवते ही इरास भी वहा पहुच जाता, पर साइकी उसे देख न पाती । इस तरह इरास रोज साइकी के साथ रात विताने लगा, पर साइकी न उसका नाम जान सकी, न पता-ठिकाना । इतना ही नही, उसे इस वात की भी सख्त ताकीद कर दी गई थी कि वह कुछ जानने की कोशिश न करे । लेकिन जव साइकी की वहने उसके सुन्दर महल को देखने आई, तव उन्होने उसे इस वात के लिए तैयार कर लिया कि अवसर मिलते ही अपने प्रेमी को पहचान कर वह अपना कुतूहल शान्त कर ले ।

एक रात जव इरास सो रहा था, साइकी एक चिराग लेकर उसके पास चुपके से दवे पाव पहुची, और उसे देखने के लिए झुकी । और जव उसने देखा कि सोया हुआ युवक अफ्रोदीती का वेटा है, तव वह ऐसी घवराई कि जलते चिराग के तेल की एक गर्म वूद उसके प्रेमी के नगे कधे पर गिर पडी । देवता जाग पडा । उसने साइकी को उसके कुतूहल और असयम के लिए धिक्कारा, और महल छोड़ दिया ।

साइकी रोती-विलखती रह गई । उसके दर्द की कोई थाह न थी । तव वह भी महल से निकल पडी और दर-दर की धूल छानती फिरी । ढूढते-ढूढते वह एक दिन अफ्रोदीती के महल मे जा पहुची ।

तेल की एक गर्म वूद इरास के नगे कधे पर गिर पडी

वहा वह कैद कर ली गई और अफ्रोदीती उससे गुलामो की तरह काम लेने लगी। उसने साइकी के धीरज को परखने के लिए उसे कठिन-से-कठिन काम सौपे, यहा तक कि एक दिन उसने पाताल लोक की देवी पर्सिफोन के पास से एक सिगार-दान लाने को भेजा। पर इरास का प्रेम भी कुछ साधारण नही था। इसलिए वह साइकी की मुसीबतो मे चुपचाप साए की तरह उसके साथ लगा रहता और सकटो मे उसकी रक्षा करता। जब साइकी ने सिगारदान को पर्सिफोन के यहा से लाकर खोला, तो उसमे से एकाएक जहरीली भाप निकलने लगी और वह बेहोश होकर गिर पडी। अब इरास अपने को नही रोक सका। उसने दौड कर अपनी प्रेमिका को बाहो मे भर लिया, और उसे फिर से जिला लिया। तब अफ्रोदीती का क्रोध भी शान्त हो गया और ओलिम्पस के देवताओ की उपस्थिति मे इरास और साइकी का विवाह हो गया।

पर्सिफोन का सिगारदान
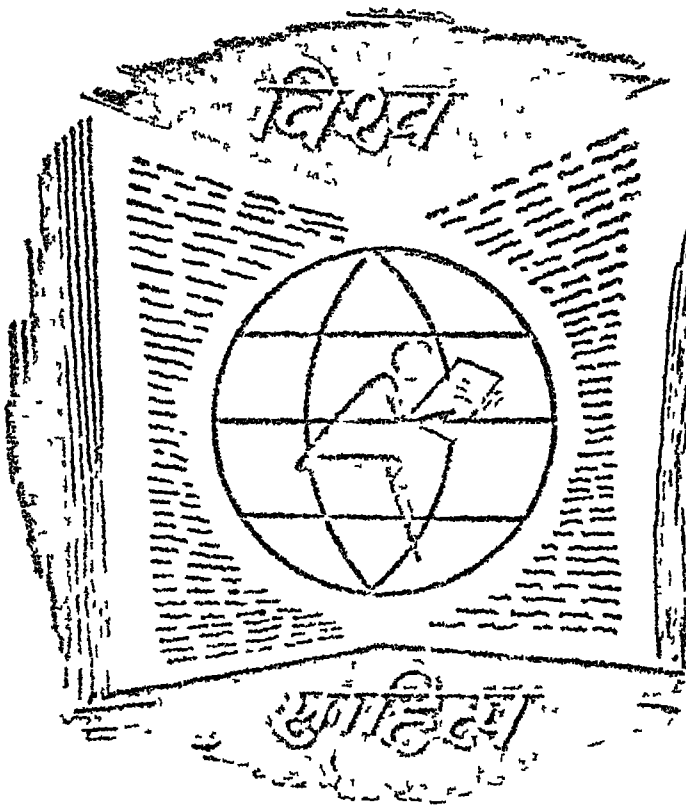
(1) मराठी साहित्य

★

महाराष्ट्र के लोगो की भाषा 'मराठी' कहलाती है। यो तो कोकणी, जो कुछ लोगो के विचार मे एक स्वतन्त्र भाषा है, हलबी, अहिराणी, वहोडी, डागी, आदि आज भी महाराष्ट्र देश मे बोली जाती है, किन्तु पूना के आसपास बोली जाने वाली मराठी भाषा ही महाराष्ट्र की मुख्य भाषा बन गई है। यह भाषा 1,200 वर्ष पुरानी है। इसके बोलने वालो की सख्या लगभग ढाई करोड है। इस भाषा मे 1,12,186 शब्द है। मराठी भाषा की सबसे पुरानी पुस्तक 'विवेक-सिधु' है। इसकी रचना कवि मुकुन्दराज ने अनुमानत सन् 1188 ई० मे की थी। अभी तक इससे पहले की कोई मराठी पुस्तक नही मिली है।

स्वामी रामदास

पुराने मराठी साहित्य के अधिकतर रचयिता कवि होने के साथ-साथ सत भी होते थे। यही कारण है कि पुराने मराठी साहित्य मे धर्म, भक्ति, नीति, समाज-सुधार आदि की रचनाए एक साथ पाई जाती है। चक्रधर, ज्ञानेश्वर, नामदेव, एकनाथ, रामदास और तुकाराम उस काल के प्रसिद्ध सत कवि थे।

सत तुकाराम

मराठी भापा के प्रसिद्ध सत और कवि चक्रधर का जन्म अनुमानत सन् 1154 ई० मे हुआ और उनकी मृत्यु अनुमानत सन् 1273 ई० मे हुई। वह जन्म से गुजराती थे। उन्होने महाराष्ट्र मे एक नया मत चलाया, जिसे 'महानुभाव पथ' कहते हैं। महानुभाव पथ के लोग काले कपडे पहनते हैं। इस पथ के लोग कृष्ण के भक्त थे। सन् 1272 ई० मे सत ज्ञानेश्वर का जन्म हुआ। उन्हे महाराष्ट्र का महाकवि माना जाता है। उन्होने सन् 1290 ई० मे मराठी भापा मे गीता की टीका की। यह टीका पद्य मे है। इसमे 9,000 ओविया (छन्द विशेप) हैं। उनके नाम पर ही यह टीका 'ज्ञानेश्वरी' कहलाई। महाराष्ट्र मे 'ज्ञानेश्वरी' का वैसा ही आदर है जेसा उत्तर प्रदेश मे तुलसी की रामायण का है।

महाराप्ट्र मे सत नामदेव की 'वानी' भी वडे आदर से पढी और सुनी जाती है। नामदेव का समय 1270 से 1350 तक माना जाता है। उनकी वानी 'गुरु ग्रथ साहव' मे भी मिलती है। सत एकनाथ (1533–1599) भी मराठी के प्रसिद्ध कवि थे। उन्होने रामायण और भागवत को मराठी कविता मे उतारा। सत मुक्तेश्वर (1600–1650) ने मराठी भाषा मे महाभारत तैयार किया, जिसे वहा की जनता ने दिल खोल कर सराहा। सन् 1608 मे सत तुकाराम का जन्म हुआ। उनकी वानी महाराष्ट्र के घर-घर मे रम गई। 50 वर्ष की आयु पाकर सन् 1658 ई० मे सत तुकाराम परलोकवासी हुए। समर्थ रामदास भी महाराष्ट्र के प्रसिद्ध कवि थे। वह शिवाजी के गुरु थे। उनका जन्म 1608 ई० मे हुआ और मृत्यु 1681 मे हुई। प्रसिद्ध मराठी ग्रथ 'दासबोध' उन्ही की रचना है।

इनके अलावा महाराष्ट्र मे बारहवी से सत्रहवी सदी तक और भी कई सत कवि हुए। उन सत कवियो को वारकरी कहा जाता है। वे सब पढरपुर के प्रसिद्ध विठोवा के भक्त थे। वारकरी सतो मे सभी जातियो और धधो के लोग पाए जाते हैं।

विठोवा के मन्दिर मे हर कोई जा सकता था। वहा किसी तरह की छुआछूत या भेदभाव नही वरता जाता था। महाराष्ट्र के सतो मे वडी खूवी यह है कि वे इस बात पर जोर देते थे कि सव इसान वरावर है। इन सब सतो का ध्यान समाज की दशा की ओर भी रहता था। सत रामदास ने तो समाज सुधार के लिए बडा प्रयत्न किया। उन्होने जगह-जगह मठ वनवाए और उनके जरिए आम जनता को नेक कामो की ओर लगाया। उनके नाम पर सतो का एक पथ चल पडा, जिसे 'रामदासी पथ' कहते है। सतो की यह महान् परम्परा अठारहवी सदी तक चलती रही। मुसलमान सत कवियो ने भी मराठी मे काफी लिखा है। इनमे शेख मुहम्मद सवसे ज्यादा प्रसिद्ध है। उन्हे कवीर का अवतार कहा जाता है। अन्य सत कवियो मे अकबर हुसैन खा, शाहमनी, जमाल शाह, आदि के नाम लिए जा सकते है।

धीरे-धीरे महाराष्ट्र की राजनैतिक हालत डावाडोल होने लगी। उसके साथ-साथ मराठी काव्य भी सत कवियो के हाथो से निकल कर पडितो के हाथो मे चला गया। इन पडित कवियो को पत कवि भी कहते है। इनमे वामन पडित और रघुनाथ पडित के खण्डकाव्य वडे रसीले है। कवि मोरोपत (1729–1789) ने मराठी भाषा में 108 रामायणिया लिखी। उन्होने सस्कृत से मराठी मे महाभारत का अनुवाद किया। कवि मोरोपत के कारण मराठी भाषा मे सस्कृत के सैकडो शब्द चल पडे।

सत कवियो और पत कवियो के वाद मराठी मे एक दूसरे प्रकार के कवि हुए, जिन्हे तत कवि कहते है। वे लोक-भाषा के कवि थे। वे 'पोवाडे' और 'लावनिया' वनाते और गाते थे। इन तत कवियो को 'शाहीर' भी कहते है, जो शायद फारसी 'शायर' से बना है। पोवाडे मे अधिकतर 'आल्हा' की तरह युद्ध और वीरता के वखान होते है और 'लावनियो' मे प्रेम की चर्चा होती है। इनकी भाषा जनता की आम भाषा होती है। उस जमाने मे फारसी और हिन्दुस्तानी के वहुत से शब्द मराठी मे मिल गए। मराठी गद्य का आरम्भ भी इसी समय हुआ। उस समय का गद्य 'वखर' यानी ऐतिहासिक कागज-पत्रो और रोजनामचो मे लिखा हुआ मिलता है। परन्तु मराठी गद्य का बाकायदा विकास अग्रेजो के आने के बाद और देश मे राष्ट्रीय जागरण के साथ हुआ।

विष्णुशास्त्री चिपलूणकर

केतकर
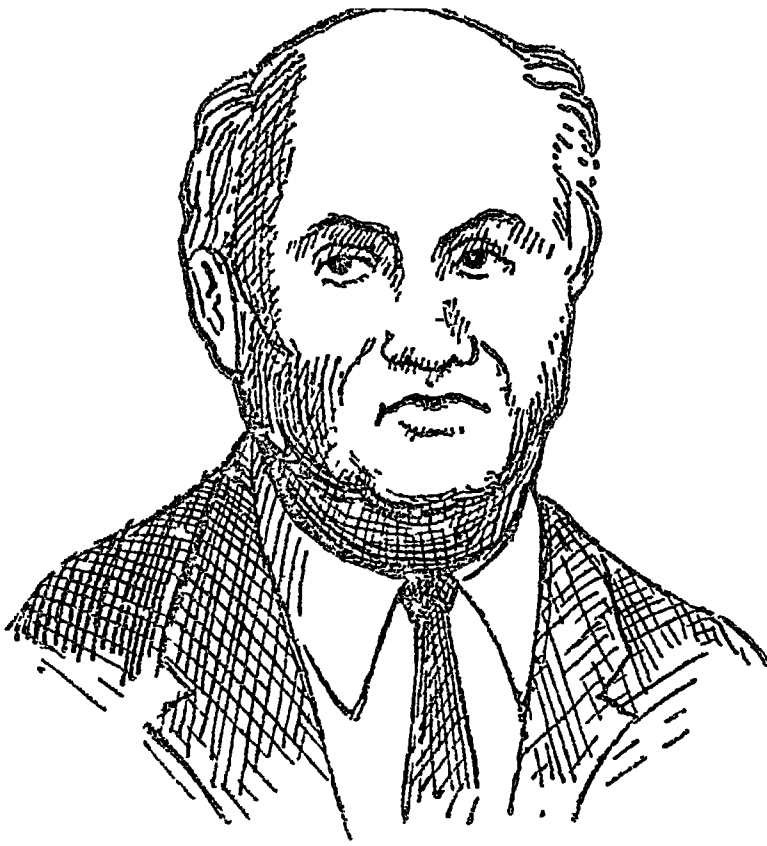
उन्नीसवी सदी के आरम्भ मे महाराष्ट्र प्रदेश पूरी तरह अंग्रेजो के हाथो मे आ गया । बम्बई महाराष्ट्र का केन्द्र बना । जनशिक्षा के लिए बम्बई मे एक विश्वविद्यालय खोला गया । सन् 1840 ई० मे 'दर्पण' नाम का पहला मराठी अखबार निकला । विष्णुदास भावे ने नाटक खेलने का चलन चलाया । उन्होने 1843 ई० मे पहला मराठी नाटक स्टेज पर खेला । मराठी साहित्य मे दूसरी भाषाओ के साहित्य की चीजे लाने की भी कोशिश शुरू हुई । 1861 ई० मे 'मुक्तामाला' नाम का पहला मराठी उपन्यास लिखा गया । विलियम कैरे नाम के अंग्रेज ने सन् 1810 ई० मे पहला मराठी-अंग्रेजी शब्दकोश तैयार किया । पडित विष्णुशास्त्री ने एक अंग्रेजी-मराठी कोश तैयार किया, जो 1864 मे छपा ।

गोपाल गणेश आगरकर

इसी समय चिपलूणकर और लोकहितवादी ने मराठी निबन्ध लिखने शुरू किए । आगे चल कर लोकमान्य बाल गगाधर तिलक और शिवराम महादेव पराजपे ने अपनी जोरदार कलम से महाराष्ट्र मे राष्ट्रीयता की भावना फूकी । विनोबा भावे और स्वर्गीय आचार्य जावडेकर जैसे विचारको को हम भूल नही सकते । महाराष्ट्र मे कोश, इतिहास की खोज, भाषा का वैज्ञानिक विचार आदि क्षेत्रो मे कई धुरधर विद्वान हुए । रानडे, राजवाडे और सरदेसाई ने इतिहास मे अनूठी खोजे

हरि नारायण आपटे

की। आगरकर और जोतिबा फुले ने समाज को जगाने का काम किया। डा० केतकर ने, बगैर किसी की सहायता के, एक ज्ञानकोश बनाया, जिसके 23 भाग थे। यह 1923 मे छपा। चित्राव शास्त्री ने तीन खडो मे चरित्रकोश बनाया और प्रो० के० पी० कुलकर्णी ने मराठी के हर शब्द की उत्पत्ति बताने वाला एक कोश तैयार किया। डा० मा० य० पटवर्धन ने फारसी-मराठी कोश की रचना की।

आजकल के विद्वान् लेखक

यह तो हुई पुरानी और नई भाषा, ज्ञान, पद्य और गद्य की बात। जहा तक कहानी, उपन्यास, नाटक, आदि का सम्बन्ध है, मराठी साहित्य इनमे भी पीछे नही रहा। उपन्यास और कहानी के क्षेत्र मे जो बडा काम हरि नारायण आपटे ने किया, उसी को आगे चल कर वा० म० जोशी, फडके, खाडेकर, माडखोलकर वगैरह ने बढाया। कहानिया लिखने वालो मे य० गो० जोशी, कुसुमावती देशपाडे, विभावरी शिरूरकर, चोरघडे के नाम हमेशा याद किए जाते है। इनके बाद की पीढी मे आज के कहानी-उपन्यास लिखने वालो मे दिघे, पेडसे, माडगूलकर, गगाधर गाडगिल, पु० वा० भावे, अरविन्द गोखले, शान्ताराम, आदि प्रसिद्ध है। यहा पर उन अनेक लेखको के नाम गिनाना सम्भव नही है जिनकी सुन्दर रचनाए मराठी के कहानी साहित्य की बहुत बडी देन है। बच्चो के लिए साने गुरुजी ने बडा काम किया है। उनकी 'शामू की मा' एक अमर किताब है।

अग्रेजो के आने के बाद फादर स्टीफेन्स ने कविता मे 'ख्रिस्तायन' नाम का ग्रथ लिखा। यह ग्रथ मधुरता के लिए प्रसिद्ध है। बाद मे रेवरेंड तिलक, बाल कवि, केशवसुत, सावरकर ऐसे कवि हुए, जिन्होने मराठी कविता को नया मोड दिया।

वामन मल्हार जोशी
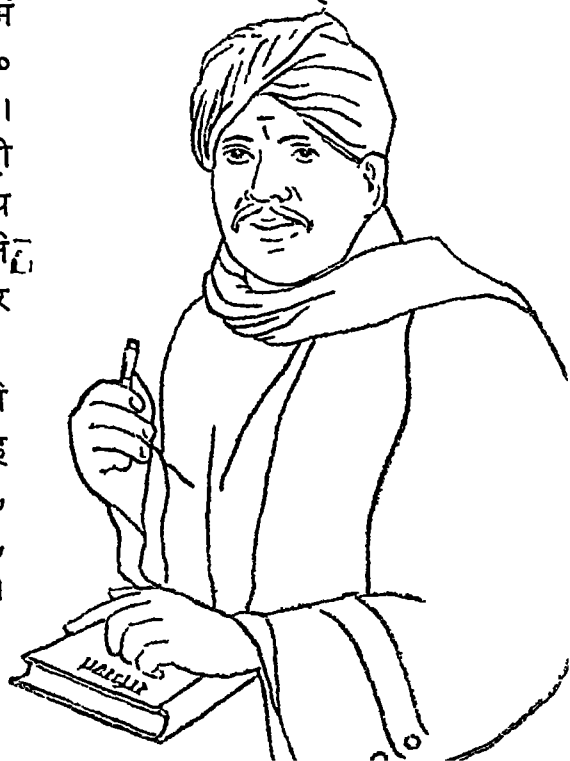
माधव जूलियन

बोरकर

यशवन्त

इनके बाद ताबे, चद्रशेखर, यशवन्त, बी माधव जूलियन की पीढी आई। उसके बाद आ० रा० देशपाडे 'अनिल' ने मुक्त छन्द मे कविता लिखनी शुरू की। उनके बाद स्वर्गीय मर्ढेकर ने मराठी कविता मे और भी गहरी तीखी खूबी पैदा की। कुसुमाग्रज, बोरकर, इन्दिरा सत, वसत, बापट, पाडगावकर, करदीकर, मुक्तिबोध आदि आज के प्रसिद्ध कवि है।

शुरू मे केवल कोल्हटकर, खाडिलकर, गडकरी ने नाटक मे बडा काम किया। खाडिलकर का 'कीचक बध' नाटक अग्रेज सरकार ने जब्त कर लिया। गडकरी का 'एकच प्याला' नाटक बहुत प्रसिद्ध हुआ। उनके बाद मामा वरेरकर ने मराठी स्टेज और नाटक मे नई क्राति की। उनके नाटको मे समाज की समस्याए जीते-जागते रूप मे सामने आई। प्र० के० अत्रे ने नाटक मे हास्य का सुन्दर उपयोग किया। मो० ग० रागणेकर आज भी मराठी स्टेज को जीवित रखने और उन्नत करने की कोशिश कर रहे है।

इस तरह मराठी साहित्य निरन्तर बढता जा रहा है। उसमे जहा एक ओर मनुष्य की वीरता, निर्भयता, अन्याय से लडने की उसकी प्रवृत्ति है, तो दूसरी ओर सचाई और हृदय की कोमलता भी है।

मामा वरेरकर
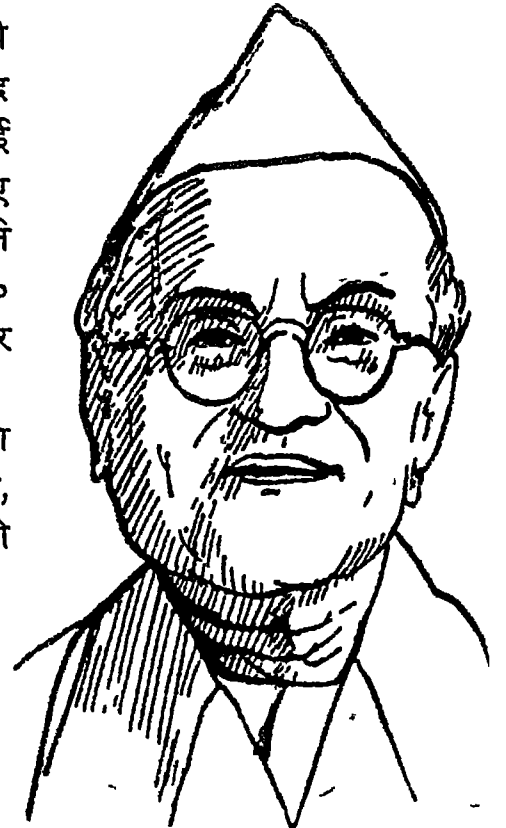
(2) गुजराती साहित्य

हिन्दी की तरह ही गुजराती भापा भी सस्कृत से निकली है। लेकिन जिस तरह यह वताना मम्भव नही है कि सस्कृत से प्राकृत और अपभ्रश के रास्ते ठीक किस समय हिन्दी की उत्पत्ति हुई, उसी तरह गुजराती भापा के जन्म की तिथि वताना भी सम्भव नही है। फिर भी आमतौर पर यह सभी मानते है कि गुजराती का जन्म ग्यारहवी शती मे हुआ, यद्यपि उसके भी 250-300 वर्ष वाद तक गुजराती और राजस्थानी मे भेद करना कठिन था। इसीलिए एक अग्रेज भापाशास्त्री ने गुजराती के प्रारम्भिक रूप को प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी कहा है। उसका गुजराती नाम पहले-पहल 17वी सदी मे, प्रसिद्ध कवि प्रेमानन्द की रचनाओ मे, पाया जाता है। इससे पहले की गुजराती रचनाओ को प्राकृत या अपभ्रश ही कहा जाता था। कुछ लोगो ने उसे गुर्जर भी कहा है। जो हो, इसमे सदेह नही कि 14वी सदी के अन्त तक गुजराती भापा का मौलिक ढाचा स्थिर हो चुका था। आज गुजराती भापा बोलने वालो की सख्या डेढ करोड से भी अधिक है, और वह अरव सागर के किनारे के क्षेत्रो— गुजरात, सौराष्ट्र और कच्छ मे वोली जाती है। विशाल वम्वई नगर की चालीस लाख की आवादी मे भी गुजराती वोलने वालो की सख्या वहुत वडी है। इसके अलावा समुद्र तट पर वसी अन्य सभी जातियो की तरह गुजराती लोग भी समुद्र पार के देशो मे जाकर वस गए है। श्रीलका, वर्मा, पेनाग, सिगापुर, मलाया, इण्डोनेशिया, अफ्रीका, आदि देशो मे काफी गुजराती वसे हुए है। इन प्रवासी गुजरातियो की भाषा आज भी गुजराती ही है। यहा तक कि अफ्रीका के कुछ हिस्सो मे शिक्षा के माध्यम और अदालती भापा के रूप मे भी गुजराती को मान्यता प्राप्त है।

सन् 953 ई० मे चालुक्यो या सोलकियो ने उत्तर गुजरात के अणहिलवाड नगर को अपनी राजधानी बनाया । अणहिलवाड़ नगर को पाटण भी कहते है । मूलराज, चामुड, दुर्लभराज, भीम, कर्ण, सिद्धराज और कुमार पाल आदि प्रतापी राजाओ ने प्राय 300 वर्ष तक अणहिलवाड मे शासन किया । उनके शासन मे व्यापार और विद्या की खूब उन्नति हुई । वह गुजरात का स्वर्ण युग था । उसी समय गुजराती साहित्य की नीव पड़ी । विद्वान् जैन मुनियो ने गुजराती मे अनेक ग्रथो की रचना की ।

गुजरात का पडोसी मालवा देश सदियो से विद्या-प्रेम के लिए प्रसिद्ध था । मालवा मे विद्या का जोर देख कर पाटण के राजा सिद्धराज जयसिह ने अपने यहा तीन सौ लेखको को तीन साल तक बैठा कर उनसे विपुल साहित्य लिखवाया । जयसिह के दरबार मे आचार्य हेमचद्र ने प्रसिद्ध 'हेम व्याकरण' नामक ग्रथ रचा, जिसमे सस्कृत, प्राकृत और अपभ्रश तीनो भाषाओ की चर्चा है । उन्होने 'अभिधान चिन्तामणि', 'निघंटु-कोश', 'देशी नाममाला', आदि ग्रथो की रचना की । गुजराती साहित्य के आदि काल मे प्राय सारा साहित्य जैनियो द्वारा ही रचा गया ।

गुजराती साहित्य को हम मोटे तौर पर तीन युगो मे बाट सकते है :—

(1) प्राचीन युग—सन् 1100 से सन् 1500 ई० तक,

(2) मध्य युग—सन् 1500 से सन् 1850 ई० तक,

(3) आधुनिक युग—सन् 1850 ई० के बाद ।

आचार्य हेमचद्र

आचार्य हेमचद्र से लेकर भक्त कवि नरसी मेहता के समय तक लगभग 300 वर्षो मे कवियो ने एक खास ढग की रचनाए की, जिन्हे रास या 'रासो' कहते है । सन् 1185 ई० मे शालिभद्रसूरि ने गुजराती के सबसे पुराने रासो 'भरतेश्वरबाहुबलिरास' की रचना की थी । उसमे जैनो के प्रथम तीर्थकर श्री ऋषभदेव के दोनो पुत्रो भरत और बाहुबलि मे राज्य के लिए जो युद्ध हुआ था, उसका वर्णन है । बाहुबलिरास को गुजराती साहित्य की प्रथम कृति माना जाता है । तब से लेकर अठारहवी सदी तक रासो लिखने की प्रथा बनी रही । अब तक तीन सौ से अधिक रासो मिले है । कवियो ने एक दूसरे प्रकार की रचनाए भी की, जिन्हे 'फागु' कहते है । 'फागु' वसत ऋतु मे गाए जाते थे, और उनमे प्राय वसंत का ही वर्णन होता था । तीसरे प्रकार की रचनाए वे थी, जिन्हे 'बारहमासी' कहते है ।

कितने ही कवियो ने 'बारहमासी' काव्य बनाए। बारहमासी मे वर्ष के बारहो महीनो का वर्णन होता है।

गुजराती मे गद्य का सच्चे अर्थ मे आरम्भ वर्तमान युग मे हुआ। फिर भी यह नही कहा जा सकता कि प्राचीन युग मे गद्य लिखा ही नही गया। जैन विद्वानो द्वारा लिखे गए गुजराती साहित्य मे गद्य की कई प्राचीन रचनाए मौजूद है, जैसे सन् 1655 ई० मे लिखा हुआ जैन मुनि तरुणप्रभसूरि का 'प्रतिक्रमणबालावबोध' नामक ग्रथ। बालावबोध नाम की रचनाए प्राय आम जनता के लिए लिखी जाती थी। उनमे नीति सम्बन्धी कथाए होती थी। इसी प्रकार सन् 1422 ई० मे जैन मुनि माणिक्यसुन्दरसूरि द्वारा लिखी 'पृथ्वीचन्द्रचरित' नाम की एक गद्य कथा, और पन्द्रहवी शताब्दी के चार कवियो की रचनाए है। इनके नाम है असाइत ठाकर की 'हसाउली' श्रीधर व्यास का 'रणमल छद' भीम का 'सदयवत्सचरित', और अब्दुर रहमान का 'सदेशक रास'। 'रणमल छद' मे ईडर के राठौर राजा रणमल्ल की वीरता का वर्णन है, और अब्दुर रहमान की रचना 'सदेशक रास' विप्रलम्भ शृगार का एक सुन्दर दूत काव्य है।

नरसी मेहता

मीरा

सन् 1412 ई० से लेकर 1572 ई० तक गुजरात मे बदअमनी फैली हुई थी। 1572 ई० मे अकबर ने गुजरात को जीत लिया, और वहा शान्ति और व्यवस्था कायम हुई। यह वही समय था जब भारत मे सब कही भक्ति का साहित्य रचा जाने लगा था, और वह एक शक्तिशाली आन्दोलन बनता जा रहा था। इसलिए गुजरात के साधको और साहित्यकारो का उस धारा में शामिल होना स्वाभाविक ही था। भक्ति की इस धारा ने गुजराती साहित्य को दो तेजवान रत्न दिए—नरसी मेहता और मीराबाई।

यद्यपि नरसी मेहता से पहले की भी गुजराती की बहुत-सी रचनाए मिलती है, फिर भी गुजराती के आदि कवि का पद नरसी को ही दिया जाता है। उनकी रचनाओ मे महान् रचनाओ के सभी गुण है, जिनका प्रभाव सदियो बाद तक कवियो और उनकी

कृतियो पर छाया रहा । उन्होने 'हारमाला', 'शामलशानो विवाह', 'गोविदगमन', 'सुदामा-चरित', 'रास सहस्रपदी', आदि ग्रथ और हजारो पद रचे है ।

मीरा के पद सारे उत्तरी भारत मे गाए जाते है । वह हिन्दी की महान् कवयित्री के रूप मे देश भर मे प्रसिद्ध है । पर यह बात शायद सभी को नही मालूम कि मीरा गुजराती की भी उतनी ही महान् कवयित्री थी, जितनी हिन्दी की । उन्होने अपने जीवन के अन्तिम पन्द्रह वर्ष द्वारिका मे बिताए थे । जिस प्रकार मीरा के हिन्दी के पद हृदय मे एकदम बिध जाते है, वैसे ही उनके गुजराती के पद भी है । पदो के अलावा 'नरसी जी का मायरा' नामक एक गुजराती कृति भी मीरा की ही रचना मानी जाती है ।

उस युग के दो कवियो, भालण और पद्मनाभ, का भी यहा जिक्र किया जा सकता है । भालण ने बाणभट्ट की कादम्बरी का पद्य मे बहुत रोचक अनुवाद किया । पद्मनाभ ने 'कान्हडदे प्रबध' नामक एक वीर काव्य लिखा । नरसी और मीरा के बाद मुख्य रूप से आख्यान और पद्यवार्ता नाम की रचनाओ का चलन हुआ । आख्यान उन छोटी-छोटी कथाओ को कहा जाता है, जो रामायण और महाभारत की विभिन्न घटनाओ को लेकर लिखी गई । इन्ही घटनाओ पर लिखी गई दूसरी तरह की रचनाए पद्यवार्ता कहलाई । पद्यवार्ता शब्द से ही यह स्पष्ट है कि ये रचनाएं पद्य में होती थी । उनका आरम्भ नरसी और भालण ने किया, और उनका सिलसिला बहुत बाद तक जारी रहा ।

मध्य युग मे गुजरात ने तीन गौरवशाली कवि पैदा किए । उनके नाम थे अखो, प्रेमानन्द और शामल । अखो जाति के सुनार थे । वह तीखे व्यग लिखने में लासानी थे । उनके पैने व्यग पाखडी साधुओ और राजा-महाराजाओ पर बरसते थे । गुजराती मे छ पक्तियों के 'छप्पय' छदो की रचना उन्होंने ही शुरू की ।

प्रेमानन्द समाज के मध्यम वर्ग के महाकवि माने जाते है । वह जाति के माणभट्ट थे । माण सकरे मुह के ताबे की गागर को कहते है । उसी से माणभट्ट की जाति बनी है, क्योकि वे लोग 'माण' को सामने रख कर उगली मे पहनी हुई अंगूठी से उस पर ताल देते हुए पुराणो के आख्यान सुनाते है । प्रेमानन्द के समय मे गुजराती को साहित्य की भाषा नही माना जाता था । इस सम्बन्ध में एक कहावत मशहूर थी कि "अबे तबे के सोलह आने, अठे कठे के आठ, इकडम् तिकडम् चारहि आने, शूशा पैसा चार ।" मतलब यह है कि हिन्दी का मूल्य सोलह आने, राजस्थानी का आठ आने, मराठी का चार आने और शूशा वाली गुजराती का मूल्य केवल चार पैसे । पर प्रेमानन्द की रचनाओ के कारण

गुजराती भाषा ने साहित्य की भापा का पद प्राप्त किया । उनके बाद उनके शिष्य वीरजी, वल्लभ, रत्नेश्वर, आदि ने भी उच्चकोटि के साहित्य की रचना की । 'ओखा हरण', 'दशम स्कध', 'सुदामा-चरित', 'द्रौपदी स्वयवर', 'नरसी मेहतानी हुडी', 'मामेरू', आदि प्रेमानन्द के प्रसिद्ध काव्य है ।

शामल भट्ट मध्य युग के सबसे बडे कहानीकार थे । उन्होने पद्य मे कहानिया लिखी । पर वे कहानिया आज की कहानियो जैसी नही थी । वे कहानिया 'बृहत्कथा' की कहानियो की तरह नीति और धर्म की कहानिया थी । प्राचीन काल मे पिशाची प्राकृत के प्रखर कथाकार गुणाढ्य ने 'बृहत्कथा' नाम का कहानी सग्रह तैयार किया था । दूसरे जैन मुनियो ने भी नीति और धर्म की बाते समझाने के लिए कहानियो का सहारा लिया । शामल ने भी उसी रंग में निखरी हुई गुजराती मे 'पद्मावती', 'रूपावती', 'बरास कस्तूरी', 'नदबत्रीशी', 'सिंहासनबत्रीशी', 'सूढाबहोत्तरी', 'मदन मोहना', आदि कथाओ की रचना की ।

अठारहवी सदी में अधिकतर शिव, कृष्ण और दुर्गा के स्तोत्रो की रचना हुई । उस समय दो-चार कवयित्रियो और एकाध पारसियो ने भी काव्य-रचना की । उस युग में कोई बडा कवि या साहित्यकार नही हुआ । अठारहवी सदी के अन्त मे जाकर एक प्रतिभाशाली कवि का उदय हुआ, जिसका नाम दयाराम था । कहा जाता है कि वह बहुत शौकीन और विलासप्रिय स्वभाव के थे । उन्होने हिन्दी, मराठी, पजाबी और गुजराती, चार भाषाओ मे कविताए रची । गुजराती मे
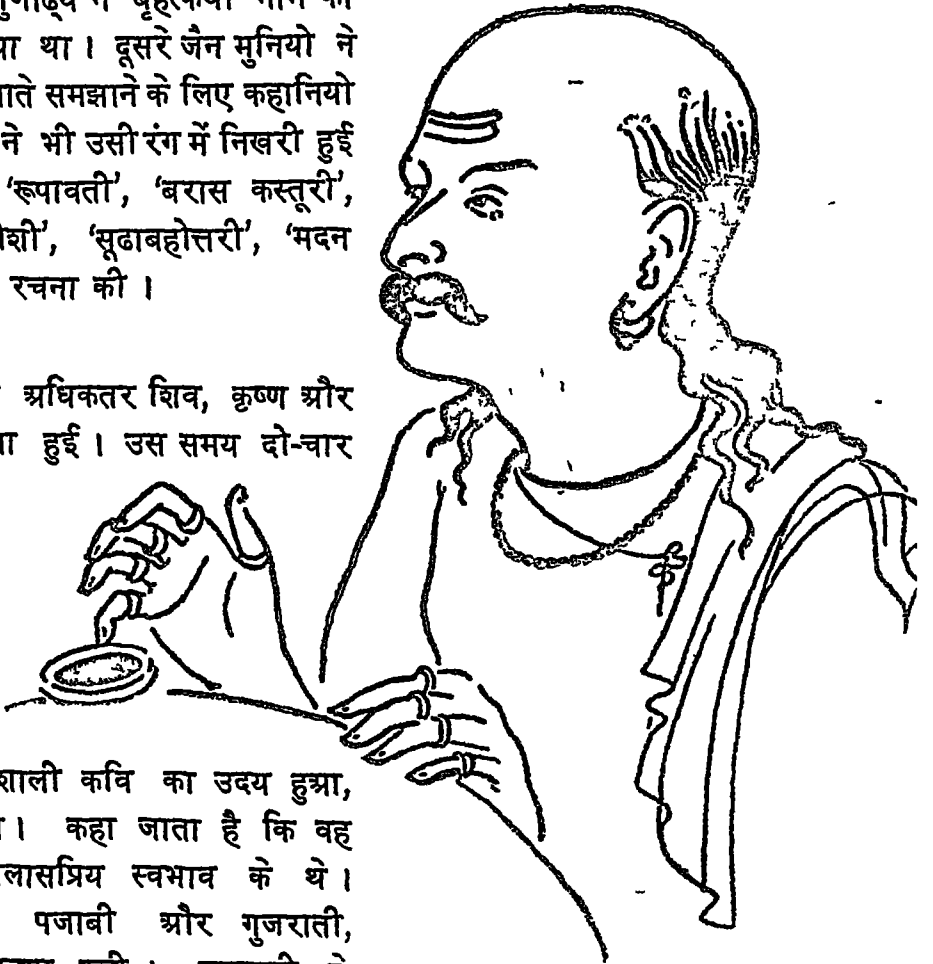
प्रमानन्द

नर्मद

उनके 'गरवी' नामक गेय काव्य वहुत लोकप्रिय है। उनकी 'वाललीला', 'रूपलीला', 'दाणलीला', 'प्रेमरसगीता, 'व्रजविलास', 'मीराचरित्र', 'रसिकवल्लभ', 'प्रवोध-भावनी', आदि रचनाए प्रसिद्ध है । 'सतसैया' नाम की उनकी एक कृति हिन्दी मे भी है।

उन्नीसवी सदी मे गुजराती साहित्य मे एक नया तेज पैदा हुआ । अंग्रेजो का शासन कायम हुआ, और वम्वई, सूरत, अहमदावाद, वडौदा आदि नगरो में अग्रेजी स्कूलो की स्थापना हुई । सन् 1857 मे वम्वई विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। सन् 1848 मे अहमदावाद मे गुजरात वर्नाक्युलर सोसाइटी (जो अव गुजरात विद्या सभा के नाम से प्रसिद्ध है), और 1851 मे वम्वई मे बुद्धिवर्धक सभा, ज्ञान प्रसारक मडली, आदि साहित्य-प्रचार सस्थाओ की स्थापना हुई । ऐसे समय मे सूरत मे नर्मदाशंकर का जन्म हुआ, जो नर्मद कवि के नाम से प्रसिद्ध हुए । उन्हे हम गुजरात का भारतेन्दु हरिश्चन्द्र कह सकते है। साहित्य का कोई क्षेत्र उनकी कलम से अछूता नही रहा। उन्होने प्राचीन शैली की कविता लिखने के साथ ही गुजराती मे शुद्ध आत्मलक्षी कविता का भी प्रथम प्रयोग किया। 'नर्मगद्य', 'धर्मविचार', 'मारी हकीकत', 'राजरग', आदि उनकी प्रसिद्ध गद्य कृतिया है। उन्होने 'नर्मकोश' नामक एक कोश भी तैयार किया था। नर्मद के लगभग साथ ही कवि दलपतराम भी गुजराती साहित्य मे आए। पर दलपतराम ने मुख्यत कविताए ही लिखी। वैसे उन्होने कुछ नाटक भी लिखे है। 'हुन्नरखान नी चढाई', 'वेनचरित्र' आदि उनकी प्रसिद्ध काव्य-रचनाएं है ।

गोवर्धनराम त्रिपाठी

नर्मद के समकालीन दूसरे लेखको मे नवलराम, नन्दशंकर, महीपतराम नीलकंठ, आदि प्रमुख है। नन्दशंकर ने ही प्रथम गुजराती उपन्यास 'करण-घेलो' लिखा। वह उपन्यास गुजरात के अन्तिम हिन्दू राजा करणवाघेला की जीवन-कथा को लेकर लिखा गया है ।
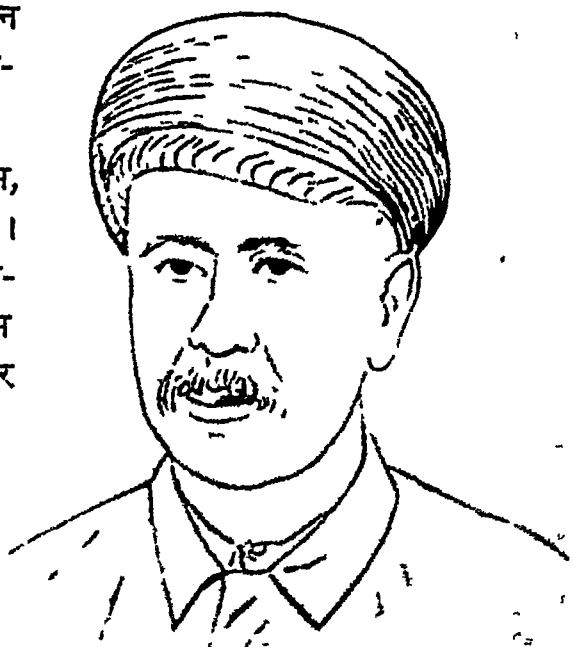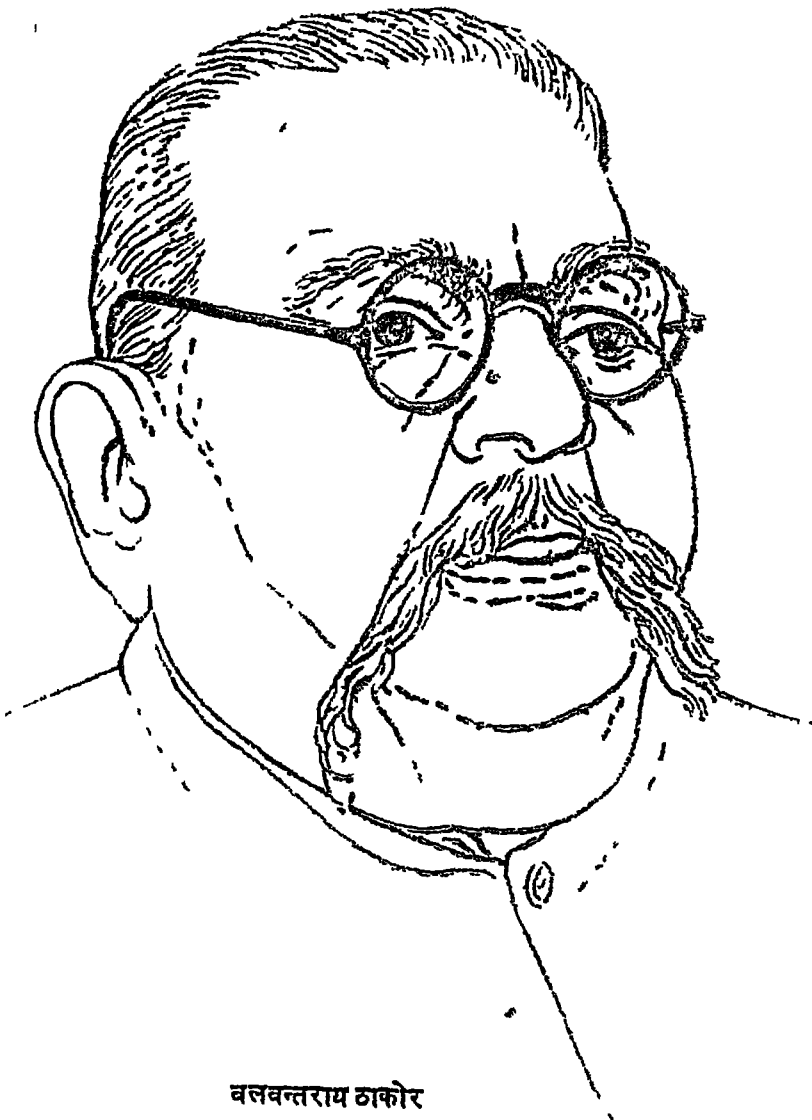
वलवन्तराय ठाकोर

नर्मद और दलपत के वाद गुजराती साहित्य मे पडित लेखको का एक दल पैदा हुआ, जिनमे से गोवर्धनराम त्रिपाठी, मणिलाल द्विवेदी, नरसिंहराव दिवेटिया, वलवन्तराय ठाकोर, आनन्दशकर ध्रुव, आदि विद्वानो ने गुजराती साहित्य को वहुत समृद्ध किया। त्रिपाठीजी ने 'सरस्वतीचन्द्र' नामक उपन्यास की रचना की, जिसे गुजराती की 'कादम्वरी' कहा जाता है। दिवेटिया और ठाकोर दोनो ने कविता और आलोचना साहित्य को समृद्ध वनाया। सच तो यह है कि साहित्यिक आलोचना की नीव ही उन्होने डाली।

पर जिस समय पडित लेखको का समूह गुजराती साहित्य पर छाया हुआ था, उस समय भी मधुर साहित्य की रचना हुई। गुजराती के रूमानी कवि नानालाल भी उसी काल मे हुए। नानालाल ने अग्रेजी ब्लैक वर्स (मुक्त छद) के ढग की एक विशिष्ट गद्य शैली प्रस्तुत की। उन्होने 'जयाजयत', 'जहागीर-नूरजहा', 'अकवरशाह', आदि नाटक भी लिखे। नानालाल के अतिरिक्त पारसी कवि अरदेशर फरामजी खवरदार तथा मधुर गेय काव्यो के रचयिता वोटादकर और ललितजी भी उसी काल मे हुए।

1914 मे प्रथम विश्व-युद्ध छिडा और गाधीजी दक्षिण अफ्रीका से भारत आए। उनके आने से देश मे एक नई लहर दौड गई। 1919 में उन्होने 'नवजीवन' नामक साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन शुरू किया। उसमे गाधीजी ने आरोग्य के घरेलू उपचार
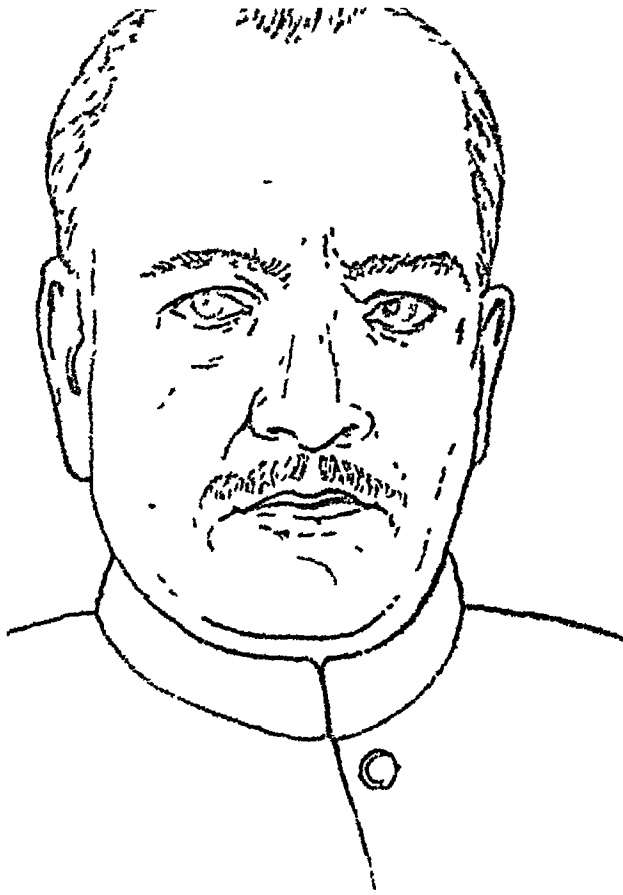
खबरदार

नाना लाल

से लेकर आध्यात्मिक चिन्तन तक अनेकानेक विषयो पर शिष्ट और सरल गद्य मे सैकडो लेख लिखे । 'सत्य के प्रयोग' नामक आत्मकथा, 'दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह का इतिहास' नामक पुस्तक और दर्जनो दूसरी पुस्तकें गुजराती साहित्य को गाधीजी की अमर देन है । 1915 से 1946 तक के समय को गांधी युग कह सकते है । गाधीजी से प्रभावित साहित्यकारो मे काका कालेलकर, कन्हैयालाल माणिकलाल मुशी, रामनारायण पाठक, रमणलाल देसाई, धूमकेतु, किशोरलाल मशरूवाला, झवेरचन्द मेघाणी और नरहरि परीख मुख्य है । कन्हैयालाल माणिकलाल मुशी और रमणलाल देसाई गुजराती के प्रमुख उपन्यासकार है । मुशी के चार उपन्यास—'पाटणनी प्रभुता', 'गुजरातनो नाथ',

कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी
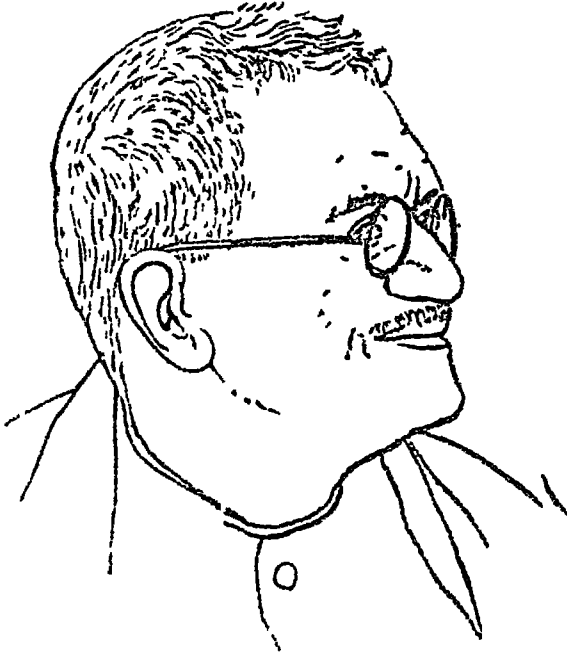
काका कालेलकर

धूमकेतु

'राजाधिराज' और 'जय सोमनाथ' गुजरात के स्वर्ण युग की झलक प्रस्तुत करते हैं। रमणलाल के 'जयत-शिरीष', 'कोकिला पूर्णिमा', 'ग्रामलक्ष्मी,' 'दिव्यचक्षु', 'भारेलो अग्नि' नाम के उपन्यासो मे गुजरात की सस्कृति का प्रतिविम्व पाया जाता है। काका कालेलकर जी यद्यपि महाराष्ट्री हैं, तथापि उन्होने गुजराती मे उच्चकोटि के निवन्ध लिखे हैं। धूमकेतु कहानी के क्षेत्र मे गुजराती के प्रेमचन्द माने जाते है। किन्तु उपन्यास के क्षेत्र मे उनकी प्रतिभा ज्वलन्त नही कही जा सकती। 'तणखा मडल' नाम से उनकी कहानियो के पाच सग्रह निकल चुके हैं। मेघाणी जी ने लोक-साहित्य का सम्पादन करके गुजराती की अमूल्य सेवा की। उमाशकर जोशी और सुन्दरम् गाधी युग के प्रतिनिधि कवि कहे जा सकते है, और ज्योतीन्द्र दवे गुजरात के प्रथमकोटि के हास्य लेखक हैं।

आज़ादी के वाद गुजराती साहित्य की दिन-दूनी रात-चौगुनी उन्नति हो रही है। गुजराती भाषा को विश्वविद्यालयो मे भी स्थान मिल गया है।

(3) कन्नड़ साहित्य

कन्नड कर्नाटक या भारत के उस हिस्से की भाषा है, जिसे संविधान में मैसूर राज्य कहा गया है। भारत की चार प्रमुख द्रविड भाषाओं में से कन्नड़ भी तमिल की तरह एक बहुत पुरानी भाषा है।

राष्ट्रकूट वंश के एक राजा थे। उनका नाम नृपतुंग था। उनका लिखा हुआ 'कविराज मार्ग' कन्नड भाषा का सबसे पुराना ग्रंथ माना जाता है। यह 850 ई० में लिखा गया था। यह ग्रंथ पद्य में लिखा गया है। इसमें काव्य और साहित्य के सिद्धान्तों और नियमों का वर्णन है। इससे पहले का लिखा हुआ कोई दूसरा ग्रंथ कन्नड़ में अब तक नहीं मिला है। फिर भी इस बात के प्रमाण मिलते हैं कि इससे सदियों पहले, ईसवी सन् के आरम्भ के आस-पास, कन्नड साहित्य का विकास हो चुका था।

उदाहरण के लिए, 'कविराज मार्ग' से पहले के कई अभिलेख मिले हैं। उनमें सबसे पुराना 450 ई० का है। इन अभिलेखों में गद्य तथा पद्य में छोटी-छोटी साहित्यिक रचनाएं हैं, जिनमें लिखित साहित्य के गुण पाए जाते हैं।' यदि उस समय मंजे हुए साहित्यकार न होते तो ऐसा होना सम्भव नहीं था। इसलिए यह अनुमान करना ठीक ही है कि उस समय ताडपत्रों पर भी बहुत कुछ साहित्य लिखा गया होगा। पर चूंकि ताड़पत्र पत्थर की तरह टिकाऊ नहीं होते, इसलिए पत्थरों पर खुदे हुए अभिलेख तो बने रहे, जबकि ताडपत्रों पर लिखी हुई रचनाएं कीडे-मकोड़ों और दीमकों की नजर हो गईं।

कन्नड के प्राचीनतम प्रलेख

'कविराज मार्ग' के लेखक ने कई प्रसिद्ध कवियो और लेखको के नाम भी गिनाए हैं । उसने जगह-जगह पुराने साहित्य-शास्त्रियो और आलोचको की चर्चा की है । इससे स्पष्ट है कि उसके पहले भी ऊचे कवि और लेखक हो चुके थे, और साहित्य की नीव पड चुकी थी । ऐसा न होता तो 'कविराज मार्ग' जैसे ग्रथ का लिखा जाना सम्भव न था ।

इन सब बातो के होते हुए भी कन्नड साहित्य का आरम्भ 9वी सदी ईसवी से ही माना जाता है । कन्नड साहित्य को समय-समय के धार्मिक आन्दोलनो के अनुसार तीन प्रमुख युगो मे बाटने का चलन है । ऐसा करने मे सुविधा भी है, क्योकि धार्मिक आन्दोलन ही उस समय के साहित्य की जान थे । पहले युग को जैन युग कहते है । इसका समय 'कविराज मार्ग' के समय से 12वी सदी के मध्य तक माना जाता है । दूसरा युग वीर शैव युग है, जो 12वी सदी के मध्य से 15वी सदी तक चला । तीसरा ब्राह्मण युग कहलाता है, जो 15वी सदी से शुरू होकर 19वी सदी तक कायम रहा । जैन युग से पहले का समय प्राचीन कन्नड युग कहलाता है, और ब्राह्मण युग के बाद का समय

वर्तमान युग। कुछ विद्वानो और इतिहासकारो ने धर्म के आधार पर युगो के विभाजन का विरोध किया है। वे भापा के विकास को आधार मान कर जैन युग को प्राचीन कन्नड युग, और वीर शैव युग तथा ब्राह्मण युग, दोनो को मध्यकालीन युग कहना ठीक समझते है।

जैन युग

850 ई० मे लिखा गया 'कविराज मार्ग' एक तरह से दण्डी के 'काव्यादर्श' जैसा ग्रथ है। इसमे तीन अध्याय है। पहला अध्याय किसी खास विषय को लेकर नही लिखा गया है, पर उसमे कन्नड सस्कृति के बारे मे रोचक और बहुमूल्य सामग्री मिलती है। उससे पता चलता है कि लेखक अपने देश, भाषा और सस्कृति के प्रति प्रेम मे पगा होता है। दूसरे अध्याय में छद-शास्त्र और इसी सम्बन्ध मे दूसरे विषयो का वर्णन है। तीसरे मे लेखक ने बाकायदा उदाहरण देकर भिन्न-भिन्न अलकारो को समझाया है।

असल मे 10वी सदी का आरम्भ होने पर ही कन्नड साहित्य की जडे जमी और वह मजबूत कदमो पर खडा हुआ। दसवी सदी कन्नड साहित्य का स्वर्ण युग है। इस सदी मे हर दिशा मे चौमुखी उन्नति हुई। पाच बडे कवियो के पैदा होने से साहित्य खास तौर से आगे बढा। ये पाच कवि थे—पम्पा, पौन्ना, चावुण्डराय प्रथम, नागवर्मा प्रथम और रन्ना। इनमे पम्पा, रन्ना और पौन्ना असाधारण प्रतिभा के धनी थे। ये युग के तीन रत्न कहलाते है।

पम्पा के जोड का दूसरा कवि अभी तक कन्नड साहित्य मे नही हुआ। वह सचमुच कन्नड काव्य का पिता है। उसकी रचना 'विक्रमार्जुन विजय' पम्पा-भारत के नाम मे प्रसिद्ध है। इसमे महाभारत की कथाओ को एक नया रूप दिया गया है। यह कला और सौन्दर्य की एक अमर पुस्तक है। पम्पा की दूसरी प्रसिद्ध रचना 'आदि पुराण' है। इसमे पहले जैन तीर्थंकर की जीवन-कथा है।

रन्ना 'साहस भीम विजय' या 'गदा युद्ध' नाम की अपनी रचना के लिए प्रसिद्ध है। 'गदा युद्ध' एक महाकाव्य है। इसमे कुरुक्षेत्र के अठारहवे दिन की उस भयकर लडाई का नाटकीय वर्णन है, जिसमे भीम-दुर्योधन के बीच गदा युद्ध हुआ था। कन्नड भापा मे इतनी जोरदार और वीर रस से भरी कोई दूसरी रचना नही है।

पौन्ना ने अपने 'शान्तिपुराण' मे 16वे तीर्थंकर शान्तिनाथ की जीवन-कथा लिखी है। चावुण्डराय ने 'चावुण्डराय पुराण' मे चौबीसो तीर्थंकरो की और दूसरे जैन सतो की जीवन-गाथाए लिखी हैं। नागवर्मा प्रथम का 'छदोम्बुधि' कन्नड मे छद-शास्त्र की पहली प्रामाणिक रचना है। उन्होने वाणभट्ट की 'कादम्वरी' का कन्नड भाषा मे इतना सुन्दर अनुवाद किया है कि वह आज भी सस्कृत से अनुवाद करने वालो के लिए एक नमूना माना जाता है।

इसके वाद डेढ सौ वर्षो मे बिरले ही ऐसी रचनाए हुई, जिनका कोई खास साहित्यिक महत्व हो। फिर भी 1105 ई० मे नगचन्द्र नाम का एक कवि हुआ, जो अपने को 'अभिनव पम्पा' कहता था। उसने कन्नड मे रामायण का पहला अनुवाद किया। यह अनुवाद अपनी मधुर शैली और साफ चित्रण के लिए प्रसिद्ध है। र ास तौर से रावण के चित्रण मे कवि ने कमाल किया है। उसने रावण को खलनायक के रूप मे नही, बल्कि एक ऊचे चरित्र के ऐसे महान् नायक के रूप मे पेश किया है, जिसे केवल दुर्भाग्य के कारण दुर्दिन देखना पडा। कन्नड साहित्य की पहली कवयित्री, कती भी नगचन्द्र के समय मे ही हुई।

उस समय के एक दूसरे साहित्यकार नागवर्मा द्वितीय (1145 ई०) थे। उन्होने काव्य-शास्त्र, साहित्य-शास्त्र और व्याकरण के विषयो पर 'काव्यावलोकन' नाम से एक अच्छा ग्रथ लिखा था। उन्होने 'वस्तुकोश' नाम का एक कोश भी तैयार किया।

साहित्यिक रचनाओ से अधिक उस समय ज्ञान-विज्ञान के ग्रथो की प्रधानता रही। इन ग्रथो की सख्या देख कर सचमुच आश्चर्य होता है। इनमे प्रमुख है—(1) चावुण्डराय द्वितीय (1025 ई०) का 'लोकोपकार', इसे 'घरेलू कामो का विश्वकोश' कहा जा सकता है, मकान बनाने से लेकर भोजन बनाने तक के ढग इसमे लिखे हुए है, (2) फलित ज्योतिप सम्वन्धी श्रीधराचार्य (1049 ई०) का 'जातक तिलक', (3) आचार-व्यवहार के वारे मे नयसेन (1112 ई०) का 'धर्मामृत', (4) पशुओ की चिकित्सा के सम्वन्ध मे कीर्तिवर्मा (1125 ई०) का 'गोवैद्य', और (5) आयुर्वेद पर जगद्धल सोमनाथ (1150 ई०) का 'कर्नाट कल्याणकारक'।

जैन युग को कन्नड का महाकाव्य काल कहा जा सकता है। इस युग की अधिकतर रचनाए गमायण, महाभारत और जैन सतो के जीवन से कथा-वस्तु लेकर 'चम्पू' के

बसवा

रूप मे लिखी गई है। विशेष रूप से ध्यान देने की वात कन्नड भाषा मे सस्कृत भापा की तरह 'चम्पू' शैली का उपयोग है।

12वी सदी के मध्य मे कर्नाटक के सामाजिक और धार्मिक जीवन ने भारी उथल-पुथल देखी। जैन मत का प्रभाव कम हो गया। हिन्दू समाज के कितने ही समुदायो मे वैदिक धर्म का विश्वास कमजोर पड चला था। वर्ण-व्यवस्था के कारण जाति-पाति और ऊच-नीच की भावना पर जोर दिया जाता था, और आत्मा को ऊचा उठाने वाले सच्चे कामो की जगह थोथे कर्मकाण्डो ने ले ली थी। इसलिए लोग नई सामाजिक और धार्मिक मान्यताओ के आधार पर किसी नए मत की आवश्यकता अनुभव करने लगे। फल यह हुआ कि वीर शैव मत आन्दोलन का जन्म हुआ। इसके नेता बसवा नाम के एक ब्राह्मण थे। वह कलचुरी वश के राजा विज्जल के मुख्य मन्त्री थे।

उस समय साहित्य और पुस्तको मे लिखी जाने वाली भापा वोलचाल की भाषा से वहुत दूर जा पडी थी। दोनों के बीच गहरी खाई थी। चम्पू और दूसरी आडम्बर-पूर्ण बोझिल शैलियो से लोग ऊब चले थे। वैसे नयसेन जैसे लेखको ने पहले ही सरल कन्नड मे लिखना शुरू कर दिया था। वीर शैव मत आन्दोलन ने आसान भाषा लिखने की इस प्रवृत्ति को बल दिया। 'वचन' लोचदार सुरीले गद्य मे लिखी हुई रचना होती थी। उसे आसानी से याद किया तथा गाया जा सकता था।

वीर शैव मत आन्दोलन ने 'वचन' के अनेक लेखक पैदा किए। इनमे तीन प्रमुख थे बसवा, अल्लमा और अक्कमहादेवी। बसवा और महादेवी की रचनाए सीधे हृदय को छूती है। पर अल्लमा की रचनाए अधिक रहस्यमय और सूत्र रूप मे होने के कारण सोचने और समझने के वाद ही पकड मे आती है। बसवा की रचनाओ मे भक्ति प्रधान है, अल्लमा की रचनाओ मे ज्ञान। महादेवी ने अपनी रचनाओ मे ईश्वर को पति के रूप मे माना है। मिलन की कामना का आवेग होते हुए भी उनके प्रेम मे एक शुद्धता है, पवित्रता है। 'मल्लिकार्जुन' उनके प्रीतम या गिरधर गोपाल है,

जिन्हे कोई छीन नही सकता, बन्धनो मे बाध नही सकता । महादेवी, सचमुच, कर्नाटक की मीरा है ।

आगे चल कर 'वचन' का भी रग फीका पड गया । तब वीर शैव कवियो ने कुछ नए ढग के देसी छद बनाए और उन्हे सवारा-निखारा । उन्होने उन छदो मे अनेक उच्च कोटि की रचनाए की । इन छदो के दो मुख्य रूप है । 'रगले' और 'पट्पदी' । रगले मुक्त छद जैसा होता है । हरिहर (1200 ई०), जो पद्य मे जीवनी लिखने मे बेजोड है, 'रगले' छद के मुख्य कवि है । उन्होने चम्पू शैली मे भी एक उच्च कोटि की रचना की है । कवि राघवाक (1225 ई०) ने अपने 'हरिश्चन्द्र काव्य' और 'सिद्धराम चरित' मे षट्पदी छद अपनाया है । कहा जाता है कि भारत की सभी भाषाओ मे 'हरिश्चन्द्र काव्य' अपने विषय की सबसे ऊची साहित्यिक रचना है ।

वीर शैव मत का व्यापक प्रभाव होते हुए भी इस युग मे कई जैन लेखक हुए । इनमे जन्ना (1209 ई०) ने 'यशोधरा चरित' नामक एक मनोवैज्ञानिक प्रेम-कथा लिखी और उसे जैन दर्शन का जामा पहनाया । 'यशोधरा चरित' शृगार रस की एक सशक्त रचना है, और लेखक ने उसमे अपनी गहरी सूझ-बूझ का परिचय दिया है । एक दूसरे लेखक आडय्या (1225 ई०) ने सस्कृत के एक भी शब्द का प्रयोग किए बिना, शिव की कामदेव पर विजय की कथा लिख कर उन लेखको को चुनौती दी, जो कन्नड भाषा को सस्कृत शब्दो और छदो के साचे मे ढाल कर बोझिल और अनबूझ बनाने मे जुटे थे ।

15वी सदी मे कन्नड साहित्य का वह युग आरम्भ हुआ, जिसे ब्राह्मण युग या वैष्णव युग कहते है । इस युग की नीव उन वैष्णव आन्दोलनो से पडी, जिनके नेता रामानुज (12वी सदी) और मध्वाचार्य (13वी सदी) थे ।

इस युग के पहले कवि नारणप्प (1400 ई०) 'कुमार व्यास' के नाम से मशहूर है । उन्होने महाभारत की कथा को देसी 'भामिनी पट्पदी' छद मे बडी खूबी के साथ लिखा । इसे कन्नड साहित्य की एक बेजोड रचना माना जाता है । वैष्णव धारा की तीन और प्रसिद्ध कृतिया है, नरहरि अथवा कुमार वाल्मीकि (1500 ई०) का 'तोरवे नारायण', चाटुविट्ठलनाथ (1530 ई०) का 'भागवत' और लक्ष्मीश (1550 ई०) का 'जैमिनी भारत' ।

लगभग 16वी सदी के तीसरे दशक मे हरिदास आन्दोलन के नाम से एक दूसरा जनप्रिय आन्दोलन चला, जिसने युग की भावनाओ को आगे बढाया । इस आन्दोलन

पुरन्दरदास

के चलाने वाले लोग अपने को दास कहते थे। ये विष्णु के भक्त थे और कीर्तन के गीत गाते थे। इनमे व्यास राय (1525ई०), पुरन्दरदास और कनकदास मुख्य थे। इनकी रचनाए कर्नाटकी सगीत मे है। हरिदास आन्दोलन के शुरू के दिनो मे (1510ई०) चैतन्यदेव कर्नाटक गए और उन्होने अपने गीतो और उपदेशो से हरि के मधुर नाम को वहा लोकप्रिय बनाया।

इस युग मे भी कई जैन कवि हुए, पर उनमे महत्वपूर्ण दो ही थे—रत्नाकर वर्णी (1560ई०) और भट्टा कलका (1600ई०)। रत्नाकर वर्णी ने अपने लोक-गीतो मे प्रचलित 'सागत्य' नाम के छद को अपनाया और राजा भरत की कथा के आधार पर 'भरतेश वैभव' नामक रचना की। कन्नड साहित्य मे 'भरतेश वैभव' का बडा मान है। इसी प्रकार वीर शैव लेखक भी इस युग मे काफी सक्रिय रहे। इनमे भीम कवि, चामरस, विरूपाक्ष पडित और निजगुण शिवयोगी प्रमुख थे।

17वी सदी मे विजयनगर राज्य के पतन के बाद कुछ समय के लिए कन्नड साहित्य की प्रगति रुक-सी गई। पर शीघ्र ही मैसूर राज्य का उद्‌भव हुआ और वह साहित्य का केन्द्र बन गया। मैसूर के राजा चिक्कदेव राय (1672—1704ई०) खुद बड़े अच्छे कवि थे। उनके दरबार मे तिरुमलयि, चिक, उपाध्याय और सिंगारार्य जैसे कवि-रत्न जमा थे। सिगारार्य ने 'मित्रविंदा गोविंद' नाटक की रचना की, जो कन्नड नाटको मे सबसे प्राचीन नाटक माना जाता है।

मैसूर राज्य के सरक्षण मे जब साहित्य की प्रगति हो रही थी, उस समय भी दो प्रसिद्ध वीर शैव कवि हुए। उनके नाम थे षडक्षरदेव और सर्वज्ञ। 'राजशेखर विलास', और 'शाबर शकर विलास' षडक्षरदेव (1650 ई०) की प्रसिद्ध रचनाए है। सर्वज्ञ (1700 ई०) ने लोक-गीतो मे प्रचलित 'त्रिपदी' नाम के छद मे हजारो कविताए रची, जो समाज सुधार की प्रेरणा से भरी हुई है।

मुद्दण या नदलिके लक्ष्मी नारायणप्प (1900 ई०) मध्यकालीन ब्राह्मण युग के अन्तिम महान् कवि थे। वह दक्षिण कर्नाटक के रहने वाले थे। उन्होने अपनी तीन रचनाओ मे रामायण की पूरी कथा लिखी है। इनमे 'रामाश्वमेध' सबसे अधिक प्रसिद्ध है। 'रामाश्वमेध' मे कवि ने रूढियो से मुक्त अपनी भावना का बेजोड परिचय दिया है। मुद्दण ने कन्नड को टकसाली भाषा बनाने मे भी महत्वपूर्ण योग दिया। वीर शैव युग मे कन्नड गद्य जनता तक पहुच चुका था और कुमार व्यास जैसे लेखको ने उसे आधुनिक बना दिया था। पर मैसूर के दरबार ने इस धारा को पलट देने की चेष्टा की। दरबारी कवियो ने प्राचीन 'चम्पू' शैली को फिर से जीवित करना चाहा। परन्तु मुद्दण ने पडिताऊपन और दरबारी तामझाम को छोड अपनी रचनाओ को भाषा की सादगी से निखारा। मुद्दण के इस चोखे गद्य से कन्नड के आधुनिक साहित्य का सूत्रपात्र हुआ।

नन्दलिके लक्ष्मी नारायणप्प

मध्य युग और आधुनिक युग के बीच कन्नड साहित्य के क्षेत्र मे चौमुखी हलचल रही। छापेखाने चालू हो चुके थे। कन्नड मे अच्छी पत्र-पत्रिकाओ की बाँढ-सी आ गई। कन्नडी लोगो ने जाना कि ससार के दूर-दूर के देशो मे जीवन और कला के विभिन्न क्षेत्रो मे क्या कुछ हो रहा है। कन्नड मे सस्कृत, अग्रेजी, बगला, आदि भाषाओ की पुस्तको का बडे पैमाने पर अनुवाद शुरू हुआ। शेक्सपियर के नाटको

और बकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय के उपन्यासो के अनुवाद छपे। ईसाई प्रचारको ने पुराने ग्रथो और अभिलेखो को खोज निकाला। उन्होने नए-नए प्रामाणिक शब्द-सग्रह, छद-शास्त्र और व्याकरण की पुस्तके तैयार कराईं, और अन्त मे 1915 ई० मे कर्नाटक के सभी साहित्यिक और सास्कृतिक कार्यों मे एकरूपता लाने के लिए 'कन्नड साहित्य परिषद्' की स्थापना हुई।

पद्य और गद्य की मौलिक रचनाओ की दिशा मे 20वी सदी के आरम्भ मे ही छिटपुट प्रयत्न आरम्भ हो गए थे। म० स० पुट्टण्णा, पजे बोलार बाबूराव, गुल्वाडी, और म० न० कामत इनमे अगुआ थे। लेकिन वास्तविक पुनर्जागरण शुरू होने मे अभी देर थी। इसके लिए किसी युगान्तरकारी महापुरुष की आवश्यकता थी। फलत मैसूर विश्वविद्यालय के अग्रेजी के अध्यापक स्वर्गीय बी० एम० श्रीकठय्या मैदान मे आए। वह अग्रेजी और कन्नड, दोनो के ऊचे दर्जे के विद्वान थे। वह टेम्स और कावेरी दोनो धाराओ के सगम थे। वह एक महान् कवि थे, जो पम्पा और रन्ना की-सी रचनाए उन्ही की भाषा मे कर सकने के साथ-साथ सरल और आधुनिक भाषा मे भी सूक्ष्म-से-सूक्ष्म भावो को बाध सकते थे।

सन् 1920 ई० मे अपनी 'इग्लिश गीतेगलु' मे उन्होने अग्रेजी की श्रेष्ठ रोमानी कविताओ का अनुवाद तैयार किया। उनकी कविताओ और उनकी वाणी ने पुराने सोने को एक नया रूप और निखार दिया। इसके बाद नई-नई भावनाओ और नए रूपो के लिए जैसे द्वार खुल गया। कविताओ, नाटको, उपन्यासो और दूसरे प्रकार की रग-बिरगी रचनाओ की बाढ-सी आ गई, और नए युग का प्रारम्भ हो गया—रोमानियत के युग का, पुनर्जागरण और स्वस्थ आदर्शवाद के युग का।

कविता के क्षेत्र मे श्रीकठय्या के साथ-साथ एक बडा समूह पैदा हो गया। इनमे प्रमुख है—गोविद पै, डी० वी० गुडप्पा, मास्ती, बेन्द्रे, वी० सीतारामय्या, गोकाक, मुगली, पी० टी० नरसिहाचार, राजरत्नम्, कडेगोडलु, आनद कद, मधुर चेन्न, साली, आदि।

छोटी कहानियो का क्षेत्र तैयार करने मे म० न० कामत, केरूर और पजे ने बहुत काम किया। पर कहानी के वास्तविक स्वरूप को मास्ती ने निखारा। उन्हे कन्नड लघु कथा का जन्मदाता कहा जाता है। आनद, अ० न० कृष्णराव, गोरूर आनद कद, क० गोपालकृष्णराव, और च० क० वेकट रामय्या आदि ने कहानी कला के स्वरूप को और भी निखारा, और उसमे रग-बिरगापन पैदा किया।

बी० एम० श्रीकठय्या

उपन्यास लिखने की दिशा मे यो तो 20वी सदी के आरम्भ से ही मौलिक रचना का कुछ काम शुरू हो गया था, परन्तु स० र० कारत और अ० न० कृष्णराव के निरन्तर प्रयासो से ही उसकी नीव मजबूत हुई। पुट्टप्पा, गोकाक, मुगली, देवुड, आदि कुछ अन्य अच्छे उपन्यासकार है।

कन्नड मे सफल नाटको की रचना टी० पी० कैलाशम् और श्रीरग ने की। कैलाशम् की खुशमजाकी, उनकी मानवीयता और उनकी सूझ-बूझ बेजोड थी। ससा, कारत, कृष्णराव, कस्तूरी, वेन्द्रे, आदि दूसरे सफल नाटककार हैं। अ० न० मूर्तिराव, व० सीतारामय्या, गोरूर और दूसरे लेखको ने निवन्ध लिखने की दिशा मे पहल की।

सन् 1930 के वाद कन्नड साहित्य मे प्रगतिवाद की धारा आई। साहित्य मे आदर्शवादी और रोमानी दृष्टिकोण के स्थान पर यथार्थवादी और समाजवादी-दृष्टिकोण छा गया, जिसमे मनोविज्ञान की एक लहर भी शामिल थी। 'तरासु' वासवराज कट्टमनी, इनामदार, क० ट० पुराणिक, निरजन, आदि इस धारा के प्रमुख साहित्यकार हैं।

इसके वाद से कई छोटी-वडी प्रवृत्तिया उभरती और फूलती-फलती रही हैं। अनेक नए और प्रतिभाशाली लेखक मैदान मे आ गए और आते जा रहे है, और इस प्रकार कन्नड साहित्य की प्रगति वरावर जारी है।

लोक-साहित्य उन किस्सो, कहानियो, गीतो, नाटको, आदि को कहते है, जिन्हें आम लोग न जाने किस युग से आपस में कहते और सुनते आए है। इधर कुछ दिनो से ऐसे साहित्य की चुनी हुई चीजें लिखी और छापी भी जाने लगी है। पर आम तौर से लोक-साहित्य लिखा नही जाता। लोक-साहित्य की किस कथा और किस गीत को किसने और कब बनाया, यह कोई नही जानता। लोक-साहित्य एक पीढी से दूसरी पीढी को विरासत में मिलता है, और इस प्रकार उसका सिलसिला चलता रहता है। लोक-कथाओ, गीतो, कहावतो और पहेलियो में गाव के लोगो की दशा, उनकी आकाक्षाओ और उनके भावो का सच्चा चित्र होता है। इसीलिए कहते है कि किसी देश की जनता को समझने के लिए उस देश के लोक-साहित्य को समझना जरूरी है।

(1)

मराठी लोक-साहित्य

लोक-कथाए इकट्ठी करने मे महाराष्ट्र के लोग आगे रहे है। मराठी की जो लोक-कथाए इकट्ठी की गई है, उनमे कुछ बहुत ही पुरानी है। विद्वानो की राय है कि कुछ लोक-कथाओ के मूल सातवाहन राजाओ के समय में, यानी ईसा से भी एक सदी पहले, मौजूद थे। भारत में लोक-साहित्य जमा करने का काम सबसे पहले गुणाढ्य ने शुरू किया था, जो महाराष्ट्र के ही रहने वाले थे। गुणाढ्य का समय ईसा से लगभग पचास बरस पहले माना जाता है। इससे यह आसानी के साथ समझा जा सकता है कि उनकी जमा की हुई कथाए कुछ नही, तो उनसे पाच-छ. सौ वर्ष पुरानी अवश्य रही होंगी।

बाद की लोक-कथाओ मे शैव-कथाएं, विद्याधरो की कहानिया तथा खडोबा और चद्रहार की कहानिया सबसे पुरानी है। 'विद्याधर' की कल्पना 'जिन' की कल्पना से मिलती-जुलती है, और ऐसा लगता है कि यह कल्पना ईरान से ली गई थी। 'जिन' की तरह मराठी लोक-साहित्य में 'विद्याधर' भी ऐसे जीव है, जो दिखाई नही देते और बहुत शक्तिशाली होते है। वे प्रेतो की तरह सताने का काम केवल तभी करते है, जब लाचार हो जाते हैं, वरना वे आम तौर से भलाई ही करते है। विद्याधरो की कहानियां ऐसी- लोकप्रिय हुईं कि कुछ पुरानी कहानियो में भी विद्याधर के प्रसग जोड लिए गए। खडोबा की कहानिया भी बहुत दिलचस्प है। खंडोबा एक प्रकार के विरक्त ज्ञानी लोग है, जो सस्कृत साहित्य में स्कंद और तमिल मे सुब्रह्मण्यम् के नाम से आए है। अन्तर यह है कि मराठी के खंडोबा ब्रह्मचारी नही है। उनकी दो पत्निया है। इतनी बात जोड देने से खंडोबा लोगो के चरित्र और उनकी कहानियो मे भरपूर रस आ गया है। पुरानी लोक-कथाओं के रूप अब बहुत कुछ बदल गए है और समय बीतने के साथ अनेक लोक-गीतो की कथाओ पर धार्मिक सम्प्रदायो के रग चढ़ गए है।

जहा पुराने कथा-गीतो के नायक आदमी है, वहा धार्मिक सम्प्रदायो के प्रभाव से उनकी जगह कृष्ण कन्हैया या दूसरे देवताओ ने ले ली है ।

आम की नई फसल पर 'झिम्मा' नाम का एक खेल खेला जाता है । उसे खेलते हुए एक गाना गाया जाता है, जिसका पुराना रूप है

आना पिकतो रस गलतो,
काकणचा राजा झिम्मा खेलतो ।

(आम गदराय, रस रेले, कोकण का राजा झिम्मा खेले ।)

अव "काकणचा राजा झिम्मा खेलतो" की जगह "कृष्ण कन्हैया झिम्मा खेलतो" हो गया है ।

जैसे वगाल आदि मे व्रत-कथाए है, वैसे महाराष्ट्र मे भी है । पर उनमे धर्म-भावना कम, लोक-जीवन अधिक है । उन पर आडम्बर से खाली वैदिक सस्कारो और सीधे-सादे मानव-जीवन की छाप है । इस अर्थ मे मराठी की व्रत-कथाए अन्य प्रातो मे पाई जाने वाली व्रत-कथाओ से विल्कुल भिन्न है । भारत के दूसरे भागो की व्रत-कथाए भी महाराष्ट्र मे आई, पर वे वहुत-कुछ वदल गई है ।

मराठी लोक-साहित्य का एक वहुत वडा भाग गीतो और नाचो के साथ जुड़ा हुआ है । क्वार मे लडकिया गरवा या करमा-धरमा की तरह 'हादगा' (अगस्त) या 'भोडल' – (भावर के) गीत गा-गाकर गोल-गोल चक्करो मे नाचती है । अक्षय-तीज को चैत-गौरी के नाच होते है । कोकण मे गौरी-गणपति के नाच मर्द नाचते है, जिनमे सवाल-जवाव होते है । इन सभी नाचो के साथ कोई-न-कोई गीत-कथा होती है ।

श्रम-गीत भी अधिकतर कथा-प्रधान है । धान की कटनी और रोपनी पर एक अगुआ मजदूर 'लावणी' गाता है और दूसरे सुर और ताल देते है । ये लावणिया शहरी लावणियो से भिन्न है । इनमे कथा के अश तो होते ही है, एक और विशेषता यह होती है कि कथा आशु कविता के सहारे आगे चलती है । यानी तत्काल तुके जोड-जोड कर लोग कथा को आगे बढाते जाते है ।

'ओवी' छद को मराठी के कुछ सत कवियो ने अमर कर दिया है । मूल रूप से वे छद रचना और स्वर, दोनो ही बातो मे मराठी के लोक-छद है । कुटाई-पिसाई की ओवियां किताबी ओवियो से भिन्न होती है । ओवियो का आरम्भ 'पहली माझी ओंवी' (पहली मेरी ओवी) से होता है । वे शादी-ब्याह, गर्भाधान, आदि सस्कारो पर भी गाई जाती है । कुणबियो (महाराष्ट्र की एक किसान जाति) की ओवी मे राम-कथा

के भी बदले हुए रूप मिलते है । मुर्गा भोर मे राम को जगाने के लिए बोलता है । एक पहर दिन चढे वह गजर बजा कर उन्हे शिकार पर निकलने का समय बताता है, दोपहर को उन्हे 'भाखर' (बाजरे की रोटी) खाने के लिए बुलाता है और साझ के समय कुटिया को वापस लौटने के लिए पुकारता है ।

मराठी लोक-गीतो मे ललित, भारुड, वासुदेवगीत, गोसावीगीत, गुरावी गीत श्राद्ध गीत, लिवा, चकवे, आदि गाने खास है । इनमे से हर एक की अपनी-अपनी विशेषता और अपना-अपना महत्व है । इनमे से चकवा नाम के गाने बहुत सरस होते है । चकवा कई तरह के होते है । उनमे प्रेमी और प्रेमिका के सवाल-जवाब चलते है । 'चकवा' नाम ही शायद चकवा-चकवी के आदर्श प्यार के आधार पर पडा है । माझियो के चकवो मे माझी प्रेमी होता है और नाव प्रेमिका । माझी के प्राण सागर की लहरो के कारण सकट मे है । पर नाव का प्रेम ऐसा ढाढस और इतना साहस देता है कि मांझी उस सकट की कोई परवाह नही करता । इसी प्रकार जगल की सैर के चकवा अथवा युवक-युवतियो के प्रेम के चकवा भी साहस की घटनाओ से भरे होते है ।

मराठी लोक-साहित्य मे 'खरे गान' कहलाने वाली 'शाहीरी कविता' (भाट काव्य) या पवारा का भी एक खास महत्व है । कुछ लोगो का अनुमान है कि पवारा बहुत पुराने जमाने मे भी था, पर वह मुस्लिम काल मे खत्म हो गया था । शिवाजी के काल मे उसी का नया जन्म हुआ । जो भी हो, शिवाजी के समय मे तलवारो की खडक और घोडो की टाप के स्वर के साथ ढोल और डफ पर वीरो की गाथा गाने वाले कवियो का एक वर्ग ही बन गया । उन कवियो के रचे गानो मे कवि-कौशल होने के साथ ही ठेठ लोक-जीवन की भी झलक थी ।

इधर तीस-चालीस साल के भीतर मराठी लोक-साहित्य पर काफी काम हुआ है । शायद उतना काम और किसी भारतीय भाषा मे नही हुआ है । यह काम लोक-साहित्य के सग्रह और उसके विश्लेषण तक ही सीमित नही है, बल्कि इस बात पर भी खोज हुई है कि लोक-साहित्य से समाज-शास्त्र या प्राणि-विज्ञान के लिए क्या निष्कर्ष निकलते है ।

चिड़िया और कौआ

एक थी चिडिया और एक था कौआ। चिडिया ने पाए मोती, कौए ने पाए चने। कौए ने चने के दाने खा लिए और चिडिया के पास जाकर बोला—"चिडीबाई, चिडीबाई, देखू तेरा मोती।" चिडिया बोली—"ना बाबा, ना! कही चुरा-वुरा ले गए तो?" कौआ बोला—"नही जी, अभी देख कर वापस कर देता हू।" तब चिडिया ने उसे मोती दे दिए। मोती मिलते ही कौआ उडनछू हो गया। चिडिया कौए से बोली—"कौए, कौए, मेरा मोती दे।" कौआ बोला—"नही देता, जा।" तब चिडिया पेड के पास गई और पेड से बोली—"पेड, पेड, कौए को गिरा।" पेड बोला—"नही गिराता, जा।" तब चिडिया बढई के पास गई और बोली—"बढई, बढई, तू पेड काट।" बढई बोला—"नही काटता, जा।" तब चिडिया राजा के पास गई और बोली—"राजा, राजा, बढई को डाट दे।" राजा बोला—"नही डाटता, जा।" तब चिडिया रानी के पास गई और बोली—"रानी, रानी, राजा से रूठ।" रानी बोली—"नही रूठती, जा।" तब चिडिया चूहे के पास गई और बोली—"चूहे, चूहे, रानी की साडी कुतर।" चूहा बोला—"नही कुतरता, जा।" तब चिडिया बिल्ली के पास गई और बोली—"बिल्ली, बिल्ली, चूहे

चिड़िया ने अपना मोती मागा।

को खा।" बिल्ली बोली—"नही खाती, जा।" तब चिड़िया कुत्ते के पास गई और बोली—"कुत्ते, कुत्ते, बिल्ली को काट।" कुत्ता बोला—"नही काटता, जा।" तब चिड़िया डडे के पास गई और बोली—"डडे, डडे, कुत्ते को पीट।" डडा बोला—"नही पीटता, जा।" तब चिड़िया अग्नि के पास गई और बोली—"अग्नि, अग्नि, तू डडे को जला।" अग्नि बोली—"मै नही जलाती, जा।" तब चिड़िया समुन्दर के पास गई और बोली—"समुन्दर, समुन्दर, तू आग बुझा।" समुन्दर बोला—"नही बुझाता, जा।" तब चिड़िया हाथी के पास गई और बोली—"हाथी, हाथी, समुन्दर को मथ।" हाथी बोला—"मै नही मथता, जा।" तब चिड़िया चीटी के पास गई और बोली—"चीटी, चीटी, तू हाथी की सूड मे घुस।" चीटी ने कहा—"हा, मै हाथी की सूड मे घुस जाऊगी।" अब चीटी जो सूड के पास पहुची, तो हाथी बोला—"नही, नही, मै समुन्दर को मथूगा।" समुन्दर बोला—"नही, नही, मै अग्नि को बुझाऊगा।" अग्नि बोली—"नही, नही, मै डडे को जलाऊगी।" डडा बोला—"नही, नही, मै कुत्ते को मारूगा।" कुत्ता बोला—"नही, नही, मै बिल्ली को काटूगा।" बिल्ली बोली—"नही, नही, मै चूहे को खाऊगी।" चूहा बोला—"नही, नही, मै रानी की साडी कुतरूगा।" रानी बोली—"नही, नही, मै राजा से रूठूगी।" राजा बोला—"नही, नही, मै बढई को डाटूगा।" बढई बोला—"नही, नही, मै पेड को काटूगा।" पेड बोला—"नही, नही, मै कौए को गिराऊगा।" कौआ बोला—"नही, नही, मै मोती दे दूगा।"

यह कह कौए ने मोती दे दिए और चिड़िया खुश होकर फुर से उड गई।

नन्हीं-मुन्नी कहानी खत्म। तुम्हारा हमारा पेट भरे।

चींटी हाथी की सूड में घुसने को तैयार हो गई।

पुरखों की हजामत

एक था राजा। पहली रानी से उसके एक लडका हुआ। उसके बाद-रानी मर गई। राजा तब बूढा हो गया था। राजा ने फिर भी दूसरी शादी कर ली। नई रानी मे और पहली रानी के लडके मे हमेशा झगडा होता। नई रानी राजा के कान भरती और लडके को महल से निकालने को कहती। राजा के तो, समझो, पैर कब्र मे लटके थे। उसने रानी को बहुत समझाया, कहा—"राजकुमार हमारे घर का दीया है। मेरे बाद वही गद्दी पर बैठ कर राज चलाएगा। वह नही रहा, तो राज चोरो-उचक्को के हाथ मे चला जाएगा और वे तुम्हे बहुत तग करेगे।"

इस पर नई रानी ने दूसरी चाल चली। झूठमूठ कह दिया कि मै भी पेट से हू। राजा को बहुत बुरा लगा। पर रानी के आगे उसकी एक न चली। राजा के पास एक चतुर नाई और एक हवलदार था। हवलदार महल की चौकीदारी करता था। नाई बूढा था और उसके एक सुन्दर बेटा था। रानी को उस सुन्दर लडके से प्रेम हो गया था। वह उसको किसी तरह चौकीदार बनाना चाहती थी। लेकिन हवलदार के होते उसकी इच्छा पूरी न हो सकी। उसने तरह-तरह से उसे नौकरी से हटाने की कोशिश की। मगर वह बहुत चालाक था। उसके खिलाफ रानी जो भी बाते उठाती, वह उन सबका ठीक-ठीक जवाब दे देता। राजा हवलदार को बहुत मानता था। हवलदार को राजकुमार का महल से निकाला जाना भला कैसे भाता? लेकिन वह उस समय वहा था नही। रानी ने पहले हो ऐसी जुगत कर दी थी। इसलिए वह कुछ नही कर सका। राजकुमार निकाल दिया गया। अब केवल हवलदार रानी की राह का काटा रह गया। इसलिए रानी उसे हटाने की कोशिश मे बराबर लगी रही। एक दिन उसने नाई को अपना इरादा बताया। नाई ने कहा कि सोच कर तरकीब बताऊगा। नाई इस बात से खुश हुआ कि रानी उसके लडके को चाहती है, और उसे हवलदार बनवा देगी।

एक दिन राजा और रानी बहुत खुश-खुश बाते कर रहे थे। नाई ने अच्छा अवसर देख उनके पुरखो की बात छेड़ दी—"आपके पुरखे कितने बहादुर थे! मै

से एक हजार मजदूर मांग कर एक बहुत बड़ी सुरंग खुदवाओ। राजा से कहना कि तुम इसी सुरंग में से होकर सीधे स्वर्ग जाओगे। सुरंग की खुदाई जब पूरी होने लगे, तब उसमे एक चोर दरवाजा बनवा लेना। फिर पूरी तैयारी करके उस सुरंग में छिप कर बैठ जाना। मैं चोर दरवाजे से तुम्हे खाना पहुचाती रहूगी। छ

हवलदार को पुरखों का हाल जानने के लिए स्वर्ग जाने का आदेश दिया गया।

वह सुरग में जाकर छिप गया।

महीने बाद तुम निकल आना और कह देना कि मै राजा के पुरखो से मिल कर आया हू।" हवलदार को लडकी की बात पसद आ गई। उसने राजा से एक हजार मुहरे माग कर सुरग खुदवानी शुरू कर दी।

छ महीने मे सुरग तैयार हो गई। तब हवलदार ने स्वर्ग जाने की तैयारी की। यह खबर आग की तरह सारी राजधानी मे फैल गई। वहुत सारे लोग झडे-झडिया और पालकिया लेकर जमा हो गए। सबने हवलदार की पूजा की और कुछ लोग उसे पहुचाने के लिए थोडी दूर तक सुरग मे भी गए। हवलदार ने पहले ही सुरग के भीतर एक जगह तय कर ली थी। वह वही जाकर छिप गया।

एक दिन बीता, दो दिन बीते, होते-होते दो महीने बीत गए। पर हवलदार वापस नही आया। यह देख कर रानी और नाई को विश्वास हो गया कि अब हवलदार वापस नही आ सकता। रानी को बडी खुशी हुई। उसने थोडे दिनो वाद ही नाई के लडके को हवलदार वनवा दिया।

होते-होते छ महीने बीत गए। एक दिन अचानक लोगो ने देखा कि हवलदार वापस आ गया। उसकी दाढी-मूछ बढी थी। इसलिए पहले तो वह पहचाना ही नही जा सका। लेकिन जब लोगो को पूरा विश्वास हो गया कि वह हवलदार ही है, तव वे फिर झडे-झडिया और पालकिया लेकर आए और बडे मान-सम्मान के साथ उसे राजमहल मे ले गए। राजा ने उससे अपने पुरखो का हाल पूछा। तब वह बोला—"राजाओ के राजा! आपके पुरखे स्वर्ग मे वडे आराम से है। उन्होने बहुत खुश होकर आपको असीस भेजी है। स्वर्ग से यहा लौटने को मेरा तो जी ही नही चाहता था, लेकिन आपके हुक्म से वापस आना पडा। हा, पुरखो ने आपको एक सदेश भेजा है।"

"वह क्या?" राजा ने अधीर होकर पूछा। रानी के भी कान खडे हो गए। हवलदार ने कहा—"स्वर्ग मे सब कुछ है। लेकिन वहा नाई नही है। इसलिए आपके पुरखो ने बडी मिन्नत की है कि आप अपने महल के नाई को उनके पास भेज दे। वालो का बोझ उनसे उठाया नही जाता। मुझे ही देखिए न। छ महीने मे वालो की क्या हालत हो गई है।"

राजा को अपने पुरखो की दशा सुन कर वहुत दुख हुआ। हवलदार ने तुरन्त इतनी बात और जोड दी—"मै तो वहा से होकर आया ही हू। राह मे कोई तकलीफ

हवलदार स्वर्ग का हाल बता रहा ह ।

नही है । और वहा सब आराम ही आराम है ।" बस फिर क्या था, राजा ने फौरन हुक्म दे दिया कि नाई स्वर्ग के लिए तुरन्त रवाना हो जाए ।

नाई हवलदार की चालाकी समझ गया । लेकिन राजा के हुक्म के आगे क्या कर सकता था ? चुपचाप स्वर्ग जाने की तैयारी करने लगा । हवलदार ने पहले ही से उस सुरग मे काट-कूट, कूडा-कवाड, अजड-वजड फैला दिए थे । झडे-झडियो और सारे ताम-झाम के साथ नाई को भी सुरग के पास लाया गया । लोगो ने उसकी भी पूजा की । हवलदार भी उसे थोडी दूर तक पहुचा आया । लौटती वार उसने नाई से कहा—"नाक की सीध मे चले जाना । आगे अपनेआप स्वर्ग का रास्ता दिखाई देगा ।" पर हवलदार ने सिर्फ वापस लौटने का दिखावा किया । वह लौटा नही, वल्कि छिप कर देखने लगा कि नाई क्या करता है । नाई एक तो वूढा था, दूसरे काटो और ककड-पत्थर से भरा रास्ता । वह काटो से विध-विध कर और पत्थरो से ठोकरे खा-खाकर एकदम छलनी हो गया, और वही गिर पडा । हवलदार दूर से यह तमाशा देख रहा था । उसने इधर-उधर विखरे हुए वास, लक्कड और काट-कूस मे चुपके से आग लगा दी । आग फौरन सुरग के एक सिरे से दूसरे सिरे तक फैल गई । नाई बेचारा उस आग मे जल कर राख हो गया ।

राजा ने महीनो नाई की राह देखी । पर नाई वापस नही आया । हवलदार मजे से फिर अपनी जगह काम करता रहा । नाई का लडका अव राजा का नाई वन गया था ।

नाई को खत्म करके अव हवलदार ने रानी से निवटने की सोची । उसने राजा के वेटे का पता लगाने की ठानी और यह काम उसने अपनी चालाक लडकी को सौपा । वडी मुश्किल से लडकी ने राजकुमार को खोज निकाला । वह अव वडा हो गया था और सव कुछ समझने लगा था ।

राजा के लडके ने फौज जमा की और उसने अपने वाप के राज्य पर हल्ला वोल दिया । राजा, रानी और नाई सव घवरा गए । राजा वूढा था । रानी की सलाह से हवलदार और नाई को लडाई पर भेजा गया । दोनो ने अपनी फौजे सम्भाली और राजकुमार से लडने चले । हवलदार तो राजकुमार से मिला हुआ था ही । राजकुमार ने थोडी ही देर मे नाई की फौज को हरा दिया । उसने नाई का सिर उडा दिया और

रानी को पकड लिया । रानी ने जैसा किया था, उसका वैसा फल पाया । हवलदार ने आकर सारी कहानी राजा को सुनाई । राजा बहुत खुश हुआ । उसने खुशी से राजकुमार को गले लगाया ।

दूसरे दिन राजकुमार को बाजे-गाजे और धूमधाम के साथ गद्दी पर बैठाया गया । राजकुमार ने राजा की इच्छा से हवलदार की लडकी से शादी कर ली । सब हँसी-खुशी रहने लगे और राजकुमार ने आनन्द से बरसो तक राज किया ।

जैसे राजकुमार के दिन फिरे, वैसे सबके दिन फिरे । हमारी कहानी पूरी हुई ।

लोक-साहित्य

(2)

गुजराती लोक-साहित्य

गुजरात मे अनेक जातियो और धर्मो के लोग बसते है । हिन्दू, मुसलमान और पारसी गुजरात मे सैकडो वर्षो से रहते आए है । बाहर से शक, सीथियन, यूनानी, आदि जातियो का आना-जाना भी इस भूमि मे होता रहा है । समुद्र के किनारे का प्रान्त होने की वजह से गुजरात के सौराष्ट्र प्रदेश मे अफ्रीका के हब्शी जाति के भी कुछ लोग आ बसे है । विभिन्न जातियो वाले इस प्रात के लोक-साहित्य का बहुरगी होना स्वाभाविक है । काठी, अहीर, वाघेरा, मेर, रबारी, आदि मशहूर जातिया सौराष्ट्र मे रहती है, और भील, ठाकरडा, आदि जातिया उत्तरी और पूर्वी गुजरात मे बसी हुई है । सौराष्ट्र बहुत पुराना प्रदेश माना जाता है । श्रीकृष्ण की द्वारिका इसी प्रदेश मे है । अशोक के शासन-काल मे मौर्यो का प्रभाव यहा तक फैला हुआ था । ईसवी सन् की छठी शताब्दी मे वल्लभीपुर

का प्रतापी राजा भी इसी प्रदेश मे था और आर्यों से भी पहले की सिन्धु-सभ्यता की निशानिया भी यहा प्राप्त हुई हैं। ऐसी प्राचीन भूमि मे हजारो वर्षों से लोक-साहित्य का सर्जन होता आ रहा है।

गुजरात का लोक-साहित्य प्राय सारा अनलिखा साहित्य है। अभी पिछले कुछ वर्षो मे इसका सकलन और सम्पादन हुआ है। इस वहुमूल्य कार्य का श्रेय सबसे अधिक झवेरचद मेघाणी को है। उन्होने करीव पच्चीस साल तक इस क्षेत्र मे काम किया। काठियो के डायरो (दरवारो-सभाओ), रवारियो के नसेडो (वस्तियो), वरडा नामक पहाडी मे वसे हुए मेरो, गाव की चौपालो और भजन-मडलियो मे जा-जाकर उन्होने इस वहुमूल्य साहित्य को इकट्ठा किया। सौराष्ट्र के वीरो की शौर्य-गाथाए, ग्रामवासियो के गीत, नाविको के गीत, लग्न, विवाह और गमी के गीत, दोहे, प्रेमकथाए, सत-कथाए, व्रत-कथाए, आदि विविध सामग्री जमा करके उन्होने 'सोरठी वरार', 'वटिया', 'रढवाली रात सोरठी गीत-कथाए', 'सौराष्ट्री रसधार', 'सोरठी सत', आदि सग्रह प्रकाशित किए। गुजराती लोक-साहित्य के ये अनमोल मोती है।

गुजराती लोक-साहित्य को जीवित रखने वाले भाट, चारण, बारोट, भजनीक, आदि घुमक्कड लोग थे। वे गाव-गाव घूमते हुए रियासतो के मुखियो के दरवार मे गीत गाते और कथाए पेश करते थे। इन कथाओ, काव्यो और गीतो मे प्रेम, वीरता, साहस, उदारता, अतिथि-सत्कार, काम करने की लगन, देश-प्रेम, आदि अनेक सुन्दर भाव भरे है। फौज मे नौकरी करने वाले, जहाजो मे चढ कर विदेश जाने वाले, गाय-भैसो को लेकर दूर-दूर तक के प्रदेशो मे घूमने वाले पुरुषो की विरहिणी नारियो के विरहे भी उनमे है। आन पर अटल रहने वाले, शरणागत की रक्षा के लिए प्राणो की आहुति देने वाले, धर्म, धरा या नारी की इज्जत वचाने के लिए वलि चढ जाने वाले मर्दो की वीरता की अनगिनत कथाओ से यह साहित्य भरा है। ऐसी कथाए भी मिलती है, जिनमे किसी मुसलमान भाई की रक्षा के लिए कोई हिन्दू अपने को होम देता है, या किसी हिन्दू भाई की सहायता मे मुसलमान अपने को निछावर कर देता है। उस जमाने मे जिन्हे अछूत माना जाता था, उनकी वहादुरी और दिलेरी की घटनाए भी इनमे मौजूद है। सौराष्ट्र मे शायद ही ऐसा कोई गाव हो, जिसकी सीमा पर वीरो की 'खाभिया' न हो। आन पर मिटने वाले वीरो की यादगार मे घोडे पर सवार आदमी की मूर्ति खडी की जाती है। उसे सौराष्ट्र मे 'पालिया' 'शूरा पूरा' या 'खाभी' कहते हैं। सौराष्ट्र के लोक-साहित्य मे घोडे, ऊट, भैस, आदि पशुओ की तारीफ मे भी गीत और कथाए है। सौराष्ट्र की जातिया

अधिकतर घुमक्कड जातिया थी, जो अपने साथ-साथ अपने पशुओ को भी लिए घूमती थी। कई स्थानो पर उनके घोडो की समाधिया पाई जाती है। भैस को चारण लोग नाग-लोक की पदमणी (पद्मिनी) कहते थे। वहा भैस की अनेक नस्ले होती थी और चारण बडे प्रेम से उनके नाम रखते थे। भैसो के कुछ नामो का परिचय देने वाला एक गीत देखिए—

गणुं नाम कुंढी तणा, नागल्युं, गोटक्यु,
नेत्रम्युं, नानक्युं, शीग नमणा।
तीणल्युं, भूत्तड्युं, भोज, छोगालियुं,
बीनडयुं, हाथणी, गजां बमणां।

काठी लोग घोडो को पालने का वहुत खयाल रखते थे और उनकी नस्ल को शुद्ध रखने का यत्न करते थे। कई लोक-गीतो मे तो "जीवे घोडा, जीवे घोडा" ध्रुवपद पाया जाता है।

सौराष्ट्र के लोक-साहित्य का मुख्य छद है दोहा। दोहा, दुहा, दोहरा, इत्यादि नाम से प्रसिद्ध इस छद का वैसे तो सारे उत्तर भारत मे चलन है, लेकिन सौराष्ट्र के चारण कवियो की जीभ पर चढ कर दोहे ने जो शक्ति धारण की है, वह देखते ही वनती है।

इसका जोर, इसकी बुलदी और इसके नाद का सौन्दर्य देखना हो, तो सौराष्ट्र के गावो मे जाकर देखिए। सौराष्ट्र के गिरनार पर्वत की तराई मे और कृष्णजी के प्रसिद्ध तीर्थ माधवपुरी मे हर वर्ष मेले लगते है। इन मेलो मे लोक-साहित्य की होड लगती है और तीन-तीन दिन और रात तक दोहे, छक्कडिए, डोढिए, आदि छदो मे लोक-गीतो की महफिल जमती है। मारवाड की तरह सौराष्ट्र मे भी होली के दिन होलिका दहन होता है, और आग जलाई जाती है। उस आग के आसपास भी लोक-गीत, रास, लकुट रास कथाओ की धारा उमड पडती है। समुद्र के किनारे वसी हुई 'खाखा' (नाविक) और जगलो मे वसी हुई भील जाति के लोक-गीत भी वहुत रोचक और भावपूर्ण होते है।

गुजरात के काठियावाड प्रदेश का लोक-साहित्य वहुत भरा-पूरा है। काठियावाड का अर्थ है काठियो के रहने की जगह। काठी शायद सीथियन जाति के लोग थे। आज भी वहा काठी बसते है, पर अब उनका वह पुराना गौरव समाप्त हो चुका है। काठी मुखिया अपने अनुयायियो की जो सभा बुलाते थे, उसे 'डायरा' कहा जाता था। डायरे मे प्राय हथेली मे घोल कर अफीम पी जाती थी। इसे 'कसूबा' लेना कहते थे। अतिथि की आवभगत विना कसूबे के अधूरी मानी जाती थी। पुराने जमाने की काठियो की वीरता और उदारता की एक अनूठी कहानी यहा दी जाती है।

नेक दुश्मन

मुंजासर और चोटीला नाम के काठियो के दो प्रसिद्ध गाव थे। मुजासर के काठियो का सरदार भोकावाला दवदवे का आदमी था। उधर चोटीला गाव का काठी सरदार रामाखाचर भी भोकावाले से उन्नीस नही था। दोनो के पास लगभग वरावर की सेना और एक-से महल-अटारी थे।

मुजासर गाव के सरदार भोकावाला का एक मौसेरा भाई था। उसका नाम मामैयावाला था। रामाखाचर और मामैयावाला मे दुश्मनी थी। एक दिन दोनो मे ठन गई, लोहे से लोहा वजने लगा और मामैयावाला मारा गया। रामाखाचर ने उसका गाव लूट लिया और उसके जानवर हाक कर अपने गाव की ओर ले चला। रास्ते मे मुजासर पडता था। अवेर हो चुकी थी। इसलिए उसने मुजासर मे ही डेरा डाला।

...े का सामान लेकर वह ...ाखाचर के डेरे की ओर चल पडा।

भोकावाला को जव इसकी खवर मिली, तव उसने तुरन्त रामाखाचर के पास सदेश भेजा कि तुम आज हमारे पाहुने हो। हमारे गाव मे न अपना कसूवा पीना, न अपनी रसोई वनाना। वाजरे की रोटिया, गुड, मक्खन के लोदे, सोधे चावल, दही के कूडे और घडो दूध लेकर वह रामाखाचर के डेरे की ओर चल पडा।

रास्ते मे उसे एक आदमी जाता हुआ दिखाई दिया। भोकावाला ने अन्दाज लगाया, "कही यह नाजभाई दाती तो नही है। हा-हा, वही मालूम होते है।"

अपना घोडा रोक कर उसने पुकारा, मगर नाजभाई रुके नही। उसने फिर पुकारा, लेकिन नाजभाई ने मुड कर भी नही देखा। उसने फिर मनुहार की—"रामदुहाई, नाजभाई, जरा सुन तो लो।"

नाजभाई रुके तो, पर उन्होने कन्धे से अगोछा उतार कर अपने मुह पर डाल लिया। भोकावाला समझ गया कि जरूर कुछ दाल मे काला है। पूछने पर नाजभाई बोले—"मामैयावाला के लहू का कसूबा पीने जा रहे हो, क्यो ?"

भोकावाला को पता नही था कि रामाखाचर मामैयावाला को मार कर और उसका गाव लूट कर लौट रहा है। नाजभाई ने सब हाल बताया। सुन कर भोकावाला ने सारा सामान कौओ-कुत्तो को फेकवा दिया और घर की ओर अपना घोडा मोड लिया।

इसके बाद भोकावाला ने एक घुडसवार रवाना किया। रामाखाचर के पडाव पर पहुच कर उसने सदेश सुनाया—"तुमने मेरे मौसेरे भाई का खून किया है, सो तैयार रहना! चोटीला की ईंट से ईंट बजा दी जाएगी।"

रामाखाचर ने दूत से कहा—"हम भी जाकर तैयारी करते है। भोकावाला से कहना, देर न करे, जल्दी आए।"

चोटीला मे हलचल मच गई। रामाखाचर के तो कोई बेटा नही, उसके भाई के एक बेटा है। दो भाइयो के बीच वही एक अकेली सन्तान है। उसी से वश चलने की उम्मीद थी। उसने हठ ठान ली कि भोकावाला से मै लोहा लूगा। मै अकेला रण मे जाऊगा। सबने लाख समझाया, पर काठी का लडैत बाका कही अपना हठ छोड सकता था!

भोकावाला पुराना खिलाडी था।

दो सौ जवानो को लेकर वह चल पडा। गाव की सीमा पर भोकावाला तैयार था। लडके ने भोकावाला के दात खट्टे कर दिए। पर भोकावाला पुराना खिलाडी था। अन्त मे जीत उसी की हुई। रामाखाचर का भतीजा मारा गया। उसकी लाश पर चादर डाल भोकावाला मुजासर लौट गया। लडाई खत्म होने पर रामाखाचर युद्धभूमि मे आया। शवो के ढेर पडे थे। उनका अग्नि-सस्कार किया गया।

इसके बाद डायरा (काठी मुखिया के अनुयायियो की सभा) बैठी। सभी उदास थे। रामाखाचर ने कहा—"खबर भेज दो, हम चढाई करेगे। भोकावाला मुजासर को बचा सके, तो बचा ले। एक-एक के साथ काठी जूझेगा, और अन्त मे हम-तुम।"

भोकावाला ने जवाब दिया—"आप बुजुर्ग है, कष्ट न करे। हम खुद फिर चोटीला आ रहे है। वही निबटेगे।"

रामाखाचर अपनी पत्नी से बोला—"कठियाणी, अब जीवन का क्या भरोसा। एक साध रह गई है। जीते जी अगर अपनी लडकी गीगी के हाथ पीले कर लेता, तो मन मे कोई कसक न रह जाती।"

रामाखाचर की पत्नी को बात जच गई। विवाह की तैयारी शुरू हुई। लडकी के लिए हाथीदात की चूडिया दरकार थी। हलवद नगर के सेठ मोतीचन्द के पास चूड़ियो का नाप भेजा गया। मोतीचन्द था तो चोटीला का ही, पर उसकी दुकान हलवद मे थी। उसने दो बार चूडिया बनवा कर भेजी, पर या तो वे कुछ बडी रही या छोटी। सेठ मोतीचन्द ने खबर भेजी कि बेटी को यहा भेज दो। कुछ घटो मे नाप की चूडिया तैयार हो जाएगी। दिन ढलते बेटी को वापस भेज देगे।"

सेठ मोतीचन्द के आगन मे बैलगाडी पहुची। रामाखाचर की रूपवती कन्या गीगी उतर कर चूडियो की दुकान पर गई। देखते-देखते उसकी चूडिया तैयार हो गई। चम्पा के फूल-सी काठी कन्या चूडिया पहन कर जब दुकान से नीचे उतरी, तब जाने क्यो चौक उठी, सकपका कर बोली—"जल्दी गाडी जोतो। हम तुरन्त रवाना होगे।"

गीगी की सकपकाहट एकाएक किसी की समझ मे नही आई, पर इसका कारण मालूम होते देर न लगी। पता चला कि हलवद का झाला राजा उधर से गुजरा था और अभी तक गर्दन मोडे घूर-घूर कर गीगी को देख रहा था।

राजा ने सेठ मोतीचन्द की दुकान पर घोडा रोका और सेठ को एक ओर बुला कर उससे कहा—"ये हमारे मेहमान है। ये हमारे महल मे रहेगे। इन्हे जाने न देना। अगर इन्हे जाने दिया, तो तुम्हारी खैर नही।"

मोतीचन्द के चेहरे पर हवाइया उडने लगी। वह कन्या को लेकर अपने घर गया। गीगी ने कहा—"हमे अब जाने दीजिए, मामाजी, यहा तो दम घुट रहा है।"

मोतीचन्द ने जवाब दिया—"बेटी, अब तुम कैसे जा सकती हो। इज्जत का सवाल है। मेरा यमराज के यहा से बुलावा आया है। मेरे जीते जी तुम्हारा बाल भी बाका नही हो सकता।"

घर के फाटक बन्द कर दिए गए। भारी अरगले खीच दी गई और एक सवार चोटीला की ओर तीर की तरह रवाना हुआ।

गीगी चूडियों की दुकान पर गई।

उधर रामाखाचर से निवटने के लिए भोकावाला फिर अपना दल लेकर आ पहुचा। मगर उसे यह देख कर आश्चर्य हुआ कि चोटीला गाव मे सन्नाटा छाया हुआ है। किसी ने कहा—"रामाखाचर को शायद जीवन का मोह हो गया है। चुनौती तो मजूर कर ली, लेकिन अब मौत से डरता है।"

भोकावाला ने कहा—"ना, ऐसा नही हो सकता। रामा को मै अच्छी तरह जानता हू। वह कायर नही है।" फिर नाजभाई से वोले—"गढवी[1], तुम जाओ और गाव मे जाकर पता लगाओ कि डायरे का क्या हाल है।"

नाजभाई डायरे मे पहुचे। काठियो ने उनका सत्कार किया। नाजभाई ने कहा—"भोकावाला आप लोगो की राह देख रहा है। यह देर-दार किस लिए?"

जवाब मे खाचर काठियो ने कहा—"अभी आते है। अपने कुछ जवानो की प्रतीक्षा है। उनके आते ही हम भोकावाला का रणभूमि मे स्वागत करेगे।"

नाजभाई ताड गए, सोचा—"हो न हो, इसमे कोई भेद है।" वह रनिवास मे पहुचे। रानी के पास जाकर सारी बात जान ली। काठिनियो ने बताया—"यही तो उलझन है। पहले किससे निवटे—भोकावाला से या हलवद के झाला राजा से।"

नाजभाई ने आकर समाचार सुनाया। सारी बात सुन कर भोकावाला कुछ देर सोच मे डूबा रहा, फिर गढ़वी से बोला—"नाजभाई, बैर का वदला तो वाद में भी लिया जा सकता है न? जाओ, चोटीला के डायरे को खवर दो कि हम रामाखाचर से मिलने आ रहे है।"

अपने दल के साथ भोकावाला रामाखाचर के पास पहुचा, बोला—"खाचर भाई, चिन्ता छोड़ो। गीगी बेटी का सवाल पहले है। उठो, उसका कोई बाल तक बाका नही कर सकता। तैयारी करो, पहले हलवद के झाला से निबट ले। अपना भुगतान हम बाद मे कर लेगे।"

पाच सौ घुडसवार हलवद की ओर चल पडे।

* * * *

हलवद का रग कुछ और ही था। मोतीचन्द सेठ पिछवाडे की खिडकी से बाहर निकल नदी के किनारे खडा काठियो की राह देख रहा था। शाम होने को थी और कोई आता दिखाई नही दे रहा था। वह इसी चिन्ता मे डूबा था कि वहा नागा साधुओ का एक दल आ पहुचा। चार सौ नागा साधु थे—धूर धूमनी, ऊचा कद, खूब

1 काठी राजाओ के दरबार मे जो चारण कविता करते थे, उन्हे 'गढवी' कहते थे।

तगडे, लाल-लाल अगार-सी आखे ।

मोतीचद ने पूछा—"कहा जा रहे हो ?"

"जहा कुछ नौकरी-धधा मिल जाए ।"

"मेरे यहा नौकरी करोगे ?"

"तू बनिया क्या देगा ?"

"और जगह क्या पाओगे ?"

"पन्द्रह-पन्द्रह रुपये ।"

"मै सोलह-सोलह रुपये दूगा ।"

और मोतीचन्द के घर पर चार सौ साधुओ की चौकी बैठ गई ।

दीया जलते ही मोतीचन्द के दरवाजे पर झाला राजा की बैलगाडी पहुच गई । झाला के दूत ने उतर कर द्वार पर दस्तक दी । तब साधुओ को पता चला कि मामला क्या है । एक साधु ने उठ कर दूत को ठिकाने लगा दिया । झाला को जब खबर मिली कि मोती-चन्द सेठ के घर पर साधुओ की फौज पहरा दे रही है, तो वह खुद अपनी सेना लेकर वहा पहुचा । अपने सिपाहियो को उसने हुक्म दिया कि एक भी साधु जिन्दा बच कर न जाने पाए । इतने मे दूसरी ओर शोर मचा—"दौडो, काठी आ पहुचे ।" झाला अपना तीन-चौथाई दल लेकर जिधर से काठी आ रहे थे, उधर दौडा । पच्चीस काठी नदी की रेत मे खडे थे । झाला ने उन्ही पर हमला किया । काठी भाग खडे हुए । झाला के सैनिको ने उनका पीछा किया । झाला खुश हो रहा था कि अब क्या है, इन गिने-गिने काठियो को अभी घेर कर टुकडे-टुकडे कर डालूगा । इतने मे सामने वाले सूखे तालाब से पाच सौ भाले चमक उठे । घमासान युद्ध हुआ । झाला के सभी सैनिक खेत रहे ।

साधु ने दूत को ठिकाने लगा दिया ।

भोकावाला और रामाखाचर हलवद नगर मे पहुचे । उन्होने देखा कि बाकी फौज का सफाया तो साधुओ ने ही कर दिया है । झाला के सिपाहियो की लाशे मोतीचन्द सेठ के घर के आसपास पडी थी । काठी सैनिको ने कहा—"झाला का एक भी सिपाही नही बचा । महल और रनिवास अब हमारे कब्जे मे है ।"

काठी सरदारो ने कहा—"हमे रनिवास से कोई मतलब नही, चाहे वहा लाखो की दौलत क्यो न हो ।"

दोनो शत्रु एक-दूसरे से गले मिले।

काठी सरदार मोतीचन्द सेठ के पास पहुचे। वह घायल पडा कराह रहा था। रामाखाचर ने उसके पैरो की धूल अपने माथे लगा कर कहा—"वणिक्पुत्र की कुलीनता मैने आज देखी। तुम न होते, तो मेरी इज्जत मिट्टी मे मिल जाती।"

मोतीचन्द ने आकाश की ओर हाथ उठा कर कहा—"सब-कुछ उसकी इच्छा के अधीन है।"

*　　　*　　　*　　　*

लडकी को लेकर दोनो काठी सरदार चोटीला वापस आए। गाव की सीमा पर पहुचते ही भोकावाला का दल अलग खडा हो गया। भोकावाला ने कहा—"बेटी के व्याह की रस्म पूरी करके शीघ्र आ जाना। हम रास्ता देख रहे है।"

गीगी ने कहा—"गाडी रोक दो।"

रामा ने पूछा—"क्यो बेटी, बात क्या है ?"

गीगी ने जवाब दिया—"मै डाइन हू, पिताजी !"

रामाखाचर ने पूछा—"क्यो, ऐसा क्यो, बेटी ?"

"यह खून-खराबा क्यो ? सबको कटवा कर मुझे क्या मिलेगा ?" फिर गाडी का पर्दा उलट कर भोकावाला से बोली—"चाचाजी, तो फिर आपने मुझे बचाया ही क्यो था ?"

भोकावाला ने रामाखाचर से कहा—"लो यह तलवार, अपने भतीजे के सिर के बदले मेरा सिर उतार लो।"

रामाखाचर ने कहा—"आपा[1] भोका, ऐसे सात भतीजो के सिर तुमने काटे होते, तो भी आज इसका हिसाब निबट जाता।"

दोनो शत्रु एक-दूसरे से लिपट गए। कसूबा पिया गया। गीगी का व्याह धूमधाम से हुआ और व्याह मे शरीक होने के बाद भोकावाला मुजासर लौटा।

---

1 काठियो मे पुरुषो को 'आपा' और स्त्रियो को 'आई' कह कर पुकारते है।

(3) कन्नड़ लोक-साहित्य

❀

कन्नड साहित्य के प्रसिद्ध लेखक श्रीमास्ती ने अपने प्रदेश के लोक-साहित्य को 'धात्री उपनिषद्' कहा है। 'धात्री उपनिषद्' का अर्थ है वह ज्ञान, जो धरती माता से प्राप्त हो। इसी प्रकार आधुनिक कन्नड साहित्य के पिता, श्री बी० एम० श्रीकंठय्या ने कहा है कि कन्नड का लोक-साहित्य "जनता की वह वाणी है, जो हमारे साहित्य रूपी वृक्ष की जड और उसका तना है। उसी के बल पर और उसी की जीवन-शक्ति के सहारे लिखे हुए साहित्य का वृक्ष फूला और फला है।"

यो तो चक्की के गीत हर लोक-साहित्य मे भरे पडे है, पर कन्नड लोक-साहित्य मे उनका एक विशेष महत्व है। उस महत्व को समझने के लिए यह जान लेना आवश्यक है कि 'विसुवकल्लिन पद' यानी चक्की के गीत को कन्नड लोग 'उदय राग' भी कहते है। 'उदय राग' का अर्थ हुआ वह राग, जो सूर्य के उदय का सदेश सुनाए और जो नए दिन के नए कामो के लिए लोगो को जगाए। स्त्रिया हर गाव और हर घर मे चक्की की घर्र-वर्र मे 'उदय राग' के मीठे स्वर मिला कर पुरुषो को जगाने के लिए जैसे पुकार लगाती है। 'विसुवकल्लिन पद' की एक और विशेषता यह है कि वे लगभग एक ही प्रकार के छद में रचे जाते है, जिन्हें त्रिपदी कहते है। जैसा कि नाम से ही प्रकट है, 'त्रिपदी' तीन-तीन पदो के छद को कहते है, जो कन्नड का सबसे पुराना स्थानीय छद है। 'त्रिपदी' मे न केवल लोक-गीत रचे गए है, बल्कि उसमे महाकवियो ने भी रचनाए की है। इसीलिए त्रिपदी को गायत्री मन्त्र जैसा पवित्र मानते है और कन्नड लोग उसे 'त्रिपदी गायत्री' कहते है। 'विसुवकल्लिन पद' यद्यपि मुख्य रूप से स्त्रियो के गीत है, पर उन्हें विभिन्न अवसरो पर पुरुष भी गाते है।

जैसे 'विसुवकल्लिन पद' मुख्य रूप से स्त्रियो के गाने है, वैसे ही 'कोलाटा पद' खास तौर से पुरुषो के गाने है। 'कोलाटा पद' का अर्थ है, डडो या छडियो के खेल का गाना। वास्तव मे 'कोलाटा पद' एक प्रकार के सामूहिक नाच का हिस्सा होता है। उस नाच मे हर आदमी रग-विरगे कपडे पहने दोनो हाथो मे एक-एक फुट के सुन्दर, चमकीले

रगो मे रगे हुए, डडे लेकर नाचता है। उन ड्डो के सिरो पर पीतल की घटिया और झाले लगी होती हैं। नाचने वाले डडो को दोनो हाथो मे पकडे हुए एक विशेप लय और ताल के साथ एक छोटे-से स्थान मे घूमते और एक-दूसरे के डडो को कभी छूते है, कभी उन पर थाप देते है और कभी ठोका मारते है। पर यह सव कुछ एक ताल और लय के साथ ही होता है। डडो की गति के साथ उनमे लगी घटिया और झाले भी उसी लय और ताल के साथ वजती रहती है और नाचने वाले ऊचे स्वर मे 'कोलाटा पद' गाते रहते है। इनके साथ मिल कर नाचने वालो के पावो मे वधे घुघरु साज को पूरा कर देते है और एक अजीव समा वध जाता है। यहा तक कि अक्सर दर्शक भी मस्त होकर उसी लय और ताल के साथ तालिया वजाने लगते है।

'कोलाटा पद' मे हर प्रकार की वाते होती है—दया-धर्म से लेकर हँसी-खेल तक की वाते। पर कभी-कभी ऐसा भी होता है कि उनमे विल्कुल कोई वात नही होती। केवल एक ही शव्द के भाति-भाति के जोड-तोड, घटाव-वढाव और हेर-फेर को एक लडी मे इस प्रकार गूथ दिया जाता है कि वह एक वातावरण उपस्थित कर देता है। उस वातावरण मे वे अर्थहीन गीत एक विचित्र भाव पैदा कर देते है। वे मानो मन-मन की भावना को साकार कर देते है। 'कोलाटा' या डडे के खेल के सम्वन्ध मे प्रसिद्ध गीत की एक टेक है, जो इस प्रकार के अर्थहीन 'कोलाटा पद' का जीता-जागता नमूना है—

तवानी तानु तदानी नानदन्नानो · · ·।
तदानी तानु तदानी· · · ·।

इसी प्रकार नाच के शुरू मे गणेश वन्दना की टेक है . "डा अमिक्की डा अमिक्की झण ण ण ण।"

पवाडो को कन्नडी लोग 'लावणी' कहते है, जो देश के अन्य भागो की तरह उनके यहा भी बहुत प्रचलित हैं। पवाडो मे इतिहास, राष्ट्र या आसपास की विशेष घटनाओ के लम्बे-लम्बे बहुत ही जानदार वर्णन होते है। टीपू सुल्तान और श्रीरगपट्टम के पतन के विषय मे रचा गया पवाडा तो कन्नड प्रदेश मे रामायण जैसा लोकप्रिय हो गया है। उस पवाडे मे घटनाओ का ऐसा करुणामय वर्णन है कि श्रोताओ की आखो मे बरबस आसू छलक पडते है। पवाडो मे स्वाधीनता-सग्राम की अनेक घटनाओ के भी बडे प्रभाव-शाली वर्णन मिलते है। उनसे आजादी की लड़ाई को खूब प्रोत्साहन मिला।

इस प्रकार के पवाडे ऐसे भी होते है, जिन्हे 'तत्वा' कहते हे। उनमे किसी सत या धर्मात्मा पुरुष की कहानी होती है।

कन्नड लोक-साहित्य का एक और विशेप रूप वह है, जिसे 'वयलाटा' कहते है। 'वयलाटा' मुख्य रूप मे पुराणो की कहानियो के आधार पर रचे हुए लोक-नाटक होते है। उनमे गद्य और पद्य मिला-जुला होता है और उन्हे खुले मैदानो मे मच बना कर खेला जाता है। पात्रो की पोशाक, सजधज और साज-सामान सभी देहाती होते है, पर उनमे एक अनूठी स्थानीयता होती है। 'वयलाटा' की एक और महत्वपूर्ण विशेषता यह होती है कि उसमे बहुत कुछ सस्कृत नाटको के सूत्रधार या ग्रीक नाटको के 'कोरस' (गाकर समझाने वाला दल) की तरह एक 'भागवतर' होता है। वह नाटक को शुरू करता है और अन्त तक अपने वर्णनो तथा अपनी व्याख्याओ द्वारा नाटक का सचालन करता रहता है। 'वयलाटा' के 'यक्षगान' आदि और भी कई नाम है।

कन्नड लोक-कथा—1

सोने का कटोरा

बहुत दिन पहले की बात है। कर्नाटक मे कल्लन केरी नाम का एक गाव था। सभी गावो की तरह इस गाव का भी एक मुखिया था। उसका नाम मल्लन गौड था। जिस इलाके मे यह गाव था, वह सूखे का शिकार था। उसमे कोई नदी नही बहती थी। बेचारे गाव वालो के लिए पानी का सहारा या तो अनिश्चित वर्षा के बादल थे या वित्ता-भर पानी वाले छिछले कुए। गाव मे बराबर सूखा पडता रहता।

ऐसे ही सूखे के दिनो मे एक बार गाव के मुखिया मल्लन गौड ने सूखे के बारे मे सोचना शुरू किया। उसने बहुत सोचा। उसने सोचा कि रोज-रोज की मुसीबत से बचने का बस एक ही उपाय है। वह यह कि चाहे कितना ही पैसा और मेहनत क्यो न लगे, एक बहुत बडा तालाब बनवाया जाए। इस तालाब मे बारहो मास पानी जमा रहे। तभी लोगो की प्यास बुझ सकती है।

सैकड़ो फावडे और गेतिया निकल आई ।

मल्लन के मन मे इस विचार के आते ही घर-घर से सैकडो फावडे और गेतिया निकल आई और तालाव खुदने लगा । लेकिन भाग्य का लिखा टलता नही । वे उसे खोदते ही गए, पर पानी के दर्शन नही हुए । सब कोशिशे बेकार होती मालूम हुई । सबके चेहरो पर निराशा की छाया दिखाई देने लगी । लेकिन मल्लन गौड आसानी से हिम्मत हारने वाला जीव न था ।

ऐसे कठिन अवसरो पर, जैसा कि रिवाज था, गाव के ज्योतिषी को बुलाया जाता था । ज्योतिषी ने अपनी पोथी पर भौंहे गडा दी, फिर जमीन पर पासा फेंक कर बोला—"न तो देवताओ का कोप है, न भूतो का । असल वात यह है कि इसके लिए जो भेट दी जानी चाहिए, वह नही दी गई । पानी ऊपर आए तो कैसे ? धर्म ग्रथो मे लिखा है कि ऐसे अवसर पर गाव का मुखिया अगर अपनी वहू की वलि दे, तो जल की देवी प्रसन्न होगी । तभी तालाव मे मोती जैसा सफेद पानी फूटेगा ।"

मल्लन गौड, उसकी पत्नी और गाव के वडे-वूढे ज्योतिषी की वात भला कैसे टालते । उस जमाने मे यह सभी मानते थे कि ऐसे अवसरो पर व्यक्ति को परिवार की, परिवार को गाव की, और गाव को देश की भलाई के लिए वलिदान को तैयार रहना चाहिए ।

मल्लन गौड की दो वहुए थी । उनमे किसका वलिदान किया जाए ? अगर वडी वहू की वलि दी जाए, तो मुखिया और उनकी पत्नी के वाद घर मे वडे-वूढे का पद कौन सभालेगा, घर और गाव के काम-काज कौन करेगा ? इसलिए तय हुआ कि छोटी वहू भागीरथी की वलि दी जाए । उसका पति मादेव राया फौज मे नौकर था । उस समय वह कही दूर शत्रु से लडने गया हुआ था । पासे फेकें गए । वलि दिए जाने की खबर भागीरथी के भी कान मे पडी, यद्यपि किसी ने जाकर उसे बताया नही ।

वे ज्योतिषी की बात भला कैसे टालते !

दूसरे दिन भागीरथी अपनी सास के पास गई, और अपनी मा को एक बार देख आने की उसने आज्ञा मागी । सास ने कहा—"जल्दी जा, और देख, जल्दी ही वापस आ जाना ।" बलिदान के सम्बन्ध मे एक शब्द भी उसकी सास ने

उससे नही कहा, लेकिन यह बात जल्दी लौट आने की आज्ञा मे निहित थी। भागीरथी भी जानती थी कि वह अपने मा-बाप के घर अन्तिम विदा लेने जा रही है।

सबस पहले बढ़े पिता स भेंट हुई।

नैहर पहुच कर सबसे पहले बूढे पिता से भेट हुई। बिना किसी सूचना के यकायक लडकी का घर आना उनके लिए आश्चर्य की बात थी। लडकी के भोले मुह पर दुख का भाव पहचानने मे उन्हे देर नही लगी। उन्होने पूछा—"मेरी बिटिया, यह क्या, तुम अपने नैहर आई हो, फिर तुम्हारी आखे गीली क्यो है ?"
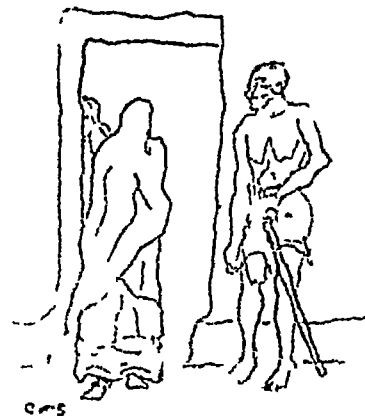
पर दुखभरी खबर सुना कर वह अपने पिता के हृदय को पीडा कैसे पहुचाती ? भागीरथी का विचार था कि बलिदान के लिए चुना जाना सम्मान की बात है। बिरलो को ही ऐसा सम्मान मिलता है। फिर भी उसकी आखो मे आसू तिर आए थे और चेहरे पर उदासी छा गई थी। वह सोचती थी कि जब वह नही रहेगी, तब पति को उसकी याद सताएगी। तब उसे कितना दुख होगा, वह कितने आसू बहाएगा।

भागीरथी ने मन-ही-मन अपने आसू पी लिए और उदासी के लिए यह बहाना बनाया कि उसके ससुर उससे नाराज है, घर से निकाल देना चाहते है।-

"तो बेटी चिन्ता क्यो करती हो। यदि ऐसा हुआ भी, तो मै तुम्हे अपने यहा जगह-जमीन दे दूगा।"—उसके पिता ने धीरज देते हुए कहा।

"उह, हमे नही चाहिए तुम्हारी जमीन।"—भागीरथी ने अपने मन मे कहा।

तभी उसकी मा भीतर से निकल आई। भागीरथी का मुर्झाया चेहरा देख कर उसने भी वही सवाल किया, और उसे भी वही जवाब मिला।

मा ने उसे ढाढस बधाते हुए कहा—"चिन्ता न करो बेटी, मै तुम्हे अपने झूमर दे दूगी।"

"चूल्हे मे जाए तुम्हारे झूमर।"—भागीरथी ने अपने मन मे कहा।

इसके बाद उसकी बडी बहन आ गई। उसने भी वही सवाल किया, और उसे भी वही जवाब मिला।

"अगर वे यही चाहते है, तो करे। तुम्हारे सग-साथ के लिए मै तुम्हे अपने बच्चे दे दूगी।"—भागीरथी की बहन ने कहा।

"तो क्या बच्चो से सभी दुख कट जाते है ?"—भागीरथी ने जैसे चुनौती देते हुए कहा ।

भागीरथी के मन मे गहरी वेदना थी । पर वहा नैहर मे कौन था, जिसे सब कुछ बता कर वह अपना जी हल्का करती ? कुछ बताने से नैहर वालो का दुख और बढ जाता । गाव मे भागीरथी की एक सहेली थी, जिसके साथ वह बचपन मे खेली-कूदी थी । उस सहेली ने भी भागीरथी को दुखी देख कर उसके दुख का कारण पूछा । भागीरथी ने उससे कुछ नही छिपाया । उसकी सहेली ने उसे समझाया कि अगर वे तुम्हारी बलि देना चाहते है, तो तुम खुशी से उसे स्वीकार करो । तुम अब उनकी ही हो, और तुम्हे उनकी इच्छा पर चलना चाहिए ।

भागीरथी जैसे आई थी, वैसे ही अपने सास-ससुर के पास वापस लौट गई । उसने देर नही लगाई ।

ससुराल मे बलि के उत्सव के लिए चुपचाप, बिना किसी विशेष दिखावे के, इस तरह तैयारिया शुरू हुई, जैसे यह कोई रोज की बात हो । लगता था, जैसे सदा की भाति देवी पर पूजा चढाने की बात हो । न कोई हगामा, न चर्चा । अनाज और दाले साफ की गई और कडाहे भर पकवान तैयार किए गए । मीठा मिले हुए दूध मे सेवइया पकाई गई । भागीरथी ने स्नान किया । सोने की एक टोकरी मे पूजा की सामग्री रखी गई । आगे-आगे भागीरथी चली, उसके पीछे और लोग । पूर्ण शान्ति थी । जलदेवी पर बेल-पत्र चढाए गए, भभूत छिडकी गई । उसे नए वस्त्रो से सजा कर सुगन्धित फूलो की माला पहनाई गई । उसके बाद भोज हुआ । फिर अपनी-अपनी चीजे बटोर कर वे भागीरथी के साथ वापस लौट चले ।

हा, बलिदान ? किस रूप मे वह होना चाहिए ? इसका ढग क्या हो ? बलिदान एक महान् कार्य था । इसलिए इसका ढग भी महान् होना चाहिए । इस तरह कि न खून-खराबा हो, न चीख-पुकार । खुद जलदेवी आए और उसे अपनी गोद मे उठा कर ले जाए ।

एक सोने का कटोरा छोड कर बाकी सब चीजे लोग अपने साथ उठा लाए थे । यह कटोरा जान-बूझ कर छोड दिया गया था, मगर छोडा इस तरह गया था, जैसे धोखे मे ही छट गया हो । सब लोग जब आधे रास्ते पर पहुचे, तब उस कटोरे की याद की गई और एक-एक कर सभी स्त्रियो मे कहा गया कि जाकर उस कटोरे को ले आए । परन्तु सबने लाने से इन्कार कर दिया । अन्त मे भागीरथी की बारी आई । भागीरथी ने इशारा

समझ लिया, और लम्बे-लम्बे डग भरती हुई वापस गई। उसके चेहरे पर न तो दुख का भाव था, न उसकी आखो मे आसू थे। जब भागीरथी वहा पहुची, तो उसने देखा कि दोपहर की धूप मे वह कटोरा तालाब के बीचोबीच पडा चमक रहा है।

नीचे उतर कर उसने कटोरा उठा लिया, और घर की ओर मुडी। ज्यो ही उसने ऊपर चढने के लिए तालाब की पहली सीढी पर पैर रखा, तभी पानी की मधुर आवाज सुनाई दी। तालाब मे पानी का एक सोता फूट पडा था, और पानी तेजी से चढ रहा था। पानी का स्वर इतना कोमल और मधुर था, जैसे सगीत की लहरे। उसके पैर अभी पहली सीढी पर थे कि पानी उन्हे छूने लगा। भागीरथी ने दूसरी सीढी पर पैर रखा। उसके पैर पानी मे डूब गए। तीसरी सीढी पर घुटनो और चौथी सीढी पर कमर तक पानी भर आया। वह पाचवी सीढी पर चढी ही थी कि तालाब पानी से लबालब भर गया। जल-देवी ने प्रसन्नतापूर्वक बलि स्वीकार कर ली।

उसने कटोरा उठा लिया।

उधर लडाई के मैदान मे भागीरथी के पति मादेव राया ने कई अशुभ स्वप्न देखे। उसने देखा कि उसका अगरखा जल गया है, उसकी बेत के दो टुकडे हो गए है, गठरिया फट रही है और उनका सामान इधर-उधर बिखर रहा है। वे स्वप्न अवश्य किसी दुर्घटना के सूचक थे। इसलिए वह तुरन्त घोडे की नगी पीठ पर सवार हुआ और घर की ओर दौड पडा। उसके पास इतना समय न था कि घोडे पर काठी रख पाता।

उसके माता-पिता ने उसकी अगवानी मे घर की स्त्रियो को प्रसन्नता से पुकारा—"गगव्वा, हाथ-मुह धोने के लिए पानी लाओ। चलो, जल्दी करो।"

लडके ने गुस्से मे कहा—"मेरी पत्नी भागीरथी कहा गई, जो तुम लोग गगव्वा और गौरव्वा से मेरे लिए पानी मगा रहे हो?"

बेचारा मल्लन गौड क्या उत्तर दे? अपनी पुत्रवधू को गवा कर क्या वह कुछ खुश था? क्या यह दुख खुद उसका दुख नही था? पर वह बलिदान को रोक ही कैसे सकता था? पूरे समाज की भलाई के वास्ते देवताओ की यही इच्छा थी। पर वह अपने बेटे,

वह घोडे पर सवार हुआ और भागीरथी के नैहर की ओर चल पडा ।

भागीरथी के पति को यह सूचना किस तरह दे ? वह झूठ बोला—"बेटा, वह अपने नैहर गई है ।"

क्षण भर भी न गवा कर मादेव राया घोडे पर सवार हुआ और भागीरथी के नैहर की ओर चल पडा । वहा भी यही दृश्य दोहराया गया । वे लोग जान चुके थे कि क्या हो चुका है । पर उसे बताए कैसे ? उन्होंने चुपचाप उसे भागीरथी की सहेली के पास भेज दिया । वहा जाकर उसको सच्ची बात मालूम हुई । मादेव राया आदर्श पत्नी का आदर्श पति था । अगर चाहता, तो घर लौट कर मा-बाप की अच्छी खबर लेता । लेकिन खुद भागीरथी ने बलि का विरोध नही किया था, इसलिए उसने अपने माता-पिता से कुछ न कहना ही ठीक समझा । वह सीधा तालाब पर पहुचा—वह तालाब, जिसने उसकी पत्नी की बलि लेकर समूचे गाव को नया जीवन प्रदान किया था । उसके मुह से एक आह निकली और आखो से आसू बह चले । वह हिचकिया लेता हुआ बोला—"ओ बीन्दडी, मेरे जीवन की अनमोल जोत, तू मुझे छोड कर कहा चली गई ? तीन सौ के मैने तेरे लिए मोतियो के ये जडाऊ कगन लिए थे । तू बिना इन्हे पहने कहा चली गई ?" वह बहुत रोया, बहुत बिलखा । लेकिन फिर शान्त हो गया । इसके बाद वह एक बार फिर अपने घोड़े पर सवार हुआ, और घोडे को उसने तालाब मे दौडा दिया ।

(4) जर्मन लोक-साहित्य

जर्मनी लोक-साहित्य का धनी देश है। उसके भडार मे परियो की कहानिया है, गीत है, कथाए और गाथाए है। यह सब बीते युग की विरासत है, अलग-अलग युगो मे और अलग-अलग अवसरो पर इनका जन्म हुआ है।

पहले परियो की कथाओ की बात को ही ले। यूरोप मे पहले परियो की कथाए नही होती थी। उनका चलन केवल पूर्वी दुनिया मे था। शुरू-शुरू मे जर्मेनिक जातियो के कबीले खानाबदोश थे। वे घूमते-फिरते पूर्व के देशो का भी चक्कर लगा आते थे। पूर्व के लोगो से ही उन्होने परियो की कथाए सीखी। आज भी दक्षिण जर्मनी की परियो की कथाओ मे पूर्व के चिह्न देखे जा सकते है। उनमे स्लाव तत्व मिलते है। इसका मतलब यह कि जर्मेनिक जातियो के कबीले रूसी, बुल्गार, पोल, चेको, स्लोवाक, आदि स्लाव जातियो के सम्पर्क मे आए होगे। इन कथाओ मे रोमनिक तत्व भी है। इसका मतलब यह कि वे जिप्सी आदि खानाबदोश जातियो के सम्पर्क मे भी आए होगे।

दक्षिण की तरह उत्तर जर्मनी की परियो की कथाओ मे भी उत्तरी देशो अर्थात् नार्वे, स्वीडन, आइसलैण्ड, आदि का प्रभाव दिखाई देता है।

जर्मन लोक-साहित्य मे एक चीज होती है, 'सागा'। यह असम की बुरजी की तरह की चीज है। 'सागा' गद्य में होता है। उसमें इतिहास और कल्पना दोनो के रग घुल-मिल कर एक हुए रहते है। 'सागा' उस युग की उपज है, जब जर्मेनिक जातिया दक्षिणी, दक्षिण-पूर्वी और पश्चिमी यूरोप मे फैल कर बसने लगी थी। यह ईसवी सन् के शुरू की बात है। इस युग में इन जातियो को बडे सकटो और लडाइयो का सामना करना पडा था। इन्ही लडाइयो के वीरो के कारनामे 'सागा' साहित्य मे मिलते है। इनमे से कुछ—जैसे,

'जीकफ्रीत की गाथा', 'दीत्रिख फ़ान बर्न की गाथा'—पूर्वी और पश्चिमी जर्मनी की तरह नार्वे, स्वीडन, आदि अन्य जर्मेनिक जातियो मे भी मिलती है।

यही बात दन्तकथाओ के बारे मे है। वे भी इसी तरह एक कबीले से दूसरे कबीले मे फैली। नए कबीले मे पहुचने पर उनमे नई बाते और नई सजावटे जुड जाती थी। इस तरह उनका रूप-रग नए कबीले के अनुकूल बन जाता था। लेकिन उनके भीतर की बुनियादी बात—जैसे, बाप-बेटे के बीच घातक युद्ध—वैसी ही बनी रहती।

परियो की कहानिया और गाथाए तो बहुत पुरानी है। वे जर्मन इतिहास के आदिकाल से ही मिलने लगती हैं। पर लोक-साहित्य मे एक ऐसी चीज भी है, जो काफी बाद की उपज है। वह है 'लोक-गद्य'। यह जर्मनो की खास अपनी चीज है। इसकी शुरुआत पन्द्रहवी-सोलहवी सदी से होती है। उन दिनो सौदागरो मे उपरले मध्यवर्ग का, एक अलग वर्ग के रूप मे, उदय हो रहा था। इस वर्ग के लोग महारथियो के युद्ध की कहानिया कहने-सुनने मे बडा रस लेते थे। जर्मन इतिहास मे महारथियो के इस युग को 'कर्मोदार युग' कहते है। 'कर्मोदार युग' के महारथी त्याग, सेवा, भलाई और मुसीबतो से लोहा लेने के अनोखे कामो के लिए प्रसिद्ध हैं। उनकी कहानिया गद्य के 'महापुराण-काव्य' मानी जाती है। इनकी विषय-वस्तु अक्सर फ्रास की उपज होती थी। फ्रास से भी पहले लातीनी दन्तकथाओ या प्राचीन परम्पराओ मे इनका सूत्र मिल सकता है।

इस तरह हम देखते है कि जर्मन लोक-साहित्य मे मिलने वाले तत्व आम तोर से जर्मनो तक ही सीमित नही है। वे दूसरी सभी जर्मेनिक जातियो—जैसे अफ्रीकास, अमरीका, अग्रेजी, आइसलैण्डी, ओलदाज, डेनी, नार्वेई, स्काट, स्विस, आदि—मे भी पाए जाते है। फिर भी उनमे से हरेक तत्व का एक अपना जातीय ढग होता है, कारण कि एक जाति से दूसरी जाति मे पहुचने पर वे हमेशा उस जाति के रग-रूप मे ढल जाते है। फिर, हर पीढी मे भी इनका रूप कुछ-न-कुछ बदलता रहता है।

पहले लोगो को यह विश्वास था कि लोक-साहित्य को जनता रचती है। इसीलिए इसके रचने वालो के नाम का पता नही चलता। लेकिन नई खोजो से यह विश्वास सही नही ठहरता। इन खोजो ने सिद्ध कर दिया है कि वीर-गाथाओ, परियो की कथाओ, लोक-गीतो, आदि की रचना दो तरह से हुई है। या तो उन्हे अज्ञात कवियों ने रचा है, या जनता ने महान् कृतियो को कुछ अदल-बदल कर अपनी समझ के अनुरूप बना लिया है। इस हेर-फेर मे उनका रूप कुछ सरल तो जरूर हुआ है, पर वे मूल कला के अपने ऊंचे दर्जे से गिर भी गई है।

जर्मन लोक-साहित्य का सकलन और सम्पादन डेढ सो वर्ष पहले शुरू हुआ। यह काम वडे-वड़े भापाविदो और पडितो ने किया। इन लोगो का विश्वास वहुत कुछ पुराना था। वह यह कि सारा लोक-साहित्य सीधे जनता से निकला है। इस विश्वास को लेकर उन्होंने अपना एक दर्शन भी खडा कर लिया। उनका कहना था कि आम जनता की धारणाए और भावनाए अपने विशुद्ध रूप मे लोक-साहित्य मे ही मिलती हैं। इसलिए उन्होने लोक-साहित्य को पुनीत माना और आम जनता के 'विशुद्ध रूप' के लिए एक खास नाम 'लोकात्मा' भी गढ लिया। नई खोजो ने अव इस विश्वास को वदल दिया है।

इसका यह मतलव नही कि उन जर्मन पडितो की देन का मोल कुछ कम था। हमे यह नही भूलना चाहिए कि उन्होने, अपने भ्रान्त विश्वासो के वावजूद, जर्मन लोक-साहित्य को नष्ट होने से बचाया। आज इस सरल लोक-साहित्य मे रस लेने वालो की कोई कमी नही है। अगर उन पडितो ने अपना सारा जीवन खपा कर लोक-साहित्य की साधना न की होती, तो आज हम इस अनमोल निधि से वचित रह जाते।

लोक-साहित्य की ओर सर्वसाधारण का ध्यान आकर्षित करने वाले व्यक्ति थे दर्शनशास्त्री जे० गे० हेरदेर (1744--1803 ई०)। इसके बाद, तथाकथित 'रोमानी काल' मे, आखिम फान आरनिम और क्लीमिस फान ब्रेतानो नाम के कवियो ने जर्मन लोक-गीतो के सबसे सुन्दर और सबसे विस्तृत सकलन का सम्पादन किया। 'नौजवान का जादुई सिंघा' नाम का यह सकलन सन् 1806-7 ई० मे प्रकाशित हुआ था। सन् 1807 ई० मे जे० ग्वेर्रेस नाम के लेखक ने 'जर्मन लोक-गद्य' की पुस्तके प्रकाशित की थी। लेकिन जो सकलन दुनिया मे सबसे अधिक प्रसिद्ध हुआ, उसका सकलन याकव ग्रिम और विल्हेल्म ग्रिम नाम के दो भाइयो ने किया था। यह सकलन सन् 1812 ई० और उसके वाद के वर्षो मे कई खडो मे प्रकाशित हुआ। यह जर्मन परी-कथाओ का सकलन है।

'रग-रगीला पिपहीवाला' वहुत पुरानी जर्मन लोक-कथा है। आज भी हेमलिन शहर का नाम लेते ही जर्मनी के बच्चे-बच्चे के मन मे पिपहीवाले की याद उभर आती है। कुछ लोगो का कहना है कि इसमे कभी वच्चो मे फैली किसी महामारी की कथा आवद्ध है। यह कथा जर्मनी के वाहर भी खूब फैली। अग्रेजी के एक वहुत वडे कवि ब्राउनिंग ने तो इस पर एक लम्वी और अत्यन्त लोकप्रिय कविता की रचना की है। अग्रेजी के जरिए भारत मे भी उसका काफी अच्छा प्रचार हो चुका है।

रंग-रंगीला पिपहीवाला

बहुत पहले की बात है। जर्मनी के हेमलिन शहर पर चूहो की फौज ने धावा किया। चूहे भी ऐसे कि न कभी हुए और न कभी होगे। वडे-वडे, काले-काले। दिन-दहाडे गलियो मे वडी दिलेरी से दौडते-फिरते वे चप्पे-चप्पे पर छा गए।

सुवह जब लोग कपडे पहनते, तो देखते कि कोट-पतलून मे चूहे किलविला रहे है, जेबो मे फुदक रहे है, जूतो मे घरौदा वनाए है। भूख लगती, तो लोग घर भर मे खाने को खोजते, पर खाना कहा? उसे तो वे पेटू चूहे पहले ही चट कर चुके होते। तहखानो से लेकर अटारी तक कही एक दाना न वचा होता। रात को और भी आफत, अधेरा होते ही चूहे अपने काम पर जुट जाते। अगल और बगल, खाट के नीचे और ऊपर, आले-दीवालो और कोठे-अटारी पर वह खडबड मचाते कि बहरे-से-वहरा आदमी भी घडी भर पलक न झपका सकता।

न बिल्लियो-कुत्तो से कुछ बना, न जालो-माहुरो से, टोने-टोटको और सतो की मन्नतो से भी कुछ न हुआ।

लोग जितने चूहे पकडते, उतने ही और आ धमकते, बल्कि उससे भी अधिक। लेकिन एक दिन एक नई बात हुई। शहर मे एक अजनबी आदमी आया। अजीब-सा चेहरा। वह पिपही बजाता और गीत गाता था।

गीत की टेक थी

चूहो का मै बंदीकार,
मै चूहो का बंदीकार।
बच रहने वाले देखेगे,
कि मेरे पीछे रेगेगे
सुन बोल मेरा वे नाचेगे
आएगी खूब बहार।

चूहो के मार नाक मे दम था।

अजीव लम्ब-तडग डीलडौल और भोडा नाक-नक्शा। रूखा-रूखा और तावे जैसा रग। नाक टेढी और मूछे चूहे की दुम जैसी। आखे वडी और पीली-पीली। निगाह पैनी और मखौल उडाती-सी। सिर पर नमदे का एक वडा-सा टोप और उसमे खुसा हुआ मुर्गे का सिंदूरी पख। वदन पर एक हरी सदरी, जो चमडे की पेटी से कसी थी। टागो मे लाल पतलून, पैरो में चप्पले, जो तस्मो से कसी थी। तस्मे चमडे के थे, जो पिंडलियो को कसते हुए घुटनो तक चले गए थे, ठीक वनजारो की तरह। वस, यही रूप था उसका, जिसमे उसे आज भी देखा जा सकता है। हेमलिन के ईसाई महामठ की खिडकी पर वना चित्र अव भी उसकी याद दिलाता है।

सो, वह महल के सामने वडे वाजार वाले चौक में रुका और गिरजे की ओर पीठ किए अपना सगीत टेरने लगा। वह गा रहा था

वच रहने वाले देखेंगे,
कि मेरे पीछे रेंगेंगे
सुन वोल मेरा वे नाचेंगे
आएगी खूव वहार!

नगर-सभा अभी-अभी जुटी थी। उसे फिर इस सवाल पर सोचना था कि चूहो की इस वला का क्या किया जाए। नगर को इसकी चपेट से वचाने के लिए किसी से कुछ करते-धरते नही वन रहा था। पिपहीवाले अजनवी ने सभासदो के पास खबर भिजवाई कि अगर भरपूर इनाम मिले, तो मै रात पडने से पहले ही आप लोगो को चूहो की इस वला से छुटकारा दिला दूगा। एक भी चूहा वाकी नही वचेगा।

शहर वालो ने सुना, तो एक साथ चिल्ला उठे—"अरे, तव तो यह कोई जादूगर है, जादूगर। हमे इससे वचना चाहिए!"

नगर-सभा का मुखिया अन्य सवसे चतुर माना जाता था। उसने शहर वालो को ढाढस वधाया। वह वोला—"जादूगर हो या कुछ हो, अगर वह पिपहीवाला सच वोलता है, तो यह वात पक्की समझो कि ये भयकर उत्पाती जीव भी इसी ने भेजे है, और अव हमे छुटकारा दिला कर पैसे वनाना चाहता है। खैर, हमे भी अव चेतना चाहिए और

एक ग्रोशेन फी दुम पर सौदा तय हुआ ।

शैतान को खुद उसके ही जाल मे फसा कर पकड लेना चाहिए। यह काम आप लोग मुझ पर छोड दे ।"

शहर वालो ने एक-दूसरे से कहा—"हा, हा, यह काम इन पर छोड देना चाहिए।"

पिपहीवाला उनके सामने हाजिर किया गया । उसने कहा—"बस, फी दुम एक ग्रोशेन[1] मिल जाए, तो रात होते-न-होते मे हेमलिन के तमाम चूहो को गायव कर दूगा ।"

"एक ग्रोशेन फी दुम !"—शहर वाले चिल्ला उठे—"अरे, तव तो यह कुल मिला कर करोडों समेट ले जाएगा ।

नगर-सभा के मुखिया ने अपनी गर्दन हिलाई और पिपहीवाले से कहा—"चलो, सौदा पक्का ! अव जुट जाओ । फी दुम एक ग्रोशेन के हिसाव से भुगतान कर दिया जाएगा । ठीक ?"

पिपहीवाले ने सबको सुनाते हुए कहा—"साझ होने पर, चाद के उगते ही, काम शुरू हो जाएगा । नगरवासी उस घडी अपने घरो मे ही रहे । गली-कूचे लोगो से खाली रहने चाहिए । जो तमाशा देखना चाहे, वे अपनी-अपनी खिडकियो पर खडे हो जाए । सच, चूहो का जुलूस किसी भी तमाशे से कम नही होगा ।"

नगर-सभा के मुखिया ने कपट-भरे अन्दाज मे कहा—"यह तो मुखिया पर छोडिए ।" हेमलिन के भले लोगों ने भी दोहराया :

"हा, इसे मुखिया पर छोड दीजिए ।"

रात के नौ बजे के आसपास पिपहीवाला फिर चौक वाजार में दिखाई पडा । पहले की तरह ही फिर उसने गिरजे की ओर पीठ की और चाद के उगते ही उसकी पिपही के स्वर गूज उठे—त्रारीरा त्रारी   त्रारीरा त्रारी ......

स्वर पहले तो वडा ही धीमा था, जैसे कोई प्यार से हल्के-हल्के सहला रहा हो । फिर उसमें थोडी जान पडी, और फिर पडती ही गई । थोड़ी देर मे पिपही का स्वर चारो ओर गूजने लगा और ऐसा लगने लगा, मानो आवाज तीर की तरह दसो दिशाओं

---

[1] ग्रोशेन पुराने ज़माने का जर्मन सिक्का होता था, जो आठ से वारह नए पैसो तक का पडता था ।

को भेदती-सनसनाती हुई भागी चली जा रही हो। शहर के दूर-दूर के गली-कूचो, कोनो-अन्तरो, जंगल-वीरानो का चप्पा-चप्पा उससे बिंधा जा रहा था।

और देखते-ही-देखते तमाशा शुरू हो गया। तहखानो की तलियो से, अटारियो की मुडेरो और आराइशो के नीचे से, घरो के ओने-कोनो और दीवारो की दरारो से चूहे-ही-चूहे निकल पडे। हर चूहा भाग निकलने की राह ढूढता और खिडकी, दरवाजे, रोशनदान, जहा से भी राह मिलती, वही से छलाग लगा कर सडक पर कूद पडता, और सडक पर कूदते ही नाचना शुरू कर देता—ता थेइ, ता थेइ! नाचते-कूदते चूहे पात-पर-पात बाधे सनसनाते हुए नगर महल की ओर दौड़ पडे। चूहे इस प्रकार एक-दूसरे से सटे थे कि तिल धरने को जगह न थी।

चौक चूहो से खचाखच भर गया। पिपहीवाले ने मुंह फेरा और अपनी पिपही को उसी तेजी से बजाना जारी रखा। फिर नदी की ओर बढ चला, जो हेमलिन की शहर-पनाह की फसील से सटी बहती थी।

नदी किनारे पहुच उसने मुड कर देखा। तमाम चूहे पीछे-पीछे चले आ रहे थे।

उसने अपनी एक उंगली से ठीक मझधार की ओर इशारा किया और कहा—"रेंग-रेंग, झपाक। फुदक-फुदक, छपाक!"

अब मझधार का हाल यह था कि वहा एक भयकर नाचता हुआ भवर पानी को नीचे पाताल की ओर ढकेल रहा था, और चूहे थे कि 'फुदक-फुदक छपाक' सीधे नदी में छलाग लगाते और तैरते हुए भवर में पहुच कर लापता हो जाते।

यह सिलसिला आधी रात तक लगातार चलता रहा। आखिर, जब तमाम चूहे भवर में लापता हो गए, तब एक बडा-सा चूहा, जो बुढापे के मारे जुल-जुल हो रहा था, मुश्किल से घिसटता हुआ आया और किनारे पर आकर रुक गया। यह चूहो के उस पूरे गिरोह का राजा था।

पिपहीवाले ने पूछा—"क्यो यार धौले मिया, सभी आ गए ना?"

धौला मिया ने जवाब दिया—"हां, सभी आ चुके।"

"और सब मिल कर कुल कितने हुए?"

"नौ लाख नब्बे हजार नौ सौ निन्यानवे!"

"खूब अच्छी तरह से गिन-गिना लिया है ना?"

"हा, हा, खूब अच्छी तरह से गिन लिया है।"

"तो फिर जाओ, और जहा सब-गए है, तुम भी वही पहुचो। फिर मिलेंगे। अब छुट्टी दो।"

वह बूढा धौला चूहा भी छलाग मार कर नदी मे कूदा और तैरता हुआ भवर तक पहुच कर लापता हो गया।

इस तरह अपना काम पूरा कर लेने के बाद पिपहीवाला अपनी सराय मे जाकर पैर पसार कर सो रहा, और हेमलिन शहर के निवासी भी पूरे तीन महीनो के बाद आज पहली बार शान्ति के साथ रात बिता सके।

दूसरे दिन सुबह सवेरे कोई नौ बजे के लगभग पिपहीवाला नगर महल के सामने आ पहुचा। वहा नगर-सभा उसकी बाट जोह रही थी।

उसने सभासदो से कहा—"आपके शहर के तमाम चूहो ने कल नदी मे छलाग लगा ली और मेरी ओर से इस बात को पक्का मानिए कि अब एक भी चूहा फिर कभी नही लौट कर आएगा। उनकी तादाद नौ लाख नब्बे हजार नौ सौ निन्यानवे थी। न एक कम, न एक ज्यादा, और हमारे सौदे की दर थी फी दुम एक ग्रोशेन। अब कृपा कर मेरा हिसाब चुका दीजिए।

"तो आओ, पहले दुमो का हिसाब कर लिया जाए। एक ग्रोशेन फी दुम का मतलब हुआ एक दुम फी ग्रोशेन! सो लाओ, पहले दुमो को गिन ले। कहा है दुमे?"

इस बेईमानी की पिपहीवाले को कोई आशका न थी। मारे गुस्से के उसका चेहरा लाल पड गया और उसकी आखो से आग बरसने लगी।

"दुम!"—वह चीख उठा—"दुमो की पडी है तुम्हे, तो जाओ नदी में से ढूढ लाओ।"

नगर-सभा के मुखिया ने जवाब दिया—"अच्छा, तो इसका मतलब यही हुआ न कि तुम अपने सौदे की शर्तो को मानने से इन्कार करते हो? हम चाहे तो तुम्हें एक पाई भी न दे। जब तक शर्त पूरी न हो, हम भुगतान करने से साफ-साफ इन्कार कर सकते है। लेकिन जाने दो। तुम हमारे काम आए हो, तो हम भी तुम्हे बिना कोई इनाम दिए, यों ही खाली हाथ नही लौटाएगे।" और इतना कह कर उसने कोई पचास तेलर (लगभग ढाई सौ रुपये) देने का रुक्का पेश किया।

गर्व से अकड कर पिपहीवाले ने जवाब दिया—"रख लो अपना इनाम। तुम नही चुकाओगे मेरी मजूरी, तो तुम्हारी आस-औलाद, तुम्हारी आने वाली पीढिया, चुकाएगी। कही जा नही सकती मेरी कमाई।" इतना कह कर उसने अपने टोप को नीचे की ओर

सरकाया, अपनी आखो को उसकी ओट मे करके सनसनाता हुआ नगर महल से वाहर निकला और शहर के किसी भी प्राणी से जरा भी वोले-वताए विना शहर छोड कर चला गया।

पिपहीवाला गर्व से बोला—"रख लो अपना इनाम"

जव हेमलिन वालो ने सुना कि उन्हे मुफ्त मे चूहो से छुटकारा मिल गया, तो वे फूले न समाए। उन्होने खुशी से तालिया वजाई और पिपहीवाले की खूव हँसी उडाई। वे कहने लगे कि बुद्धू राम खूव फसे अपने ही जाल मे। लेकिन जिस वात पर उन्हे ज्यादा हँसी आई, वह थी पिपहीवाले की यह धमकी कि मै तुम्हारी आस-औलाद से वसूलूगा! हा हा हा! वाह, लेनदार हो, तो ऐसा हो! भगवान् करे, आगे भी जो लेनदार मिले, ऐसे ही मिले।
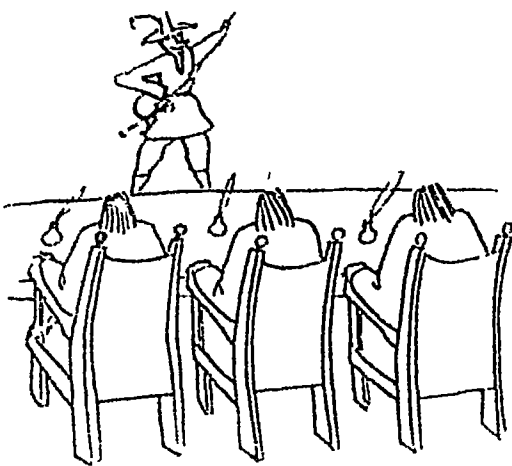
अगले दिन इतवार था। तमाम हेमलिन वाले सज-धज कर खुश-खुश गिरजे गए। रास्ते भर इस विचार मे मस्त रहे कि आखिर अब ऐसा भोजन मिलेगा, जो चूहो का जूठन-कुतरन न हो। उन्हे जरा भी आशका न थी कि घर लौटने पर उन्हे कितने भीषण आश्चर्य का सामना करना पडेगा। लौट कर आए, तो देखते क्या है कि शहर भर के बच्चो का कही कोई अता-पता नही है। शहर के सारे वच्चे जाने कहा लापता हो गए थे।

गली-गली और कूचा-कूचा एक ही पुकार से गूज उठे—"मेरा बच्चा! हाय, मेरा वच्चा कहा गया?"

और तभी नगर के पूरबी फाटक से, तीन छोटे-छोटे लडके लौटते दिखाई दिए। तीनो सिर धुन-धुन कर रो-पीट रहे थे, और जोर-जोर से चीख-चिल्ला रहे थे। रो-रोकर जो कुछ उन बच्चो ने वताया, वह यो है

जिस समय शहर भर के बच्चो के मा-बाप गिरजा गए हुए थे, ठीक उसी समय शहर मे एक अद्भुत सगीत गूज उठा। सब नन्हे-नन्हे बच्चे-बच्चिया उस सगीत से खिचे हुए वाज़ार वाले वडे चौक की ओर चले। वहा पहुच कर उन्होने देखा कि वही पिपहीवाला अपनी पिपही बजा रहा है। फिर उस पिपहीवाले ने बड़ी तेजी से चलना शुरू

कर दिया और तमाम बच्चे उसके पीछे-पीछे हो लिए। वह आगे-आगे अपना बाजा बजाता बढा जा रहा था और बच्चे बाजे की धुन पर नाचते-गाते उसके पीछे-पीछे दौडे जा रहे थे। इसी तरह नाचते-गाते वे उस पहाड की तलहटी मे पहुचे, जो हेमलिन मे घुसते ही दिखाई देता है। जैसे ही बच्चे पहाड के पास पहुचे, वह पहाड़ जरा-सा खुल गया। पहाड मे खुले उस दरवाजे मे वह पिपहीवाला घुस गया। हेमलिन के सारे बच्चे भी उसके साथ-साथ उसमे घुस गए। इसके बाद वह दरवाजा बन्द हो गया।

तमाम बच्चे उसके पीछे हो लिए।

बस, ये तीन बच्चे थे, जो बाहर रह गए। इनका छूट जाना भी एक चमत्कार ही था। इन तीनो मे एक बच्चा तो लगडा था। इसलिए वह औरो जितनी तेजी से नही दौड पाया था। दूसरा घर से निकलते समय हडबडी मे एक ही पाव मे जूता पहन सका था। नगे पाव मे किसी बडे पत्थर से ठेस लगी थी और दुखते पाव से चलना उसके लिए मुश्किल हो गया था। तीसरा बच्चा पहुचा तो समय पर ही था, पर औरो के साथ पहाड मे घुसने की हडबडी मे वह इतनी जोर से एक चट्टान से टकराया कि ठीक उस समय जब कि दरवाजा बन्द हो रहा था, पछाड खाकर परे जा गिरा।

इस कहानी को सुन खोए हुए बच्चो के मा-बाप और भी जोर-जोर से रोने-कलपने और सिर धुन-धुन कर विलाप करने लगे। फावडे-बेलचे लिए वे पहाड की ओर दौड़े और गई साझ तक चट्टान के उस मुह को ढूढते रहे, जिसने उनके बच्चो को निगल लिया था। जब कुछ पता न चला और रात घिर आई, तो वे हार कर अपने घर लौट आए।

लेकिन शहर मे जो आदमी सबसे अधिक दुखी था, वह था नगर-सभा का मुखिया। उसके तीन छोटे-छोटे लड़के और दो प्यारी नन्ही-मुन्नी लड़किया खो गई थी। इसके

अलावा सारे हेमलिन वाले भी अब उसे ही कोस रहे थे। वे यह भूल गए कि अभी एक दिन पहले तक वे सब उसकी हा-मे-हा मिला रहे थे।

उन बच्चो का फिर क्या हुआ, जो पहाड मे खो गए थे ?

उनके मा-बाप को आशा थी कि वे मरे नही होगे। पिपहीवाला जरूर पहाड से बाहर निकला होगा और बच्चो को भी अपने साथ अपने देश ले गया होगा। इसीलिए कई वर्षो तक वे उन बच्चो को ढूढ निकालने के लिए हर देश मे अपने आदमी भेजते रहे। पर उन बेचारे नन्हे-मुन्नो का कही अता-पता नही मिला।

फावडे-बेलचे लिए लोग पहाड की ओर दौड़े।

इस घटना के कोई डेढ सौ साल बाद, जब कि पुरानी पीढी का कोई भी आदमी नही बचा था, खोए हुए बच्चो के मा-बाप और भाई-बहनो मे से कोई भी जीवित नही रह गया था, एक दिन साझ को नगर के कुछ सौदागर पूरब की मडियो से लौटते हुए हेमलिन आए। उन्होने कहा कि उन्हे शहर वालो से कुछ बाते करनी है। उन्होने बताया कि हगेरी का देश पार करते समय उन्होने कुछ दिन आर्थाल यानी त्रासिवानिया नाम के पहाडी इलाके में बिताए। उस इलाके के लोग केवल जर्मन भाषा ही बोलते थे, जब कि उसके चारो ओर हगेरी भाषा बोली जाती थी। वहा के लोगो ने उनसे कहा कि वे जर्मनी से आए है, लेकिन उन्हे यह नही मालूम कि वे उस अजनबी देश मे कैसे पहुचे।

और फिर उन जैमनी सौदागरो ने कहा—"अब तो यह बात बिल्कुल साफ है कि वे लोग हेमलिन के खोए बच्चो ही की सन्तान थे।"

हेमलिन वालो ने इस पर कोई सन्देह नही किया। उस दिन से वे इस बात को बिल्कुल निश्चित मानते है कि हगेरी के आर्थाली उनके अपने ही देश-भाई है, जिनके पुरखो को वह पिपहीवाला बचपन मे वहा ले गया था। इस पर किसी को विश्वास हो या न हो, पर दुनिया मे ऐसी बातो की क्या कमी है, जिन पर विश्वास करना इससे भी अधिक कठिन है।

जीव, जन्तु और पौधे

(1)

जुगनू

गर्मियो की रात मे जुगनू को इधर-उधर उडते और दमकते देख कर खुशी होती है। ऐसा लगता है, मानो आसमान के तारे जमीन पर उतर आए हो। दक्षिण अमरीका के गर्म भागो के निवासी किसी लकडी या छडी पर बहुत-से जुगनू गोद से चिपका कर अन्धेरे रास्तो को रोशन करते है। उनकी स्त्रिया शृगार के लिए जुगनू अपने बालो मे लगाती है।

अब तक कुल मिला कर जुगनू की 1,100 किस्मो का पता चला है। जुगनू छोटे कीडो मे औसत कद के होते है। उनका शरीर लम्बूतरा और चपटा होता है। उनके अगले पर पतले मखमली स्याह या भूरे रग के होते है और जिस्म के साथ मजबूती से जुडे हुए नही होते। जुगनू की कुछ ऐसी किस्मे भी होती है, जिनमे मादा के पर नही होते। देखने मे वे लारवो की तरह मालूम होती है। वे चमकदार और बिना चमक वाली, दोनो प्रकार की होती है। इसके विरुद्ध नर जुगनू के पर अवश्य होते है और वह उड सकता है। लेकिन रोशनी या तो उसमे बिल्कुल फीकी होती है या होती ही नही। जुगनू के सिर मे दो पतले धागे जैसे मुलायम रेशे निकले होते है, जिनसे वह दूसरी चीजो को छूकर जानता-पहचानता है। उसके बदन के निचले भाग मे पर और पैर होते है। वह भाग बहुत मुलायम होता है और उसके ऊपर एक खोल-सा होता है, जो जुगनू के सिर और पखो के बाहरी भागो को करीब-करीब ढके रहता है।

जुगनू दिन के समय घास-फूस मे छिपे रहते है। वे नमदार जगहो मे उगने वाले पौधो के साये मे अपने अडे देते है, जिनमे से लारवे निकलते है। जुगनू का सिर छोटा होता है, मगर जबडे काफी मजबूत होते है, जिनसे वे घोघो, केचुओ और वनस्पति के कीडो को खाते है। जुगनू के लारवे शक्ल-सूरत मे बडे जुगनू की तरह नही होते। वे कुछ समय बाद बडे जुगनू की शक्ल मे आते है। जुगनू की बहुत-सी जातिया एक साल में एक बार ही बच्चे देती है।
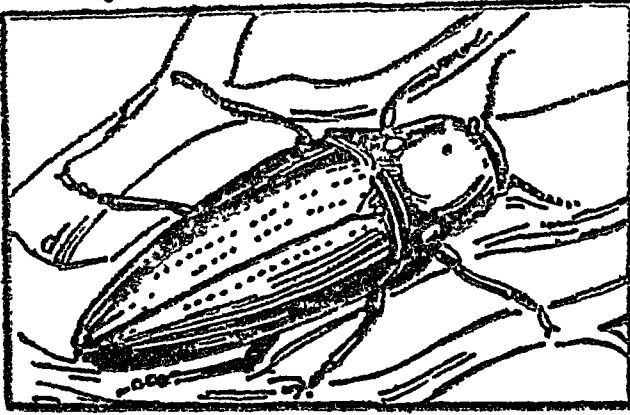
ब्राजील का जुगनू

अब यह बात निश्चित रूप से मालूम हो चुकी है कि जुगनू की रोशनी कही बाहर से नही, बल्कि उसके शरीर के खास अगो से निकलती है। उन अगो के अन्दर एक ऐसी परत होती है, जो प्रकाश उत्पन्न करती है, और दूसरी परत उस प्रकाश को बाहर फेकती है। रोशनी के ये अग आम तौर से इन कीडो के पेट मे नीचे की ओर ही पाए जाते है। रोशनी लूसीफेरिन (Luciferin) नाम के एक मिश्रण के जलने से पैदा होती है। वह मिश्रण जल कर नष्ट नही होता, बल्कि जलने के बाद फिर अपनी असली हालत मे आ जाता है, जिससे जुगनू फिर तुरन्त रोशनी कर सकता है।

जुगनू की रोशनी मे गर्मी नाम मात्र को होती है। ऐसा खयाल किया जाता है कि नर और मादा जुगनू एक-दूसरे को आकर्षित करने के लिए यह रोशनी करते है।
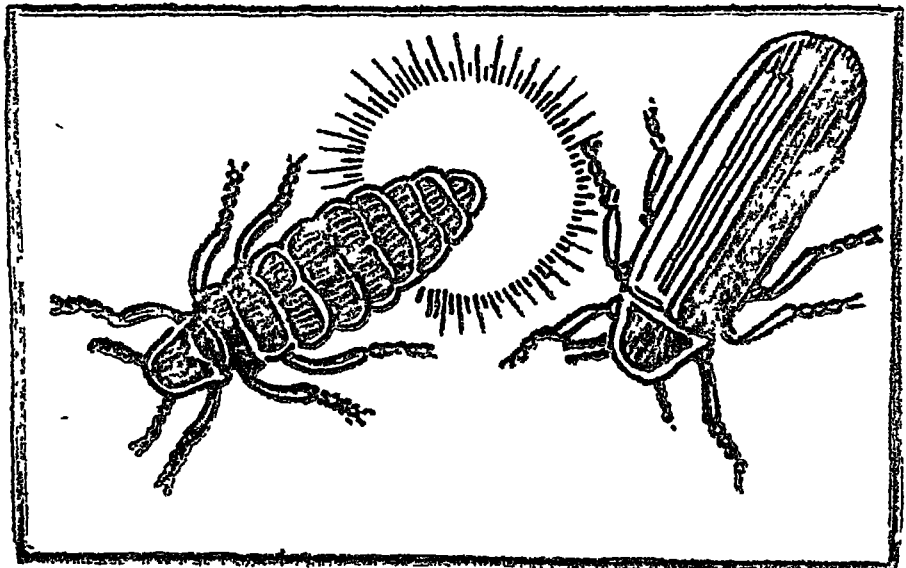
जुगनू

(2) तिलचट्टा

मौजूदा परदार कीडो मे तिलचट्टा सबसे पुराना है। पुरानी चट्टानो के अन्दर तिलचट्टो के जो शरीर दबे हुए मिलते है, उन्हे देखने से पता चलता है कि हजारो वर्ष बीत जाने पर भी तिलचट्टे के शरीर की बनावट मे बहुत कम फर्क आया है। ये कीडे असल मे गर्म देशो के प्राणी है, लेकिन तिजारती माल के साथ अब ये भी बडी दूर-दूर तक पहुच चुके है। आज ससार मे इनकी लगभग 3,500 किस्मे है। यह कीडा गन्दगी फैलाने वाला और आदमी की तन्दुरुस्ती के लिए हानिकर कीडो मे से है।

मादा तिलचट्टा

आम तौर पर तिलचट्टे की लम्बाई एक इच से भी कम होती है। मगर इसकी कुछ जातियो की लम्बाई दो से छ इच तक भी होती है। इसके शरीर की चौडाई इसकी लम्बाई से ज्यादा होती है और आखो के बीच पतली-पतली धागे जैसी मूछे निकली होती है। शरीर मे पैरो के तीन जोडे होते है, जिन पर सख्त रोए होते हैं। पिछले दोनो पैर खास तौर से चलने मे काम देते है।

तिलचट्टे के पेट मे कुछ गिलटिया होती है, जिनसे एक बदबूदार रस निकलता है। जब वह भोजन की तलाश मे चलता है तो रास्ते भर वह रस टपकाता रहता है। इससे यह पता लग जाता है कि तिलचट्टा
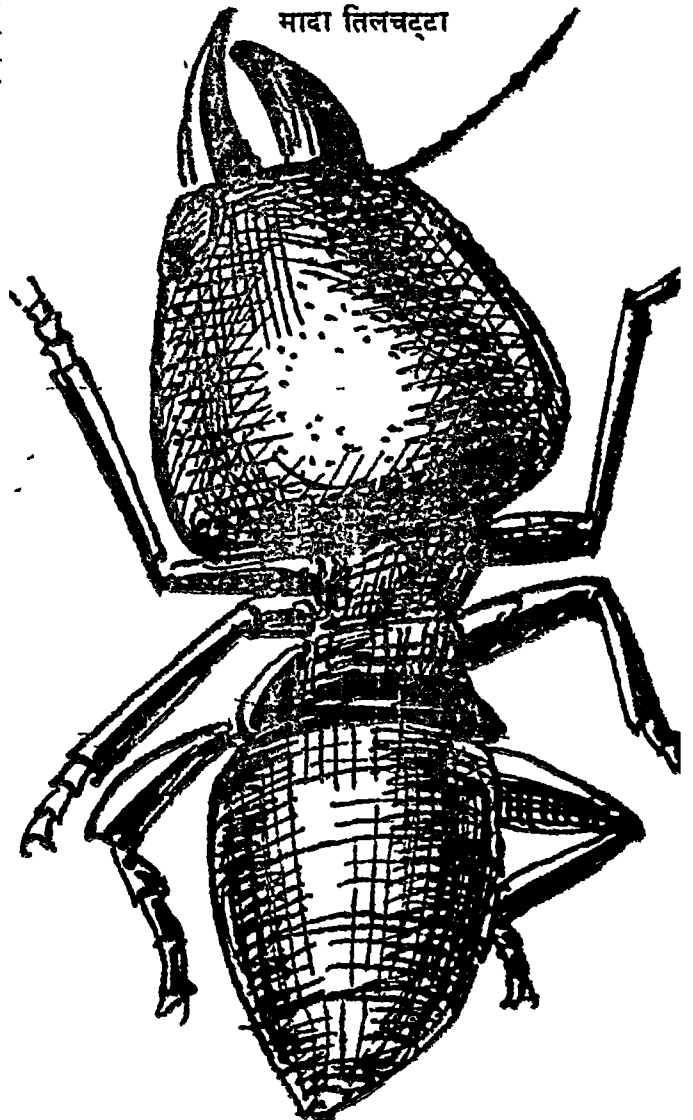
तिलचट्टे का जीवन वृत्त अडे से निकले बच्चे से लेकर पूरा तिलचट्टा बनने तक

किधर गया है। तिलचट्टो की कुछ जातियों के पख नही होते। पूर्वी देशो का झीगुर, काला झीगुर, आदि इसके उदाहरण है। तिलचट्टे की कुछ किस्मो मे नर और मादा, दोनो के पख होते है, किन्तु कुछ ऐसी किस्मे भी है, जिनमे या तो केवल नर तिलचट्टे के पख होते है या केवल मादा के। परदार तिलचट्टो के दो-दो जोडे पख होते है। ऊपरी पख मोटे और भारी होते है, जो नीचे के पतले और पारदर्शक उडने वाले पखो की रक्षा करते है। अधिकतर तिलचट्टे भद्दे, गन्दे, काले और लाल होते है, परन्तु गर्म देशो मे कुछ ऐसी हरी या पीली किस्मो के तिलचट्टे भी होते है, जो देखने मे वडे भले और खूवसूरत मालूम होते है।
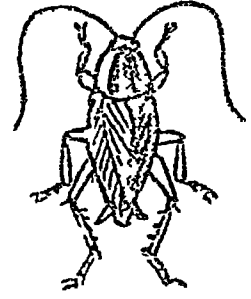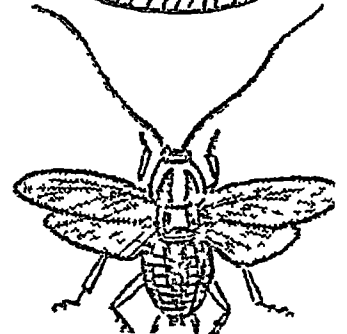
तिलचट्टे दिन की रोशनी मे प्रकट नही होते। वे मास भी खाते है और वनस्पति भी। तिलचट्टे घरो के अन्दर भी रहते है और वाहर भी। किताबो की जिल्दे, जूते, हड्डिया, उनकी अपनी केचुल, थूक, खखार, मल, आदमी का भोजन, खटमल, आदि सभी कुछ इनकी खुराक है। लेकिन घरो मे रहने वाले तिलचट्टे शक्कर और अनाज को वहुत पसद करते है। गर्म और नमदार जगहो मे तिलचट्टे खूव फूलते-फलते है। गर्म पानी के नल, रसोई घर, जलपान घर और उन सव जगहो मे, जहा खाने की चीजे रहती है, वे वडे सुख से रहते है। तिलचट्टे से कोई खास वीमारी नही फैलती, तो भी वे अपने पैरो के जरिए एक जगह से दूसरी जगह तरह-तरह की वीमारियो के कीटाणु ले जाते है। खाने की चीजो पर वैठ कर अपनी खाई हुई चीजो को उन पर उगल कर वे उन्हे गन्दा कर देते है। इस तरह ये आदमी तक वीमारी भी पहुचाते है और गन्दगी भी।

तिलचट्टे के अडे एक झिल्ली मे वद रहते है, ताकि सीलन से उनकी रक्षा होती रहे। मादा तिलचट्टा एक वार मे 16 से 40 तक अडे देती है। अडो के फूटने के पहले ही उन पर चढी हुई झिल्ली फट जाती है। इसके अडो से तिलचट्टे की ही शक्ल-सूरत के बच्चे निकलते है। उनमे फर्क केवल यह होता है कि वे कद में छोटे और विना पख के होते है। वड़े होने तक बच्चो को एक के वाद एक लगभग सात वार अपनी केचुल वदलनी पडती है। इसमे लगभग एक साल लग जाता है। पर इनकी कुछ ऐसी भी किस्मे है, जिनके बच्चो को वडे होने मे दो महीने से दो साल तक का समय लगता है। यह नमी और खुराक पर निर्भर करता है। नर तिलचट्टे के मुकावले मे मादा अधिक जल्दी वढती है।

कुछ समय पहले तक तिलचट्टो के नष्ट करने के लिए घरो मे सोडियम क्लोराइड का इस्तेमाल होता था। लेकिन अव इसके लिए क्लोरडेन का प्रयोग किया जाने लगा है। डी० डी० टी०, फासफोरस, गधक, वोरेक्स और पाइरेथ्रम भी इन्हे नष्ट करने के लिए कारगर साबित हुए है।

जीव, जन्तु और पौधे

(1)
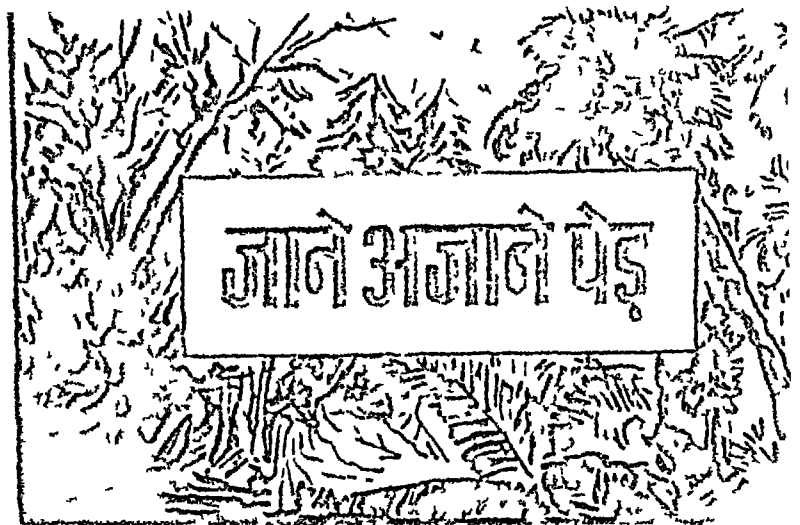
लोकप्रिय जामुन

जंगलो मे जामुन के पेड सीधे, छरहरे और ऊचे होते है। पर खुले मैदानो मे और सडको के किनारे उसके तने अक्सर टेढे-मेढे, छोटे और मोटे होते है। जम्मू के पास एक झील के किनारे जामुन का एक पुराना पेड है, जिसके तने का घेरा लगभग 20 फुट 6 इच है। ऊचाई मे 50-60 फुट तक पहुचना जामुन के लिए मामूली बात है। जामुन के पेड की छाल कोई इच भर मोटी होती है। यह ऊपर से मटमैली और अन्दर से लाल होती है।

जामुन का पेड पजाब, राजस्थान और कुछ दूसरे सूखे भागो को छोड कर, हमारे देश मे सब कही होता है। हिमालय की घाटियो मे तो वह 4,000 फुट तक ऊचे स्थानो पर लगता है। साल के वनो मे और नदी-नालो के किनारे भी जामुन का पेड देखने को मिलता है। पूना के पास महाबलेश्वर मे प्रति वर्ष 200 इच मेह बरसता है। पर वहा की हल्की पथरीली जमीन पर भी जहा-तहा जामुन के पेड मिलते है, हालाकि वहा के पेड साधारण पेडो की तरह भारी-भरकम नही होते। जामुन की सबसे अच्छी बढत नदियो के किनारे कछार और सैलाबी मिट्टी मे होती है।

हमारे देश मे जामुन के अनेक नाम है। हिन्दी मे उसे जामुन, मराठी मे जानबूल, कन्नड मे नेरलू, तमिल मे नावाल और तेलुगू मे नेरडू कहते है। लैटिन मे उसका नाम यूजेनिया जम्बोलाना है। जामुन का लैटिन नाम सत्रहवी सदी मे सेवाय के महाराजकुमार यूजीन के नाम पर पडा था।

अप्रैल मे जामुन की डालियो पर हल्के धानी रग के छोटे-छोटे फूलो के गुच्छे निकल आते है और अगस्त के महीने मे वे डालिया फलो से लद जाती है। जामुन का फल बैगनी रग का होता है। फल के बीच मे एक गुठली होती है। गुठली के अन्दर दो से लेकर पाच तक बीज होते है। जामुन को आदमी, जानवर और चिडिया, सभी चाव से खाते है।

जामुन का बीज उपजाऊ होता है, पर टिकता नही। जामुन के नन्हे पौधे खुली धूप मे पनप नही पाते, पर बडे हो जाने पर उन्हे छाह की जरूरत नही रहती। छोटे पौधे बहुत धीरे-धीरे बढते है, पर शाखाए छाटते रहने से वे ठीक बढते है।

जामुन लगाने की सबसे अच्छी विधि यह है कि बरसात मे बीज को बोकर डलियो मे पौध तैयार की जाए। जामुन की पौध दो वर्ष मे तैयार हो जाती है। सिचाई और साया छोटे पौधे की जान है। डलियो मे तैयार किए हुए पौधे को दो वर्ष बाद जहा चाहे लगाया जा सकता है। जामुन को छुटपन मे पाले और सूखे से बचाना आवश्यक है।

यदि जामुन के पेड को काट दिया जाए, तो उसकी जड से फिर नए कल्ले निकल आते है। उन कल्लो मे से एक को छोड कर बाकी सबको काट देने से वह बढते-बढते नया पेड बन जाता है। भेडे और बकरिया जामुन के पौधो और कल्लो को बहुत हानि पहुचाती है। इसलिए जामुन के छोटे पौधे के चारो ओर काटो की बाड लगा देनी चाहिए।

जामुन

जामुन की लकडी बहुत मजबूत और टिकाऊ होती है। रेलवे के स्लीपर आम तौर से जामुन की लकडी के ही बनाए जाते हैं। यह मकानो के लिए कडी चौखट बनाने के भी काम आती है और इसका ईधन भी अच्छा होता है।
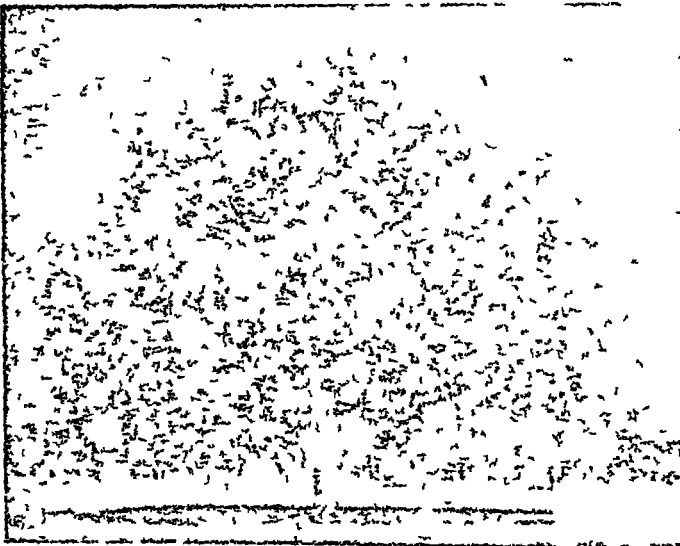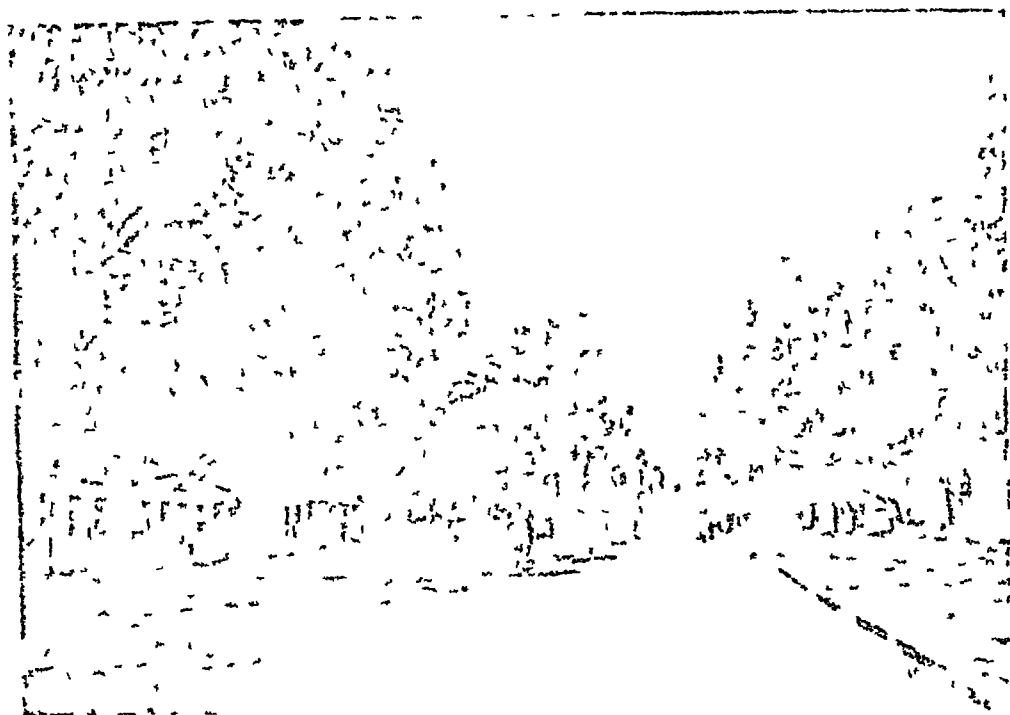
सडक के दोनों ओर जामुन की पक्तियां

जामुन का फल निस्सदेह सर्वप्रिय है, वह वडा गुणकारी है, पाचक है, अनेक दवाओ मे काम आता है और उसकी लकडी भी वडे काम की होती है। फिर भी भारत जैसे गर्म देश मे जामुन अपनी छाया के लिए ही पसद किया जाता है।

(2) उपयोगी कंजी

कंजी का पेड लगभग सम्पूर्ण दक्षिण-पूर्वी एशिया मे पाया जाता है। वह श्रीलका, अन्दमान, वर्मा, मलय, आदि हर जगह फैला हुआ है।

भारत मे कजी अक्सर नदी-नालो के किनारे ही पनपता और वढता है। पर हिमालय की घाटियो मे 4,000 फुट और दक्षिण की पहाडियो मे 2,000 फुट की ऊचाई पर भी कजी का पेड उगता है।

सडको के किनारे और नहरो के किनारे कजी अक्सर साये के लिए लगाया जाता है। गर्म, सूखी और रेतीली जमीन मे कजी नही पनपता । वह समुद्र के किनारे भी पाया जाता है ।

कजी का पेड मझोले कद का होता है। उसकी छतरी का फैलाव बहुत होता है और उसका तना टेढा-मेढा होता है। कजी के पत्ते इतने कम दिनो के लिए झडते है कि उसका पेड लगभग पूरे साल हरा-भरा रहता है। उसकी छाल चिकनी, पतली और भूरी होती है। उसके पत्ते कोई तीन इच लम्बे और चटकीले होते है। उनका निचला हिस्सा नसदार होता है। कजी के पेड की ऊचाई लगभग 40-50 फुट होती है।

कजी के पेड मे अप्रैल के महीने मे सफेद फूल आते है। फूलो की सफेदी मे गुलाबी और बैगनी रग की झलक होती है। फूलो के साथ ही कजी के नए पत्ते भी निकल आते है, और मई मे पेड सज-धज कर तैयार हो जाता है। पर उसकी फलिया अगले साल के फरवरी-मार्च तक पक कर तैयार होती है। एक कजी के पेड से हर वर्ष तीस से चालीस सेर तक फलिया निकलती है। फलियो को कूट कर उसके अन्दर से बीज आसानी से निकाल लिए जाते है। बीज मे तेल होता है, इसलिए वे ज्यादा दिन नही टिकते। एक छटाक मे कोई पचास-साठ बीज चढते है। हर फली मे एक या दो बीज होते है और उनका रग कत्थई होता है।

कजी को हमारे देश के लोग अनेक नामो से पुकारते है। हिन्दी मे पापडी और कजी; मराठी मे करजी, कन्नड मे होगे, उगेमारा, हली गिल्ली और वट्टी, तेलुगू मे कागू, कनूग, और करानुगा, मलयालम मे मिनारी, पन्नू और ऊगूमारूम, तमिल मे कानगा, पोनगा, पुनगम और उडागू, पजाबी मे सुख चैन; और उडिया मे कोरोनजो या कोनज कहते है। लैटिन मे उसका वैज्ञानिक नाम पोनगेमिया ग्लोब्रा है।

कजी को लगाना कोई कठिन काम नही है। बीज बो देने से पौधे आसानी से उग आते है। कोई साठ से अस्सी प्रतिशत बीज एक महीने के अन्दर जम जाते है। एक सेर बीज मे लगभग हजार पौधे तैयार किए जा सकते है और पौधो को उखाड कर जहा-तहा लगाया जा सकता है। कजी लगाने का एक और भी ढग है। जब पौधो की मोटाई अगूठे जितनी हो जाती है, तो लोग खुदाई करके पौधे को इस तरह उखाड लेते है कि उसकी जड कम-से-कम नौ इच बाकी रहे। फिर एक इंच छोड कर उसके तने के

ऊपर का पूरा हिस्सा काट कर फेंक देते हैं। तब उसे जहा चाहे ले जाकर लगा सकते हैं।

कजी के पौधे अपने-आप ही नदी-नालो के किनारे उग आते हैं। वे बडे पेडों के साये तले भी पनप जाते हैं, पर खुले मे उनकी बढत अच्छी होती है। कजी, नीम की तरह, हर प्रकार की जमीन मे पनप सकता है। कजी के पेड को काट दिया जाए, तो उसमे से फिर से कल्ले फूट पडते हैं।

छोटे पौधे की नलाई और गोडाई करने से उसकी बढत अच्छी होती है। उनको और किसी विशेष देख-रेख की आवश्यकता नही होती। पाला उस पर कम असर करता है। खुश्की और गर्मी को वह सह लेता है। उसके छोटे पौधो को मवेशी नही खाते। उसके पत्तो मे कोई ऐसा रस होता है, जो जानवरो को नही भाता। हा, जब पेड बडा हो जाता है, तब उसके पत्तो को जानवर चाव से खाते हैं। दक्षिण मे तो पेड को ऊपर से छाट देते है। छाटने से नए कल्ले फूट आते हैं। वहां के लोग उसके पत्तो को पशुओ के चारे के लिए काम मे लाते हैं।

कजी की लकड़ी केवल ईंधन के काम आती है। वह टिकाऊ नही होती। इसलिए कोई पायदार चीज बनाने के लिए उसका उपयोग नही होता। हा, थोडे दिन पानी मे डाले रखने के बाद उसकी लकडी से खेती-बाडी के छोटे-मोटे सामान बनाए जा सकते हैं।

कजी का पेड साया देता है, उसके पत्ते मवेशियो का चारा और खाद बनते है तथा उसके बीजो से तेल निकाला जाता है। कजी का तेल भारी और रग में पीला होता है। उसकी खली खाद के काम आती है।

(3)

सुनहरा अमलतास

अमलतास
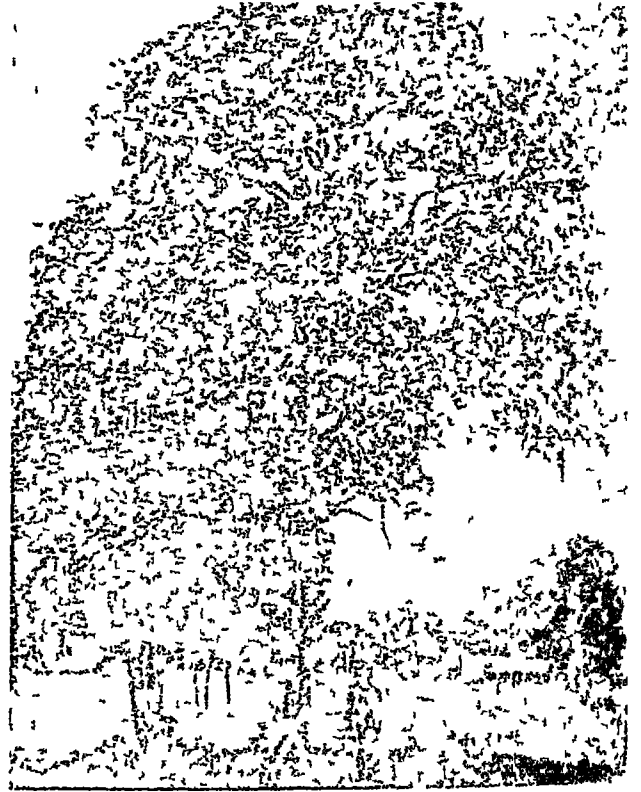
अमलतास का पेड हमारे देश मे हर जगह पाया जाता है। जहा एक ओर शिवालिक के जगलो मे अमलतास के पेड बडी सख्या मे पाए जाते है, वहा दूसरी ओर ये उत्तर-प्रदेश मे हिमालय की घाटियो मे चार हजार फुट की ऊचाई तक मिलते हैं। खाली अमल-तास के बगीचे या जगल कही नही मिलते। अमलतास सदा तरह-तरह के पेडो के साथ मिला-जुला ही पाया जाता है। अमलतास का पेड मझोले कद का होता है। अच्छी जमीन मे उसकी ऊचाई पचास से साठ फुट तक और उसके तने का घेरा पाच फुट तक पहुच जाता है।

अमलतास के पौधे की छाल चिकनी और हरी होती है। पर जब पेड बडा हो जाता है, तब छाल कत्थई रग की हो जाती है। अमलतास घना सायेदार पेड है। पर पतझड के कारण मार्च से मई तक वह अधिकतर बिना पत्ते के रहता है। उसके बाद जब पेड पर नई और कोमल पत्तिया आ जाती है, तब उसकी शोभा देखने योग्य होती है। नई पत्तिया धानी और ताबे के रग की होती है और बहुत ही सुन्दर लगती है। थोडे दिनो के बाद वह चटकीले हरे रग की हो जाती है। एक-एक डाली पर चार से आठ तक पत्तियां होती है।

अमलतास का पेड ज्यो ही नई और कोमल पत्तियो से सज-धज कर तैयार होता

है, त्यो ही उसकी डालिया भडकीले सुनहरे रग के पीले फूलो से छा जाती है । फूल निकलने के थोडे ही दिन बाद पेड पर फलिया झूलने लगती है, जो नवम्बर-दिसम्बर तक पकने लगती है। जब पतझड आता है, तब वे फलिया भी पत्तियो के साथ गिरने लगती है । फलियो के अन्दर खाने-से बने होते है, जिनमे मीठा गूदा रहता है । हर खाने मे एक बीज होता है, जो हल्के कत्थई रग का होता है । बदर, गीदड, भालू, सूअर, आदि जानवर अमलतास की फलियो को बडे चाव से खाते है और उसके बीज को जगह-जगह फैलाते है । फलिया लगभग डेढ फुट लम्बी और एक इच मोटी होती है । अमलतास, के बीजो मे अक्सर कीडे लग जाते है ।

अमलतास की फलिया कई तरह की दवाओ मे काम आती है । उसका गूदा दस्तावर होता है, जिसे कभी-कभी लोग खाने के तम्बाकू मे मिला देते है । अमलतास का गोद भी बिक जाता है और उसकी छाल को चमडा रगने मे इस्तेमाल किया जाता है ।

अमलतास को हमारे देश में लोग कई नामो से पुकारते है । हिन्दी मे उसे अमलतास, मराठी मे बहावा, कन्नड मे काके, तमिल मे कोनाई, तेलुगू में रेला और असमिया मे सुनारू कहते है । उसका वैज्ञानिक नाम लैटिन में कैस्सिया फिस्चूला है ।

अमलतास का उगाना कठिन है, क्योकि उसके बीज का छिलका बहुत सख्त होता है । कभी-कभी तो बोया हुआ बीज साल भर तक नही उगता । एक साल पुराना बीज नए बीज की अपेक्षा जल्दी उग जाता है । नए बीज को भी बोने से पहले तेज गर्म पानी मे तीन घटे तक रख देने से उसका छिलका मुलायम पड जाता है, और उसके जमने मे आसानी हो जाती है ।

अमलतास को पहले क्यारियो में बोना चाहिए । मार्च-अप्रैल मे बोकर बरसात मे पौधो को उखाड कर आसानी से कही भी लगाया जा सकता है । यदि पौधो को साल भर तक टोकरी मे रखा जाए, उसके बाद कही लगाया जाए, तो और भी सफलता मिलती है । अमलतास का पेड यो भी लगाया जा सकता है कि पौधे मे इच भर कल्ला हो और फुट भर जड ।

निराई और गोडाई से पौधे जल्दी बढते है । छोटे पौधो को धूप, खुश्की और पाले से बचाना आवश्यक है। उन्हे जानवरो से कोई खतरा नही होता, क्योकि अमलतास ही एक ऐसा पेड है, जिसके पौधे को मवेशी नही छूते ।

अमलतास की लकडी मजबूत और टिकाऊ होती है । वह वजन मे भारी और

रग मे पीली कत्थई होती है । उससे खेती के औजार बनाए जाते हैं। उसका ईंधन भी अच्छा होता है और कोयला भी।

पर अमलतास के पेड को लोग उपयोगी समझ कर नही लगाते हैं। उसे तो लोग आम तौर से उसके घने साए और सुन्दर सुनहरे फूलो की वजह से पसद करते और लगाते हैं।

(4) सर्वप्रिय शीशम

शीशम का पेड़ लगभग हर गाव मे पाया जाता है। उसकी लकडी इतने काम की होती है कि लोग शीशम को बडे यत्न से लगाते और उसकी रक्षा करते हैं।

शीशम उत्तर भारत का पेड है। वह हिमालय की तराई और शिवालिक के जगलो मे, नदी-नालो की रोखडो मे, अपने-आप ही उगता है। पहाडी नालो की लाई हुई नई रेतीली मिट्टी पर वह बडी आसानी से कब्जा कर लेता है। पहाडो की घाटियो मे वह दो-तीन हजार फुट की ऊचाई पर भी उगता है। नीचे की खुली मैदानी भूमि मे तो वह सारे उत्तरी भारत मे फैला हुआ है।

शीशम चिकनी मिट्टी वाली या ककरीली जमीन मे नही पनपता। उसकी सबसे अच्छी बढत बगाल की दुआर जमीन मे होती है, जहा हर साल 150 इच वर्षा होती है। अच्छी रेतीली दुमट जमीन मे शीशम के पेड के तने की मोटाई पचास-साठ साल मे आठ फुट तक हो जाती है। ऐसे पेडो की लकडी काफी रोएदार और पक्की होती है। मैदानो मे पाए जाने वाले इक्के-दुक्के शीशम के पेड की छतरी का फैलाव तो काफी होता है, पर उसका तना छोटा और टेढा-मेढा होता है। लेकिन घने जगलो में उगने वाले शीशम लगभग सौ फुट ऊचे होते हैं और उनका तना सीधा और मोटा होता है।

शीशम के तने की छाल मोटी, खुरदरी और मटमैली होती है। उसके पत्ते नवम्बर-दिसम्बर मे झड़ जाते हैं और पेड़ जाड़े भर नगा रहता है। फरवरी मे जब बसत

का आरम्भ होता है, तब शीशम के पेड मे धानी रग के नए और कोमल पत्ते निकलने लगते है, जो थोडे ही दिनो मे हरे हो जाते है। पेड की हर डठल पर तीन-तीन पत्ते उगते है।

नए पत्तो के साथ ही साथ शीशम पर फूल भी आते है, और मार्च-अप्रैल मे पेड वसती फूलो से ढक जाता है। फिर थोडे ही दिन वाद फलिया आ जाती है, जो शुरू मे हरी, फिर पीली और पतझड के समय पक कर वादामी रग की हो जाती है। शीशम की फलिया कोई ढाई-तीन इच लम्वी और लगभग आधा इच चौडी होती है। उनमे एक से तीन तक वीज होते है, जो टिकाऊ और उपजाऊ होते है।

शीशम को हिन्दी मे सिसू या सीसो भी कहते है। पजावी मे उसे टाहली कहते है। लैटिन मे उसका वैज्ञानिक नाम डलवर्जिया सिस्सोद है। शीशम लगाना वहुत आसान होता है, क्योकि वह सीधे वीज वो देने से उग जाता है। इतनी आसानी से लगने वाला शायद ही कोई दूसरा पेड हो। नलाई और गोडाई से उसकी पौध को काफी मदद मिलती है। यदि एक पेड का फासला दूसरे पेड से इतना हो कि उनकी छतरिया आपस मे टकराए नही, तो वे तेजी से वढते है। इसलिए वीच-वीच के पेड-पोधो को निकाल देना चाहिए। शीशम को थाले मे भी लगाते है और सिचाई से उसकी वढत काफी तेज हो जाती है।

वोने के लिए शीशम के वीज पेडो पर से ही इकट्ठे करने चाहिए। जमीन पर गिरी फलियो के वीज अक्सर खराव हो जाते है। शीशम के छोटे पौधो को पाला मारने का डर नही रहता, पर वे खुश्की नही सह सकते। छोटे पौधो को जानवरो से वचाना पडता है। यह भी ध्यान रखना पडता है कि उन पर वडे पेडो का साया न पड़े।

शीशम
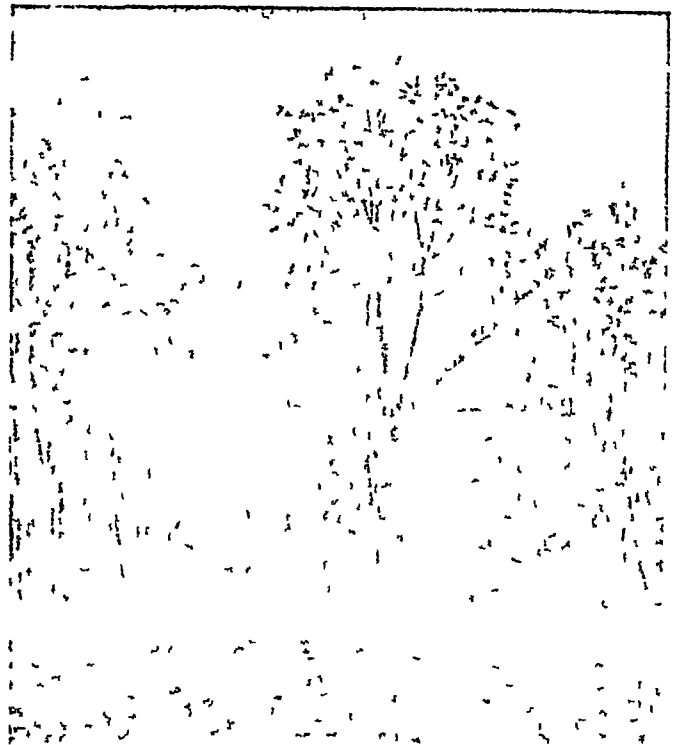
शीशम की लकडी बहुत मजबूत, भारी और टिकाऊ होती है। न वह सूखने पर फटती है, न उसको चीरने-काटने मे ही कठिनाई होती है। उस पर पालिश और वार्निश भी खूब चढती है। शीशम की लकडी मेज, कुर्सी, बक्स, अलमारी, इत्यादि बनाने के काम आती है। उससे दरवाजे, चौखट और खेती के सामान भी बनाए जाते है। उसका बुरादा जलाने के काम आता है। शीशम की इतनी माग रहती है कि उसके मुहमागे दाम मिलते है।

(5) शानदार सेमल

जाडे के दिनो मे बडे-बडे लाल फूलो से लदा हुआ सेमल दूर से ही अपनी तडक-भडक की घोषणा करता है। उसका सीधा, सपाट और गोल तना चादी की तरह चम-चम चमकता है। रेगिस्तानी या सूखी जमीन को छोड कर सेमल हमारे देश मे हर जगह होता है। वह हिमालय और दूसरे पहाडो मे चार-पाच हजार फुट की ऊचाई पर भी उगता है। भारत मे शायद ही कोई ऐसी जगह हो, जहा सेमल न होता हो। पर उसकी सबसे अच्छी बढत तराई, भाभर और बाढ की रेतीली मिट्टी मे होती है।

सेमल को अच्छी जमीन मिले, तो वह सौ-सवा सौ फुट तक ऊचा, और उसके तने का घेरा बारह फुट तक मोटा हो जाता है। कोई-कोई पेड तो दो सौ फुट तक ऊचे हो जाते है। सेमल का भारी-भरकम पेड अपना बोझ सम्भालने के लिए अपने तने पर पुश्ते बनाता है। उन पुश्तो के बीच मे आदमी तो क्या, हाथी तक समा सकता है।

हमारे देश मे सेमल के भिन्न-भिन्न नाम है। उसे हिन्दी मे सेमल, मराठी मे सयर, कन्नड मे सौरी या बुर्ला, तेलुगू मे बुर्घा और तमिल मे इल्लवू कहते है। लैटिन मे उसका वैज्ञानिक नाम बौम्बैव समालाबैरीकम है।

सेमल का पतझड जाडो में होता है। सेमल के छोटे पौधे के तने पर काटे होते है, मानो प्रकृति ने अपनी ओर से उसकी रक्षा का प्रबन्ध कर दिया है। पेड के बड़े

सेमल

होने पर काटे झड जाते है। सेमल की छाल सपाट और सलेटी रग की होती है। उसकी डालिया एक-सी जगह से चारो ओर फैलती है और उनके चटकीले पत्ते आदमी के हाथ की उगलियो की तरह गुच्छो मे निकलते है।

जाडो के अन्त (जनवरी-फरवरी) मे जब पतझड के बाद सेमल मे नए पत्ते आते है, तब वह लाल रग के भड़कीले फूलो से ढक जाता है। उसकी डालियो पर लगे

फूलो को चिड़िया और नीचे गिरे फूलो को जानवर वडे चाव से खाते है। लोग सेमल के फूल की तरकारी भी बनाते है।

सेमल के गुद्दे या फल मार्च-अप्रैल मे तैयार होते है। वे कोई 6 इच लम्बे होते है। वे अप्रैल-मई तक पक जाते है और पेड पर ही फूट जाते है, और उनके अन्दर की नरम-नरम रेशमी रूई हवा के झोको से विखर कर उडने लगती है। सेमल के बीज उसके फलो के अन्दर रूई के बीच मे होते है। इसलिए जव रूई हवा मे उडती है, तव बीज भी साथ उडते हुए मीलो तक चले जाते है और जगह-जगह फैल जाते है।

सेमल के बीज बहुत हल्के होते है। एक छटाक मे कोई 1,500 बीज चढते है। क्यारियो मे बोने पर वे वडी आसानी से जम जाते है। सेमल के बीज मे एक प्रकार का तेल होता है, इसलिए वह जल्दी खराब नही होता। एक जगह से दूसरी जगह लगाने

सेमल की बहार

मे सेमल का पौधा अक्सर मर जाता है। इसलिए सेमल के अगूठे भर मोटे पोधे की कोई एक फुट जड और एक इच तना रख कर, बाकी पौधे को काट कर फेक देते है और थाले वना कर उन्हे जहा चाहे लगा देते है । पौधो को वरसात शुरू होने पर ही थालो मे लगाना चाहिए । सेमल का पौधा वहुत तेजी से वढता है । नलाई और गोडाई से उसकी वढत और भी तेज हो जाती है ।

नए पौधे को पाले से वहुत नुक्सान पहुचता है । पशु भी उसे खाने से नही चूकते । सेही और सूअर तो उसे जड से ही खोद कर खा जाते है । यही कारण है कि सेमल के पौधे को ववूल के काटो से रूध देते है । काटेदार झाडियो मे तो वह अपने-आप ही उग कर वडा हो जाता है ।

सेमल की लकडी देखने मे सफेद, वजन मे हल्की और कमजोर होती है । वह केवल दियासलाई वनाने के काम आती है । उसके हल्के- ववस भी वनाए जाते है । लोग सेमल के पेड के तने को खोखला करके छोटी-छोटी नावे भी वना लेते है, क्योकि सेमल की लकडी पानी पीने से और भी टिकाऊ हो जाती है । सेमल के पेड से एक प्रकार का गोद निकलता है, जिसे मोकारस कहते है और जो दवा के काम आता है । उसकी छाल के रेशो की रस्सी वनाई जाती है । सेमल के वीज का तेल भी उपयोगी होता है ।

(6) पारसी बकाइन

बकाइन एक विदेशी पेड है। कहा जाता है कि बकाइन को मुसलमान ईरान से लाए थे और उन्होने उसे सवसे पहले पजाव और कश्मीर मे लगाया था । वाद मे वह धीरे-धीरे सारे भारत मे फैल गया । वह मैदानो से लेकर हिमालय की घाटियो मे 6,000 फुट की ऊचाई तक लग सकता है ।

वकाइन देसी नीम की ही जाति का एक पेड है और नीम की ही तरह वह बिना किसी कठिनाई के सव जगह उगाया जा सकता है । न उसे अधिक पानी की आवश्यक्ता होती है, न सूखे का डर रहता है ।

वकाइन को हिन्दी मे वकाइन, पजावी मे ध्रेक, तेलुगू मे येरीवेप्पा, तमिल मे वेम्व, और मराठी मे पेजरी कहते है । लॅटिन मे उसका वैज्ञानिक नाम मेलिया अजेदाराक
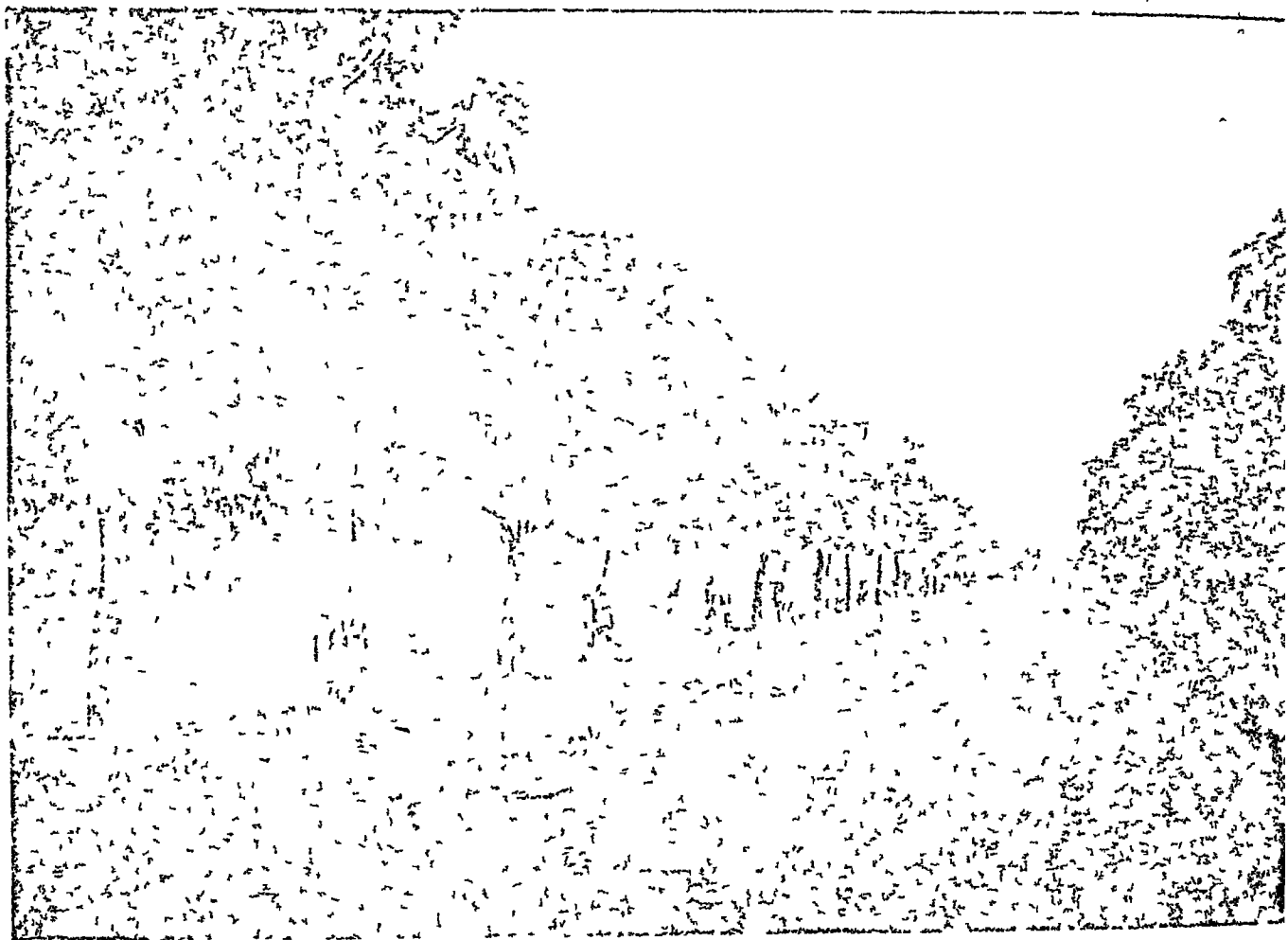
पारसी बकाइन

है और फारसी मे उसे आजाद दरख्त कहते है। सम्भव है, आजाद दरख्त से ही अजेदाराक हो गया हो।

वकाइन मझोले कद का पेड है। उसका तना छोटा और उसकी छतरी काफी फैली हुई होती है। उसकी छाल नसदार, भूरी और लम्बी होती है।

वकाइन का पतझड जाडो मे होता है, और बसत ऋतु मे उस पर नए पत्ते आने लगते है। अप्रैल-मई मे उस पर बैगनी रग के सुन्दर फूल निकल आते है और जाडो मे फल। बकाइन के फल के पीले-पीले गुच्छे अगली गर्मी तक लटकते रहते है। उसके फल बहुत हल्के होते है और एक छटाक मे कोई 70-80 चढते है।

वकाइन का वीज बडी आसानी से जम जाता है। पहले उसे क्यारियो मे वो देते है, और जब पौधे हाथ-हाथ भर के हो जाते है, तब उन्हे उखाड कर डालियो मे एक जगह से दूसरी जगह ले जाकर लगा देते है। नलाई और गोड़ाई से उसकी बढत को बहुत मदद मिलती है। वकाइन को यो भी लगा सकते है कि उसके अगूठे भर मोटे पौधे का
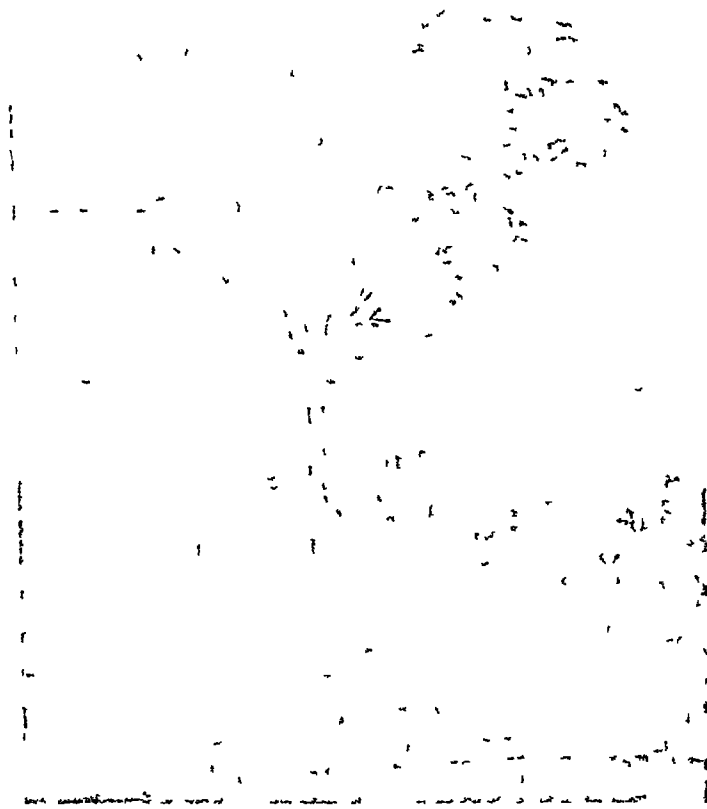
वकाइन

एक टुकडा इस तरह काट लिया जाए कि एक इच तना और एक फुट जड वाकी रहे, फिर उसे थाले मे लगा दिया जाए। वकाइन के पौधे साये मे नही पनपते। उन्हे काफी धूप चाहिए।

वकाइन के छोटे पौधे को पाले से वचाना आवश्यक है। उसका पौधा ज्यादा नमी वाली जगहो मे भी नही होता। वकाइन की जड जमीन मे वहुत गहरी नही जाती। इसलिए आधी-तूफान मे उसके पेड उखड कर अक्सर गिर जाते है। उसका तना भी मजवूत नही होता। उसकी लकडी हल्के गुलावी रग की होती है, जिससे हल्की और मामूली चीजे ही वनाई जा सकती है। चीन और जापान मे उससे वाजे बनाए जाते है। वकाइन के फल से एक तरह की मोटी चर्वी निकलती है, जो जूते की पालिश वनाने के काम आती है। कही-कही लोग उसके फल से एक प्रकार की शराव भी वनाते है।

जीव, जन्तु और पौधे

(1)

गौरैया

★

गौरैया एक घरेलू पक्षी है। नर गौरैया को चिडा और गरगौआ भी कहते है। इसके सिर और गर्दन का ऊपरी भाग भूरा और गले का निचला भाग और सीना काला होता हे । चोच के दोनो ओर के भाग यानी गाल विल्कुल सफेद होते है। इसके शरीर का वाकी सारा निचला भाग कुछ-कुछ पीलापन लिए होता है ।

गौरैया करीव-करीव सव जगह सदा से पाई जाती है। परन्तु अमरीका और आस्ट्रेलिया मे इसका परिचय हाल मे ही मिला है । देश-काल के अनुसार इसकी कई किस्मे मिलती है। पर भारत मे इसकी दो ही जातिया खास है—पहाडी गौरैया और मैदानी इलाके की गौरैया। पहाडी इलाको की गौरैया मैदानी इलाको की गौरैया से कुछ वडी और अधिक सलोनी होती है ।

गौरैया दाने-चारे की सुविधा के लिए अधिकतर आदमियो की वस्ती के आस-पास रहती है । आदमी ने जव और जहा भी नई वस्तिया वसाई है, गौरैया भी उसके साथ रही है। पर यह एक अजीव वात है कि भारत के त्रावणकोर प्रदेश के पहाडी इलाको मे गौरैया विल्कुल ही नही पाई जाती। ऐसी एक-आध जगहो को छोड कर छोटी या वडी चाहे कैसी भी वस्ती हो, गौरैया सव जगह फुदकती नजर आएगी। शहरो मे खाने-पीने और अनाज की दुकानो पर आप गौरैया को डटा हुआ पाएगे। कभी वह दुवक कर भागने की फिक्र मे होती है, तो कभी वढ कर हाथ साफ करने की घात मे। मतलव यह कि वह मौके को हाथ से नही जाने देती। वह घरो मे भी वरावर आती-जाती है। मगर वहा वह अधिकतर वसेरे की गरज से जाती है, भोजन की खोज उसका मुख्य उद्देश्य नही होता ।

गौरैया

बस्ती के बाहर किसान और रखवाले, दोनो उससे तग आ जाते है। उनके झुड-के-झुड पकती हुई फसलो और फल के बागो मे पहुच कर एक आफत कर देते है। नए बोए हुए अनगिनत बीजो को कुरेद-कुरेद कर गौरैया जो नुक्सान करती है, उसे हम हँस कर नही टाल सकते। लेकिन गौरैया मे जो बात सबसे बुरी है, वह यह कि फूलो की कलियो और पखुडियो को बेमतलब कुतर-कुतर कर खराब कर डालती है। इस तरह गौरैया आदमी की सगति मे रह कर अपने अधिकार से कही ज्यादा आदमी के भोजन पर धावा मारती है। लेकिन इसके साथ-साथ खेती और आदमी की तन्दुरुस्ती को नुक्सान पहुचाने वाले कीडो को खाकर वह एक हद तक आदमी को फायदा भी पहुचाती है। गौरैया के छोटे-छोटे बच्चे सयाने होने तक गोबरैलो और तितलियो के लारवो को खाकर उनकी सख्या मे काफी कमी कर देते है।
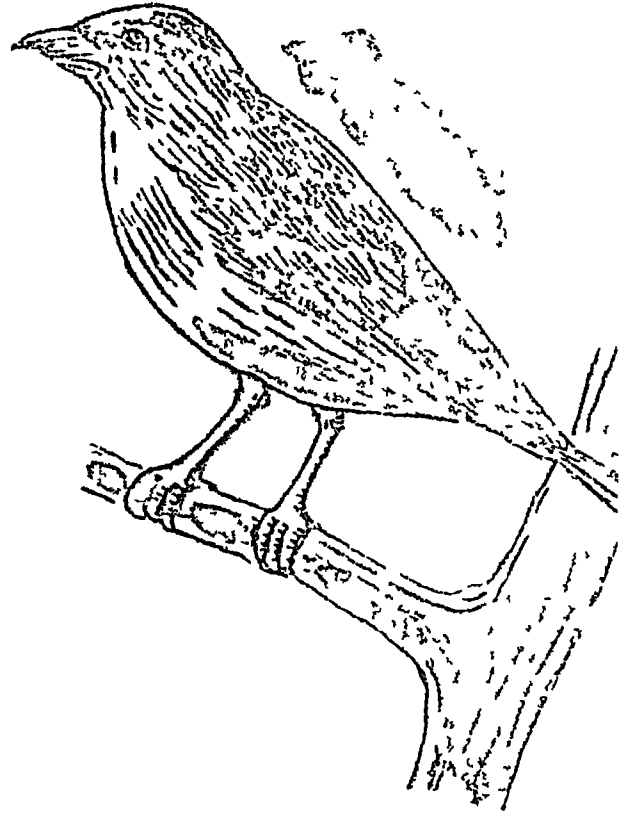
गौरैया के घोसलो का पता लगाना भी कोई बडी बात नही है। मकानो की कार्निस या दीवार मे सूराख उनके बसने की जगह होते है। उनके घोसले मजबूत नही होते। घास-फूस के तिनको, ऊन के टुकडो, भूसा, पख, आदि जमा करके गौरैया अपना घोसला तैयार करती है। छत, छप्पर, दीवार, जहा कही भी थोडी जगह मिली कि गौरैया ने घोसले के लिए तिनके ला-लाकर जमा करना शुरू कर दिया।

गौरैया एक बार मे तीन से पाच तक अडे देती है। उनका रग सफेद, हल्का हरा या पीलापन लिए होता है। उन पर बादामी रग की चित्तिया-सी होती है। नर और मादा, दोनो मिल कर बच्चो का पालन-पोषण करते है। लेकिन अडे सेने की पूरी जिम्मेदारी मादा पर होती है। 14 दिनो मे अडो से बच्चे निकल आते है।
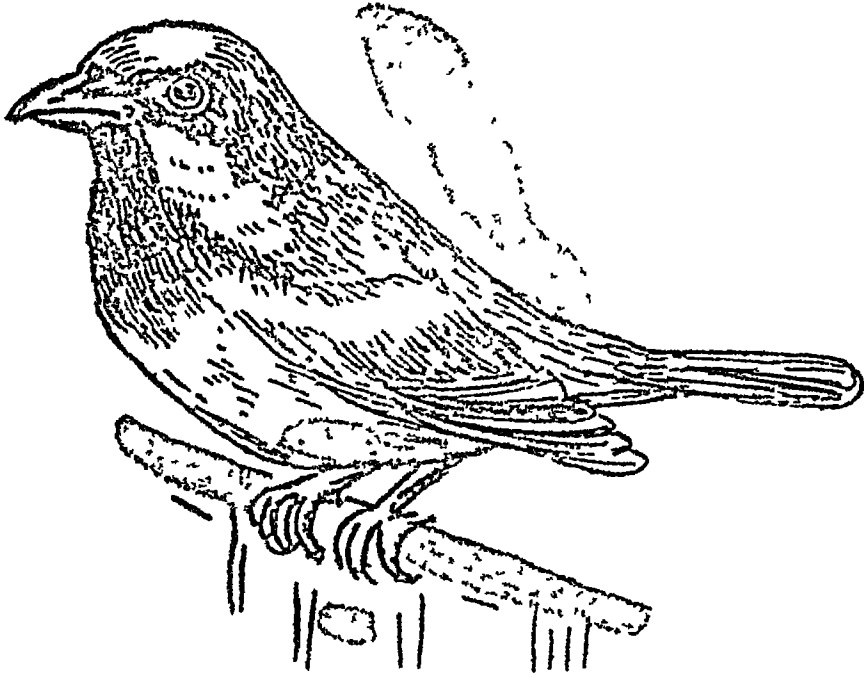
गौरैया के अडे देने का कोई वधा समय नही होता । वह लगातार कई वार अडे दे सकती है । इसीलिए वह इतनी वडी सख्या मे हर जगह दिखाई देती है ।

(2) पहाड़ी कबूतर

भारत के पालतू पक्षियो मे कवूतर एक मनपसद पक्षी है। लेकिन सफेद जाति के पहाडी कवूतर अधिक पाले जाते है। ये पहाडी कवूतर हमारे पालतू कबूतरो से जोडा खाते रहते है। यही वजह है कि भारत मे कवूतरो की तरह-तरह की नस्ले पाई जाती है।

भारत मे पहाडी कवूतर को लोग बहुत चाहते और उसे पसद करते है। भूरा सलेटी रग, पखो पर की दो साफ लकीरो और गले के चारो ओर धातु के रग की-सी चमक से उसे पहचाना जाता है ।

जगली हालत मे कवूतर खुली हुई पथरीली जगहो मे निवास करते है। यही नही कि कबूतर हमारे घरो के ही नजदीक रहते है, वल्कि वे वाजार की काव-काव और

पहाडी कबूतर
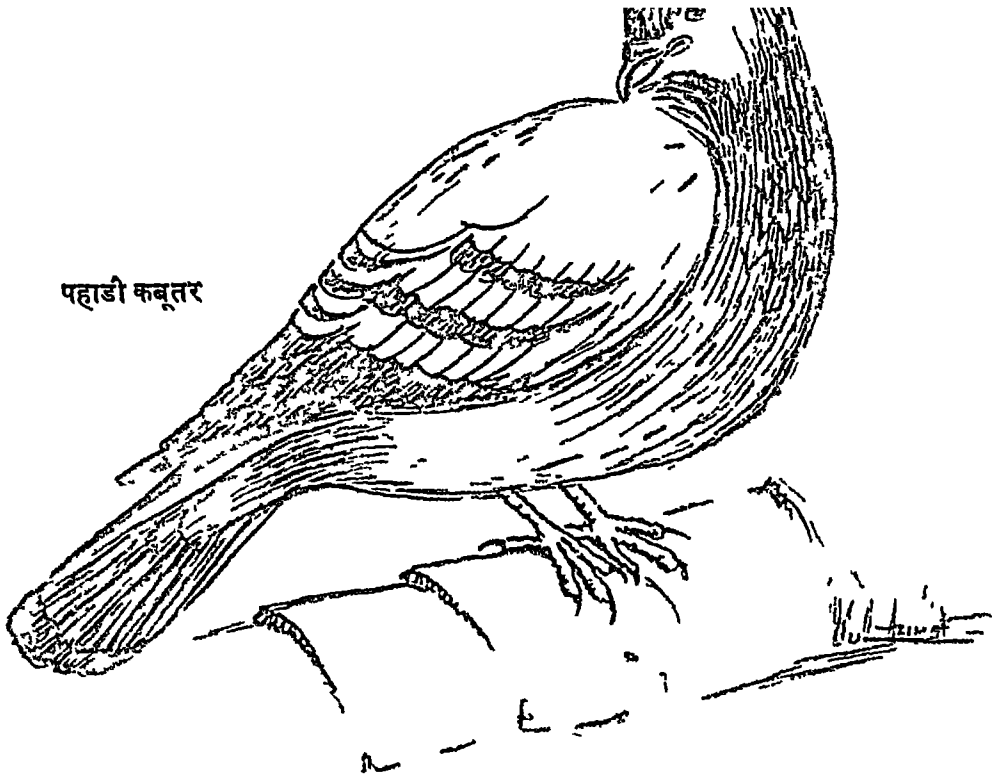
चहल-पहल के भी पूरी तरह आदी हो जाते है। कुछ लोग जीव-दया के खयाल से इनके आगे दाना-दुनका डालते रहते है, जिससे वे आदमियो से पूरी तरह परच जाते है। फैक्टरियो, मुसाफिरखानो, स्टेशनो, गोदामो, आदि की इमारतो मे वे बहुत इतमीनान के साथ रहते है। वहा सूराखो और दराजो मे खोता बना कर वे हजारो की सख्या मे रहने लगते है और जगह-जगह बीट के मारे नाक मे दम कर देते है।

किसान के लिए तो कबूतर एक बहुत बडी बीमारी है। बिना नागा सुबह-शाम खेत और गोदामो मे पहुच कर अन्न का नुक्सान करना उनकी आदत मे शामिल है। यह नुक्सान तब और भी अन्दाज के बाहर हो जाता है, जब वे सुबह से ही मक्का और मूगफली के नए बोए हुए खेतो मे पहुच कर जमीन से बीज चुगना शुरू कर देते है।

कबूतर हरदम इतने चौकन्ना रहते है कि उनके पास पहुचना आसान नही होता। यहा तक कि जब वे चुगने मे लगे होते है, तब दो-तीन कबूतर उनकी निगरानी करते रहते है। ज्यो ही ज़रा-सी आहट हुई, ये कबूतर दूसरो को होशियार कर देते है और पूरा झुड झट से उड जाता है। वे काफी तेज और सीधी उडान भरते है, और अधिकतर झुडो मे रहते है।

कबूतर अपने घोसले पतली-पतली टहनियो, कूडा-कबाड, पखो, आदि को जमा करके तैयार करते है। वे घोसला बनाने के लिए ऐसी जगह चुनते है, जहा उनका बचाव हो सके। मादा कबूतर एक बार मे दो सफेद अडे देती है। अडे देने का कोई

खास समय नही होता । कबूतरी साल मे किसी समय भी अडे दे सकती है, लेकिन आम तौर से अडे देने का मौसम जनवरी से मई तक होता है । अडे सेने और बच्चो को चुगाने का काम नर और मादा, दोनो मिल कर करते है ।

(3) चील

चील भारत मे हर जगह कसरत से पाई जाती है । लम्बे-नुकीले डैने, बाहर को निकले हुए उडान के काले पख, तमाम जिस्म पर छोटे-छोटे भूरे बाल तथा पर, और लम्बी दोफाकी पूछ इसकी खास पहचान है । इसके शरीर का निचला भाग कुछ पीलापन लिए हुए भूरा होता है । इसके पैर छोटे और पीले रग के होते है । पैरो के ऊपरी आधे हिस्से पर चारो ओर छोटे-छोटे पर होते है । चील लगभग 24 इच लम्बी होती है ।

चील का रहन-सहन बहुत गन्दा होता है । इसलिए अच्छी निगाह से उसे कोई नही देखता । वह प्राय गावो और शहरो के आसपास गन्दी चीजो की तलाश में मडराती हुई दिखाई देती है । मुर्दा जानवरो का मास उसका मनभाता खाना है । मुर्दा खाते हुए गिद्धो के झुड के करीब दो-चार चीले अवश्य दिखाई पड जाएगी ।

चील एक ढीठ पक्षी है । वह झपट्टा मार कर आदमी के हाथ से खाने की चीजे छीन ले जाती है । इस काम मे वह इतनी चतुर और निडर होती है, और इतना सधा हुआ छापा मारती है कि क्या मजाल, जो झपट्टा खाली जाए । वह हरदम हमला करने के लिए तैयार रहती है । मुर्गियो के चूजे उठा ले जाने मे उसकी खास दिलचस्पी रहती है । केचुए तथा परदार कीडे-पतगे भी उसकी खुराक है ।

चील हमारा लाभ भी करती है । बस्तियो के आसपास पडी जानवरो की लाशो और बीमारी फैलाने वाली दूसरी गन्दी चीजो को साफ करके वह हमारी सहायता करती है । वह आसमान मे बहुत ऊचे तैरती हुई-सी सीधी उड़ती है । इससे चील की ताकत, उसके हल्केपन और हवा मे तैरने की उसकी कुशलता का अन्दाज लगाया जा सकता है ।

पतली-पतली लकडियों और कटीली टहनियो को आपस मे गूथ कर और रस्सियो के टुकडे, लोहे के तार, गूदड, पत्तिया, आदि उनमे रख कर किसी बड़े और ऊचे पेड़ पर चील अपना घोसला बनाती है। इसके अडे कुछ-कुछ गुलावीपन लिए हुए सफेद और लम्बूतरे-से होते है। मादा चील एक बार मे चार अडे देती है। चील के नर और मादा की शक्ल-सूरत मे कोई फर्क नहो होता। दोनो एक तरह
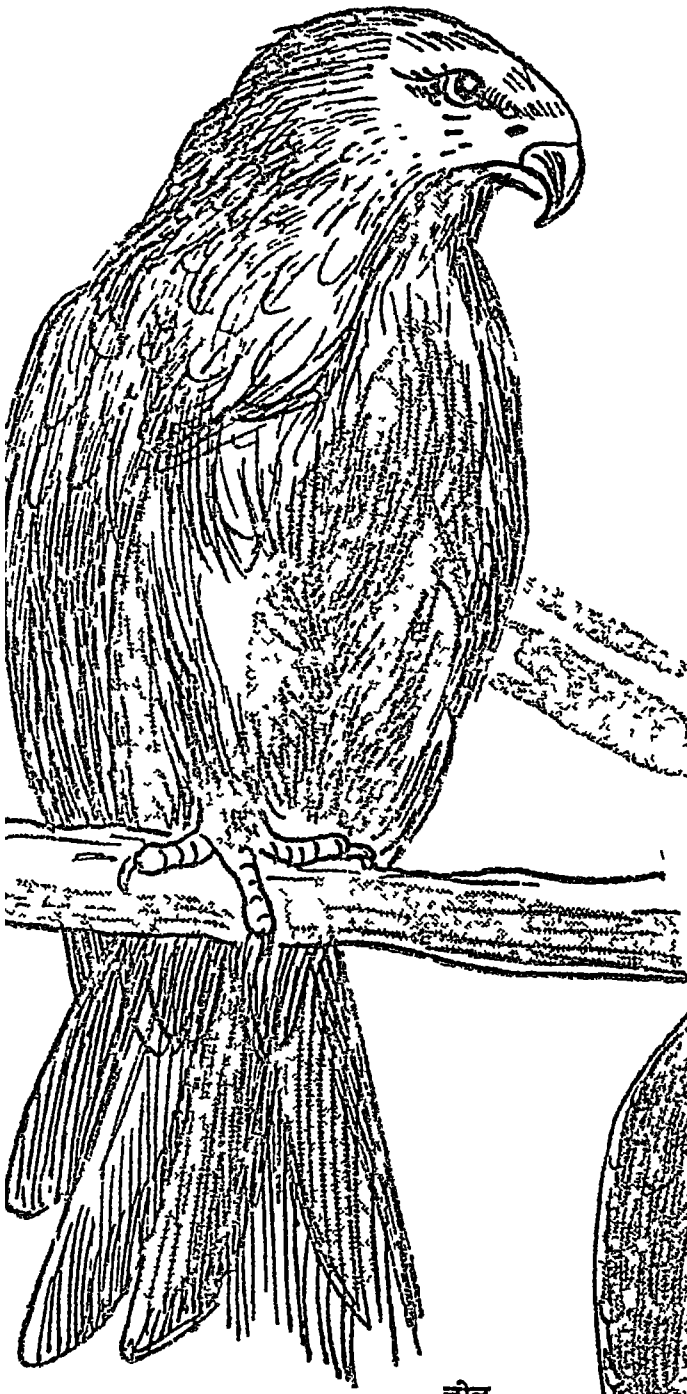
चील

के होते हैं। नर और मादा, दोनो मिल कर अपना घोसला वनाते है, दोनो मिल कर अडे सेते है और वच्चो को चुगाते हैं।
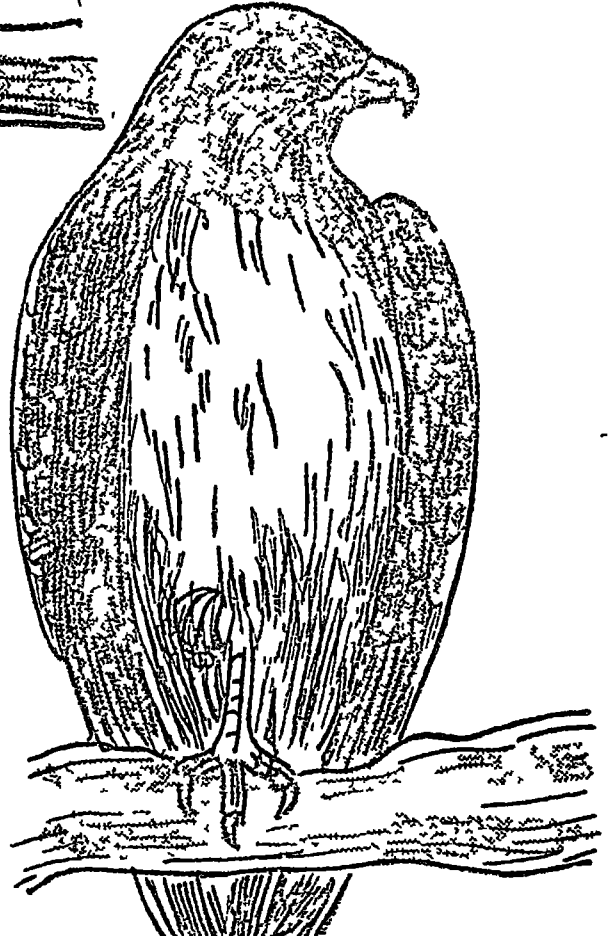
जीव, जन्तु और पौधे

(1)
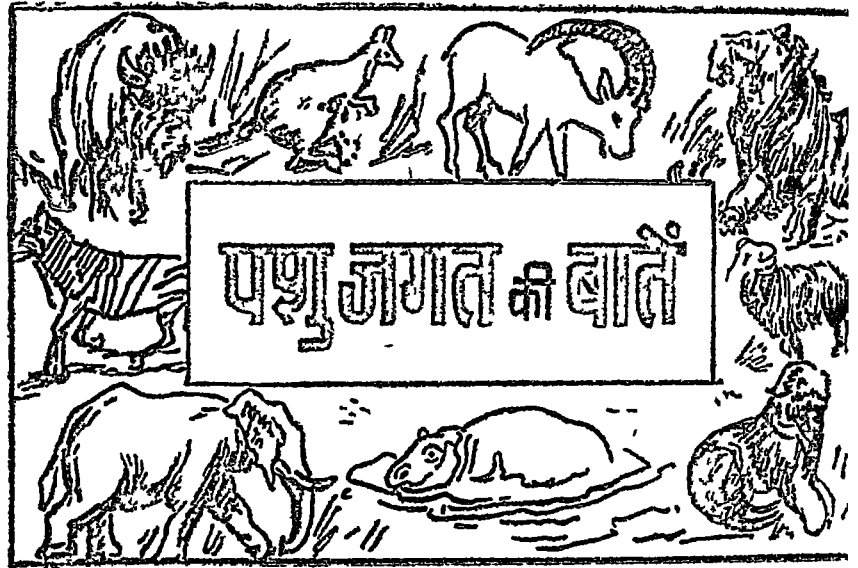
घड़ियाल

दूसरे देशो की तरह भारत मे भी 'मगरमच्छ के आसू' बहाने वाली कहावत प्रचलित है। घड़ियाल सचमुच आसू वहाता हो या न बहाता हो, पर इसमे सदेह नही कि वह एक काहिल और भोडा जानवर है। फिर भी हममे से बहुतो को शायद यह मालूम न हो कि यह बदसूरत जानवर जहा रहता है, वहा के लोगो के धार्मिक विश्वासो और लोक-गीतो मे इसका बखान पाया जाता है। घडियाल को प्राचीन मिस्र की शिल्पकला और चित्रकला मे स्थान दिया गया था। आज भी दुनिया के लाखो बौद्ध घड़ियाल को आदर से देखते है। सैकडो जगली जातियो मे तो इसकी वाकायदा पूजा होती है। भारत मे भी मगर को हजारो वरस से एक तरह के आदर से देखा जाता है।

घडियाल
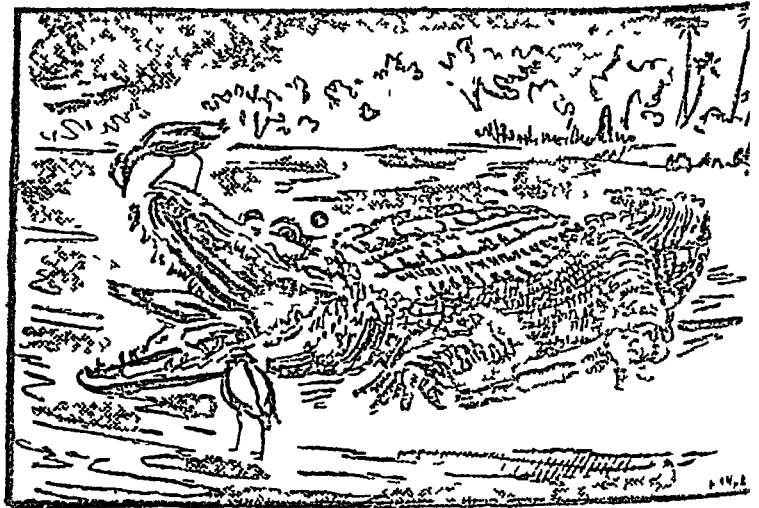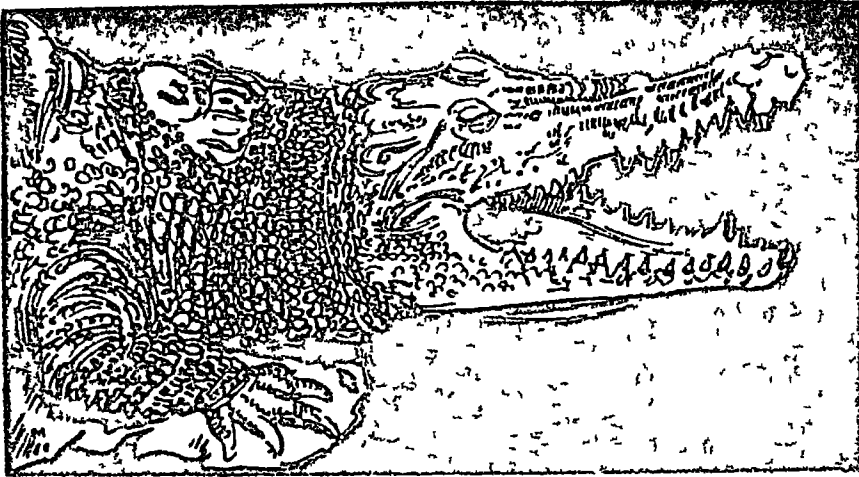
आदमी को खा जाने वाला घडियाल

घडियाल रेगने वाले प्राणियो की बिरादरी मे आता है। शायद यह कहना गलत न होगा कि मौजूदा रेगने वाले प्राणियो मे घडियाल सबसे बड़ा है। इसकी केवल चार किस्मे 20 से 30 फुट तक लम्बी पाई जाती है, वैसे आम तौर पर घडियाल 16 फुट से अधिक लम्बा नही होता। दूसरे रेगने वाले जानवरो की तरह घडियाल भी जीवन भर बढता रहता है। इसलिए इसकी सही लम्बाई बताना कठिन है। यह यकीन के साथ कहा जा सकता है कि बडे घडियाल 50 साल या उससे भी अधिक समय तक जिन्दा रहते हैं। घडियाल दुनिया के हर गर्म इलाके मे पाए जाते है। अब तक उनकी 20 से कुछ अधिक किस्मो का पता लग सका है, जिनमे से केवल चार किस्मे भारत मे पाई जाती है।

घडियाल खुश्की पर पडा हो, तब भी उस पहचानना आसान नही होता। उसकी वजह उसके शरीर की बनावट है। उसकी पीठ को देखे, तो ऐसा लगता है, जैसे मटमैले रग के खप्पर एक पर एक जुडे हुए हो। उसकी दुम के ऊपर आरे जैसे काटे होते है। जब वह पानी में होता है, तब उसके नथुने, कनपटी और आखो के अलावा शरीर का और कोई भाग दिखाई नही देता। इस तरह वह खुद छिपा हुआ सब कुछ देखता-सुनता और मजे से सास लेता रहता है। उसके नथुनो और कानो की बनावट ऐसी होती है कि जब वह पानी के भीतर डुबकी लगाता है, तब वे खुद बन्द हो जाते है। उसकी आंखो पर ऊपर-नीचे पलके होती है और आखो की पतली दर्जो से यह पता चलता है कि वह अन्धेरे में रहने वाला जानवर है। चूकि वह पानी
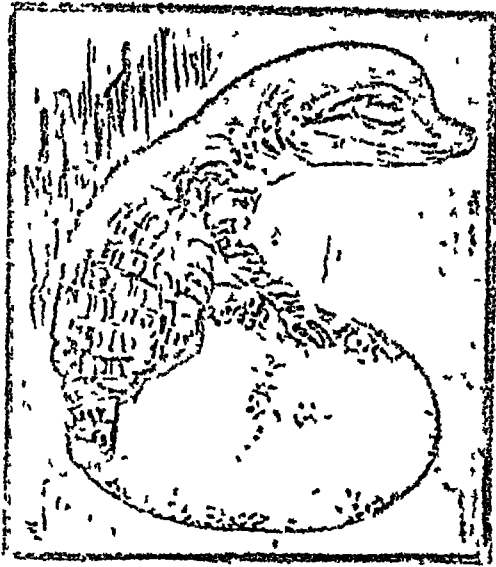
लम्बी नाक वाला घड़ियाल

का जानवर है, इसलिए उसके पैर छोटे होते हैं, इतने छोटे कि बस उसे जमीन से उठाए भर रहते है। अगले पैरो मे पाच-पाच और पिछले पैरो मे चार-चार उगलिया होती है, जो बडी मजबूत और एक-दूसरी से झिल्ली द्वारा मिली हुई होती है। अगले पैरो के बीच की तीन उगलियो पर बडे-बडे नाखून होते है। उसकी पूछ बड़ी ताकतवर होती है। जब वह तैरता है, तब उसके अग उसके शरीर से सटे होते है और वह अपनी मजबूत पूछ के सहारे ही पानी को चीरता हुआ तेजी से आगे बढता है। अलग-अलग घडियाल की बनावट मे केवल थूथनी का फर्क होता है, बाकी दूसरे अग लगभग एक-जैसे ही होते है। घडियाल की थूथनी सकरी और नुकीली होती है, लेकिन मगर की चौडी और कुछ-कुछ गोलाई लिए हुए होती है। नर घडियाल की थूथनी का अगला भाग कुछ उठा हुआ होता है, जिसमे वह सास लेने के लिए हवा भर लेता है। यही वजह है कि नर घडियाल मादा के मुकाबले मे अधिक देर तक पानी के भीतर ठहर सकता है।

घडियाल पानी मे रहने वाला जानवर है। वह नदियो, झीलो और बडे-बडे तालाबो तथा समुद्रो मे रहता है। दूसरे घडियाल की तरह समुद्र के खारे पानी मे रहने वाला घड़ियाल भी आदमी के लिए बहुत ही खतरनाक होता है। सब घड़ियाल मास खाने वाले जानवर है। वे पानी से बाहर निकल कर आम तौर पर खुश्की मे पडे रहते है, लेकिन जरा-सा खटका होते ही झट पानी मे कूद जाते है। पानी मे पहुच

दातो की लम्बी पंक्तिया

कर घडियाल अपने को सुरक्षित समझता है, क्योकि उसमे वह वहुत आसानी और तेजी से चल-फिर सकता है ।

कुछ घडियाल पानी मे शिकार करते है, कुछ शिकार को पकड कर पानी मे घसीट ले जाते है। कुछ पानी मे छिप जाते है और पानी पीने के लिए किनारे पर आए हुए जानवर पर एकाएक हमला कर देते है । कुछ घडियाल, जैसे खारे पानी के घडियाल, आदमी के लिए वहुत खतरनाक होते है । वे हर वर्ष सैकडो आदमियो को पकड कर खा जाते है । जोडा खाने के दिनो मे घडियाल बहुत ही भयकर हो जाता है । उन दिनो कभी-कभी वह अपने रास्ते मे आने वाली छोटी-छोटी नावे तक उलट देता है । अधिकतर घडियाल निगलने से पहले अपने शिकार को कुचल लेते है । घडियाल के दोनो जवडो मे तेज दातो की एक-एक पात होती है । इसके दात छोटे-वडे होते है और हर दात के साथ एक फालतू दात भी लगा रहता है, जो पुराने दात के टूट जाने पर तुरन्त उसकी जगह ले लेता है । यो तो उसकी खास खुराक मछलिया है और उन्ही पर वह निर्भर भी रहता है, लेकिन अगर जमीन पर रहने वाला कोई जानवर उसकी चपेट मे आ जाए, तो वह उसे भी निगल जाता है ।

नर और मादा घडियाल जोडा खाने के दिनो मे एक-दूसरे को सुन कर और सूघ कर तलाश करते है । इस जमाने मे नर घडियाल जोर-जोर से डकारता है । उसकी डकार आध मील दूर से भी सुनी जा सकती है । साथ ही वह कुछ गिल्टियो से तेज खुशवू भी छोडता है ।

घड़ियाल

घडियाल के अडे बत्तख के अडो जैसे लम्बूतरे होते है। मादा घडियाल एक बार में 20 से 90 तक अडे देती है। अडे सफेद, चमकीले और कडे छिलके वाले होते है। मादा घडियाल किनारे के करीब ही बालू में गड्ढा बना कर अडो को उसमें छिपा देती है। कुछ घडियाल अडो को सेने मे माता-पिता जैसी मुहब्बत का सबूत देते है। वे रेत मे दबे हुए अडो के ऊपर सो जाते है। बच्चे जब अडो से निकलते है, तब वे एक खास किस्म की आवाज निकाल कर इस ससार में अपने आने का ऐलान करते है। उनकी आवाज सुन कर मादा घडियाल उन्हे खोद कर गड्ढे से बाहर निकालती है और उन्हें पानी मे ले जाती है। घडियाल के बच्चे बहुत तेजी से बढते है। शुरू के पाच-छ वर्ष तो वे हर वर्ष एक-एक फुट के करीब बढ जाते है। कई किस्म के घडियाल कीचड मे सर्दिया बिताते है। लेकिन गर्म देशो में रहने वाले कुछ घडियाल पानी सूख जाने पर मुर्दा-से हो जाते है।

फणधर

(2)

भारत के सांप

सांप हमारे देश के कोने-कोने मे पाए जाते है। भारत मे 330 तरह के साप मिलते है, मगर सौभाग्य से उनमे सब-के-सब जहरीले नही होते। उनमे से खुश्की पर रहने वाले 40 तरह के साप और 29 तरह के पनिहा साप ही आदमी के लिए जहरीले होते है। बाकी 261 प्रकार के सापो मे एक भी जहरीला नही होता।
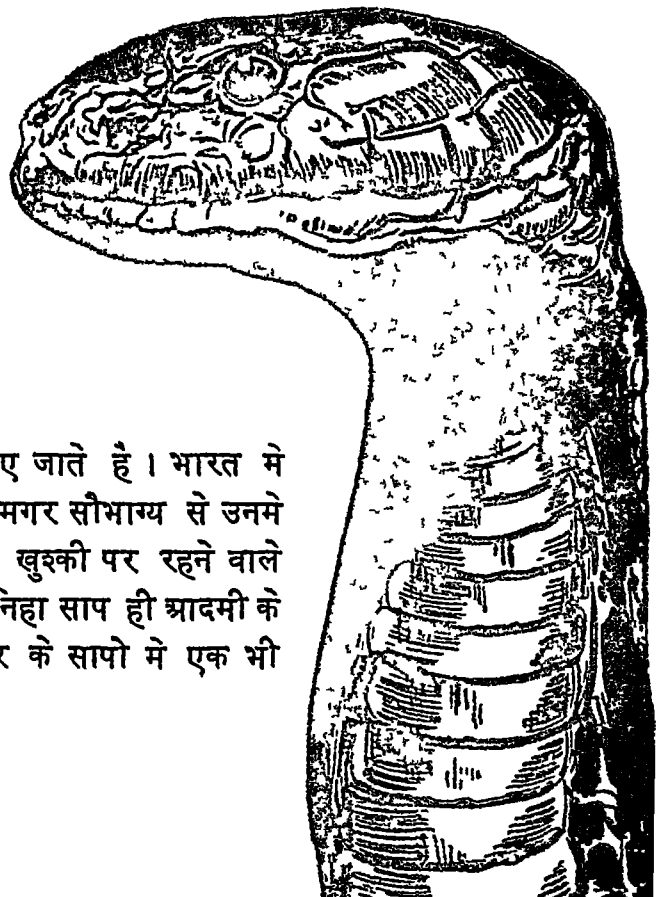
साप के शरीर की बनावट मे कुछ वाते वडी अजीव है। न साप के हाथ होते है, न पैर। फिर भी वह चल-फिर सकता है, यहा तक कि मौका पडने पर वह अपने दुश्मनो से लड भी लेता है। साप के कान नही होते, लेकिन आम तौर से यह समझा जाता है कि सपेरे की बीन सुन कर साप मस्त हो जाता है। यह बात विल्कुल गलत है। अगर वजती हुई बीन हिलाई न जाए, तो साप भी फन नही हिलाएगा। इससे यह साफ है कि आवाज का उस पर कोई असर नही होता। साप के कान नही होते, इसलिए तेज-से-तेज आवाज भी उसे सुनाई नही देती। लेकिन, जमीन पर जो धमक पैदा होती है, वह चाहे कितनी ही हल्की क्यो न हो, साप उसे तुरन्त जान लेता है।
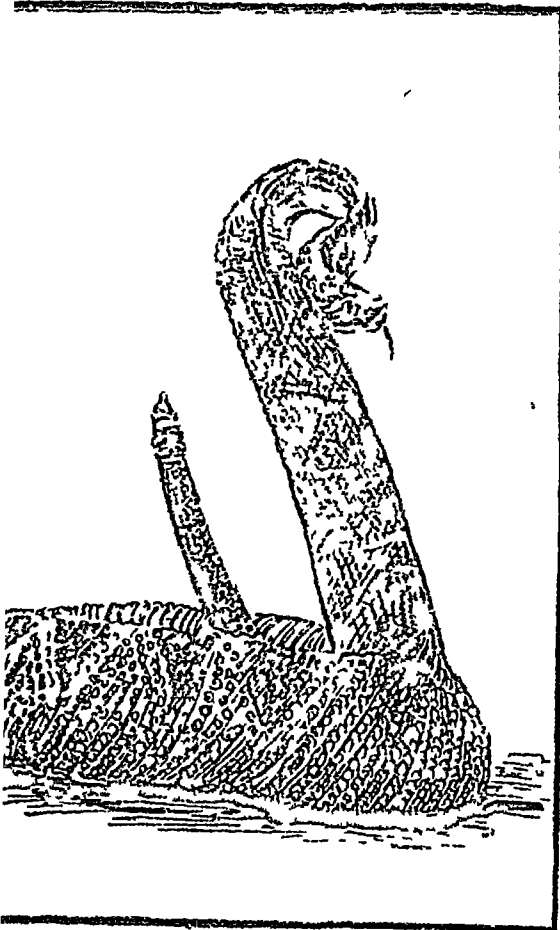
डरावनी मुद्रा में साप

साप एक रेंगने वाला कीडा है। उसके शरीर मे एक छोटा-सा सिर, दो तेज आखे, चौडाई मे काफी फैल सकने वाला मुह और बीच से दो हिस्सो मे फटी हुई जीभ होती है। उसका वाकी पूरा शरीर गोलाई लिए हुए लम्वा होता है। शरीर का पिछला भाग पतला और नुकीला होता है, जिसे साप की पूछ कहते है। दूसरे जानवरो की तरह साप की पूछ उसके वदन का कोई अलग हिस्सा नही होता। समुद्र मे रहने वाले पनिहा सापो की पूछ चपटी होती है, लेकिन खुश्की के सापो की पूछ गोल होती है।

साप एक डरपोक जानवर है। मौसम की सख्ती से वचने के लिए वह किसी चौकस जगह पर छिप कर बैठ जाता है और मौसम अनुकूल होने पर वहा से निकलता है। जहा तक बन पडता है, वह हमेशा वच कर भागने की कोशिश करता है। अगर साप के पीछे न पडा जाए, तो वह हर्गिज नही काटता। वास्तव मे, साप अपनी रक्षा के

करैत
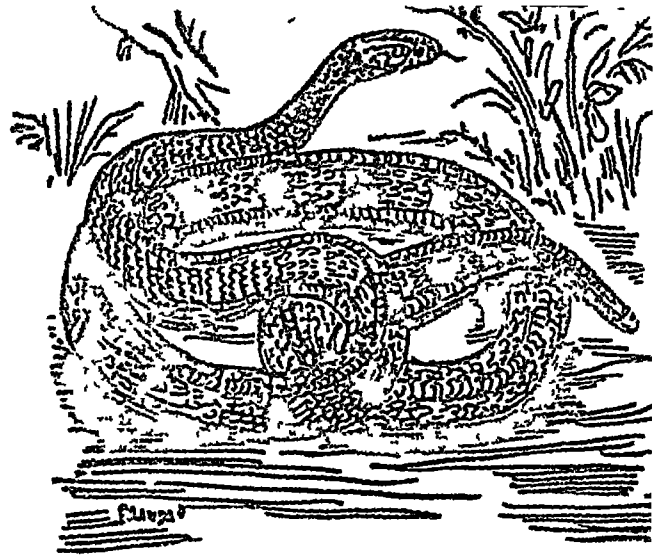
लिए ही दूसरो पर हमला करता है । कुछ साप चिढ जाने पर जोर से फुकारते हैं। उस समय उनके फेफडो से तेजी से हवा निकलने पर बडी भयानक आवाज होती है । सापो को मोटे तौर पर चार भागो मे बाटा जा सकता है ।

(1) खुश्की पर रहने वाले सांप

इन सापो मे जहरीले और गैर-जहरीले दोनो प्रकार के साप काफी वडी तादाद मे होते हैं। भारी-भरकम अजगर, चीत, धामिन और अन्य वहुत-से साप गैर-जहरीले सापो की विरादरी मे आते है । करैत, नाग, गडार, गेहुवन, लोहार, फेटारा और अफई—ये सब साप वहुत जहरीले होते है। दूध पिलाने वाले छोटे-छोटे जन्तु इनकी खुराक होते है। साप अपना भोजन चवाते नही, यो ही निगल लेते हैं।

(2) पानी में रहने वाले सांप

कुछ साप पानी मे रहते है । इनमे समुद्र मे रहने वाले सापो को छोड़ कर कोई भी जहरीला नही होता । हा, समुद्र मे रहने वाले साप बहुत जहरीले होते है। पनिहा सापो के नथुने सिर के विल्कुल ऊपरी भाग मे होते है, ताकि वे आसानी से पानी मे सास ले सके। छोटी मछलिया और कीडे उनका भोजन है ।

(3) पेड़ों पर रहने वाले सांप

पेडो पर रहने वाले साप पतले, लम्बे, भूरे या हरे रग के और देखने मे बहुत सुन्दर
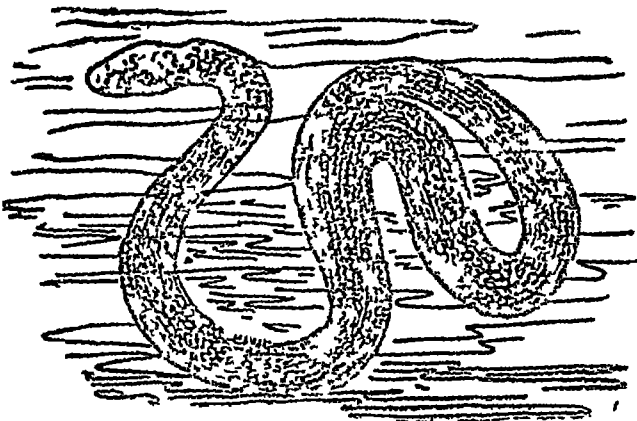
पनिहा साप
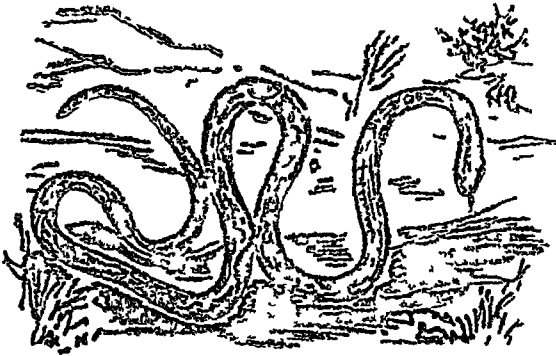
धामिन

होते है। इनमे कुछ ही साप जहरीले होते है, लेकिन उनके काटने से आदमी मरता नही, उनका विष बहुत ही हल्की किस्म का होता है ।

(4) बिलों मे रहने वाले सांप

इस प्रकार के साप जमीन के भीतर रहते है। ये कीडो-मकोडो और केचुओ पर गुजर करते है। इनके मुह का अगला भाग नुकीला होता है, जिससे इन्हे अपने बिल बनाने मे बडी सुविधा होती है । इनमे एक साप केचुए की शक्ल का होता है, जिसे दिखाई नही देता। दुमुही भी इनकी बिरादरी मे है। बिलो मे रहने वाले साप ज्यादातर जहरीले नही होते ।

साप के जवडो मे दातो की कई पाते होती हे । जहरीले सापो के ऊपरी जवडे की इन पातो के अतिरिक्त पीछे की ओर झुके हुए दातो का एक और जोडा होता है । ये दोनो दात इजेक्शन लगाने की सूई की तरह होते है। इनके मुह मे बादाम की शक्ल की दो गिलटिया होती है, जो तालू मे दोनो तरफ ठीक आखो के नीचे मिलती है और छोटी-छोटी नालियो द्वारा दातो से जुडी रहती है। जब साप काटता है, तो ये गिलटिया दबती है और विष जहरीले दातो से होकर मनुष्य के शरीर मे पहुच जाता है । साप का जहर चिपचिपा, हल्का पीला और गोद की तरह होता है। साप के जहर मे किसी प्रकार का स्वाद नही होता । अगर साप का जहर सुखा लिया जाए और उसे काफी समय तक रखा रहने दिया जाए, तो भी उसका जहरीलापन बाकी रहता है । साप के लिए उसका जहर बहुत उपयोगी चीज है। बाल और नाखून को छोड कर साप हर खाई हुई चीज को पचा लेता है । साप का जहर उस समय तक असर नही करता, जब तक वह सीधा खून मे नही पहुचता। इसलिए अगर मुह मे घाव या खरोच न हो, तो इसे बेखटके निगला जा सकता है। खून मे पहुच कर भी यदि साप का जहर रगो मे दौरा न कर सके, तो उसका कोई खास असर नही होता। इसलिए साप की काटी हुई जगह से

मटिया
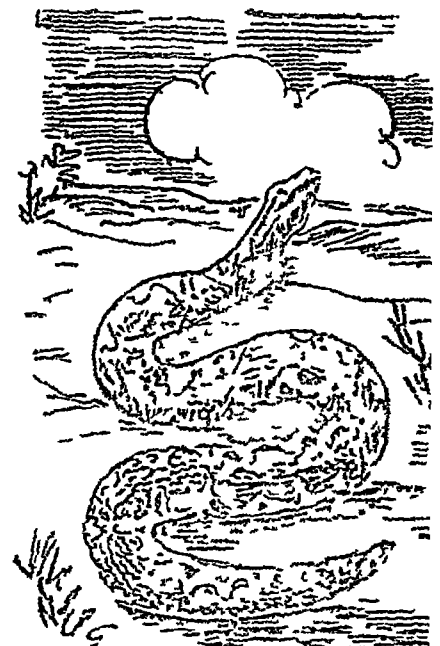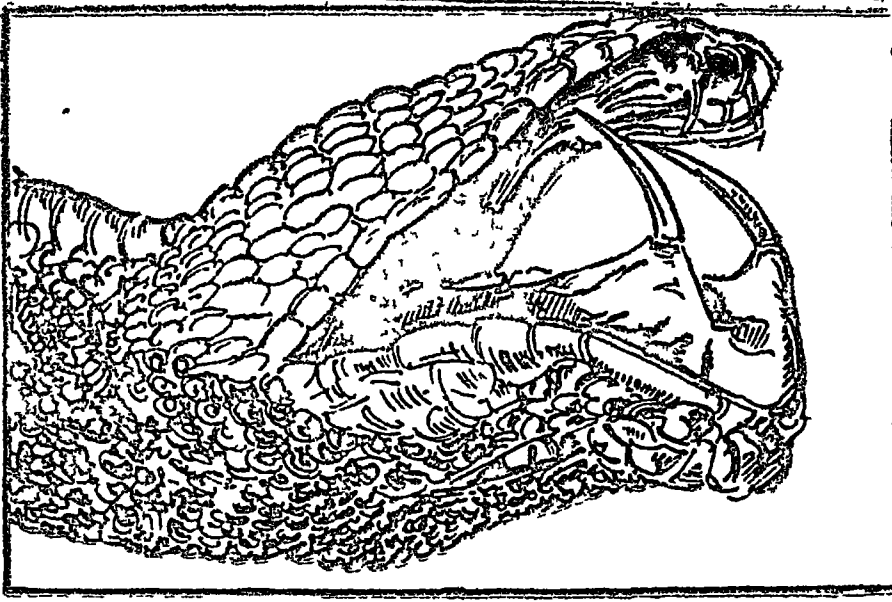
कुछ ऊपर फौरन किसी चीज से मजबूत गाठ लगा दी जाती है। ऐसा केवल इसलिए किया जाता है कि जहर खून मे पहुच कर पूरे शरीर मे दौरा न करने पाए।

काटते समय बदन मे कितना जहर पहुचता है, यह साप की काटते समय की हालत पर निर्भर करता है । नाग, जिसे बडजतिया भी कहते है, अगर जम कर किसी को काट ले, तो खून मे 30 बूद तक जहर पहुच जाता है, और अगर तुरन्त इलाज न हो, तो मौत से बचना कठिन हो जाता है। यह 8 से 12 फुट तक लम्बा होता है, मगर 15 फुट या उससे भी अधिक लम्बे नाग पाए गए है। हिमालय, असम, बगाल और वर्मा के घने जगलो और दक्षिण भारत के पहाडी इलाको मे यह ज्यादा पाया जाता है ।

भारत के सापो मे काला नाग, जिसे नागराज भी कहते है, सबसे अधिक भयानक होता है। फेटारा, गडार, लोहार, गेहुवन और घोडा पछाड साप भी लगभग काले साप ही की तरह जहरीले होते है। गेहुवन वहुत बेढब होता है। जब वह विरझा जाता है, तव महीनो रास्ता वन्द किए रहता है । घोडा पछाड साप दौडने मे इतना तेज है कि घोडे को पछाड देता है। गावो मे कहावत है कि फेटार का डसा पानी तक नही मागता। गडार का डसा लहर तक नही लेता और लोहार के डस लेने से खोपडी चटख जाती है। इसी तरह काले नाग के सम्बन्ध मे लोग कहते है कि उसके सूघ लेने भर से आदमी मर जाता है, बल्कि उसके आख भर देख लेने से ही जहर चढने लगता है। गाव वालो की इन बातो मे सचाई नही है, मगर उनसे यह पता चलता है कि इन सापो को वे कितना खतरनाक समझते

सुखाया हुआ साप का जहर
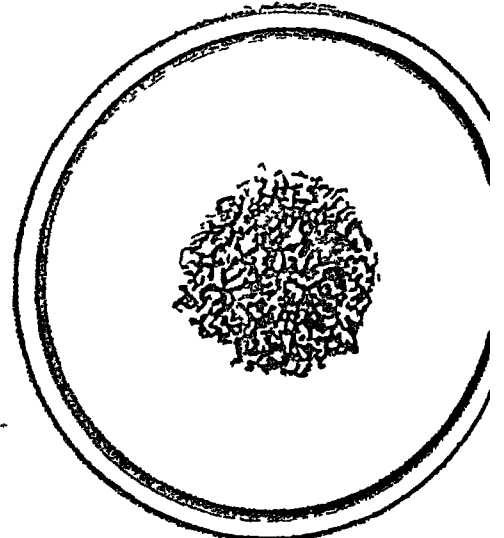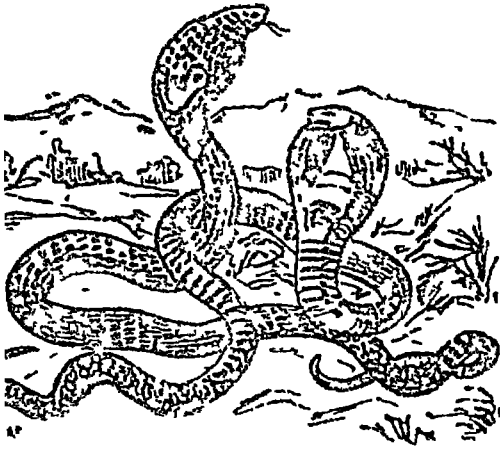
नाग

है । काले नाग को गावो मे करिया, काला और भैसाडोम भी कहते हैं। यह आम तौर से काले रग का और देखने मे काफी सुन्दर होता है। यह खास तौर से वरसात मे घरो मे घुस आता है। इस साप मे करतव सीखने का गुण होता है, इसलिए सपेरे अधिकतर इसे पालते हैं। जब यह अपना फन खडा कर ले, तब समझिए कि अब यह पूरी तरह चौकस है। अपने को हर तरह से तैयार रखने के लिए ही यह अपना फन खडा करता है । इसकी गर्दन के ऊपरी भाग मे दोनो ओर मछली के काटो जैसी पसलिया होती हैं। ये पसलिया पुट्ठो से जुडी रहती हैं । जब उसके पुट्ठो मे तनाव पैदा होता है, तब पसलिया दोनो ओर बाहर की तरफ तन जाती हैं और इसकी गर्दन फैल जाती है। इस तरह नाग अपना फन बनाता है ।

काले नाग की मादा एक बार मे 12 से 22 तक अडे देती है। दो महीने बाद अडे फूटते हैं और उनसे बच्चे निकल आते हैं। नाग के बच्चे और भी खतरनाक होते हैं। बच्चे होने के कारण वे फुर्तीले होते हैं और जरा-जरा-सी बात पर काटने को दौडते हैं। पुराने साप आम तौर से दब्बू होते हैं और बचने की फिक्र मे रहते हैं।

साप के काटने से हमारे देश मे काफी आदमी मरते हैं। साप का जहर तेजी से चढता है और आम तौर पर 2 से 6 घटे के भीतर मौत हो जाती है । साप का डसा हुआ आदमी काटने की जगह पर गहरा दर्द अनुभव करता है । दर्द ऊपर की ओर बढता मालूम होता है । काले नाग की डसी हुई जगह नीली पड जाती है या उसमे मटमैले रग का खून बहने लगता है। जहर शरीर पर अपना असर करता है और शरीर धीरे-धीरे बेसुध होता जाता है। साप का डसा हुआ आदमी चाहता है कि वह लेट जाए और आराम करे। उसका सिर भारी होकर झुक जाता है, आखो की पलकें झपकने और मुह से लार बहने लगती है । फिर उसे सास लेने मे कठिनाई होती है और थोडी ही देर बाद सास रुकने से मृत्यु हो जाती है ।

नागराज
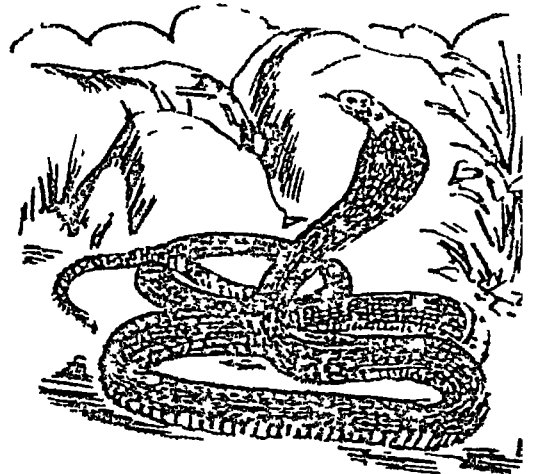
यदि किसी को जहरीला साप काट ले, तो सबसे पहले यह जरूरी है कि काटी हुई जगह से कुछ ऊपर किसी डोरी से या कपडे वगैरह से खूब कस कर वाध दिया जाए। कपडे या डोरी को इतना कस कर वाधना चाहिए कि उस जगह का खून ऊपर न चढ़ने पाए। फिर किसी तेज चाकू या उस्तरे को पहले आग मे गर्म करके या खौलते हुए पानी मे उबाल कर उससे काटी हुई जगह को चीर देना चाहिए, जिससे जहरीला खून वह कर शरीर के बाहर निकल जाए। जख्म को लाल दवा से धो देना चाहिए और तुरन्त डाक्टरी सहायता लेनी चाहिए।

ऐण्टीवीन की सूई लगाना काले नाग के काटे का खास इलाज है। ऐण्टीवीन एक दवा है, जो घोडे के खून से तैयार की जाती है। इस दवा को तैयार करने की विधि यह है कि पहले किसी घोडे के खून मे किसी जवान काले साप का जहर रोजाना सूई द्वारा थोडा-थोड़ा करके पहुचाते है। धीरे-धीरे जहर की मात्रा वढाते रहते है। उसका नतीजा यह होता है कि घोडा साप के जहर को सहने का आदी हो जाता है। फिर उस पर साप के तेज-से-तेज जहर का भी कोई असर नही होता। ऐसे घोडे के खून को लेकर उसमे से पनछा या सीरम निकाल लिया जाता है।

इसमे साप के जहर को मारने की ताकत होती है। यही पनछा छोटी-छोटी शीशियो मे ऐण्टीवीन दवा के नाम से भारत के हर अच्छे अस्पताल मे मिलता है। नाग के काटे हुए मनुष्य के शरीर मे जब यह ऐण्टीवीन दवा सुई के द्वारा पहुचती है, तब उसके जहर का असर जाता रहता है। इस तरह आदमी जहर के असर से बच जाता है और उसके जीवित रहने के अवसर वहुत वढ जाते है।

भारत मे कभी-कभी विषहीन सापो के काटने पर भी भय के कारण मनुष्य की मृत्यु हो जाती है। अगर आदमी बेहोश न हो और दौडता फिरे, तो यह समझ लेना चाहिए कि इस आदमी को विषधर साप ने नही काटा है। उसका दिल वहला कर और ढाढस देकर उसे आसानी से ठीक किया जा सकता है। हा, अगर काटी हुई जगह पर दो विषैले दातो के सूराख मिले, जिनमे से काला रक्त बहता हो और जहर चढने के ऊपर लिखे लक्षण पैदा हो, तो उसे फौरन अस्पताल पहुचाना चाहिए।

विचित्र जीव

स्पंज

स्पंज पौधों की तरह एक प्राणी है। वह हमेशा पानी में रहता है। पैदा होने के बाद वह कुछ ही देर चलता-फिरता है और उसके बाद किसी एक जगह पर जम जाता है। स्पंज बहुत तरह के होते हैं। कुछ स्पंज आदमी के लिए बड़े काम के हैं। इस बात का प्रमाण मिलता है कि बहुत शुरू के जमाने से स्पंज का उपयोग होता आया है। कहावत है कि प्राचीन यूनान में माताएं रोते हुए बच्चों को शहद में डूबा हुआ स्पंज पकड़ा दिया करती थीं, जिसे वे चूसा करते थे। चित्रकारी की कूचियों और फर्श आदि साफ करने के कामों में भी स्पंज का उपयोग किया जाता था। यूनानी सिपाही पानी पीने के बरतन की जगह अपने साथ पानी में भीगे हुए स्पंज रखते थे।

आजकल भी स्पंज का बीसों तरह से उपयोग किया जाता है। घरों में रसोईघर और गुसलखानों के फर्श और छतों की सफाई के लिए स्पंज का उपयोग होता है। डाक्टर लोग चीर-फाड़ के समय खून को सोखने के लिए स्पंज इस्तेमाल करते हैं। लेकिन स्पंज का सबसे अधिक उपयोग रेल की पटरियों, मोटरों और मशीनों की सफाई में होता है। उद्योग-धंधों में, चीर-फाड़ और आरोग्य सम्बन्धी चीजों के बनाने में, चमड़े की सजावट और मिट्टी की बढ़िया चीजों में चमक पैदा करने में स्पंज बड़े काम की चीज साबित हुआ है। जौहरी और सुनार जवाहरात को साफ करने के लिए स्पंज काम में लाते हैं। स्पंज एक सुन्दर वस्तु है और उससे सजावट का भी काम लिया जाता है।

स्पंज की बनावट इतनी निराली होती है कि बहुत-से वैज्ञानिक उन्हें बहुकोष्ठकी जीवों में बिल्कुल अलग-कोटि का जीव मानते हैं। बहुत-सी बातों में स्पंज पौधों की तरह होते हैं। इसलिए, बहुत दिनों तक यह बहस चलती रही कि स्पंज असल में है

क्या—-पौधा है, या जानवर है ? स्पज मे वह मुख्य तत्व नही होता, जो पौधो की जान होता है। इसके अतिरिक्त स्पज रोएदार लारवो से पैदा होता है । ये दोनो बाते साबित करती है कि स्पज पशु या जानवर है । बहुत-से स्पज ऐसे घोघो पर भी उग आते है, जिनके भीतर 'वैरागी केकडा' रहता है । यह दोनो के लिए लाभदायक होता है। स्पज के रेशो के नीचे छिपे रहने के कारण केकडे की रक्षा हो जाती है और केकडे पर सवार होने के कारण स्पज उसके साथ-साथ इधर-उधर आता-जाता रहता है । इस तरह से उसे अपना भोजन प्राप्त करने के अच्छे अवसर मिल जाते है । स्पज बदमजा होता है । इसलिए कुछ घोघो को छोड कर, दूसरे जानवर उसे नही खाते ।

स्पज की ढाई हजार से ऊपर किस्मो का पता चल चुका है, परन्तु मीठे पानी मे रहने वाले स्पजो की किस्मे 200 से अधिक नही है । बाकी स्पज ससार भर के समुद्रो मे पाए जाते है । यो तो स्पज नदियो और झीलो मे भी रहते है, परन्तु उनके रहने के लिए सबसे अनुकूल स्थान समुद्र के किनारो की पथरीली या कडी तली है और मूगे की वे चट्टाने है, जो 'लगूनेनो' के निकट पाई जाती है ।

यो देखने मे स्पज एक बेजान चीज मालूम होता है । पर उसका जानदार होना साबित हो चुका है। अनुभव से यह देखा गया है कि जब पानी की धारा स्पज के शरीर के नन्हे-नन्हे छेदो मे से लगातार बहती है, तो स्पज अपने शरीर को बारी-बारी

ने सिकोड़ता और फुलाता रहता है। केवल यही नही कि स्पज बढते और भोजन करते हैं, वे सन्तान भी उत्पन्न करते हैं जो जीवित प्राणियो की सबसे खास विशेषता है। उनके शरीर में पैर जैसी कोई चीज नही होती, न ही उनके सूत जैसी पतली मूछे होती है। बडे स्पज चल-फिर नही पाते। वे प्राय किसी चट्टान या समुद्र की तली से चिपक कर एक जगह जम जाते है। उनका कोई निश्चित आकार नही होता। वे गेंद, ग्लोब, प्याले या शकु जैसे होते हैं। नाप मे वे पिन के सिरे जितने छोटे भी होते है और तीन फुट लम्बे और एक फुट चौड़े भी। जहा तक रग का सम्बन्ध है, स्पज सफेद, लाल, गुलाबी, हरे, पीले, नारगी, भूरे और ऊदे, कई रग के होते है।
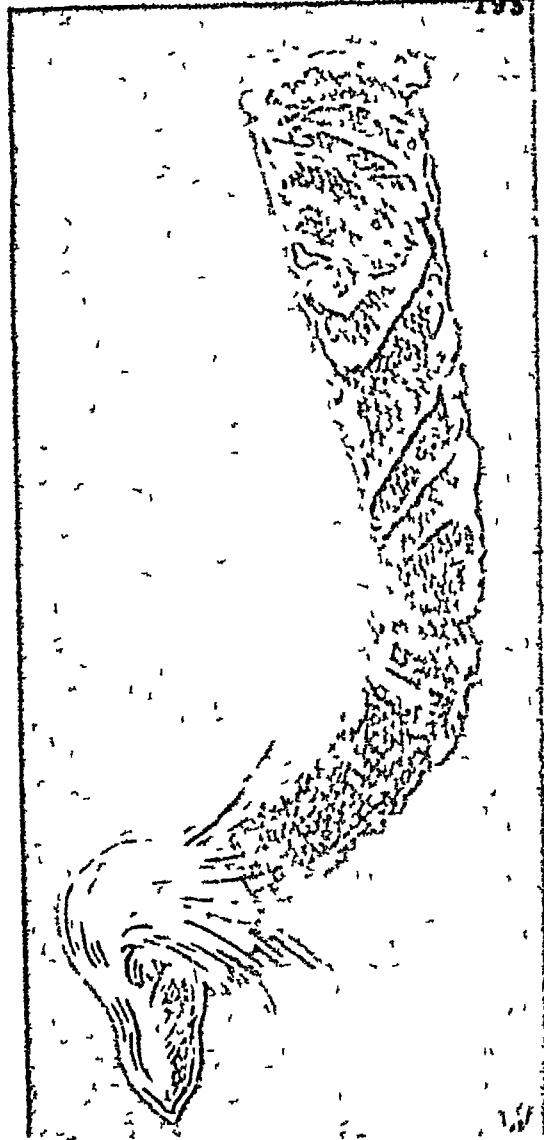
स्पज का शरीर बिलकुल छलनी की तरह होता है। उसमें करोडो छोटे-छोटे रोम-रन्ध्र (पोर्स) या सूराख होते है, जो या तो उसके शरीर के भीतर की खोखली जगह तक जाते है या फिर उन नालियो मे जाकर मिल जाते है, जो शरीर के पार तक जाती है। इन सूराखो से पानी की धारा बराबर स्पज के शरीर के भीतर जाती रहती है और शरीर के आखिर मे जो कुछ खुली जगह होती है, उससे बाहर निकल जाती है। स्पज के शरीर के आखिर की यह खुली जगह वास्तव मे उन नालियो

स्पज की कलिया

का अन्तिम सिरा होती है, जो उसके शरीर के हर भाग से गुजरती है। इस तरह से स्पज के पूरे शरीर मे नालिया-ही-नालिया होती है, जिनमे से होकर पानी उसके पूरे शरीर मे दौड़ता है। शरीर का वाहरी ढाचा जेली या शहद जैसे पदार्थ का वना होता है। पर जब हम स्पज को अपने काम मे लाते है, तब उसमे यह जेली जैसा पदार्थ बाकी नही रहता।

स्पज को दो परतो मे बाटा जा सकता है—एक बाहरी परत और दूसरी भीतरी परत। दोनो की मोटाई मे काफी अन्तर होता है। दोनो परतो को अलग करने के लिए बीच मे एक पर्त और होती है, जिसमे कुछ पेशिया होती है। स्पज इन्ही पेशियो से भोजन पचाता है, बच्चे पैदा करता है, और मलमूत्र बाहर निकालता है। लेकिन इस परत की खास विशेषता यह है कि इसमे असंख्य चमकीले रेशे होते है, जिनसे स्पज का पूरा ढाचा सधा रहता है। स्पज के शरीर का यही वह भाग है, जो वाणिज्य, व्यापार, उद्योग और ललित कलाओ मे अधिकतर काम आता है।

स्पज जल के अन्दर तिर रहे सूक्ष्म वनस्पतियो को खाता है। कुछ स्पज शायद जीवाणुओ को भी खाते रहे है, पर यह निश्चय नही हो सका है। स्पज की पानी सोखने की क्रिया बडी मन्द होती है। एक छोटे-से स्पज के शरीर मे पानी के बहाव की गति प्रति सेकड केवल 3 से 4 इच तक होती है, जब कि उसमे से होकर रोजाना लगभग 6 गैलन या 36 बोतल पानी गुजरता है। स्पज के शरीर मे पानी के बहाव की गति

स्पज

को उसके वाहरी छिद्रो के सिकुडने और फैलने की गति धीमा या तेज वनाती है। स्पज अपने अन्दर जो पानी खीचता है, वह उसके शरीर के वाहरी छिद्रो मे से होकर धीरे-धीरे वहता रहता है और नालियो मे से होता हुआ शरीर के भीतर तक जाता है। इस तरह स्पज को भोजन करने और सास लेने के लिए आवश्यक आक्सीजन मिलती रहती है।

स्पज की कुछ पेशियो मे पानी में छिपे विप के पदार्थों को अलग करने की अद्भुत शक्ति होती है। ज्यो ही पानी मे उसे ऐसे पदार्थों का पता लगता है, उसके शरीर के सूराख तुरन्त वन्द हो जाते है और पानी में मिले विपैले पदार्थ शरीर के भीतर नही घुस पाते।

स्पज दो या तीन तरह से अपनी नस्ल वढाते है। एक तो यह कि उनके शरीर के वाहर छोटी-छोटी कलिया-सी निकल आती है, जो वडी होकर अलग हो जाती है। इस तरह कलिया निकलती और अलग होकर स्पज वनती रहती है। लेकिन जव प्रकृति की वाहरी परिस्थितिया अनुकूल नही होती और सर्दी, गर्मी तथा अन्य वाधाओ के कारण शरीर के वाहर निकलने वाली कलियो के नष्ट होने का डर रहता है, तव ये कलिया शरीर के भीतर निकलती है। इसके अलावा स्पज के बीजाणु पानी की धारा के साथ वह कर जव मादा स्पज के शरीर के साथ मिलते है, तव वे तैरने वाले छोटे-छोटे रोएदार लारवो का रूप धारण कर लेते है और उस स्पज से, जिसमे वे पैदा होते है, अलग हो जाते है। लारवे कुछ समय तैर कर किसी जगह नीचे बैठ जाते है। अपना रोएदार रूप त्याग कर लारवे स्पज बन जाते है या स्पजो की एक वस्ती के रूप मे फलने-फूलने लगते है।

सबसे छोटा स्पंज

ससार के तीन
सबसे बडे स्पंज

स्पज की वहुत-सी जातियो मे यह विशेषता होती है कि उनके शरीर से टूट कर अलग हुए हिस्से फिर उग आते है। इस तरह स्पज के टुकडो की मदद से भी उनकी सख्या वढ़ाई जा सकती है, क्योकि हर टुकडा वढ कर फिर पूरा स्पज वन जाता है। स्पज एक ऐसा जीव है, जो अपना अलग व्यक्तित्व बनाए रखना नही चाहता। जव भी दो-तीन स्पज पास-पास आ जाते है, तव वे इस तरह एक-दूसरे में समा जाते है कि इसका गुमान भी नही होता कि वे कभी अलग-अलग रहे होगे।

भारत की फसलें

★
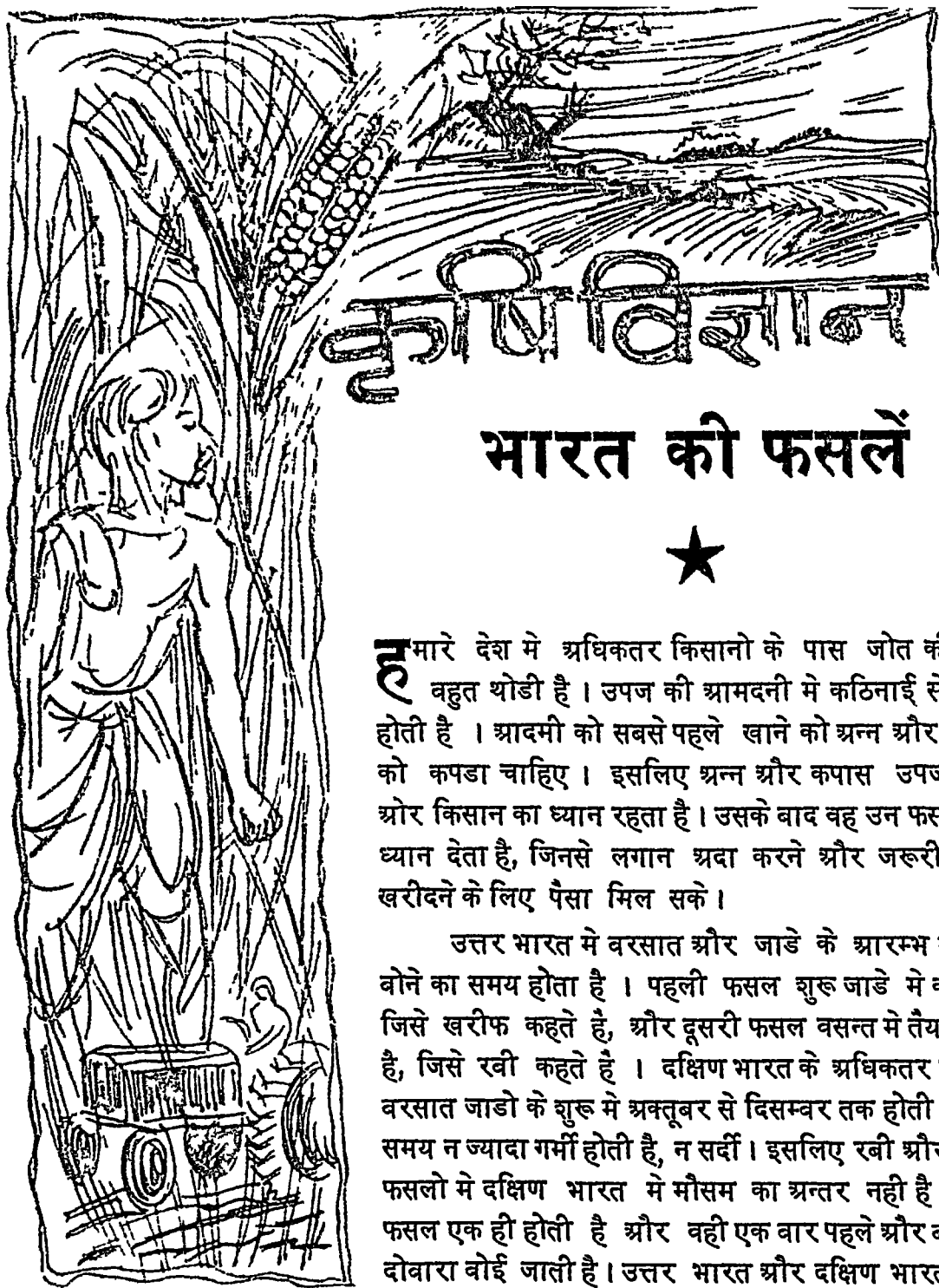
हमारे देश मे अधिकतर किसानो के पास जोत की भूमि वहुत थोडी है। उपज की आमदनी मे कठिनाई से गुजर होती है। आदमी को सबसे पहले खाने को अन्न और पहनने को कपडा चाहिए। इसलिए अन्न और कपास उपजाने की ओर किसान का ध्यान रहता है। उसके बाद वह उन फसलो पर ध्यान देता है, जिनसे लगान अदा करने और जरूरी सामान खरीदने के लिए पैसा मिल सके।

उत्तर भारत मे वरसात और जाडे के आरम्भ मे फसल वोने का समय होता है। पहली फसल शुरू जाडे मे कटती है, जिसे खरीफ कहते हैं, और दूसरी फसल वसन्त मे तैयार होती है, जिसे रवी कहते हैं। दक्षिण भारत के अधिकतर भाग मे वरसात जाडो के शुरू मे अक्तूबर से दिसम्वर तक होती है। उस समय न ज्यादा गर्मी होती है, न सर्दी। इसलिए रवी और खरीफ फसलो मे दक्षिण भारत मे मौसम का अन्तर नही है। वहा फसल एक ही होती है और वही एक वार पहले और बाद को दोवारा वोई जाती है। उत्तर भारत और दक्षिण भारत, दोनो मे खरीफ की फसल मे धान, ज्वार, वाजरा, मक्का, कपास, गन्ना, आदि पैदा होते हैं। पर रवी की फसल केवल उत्तर भारत मे होती है, जिसमे गेहू, जौ, लाही, सरसो, अलसी आदि पैदा होते हैं। जतरी के हिसाब से खरीफ की बुवाई आपाढ और रवी की बुवाई कार्तिक के महीने मे होती है।
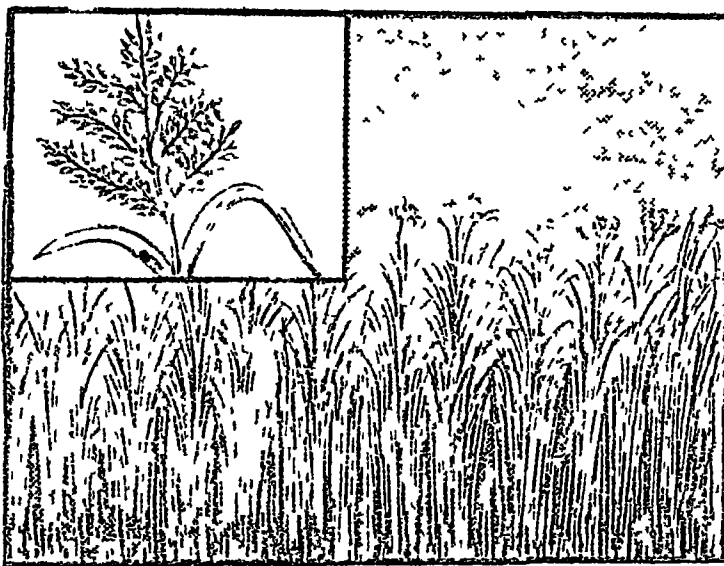
धान की फसल और पौधा

चावल

चावल भारत की मुख्य पैदावार है। ससार भर मे जितना चावल पैदा होता है, उसका लगभग 90 प्रतिशत पूर्वी और दक्षिण-पूर्वी एशिया मे पैदा होता है। इसी क्षेत्र मे हमारा देश भी है, जहा लगभग 8 करोड 35 लाख एकड भूमि पर धान की खेती होती है।

1961-62 मे विश्व भर मे लगभग 29 करोड 50 लाख एकड भूमि मे धान की खेती की गई, जिसमे कुल 24 करोड 22 लाख मीटरिक टन धान पैदा हुआ। उस वर्ष भारत में 8 करोड 37 लाख एकड भूमि मे धान की खेती की गई तथा यहा पर कुल 5 करोड 12 लाख मीटरिक टन की उपज हुई। हमारे यहा बिहार मे सबसे अधिक धान पैदा होता है। मद्रास, बगाल और उडीसा का नम्बर उसके बाद आता है। दूसरे इलाको मे भी धान होता है, पर बिहार, बगाल, उडीसा और मद्रास के अलावा कही उसकी गिनती खास फसलो मे नही होती।

धान की बुवाई के लिए खेत की जुताई मई या जून मे, यानी आषाढ से पहले, होती है। ठीक समय पर जुताई होने से मोथे आदि का उगना रुक जाता है और सरावन या हेगा चलाने मे मेहनत और खर्च, दोनो ही कम पडते है। बुवाई से पहले खेत के चारो ओर ऊची मेड वना दी जाती है, ताकि बरसात का पानी खेत मे रुका रह सके। जुताई वहुत जल्दी खत्म करनी पडती है। "तेरह कार्तिक तीन असाढ" की कहावत हर किसान जानता है। इसका अर्थ है कि कार्तिक मे खेत तैयार करने के वाद रवी बोने के लिए 13 दिन मिलते है, लेकिन आषाढ मे खरीफ बोने के लिए सिर्फ तीन ही दिन मिलते है।

पहले ऐसा समझा जाता था कि जिस खेत मे खरीफ की फसल होती है, उसमें रबी की फसल नही हो सकती । इसलिए धान के खेत आम तौर से जाडो मे बेकार रहते थे । पर अब खेती के नए वैज्ञानिक ढग मालूम हो जाने से धान के खेत मे रबी की फसले भी बोई जाने लगी है । लेकिन हर खेत मे हर फसल नही हो सकती । अनुभव से मालूम हुआ है कि रबी की फसलो मे से मटर, चना और खेसारी हर खेत मे बोई जा सकती है ।

धान उगजाने के दो तरीके है । कही-कही खेत जोत कर बीज छीट दिए जाते हैं । पौधे उगते, बढते और पक जाते है । पकने पर फसल काट ली जाती है । किसान को निराई और सिंचाई के अतिरिक्त और कुछ नही करना पडता । लेकिन यह तरीका बहुत अच्छा नही माना जाता । इस प्रकार की खेती मे बीज अधिक लगता है । एक एकड मे 25-30 सेर बीज डालना पडता है । फिर भी उपज कम होती है । इस तरीके से पैदा होने वाले धान का चावल भी बहुत अच्छा नही होता ।

धान बोने का दूसरा तरीका यह है कि पहले किसी क्यारी मे बीज छीट कर बेहन उगा लिए जाते है और बाद में उन्हे उखाड कर तैयार खेत मे रोप दिया जाता है । इसी को जडहन कहते है । बेहन उगाने के लिए मई-जून मे बीज छीट दिए जाते है और जुलाई शुरू होते-होते रोपाई कर दी जाती है । इस तरीके से एक एकड खेत के लिए कोई 10 सेर बीज काफी होता है, निराई मे कम मेहनत पडती है और उपज अधिक होती है । जडहन का चावल भी अधिक अच्छा होता है ।

आम तौर से किसान खेत मे जरूरत से ज्यादा बीज बिखेर देते है । कम और अच्छी किस्म का बीज डालने से फसल अच्छी होती है । बीज अच्छी किस्म का हो, तो खेत की उपज एक एकड के पीछे 3 मन तक बढ सकती है । आजकल जगह-जगह सरकारी बीज-गोदाम खुल गए है, जहा अच्छी किस्म के बीज मिल जाते है ।

अनुभव से पता चलता है कि किसी-न-किसी रूप में नाइट्रोजन की खाद डालने से धान की उपज जरूर बढ जाती है । एक एकड खेत में ढाई मन तक अमोनियम सल्फेट डाल देना महगा सौदा नही है । खाद मे जितना खर्च पडता है, उपज बढने पर उससे कही अधिक कीमत वसूल हो जाती है । रोपाई के लिए पानी लगाने से पहले इस खाद को दो-तीन इच गहरा डाल देना चाहिए । बहुत-से इलाको मे हरी खाद बनाने के लिए आम तौर से सनई और ढेचा के पौधे उपयोगी होते है । सनई उन

जगहो मे पैदा होती है, जहा पानी कम वरसता है और ढेचा की उपज अधिक वरसात वाली जगहो मे अच्छी होती है।

कुछ दिनो से धान की उपज वढाने के लिए एक नया ढग चला है, जिसे जापानी ढग कहते है। जापानी ढग मे (1) वीज थोडा किन्तु वढिया डाला जाता है, (2) वेहन ऊची क्यारिया वना कर उगाया जाता है, (3) रोपाई मे पौधे कतारो मे लगाए जाते है, जिससे खाद डालने और निराई करने मे आसानी हो, और (4) खेतो मे गोबर की खाद, विलायती खाद, कम्पोस्ट, हरी खाद और सुपरफास्फेट की खाद डाली जाती है ।

गेहूं

गेहू रवी की मुख्य पैदावार है। 1961-62 भारत मे 3 करोड 32 लाख एकड भूमि मे गेहू की खेती की गई, जिसमे 1 करोड 16 लाख मीटरिक टन की उपज हुई। आजादी के बाद से उत्तर प्रदेश गेहू उपजाने में दूसरे सब प्रदेशो से वाजी ले गया है। उसके वाद पजाव, मध्य प्रदेश और बम्बई का नम्वर आता है।

गेहू के पौधे को अधिक नमी की जरूरत नही होती। अधिक उपज के लिए मिट्टी मे काफी नाइट्रोजन होना जरूरी है। उसके लिए खाद डालने की निस्वत मिट्टी के प्राकृतिक लसदार तत्वो को कायम रखना अधिक उपयोगी है । जिस मिट्टी मे प्राकृतिक तत्व अधिक होगे, वही चिकनी मिट्टी गेहू की फसल के लिए अधिक अच्छी होगी। इसके अलावा मिट्टी मे जरूरत भर नमी भी होनी चाहिए। गेहू के बीज लेते समय एक वात का ध्यान रखना जरूरी है। कुछ बीज ऐसे होते है, जिन्हे उगने और पकने के

गेहूं की फसल और पौधा

लिए वहुत कम गर्मी की जरूरत होती है । दूसरे ऐसे होते है, जिन्हे काफी गर्मी चाहिए । हमारे देश मे अलग-अलग हिस्सो मे कम या अधिक गर्मी होती है । इसलिए गर्मी का ध्यान रखे बिना चाहे जैसा बीज बो देने से खेती खराब हो जाती है। गेहू की बुवाई बरसात के वाद शुरू होती है । बीज के उगने के लिए भूमि को पहले धीरे-धीरे बढती हुई ठडक मिलनी चाहिए । जब भूमि को आवश्यक ठडक मिल जाती है, तभी गेहू के बीज बोए जाते है। पर जब कटाई का समय निकट आने लगता है, तब तेजी से वढती हुई गर्मी और बार-बार की सूखी हवा मे ही गेहू के दाने पकते है ।

गेहू की फसल चिकनी करैली मिट्टी मे अच्छी होती है । पर खाद डाल कर तैयार किए हुए किसी भी खेत मे अच्छी फसल हो सकती है । गेहू की खेती के लिए वहुत अच्छी जुताई की आवश्यकता है । ठीक समय पर जुताई करना वार-वार जुताई करने से कही अच्छा होता है । जिन खेतो मे मोथे आदि उगे हो, उन्हे इस प्रकार जोतना चाहिए कि नीचे की मिट्टी उलट कर ऊपर आ जाए ।

गेहू की भी उपज खाद डाल कर बढाई जा सकती है । प्रति बीघा 10-15 गाडी गोवर की पास डालने पर फसल वहुत अच्छी होती है । सिर्फ हरी खाद से भी उपज वहुत बढ जाती है । एक एकड के पीछे सवा मन अमोनियम सल्फेट डालना वहुत लाभदायक हो सकता है ।

सर्दी शुरू होते ही तुरन्त रबी की बुवाई शुरू कर देनी चाहिए । बुवाई कतारो मे करनी चाहिए, पातो के बीच कम-से-कम डेढ-दो बालिश्त का फासला रखना चाहिए । मध्य अक्तूवर से मध्य नवम्वर तक का समय बुवाई के लिए सवसे अच्छा होता है । किस खेत मे कितना बीज लगेगा, इसका फैसला खेत की मिट्टी, मौसम और बीज की किस्म देख कर ही किया जा सकता है । लेकिन आम तौर से एक एकड के पीछे 15 सेर बीज काफी होता है ।

गेहू के पौधो को अक्सर बीज या मिट्टी की खरावी के कारण रोग लग जाते है । उन रोगो को रोकने के लिए कृषि विभाग के कार्यकर्ताओ से राय लेकर पहले बीज को ठीक कर लेना चाहिए ।

समय पर सिंचाई करने से फसल निश्चय ही अच्छी होगी । गेहू के खेत सीचने के उचित समय दो होते है, एक तो बोने के बाद अखुए फूटने पर और दूसरा वालिया गदरा जाने पर ।

दालें

जो लोग मास नही खाते, उनके लिए दाल आवश्यक भोजन है। दालो से खाने की तरह-तरह की चीजे तो बनती ही है, उनमे क्षार तत्व (प्रोटीन), खनिज तत्व (मिनेरल्स) और जीवन तत्व (विटामिन) बहुत होते है। दाल मास से सस्ती होती है और चूकि उसे चावल या रोटी जैसी क्षार तत्व वाली चीज़ो के साथ खाया जाता है, इसलिए वह मास के ही बराबर लाभदायक भी होती है। खाने के काम आने वाली दालो मे काले, पीले और सफेद चने, मटर, काले और हरे उडद, अरहर, मूग, मसूर और सोयाबीन महत्वपूर्ण है। कई दाले मिला कर पकाने से भोजन स्वास्थ्य के लिए अच्छा और स्वादिष्ट हो जाता है।

चने की दाल की गिनती सबसे पुरानी दालो मे है। चना बडे पैमाने पर केवल भारत मे ही बोया जाता है। 1961-62 में यहा 2 करोड 38 लाख एकड भूमि पर चने की खेती की गई। चने की उपज चिकनी मिट्टी से लेकर दुमट और बालुई मिट्टी तक मे होती है। लेकिन भारी मिट्टी इसके लिए खास तौर से अच्छी होती है। चना बोने मे खेत और अधिक उपजाऊ हो जाते है।

रबी की फसलो मे सबसे पहले चना ही बोया जाता है। उसे सितम्बर मे ही बो देते है। जगह-जगह की मिट्टी और मौसम के अनुसार चने के एक एकड खेत मे 15 से 40 सेर तक बीज लगता है। खेत बेकार न पडा रहे, इसलिए चना काटने के बाद उसमें खरीफ की फसलो में से ज्वार, मक्का, आदि बो दिए जाते है। चना बोने के लिए खेत मे सरावन चलाने की जरूरत नही पडती। कभी-कभी चने को गेहू, जौ और तिलहनो के साथ मिला कर भी बो दिया जाता है। चने की खेती मे अधिक मेहनत नही करनी पडती और चने की फसल पक कर तैयार होने मे भी बहुतेरी फसलो से कही कम समय लगता है।

तिलहन

ग्रामो के आर्थिक जीवन मे तिलहन की फसल का एक खास स्थान है। उससे किसान कुछ पैसे खडे कर लेते है। भारत मे तिलहन की मुख्य फसले अलसी, लाही, सरसो, तिल और मूगफली है। 1961-62 मे 3 करोड़ 43 लाख एकड भूमि में तिलहन की खेती की गई। देश के बाहर उनका निर्यात भी बडे पैमाने पर होता है। तिलहनो से निकली खली मे नाइट्रोजन होता है, जो खाद के लिए बहुत उपयोगी होता

है । लेकिन तिलहन की अधिकतर उपज विदेश चली जाती है । इससे देश का बहुत-सा नाइट्रोजन भी बाहर चला जाता है । इस घाटे को रोकने के लिए अक्सर विचार किया गया है, पर अभी तक उसका कोई नतीजा नही निकला ।

इसमे सदेह नही कि अगर यह घाटा बन्द हो जाए, तो हमारे ग्रामो को बहुत लाभ होगा । लेकिन इससे किसानो को हानि भी होगी, क्योकि तिलहनो की बिक्री से ही उनको नकद पैसे मिलते है । फिर भी इतना निश्चित है कि यदि देश का सब तिलहन देश मे ही पेरा जाए और खली सस्ती बिके, तो हर प्रकार की फसलो की उपज बढेगी और किसानो को भी अन्त मे लाभ ही होगा ।

एक ही खेत मे अदल-बदल कर फसले उगाने के लिए तिलहन की खेती हर प्रकार की मिट्टी मे हो सकती है । तिलहन के लिए सिचाई और खाद की बहुत कम जरूरत पडती है और अच्छी उपज के लिए केवल दो बातो का ध्यान रखना पडता है । एक तो यह कि खेत की जुताई अच्छी हो और दूसरी इस बात की जानकारी कि किस फसल के बाद किस खेत मे तिलहन बोया जाए । तिल और मूगफली की बुवाई वर्षा शुरू होते ही होती है, क्योकि उनकी फसल वर्षा का पानी पाकर ही तैयार होती है । अलसी, लाही, सरसो वर्षा के बाद बोए जाते है और आम तौर से बिना सिचाई के ही पक कर तैयार हो जाते है ।

एक एकड मे 15-20 सेर मूगफली का बीज लगता है । दूसरे तिलहनो के लिए एक एकड के पीछे 2-3 सेर बीज काफी होता है । अधिक उपज के लिए तिलहन को सीधी पातो मे बोना चाहिए और दो पातो के बीच डेढ इच की दूरी होनी चाहिए । कृषि विभाग ने बीज की अच्छी-अच्छी किस्मे खोज निकाली है, जिनसे तिलहन की पैदावार बढाई जा सकती है । मूगफली के लिए एक एकड के पीछे डेढ मन सुपरफास्फेट खाद डालना बहुत लाभदायक होता है ।

लाही और सरसो को गेहू मे मिला कर भी बोया जाता है । पजाब की तरफ खेतो मे गेहू के बाद लाही, उसके बाद कपास, और उसके बाद सेजी बोई जाती है । उसके बाद दोबारा उन खेतो मे गेहू बोने से उसकी उपज काफी बढ जाती है । अलसी के बाद मक्का या बाजरा और उसके बाद चना बोने पर भी पैदावार बढती है ।

कपास

कपास की खेती खास तौर से सूखे मौसम मे होती है । पूर्वी भारत मे एक तो कपास बोई ही नही जाती, और अगर बोई भी जाती है, तो उसे महत्वपूर्ण फसल नही

माना जाता। 1961-62 मे भारत में कुल 1 करोड 87 लाख एकड भूमि मे कपास की खेती की गई।

कपास की खेती के लिए मुख्य रूप से ऐसा खेत चाहिए, जिसकी मिट्टी नरम और पोली दुमट हो, ताकि उसमे पानी और हवा रिस-रिस कर अन्दर तक पहुच सके।

भारत मे कपास की उपज बढाने और उसकी किस्म सुधारने के सिलसिले मे बहुत-सी समस्याए आती है। यह कृषि विज्ञान के पडितो के लिए काफी दिलचस्पी का विषय है। जिन तरीको से कपास की काश्त को अच्छा बनाया जा सकता है, उनमे से कुछ तरीके नीचे दिए जाते है।

कपास की कई किस्मे पैदा की गई है। ऐसे अनुभवो से मालूम हुआ है कि कपास की कीमत केवल कच्ची रूई के वजन पर ही नही, बल्कि उसके रेगो (तन्तु) की लम्बाई, रग और बारीकी पर भी निर्भर है। आजकल भारत मे उगने वाली कपास की नई किस्मो मे ये सब गुण पाए जाते है।

कपास की बुवाई का समय अप्रैल या मई है। पहली बरसात मे भी बुवाई की जाती है, लेकिन अक्सर वह जाडो तक तैयार नही हो पाती। कपास 2 से 3 फुट की दूरी पर सीधी पातो मे बोई जानी चाहिए। पातो के बीच की ठीक दूरी बीज की किस्म देख कर ही तय करनी चाहिए।

खाद से उपज बढने के साथ-साथ कपास की किस्म भी सुधरती है। कपास के खेत मे डाली जाने वाली खाद मे नाइट्रोजन होना खास तौर से जरूरी है। खेत मे मटर, चना, सेंजी या मैथरा बोने के बाद कपास बोने से नाइट्रोजन की जरूरत किसी हद तक पूरी हो जाती है। पर लगभग ढाई मन अमोनियम सल्फेट या चार से पाच मन तक खली और अमोनियम सल्फेट मिला कर खेत मे डालना बहुत लाभदायक होता है। ये खादे दो बार मे डालनी चाहिए—एक बार बोते समय और दूसरी बार फूल निकलते समय।

गन्ना

गन्ने की फसल पूरे भारत मे होती है। 1961-62 मे 59 लाख एकड भूमि में इसकी खेती की गई। यो गन्ना खास तौर पर उन इलाको की फसल है, जो काफी गर्म हो, लेकिन भारत मे गन्ने की खेती के कुल क्षेत्र का तीन-चौथाई भाग सिधु-गगा के मैदानो मे है, जो भूमध्य रेखा से काफी दूर पडते है।
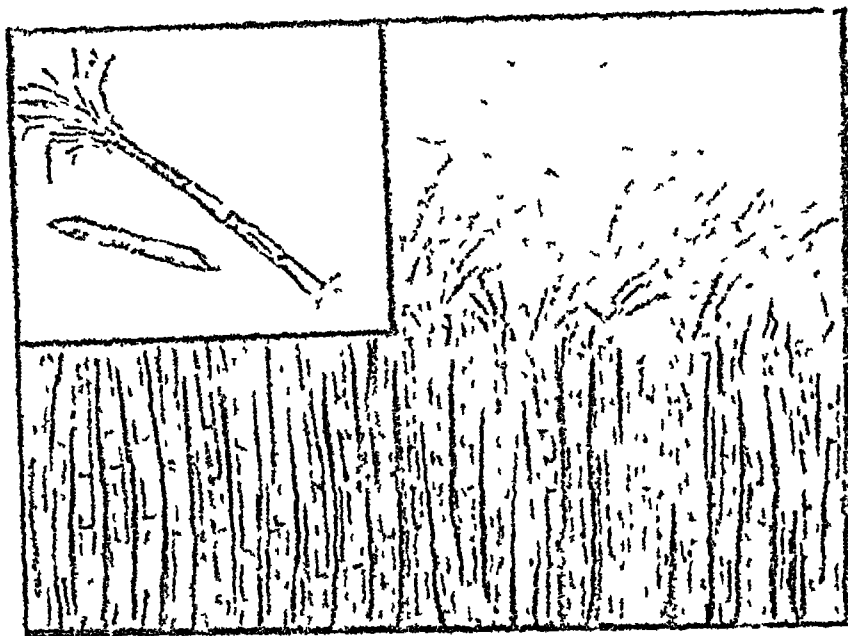
गन्ने की फसल और पौधा

कोयम्बटूर गन्ने के बीजों से उपज बहुत होने लगी है। इसलिए गन्ने की खेती में अब मेहनत और सावधानी की कमी आती जा रही है। लेकिन गन्ने को मेहनत और सावधानी दोनों की बहुत जरूरत है। कोयम्बटूर के बीज से गन्ने की पैदावार ड्योढ़ी हो जाती है। पूरे भारत में 100 के पीछे 80 किसान अब कोयम्बटूर गन्ना ही बोते हैं। यदि अधिक ध्यान दिया जाए, तो गन्ने की उपज और भी बढ़ सकती है। गन्ने को अच्छी भूमि, हल्की चिकनी मिट्टी और खूब पानी मिलना चाहिए। भूमि की कई बार जुताई होनी चाहिए। गन्ने के खेतों में नई किस्म का हल, जिसमें फाल चौड़ा होता है, और मिट्टी बटुरती आती है, चलाने से मेहनत और खर्च कम बैठता है। बुवाई के समय गन्ना काटते हुए इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि कटे हुए टुकड़ों में बीमारी बिल्कुल न हो।

उत्तर भारत में गन्ने की बुवाई फरवरी-मार्च में की जानी चाहिए। उससे फसल दिसम्बर या जनवरी में कटने लायक हो जाती है। दक्षिण भारत में फसल 18 से 24 महीनों में तैयार होती है। लेकिन उपज ज्यादा होती है। इस फसल को नाइट्रोजन

की खाद बहुत चाहिए । बरसात मे हरी खाद डालने से भी बडा लाभ होता है । बुवाई के समय एक एकड के पीछे आधा मन और अकुर निकल आने के बाद एक एकड के पीछे साढे तीन मन अमोनियम सल्फेट डाल देने से फसल बहुत बढिया हो सकती है ।

अन्य फसले

इसके अलावा आलू, गाजर, शकरकद, आदि की भी फसले है। ये चीजे खाने के काम आती है। इनमे आलू सबसे महत्वपूर्ण है । यह हर तरह की जमीन मे और हर तरह के मौसम मे लगाया जाता है। इसकी उपज बहुत होती है और खाने की चीजो मे यह बहुत सस्ता बैठता है । आलू को भारत मे आए लगभग 300 वर्ष हुए है। 1961-62 मे भारत भर मे करीब 9 लाख एकड भूमि मे आलू की खेती की गई। भारत मे आलू की उपज का औसत एक एकड के पीछे 100 मन है । खेती अच्छी तरह की जाए, तो उपज इससे कही अधिक हो सकती है ।

आलू के लिए मिट्टी हल्की और सिचाई अच्छी होनी चाहिए । इसके लिए लसदार मिट्टी सबसे अच्छी होती है । बुवाई के पहले खेत अच्छी तरह जोत कर तैयार किया जाता है । कई बार सरावन चलानी पडती है। आलू खाद भी बहुत लेता है। एक फ़ार्म मे मन भर नाइट्रोजन और फास्फोरिक एसिड, आधा मन पोटाश और दस टन मामूली खाद डालने पर बहुत बडा और अच्छी किस्म का आलू पैदा होगा ।

आलू की फसल तैयार होने मे बीज की किस्म के हिसाब से अक्सर 3 से 5 मास लगते है। उत्तरी भारत मे बुवाई जाडो मे या वसन्त मे की जाती है। अधिकतर खेत सितम्बर-अक्तूबर मे बो दिए जाते है । समतल खेत मे क्यारिया लगा कर आलू डेढ-डेढ फुट के फासले पर बनी कतारो मे बोया जाता है । एक एकड मे 10-15 मन बीज लगता है। मक्का या तम्बाकू के बाद खेत मे आलू बोने से फसल अच्छी होती है । आलू की फसल मे बहुत-सी बीमारिया लगने का भय रहता है। इसकी सावधानी बहुत आवश्यक है ।

सार्वजनिक स्वास्थ्य

अकेले रह कर मनुष्य का काम नही चल सकता। इसलिए वह परिवार बना कर रहता है। इसी तरह कोई परिवार भी अन्य परिवारो से अलग रह कर अपना काम नही चला सकता। इसी कारण बहुत-से परिवार मिल कर एक समाज बनाते हैं। इस बात से यह नतीजा निकलता है कि मनुष्य समाज मे रहने वाला एक जीव है ।

बहुत-से लोगो के एक मुहल्ले, गाव या शहर मे मिल-जुल कर रहने से कितनी ही ऐसी समस्याए पैदा हो जाती है, जो मनुष्य के अकेले रहने से पैदा न होती। उन समस्याओ मे सबसे बडी यह है कि आपस के सम्बन्ध कैसे हो— आपस में मिल कर रहना, झगडा-फसाद न करना, आपसी सहयोग द्वारा पूरे समाज के हित मे काम करना, ऐसी बाते न करना, जिनसे समाज को हानि पहुचे। ये ऐसी बाते है, जिन्हे हर युग के लोग मानते आए हैं। पर आदमी अभी इतना भला नही बन सका है कि बिना किसी भय के, बिना किसी शासन के, अपने-आप ही समाज के हित के काम करता रहे ।

इसलिए लोगो ने मिल-जुल कर समाज के राजकाज और आर्थिक जीवन को ठीक रखने के लिए राज्य और कानून बनाए। लोगो ने यह भी देखा कि बिना किसी पाबन्दी के जहा-तहा जूठन फेक देने से या पेशाब-पाखाना कर देने से मक्खिया और दूसरे जहरीले कीडे पैदा हो जाते है। ये कीडे हवा और पानी को गदा करते है, बाजार मे बिकने वाली चीजो पर बैठ कर उन्हे गदा करते है और इस तरह पूरे समाज मे तरह-तरह की बीमारिया फैलाते है। तब लोगो ने मिल-जुल कर यह सोचा कि हवा
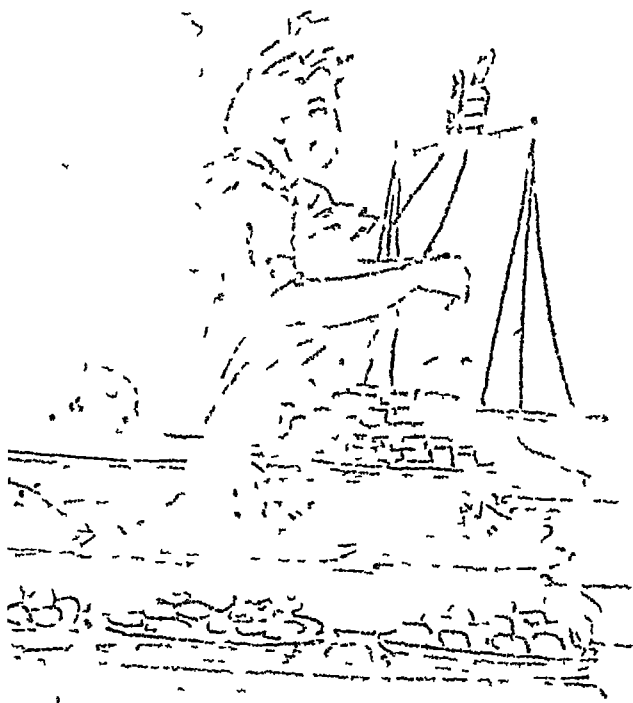
खाने की चीजो पर मडराती मक्खिया

और पानी को साफ रखने के लिए, बिमारी के कीडो का पैदा होना रोकनें के लिए और लोगो को तन्दरुस्त रखने के लिए क्या कुछ करना चाहिए।

सबके स्वास्थ्य की देखभाल को सार्वजनिक स्वास्थ्य कहते है। सार्वजनिक स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए आज हर देश की सरकार ने सार्वजनिक स्वास्थ्य का एक अलग विभाग खोल रखा है। सार्वजनिक स्वास्थ्य का विभाग इस बात का प्रबन्ध करता है कि आम लोगो के इकट्ठा होने, उठने-बैठने, चलने-फिरने, या खेलने-कूदने की जगहो पर पेशाब-पाखाना और कडा-करकट जैसी गदी चीजे न जमा होने पाए, ताकि लोगो को साफ हवा मिलती रहे, बाजार मे बिकने वाली खाने-पीने की चीजे सडी-गली न हो, उन पर मक्खिया न भिनकती हो, जिससे वे चीजे खाने वाले छूत की बीमारियो से बच सके, औरतो के लिए जच्चा-बच्चा केन्द्रो का अच्छा प्रबन्ध हो और छोटे बच्चो के स्वास्थ्य का खास तौर से ध्यान रखा जाए।

जिस देश के सार्वजनिक स्वास्थ्य का महकमा इन कामो को जितनी अच्छी तरह करेगा, उस देश के लोगो का स्वास्थ्य उतना ही अच्छा रहेगा। सयुक्त राष्ट्र सघ ने 'विश्व स्वास्थ्य सगठन' (डब्ल्यू० एच० ओ०) नाम से एक शाखा खोल कर ससार के सभी लोगो के स्वास्थ्य की देखभाल करने और उसे सुधारने का भार उसे सौपा है। 'विश्व स्वास्थ्य सगठन' का कहना है कि केवल बीमार न पडना ही अच्छे स्वास्थ्य

गली-बाजार में पड़े कूडे के ढेर
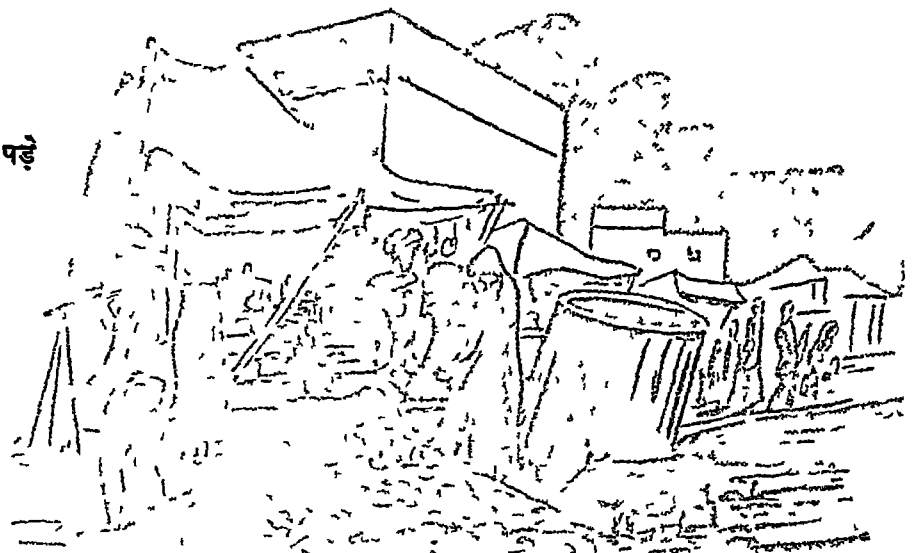
का चिह्न नही है, बल्कि अच्छे स्वास्थ्य का मतलब यह है कि आदमी का शरीर और उसके साथ-साथ उसका मस्तिष्क और उसका सामाजिक जीवन भी ठीक हो।

जीवन के लिए ताजा और साफ हवा बहुत जरूरी है। आदमी सास के द्वारा शुद्ध हवा, यानी आक्सीजन, अपने फेफडो के भीतर खीचता है, और गदी हवा, यानी कार्बन डाइ-आक्साइड, बाहर निकालता है। उस गदी हवा के साथ-साथ भाप या पानी के छोटे-छोटे कण भी सास के साथ बाहर निकलते रहते है। इसके अलावा धुआ, सडते हुए पेड-पौधो से निकलने वाली गैस और घरो से उडने वाली तरह-तरह की दुर्गंध भी हवा को गदा करती रहती है। ऐसी हालत मे जब सैकडो-हजारो आदमी एक साथ या पास-पास रहेंगे और वहा साफ और ताजा हवा मिलने का ठीक से प्रबन्ध नही होगा, तब लोगो के सास या छीक के साथ निकलने वाली कार्बन डाइ-आक्साइड या रोग के कीटाणुओ को ही लोग सास के साथ अपने फेफडो के अन्दर खीचेंगे। ऐसी गदी और विषैली हवा मे सांस लेकर वे बीमारियो के शिकार होगे।

इसलिए इस बात का ध्यान रखना जरूरी है कि हवा साफ रहे। इस काम मे प्रकृति हमारी बराबर सहायता करती रहती है। फिर भी हमारे मकान ऐसे होने चाहिए, जिनमे हवा खूब आए। सडके साफ रहनी चाहिए। घरो के चारो ओर खुली जगह और बाग-बगीचे होने चाहिए, सिनेमा, स्कूल, पंचायत घर, आदि की इमारते ऐसी होनी चाहिए कि भीतर की गदी हवा आसानी के साथ बाहर निकल जाए। कारखानो की चिमनिया काफी ऊची होनी चाहिए, ताकि उनसे निकलने वाली गैस बहुत ऊपर जाकर हवा मे मिल जाए। सडी-गली चीजे या मरे हुए जानवर बस्ती मे या बस्ती के आसपास नही पडे रहने चाहिए। हवा को साफ और सार्वजनिक स्वास्थ्य को ठीक रखने के लिए यह सब करना आवश्यक है।

छीक मार रहा मनुष्य
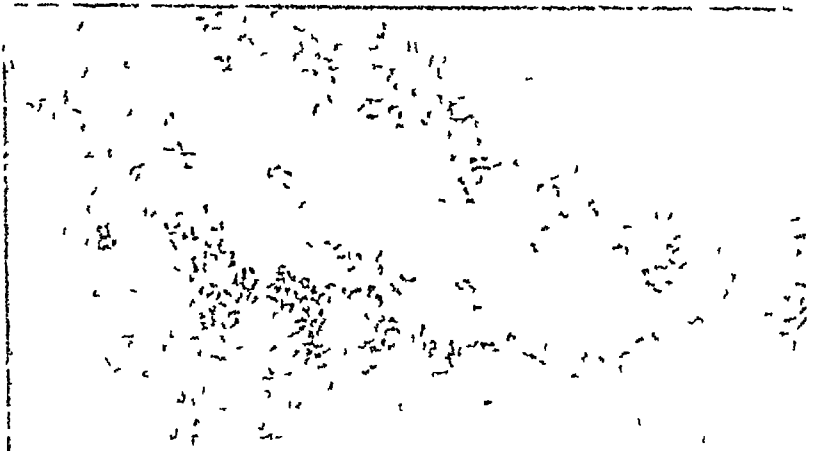
जिस प्रकार हवा के बिना जीना असम्भव है, उसी प्रकार पानी के बिना भी मनुष्य का जीना कठिन है । पानी साफ़ न मिले, तो उससे भी बहुत-सी बीमारिया फैलती है। इसलिए हर मनुष्य को पीने के लिए साफ पानी मिलना जरूरी है । साफ पानी की पहचान यह है कि वह देखने मे चमकीला हो, पीने मे स्वादिप्ट हो और उसमे किसी प्रकार की रगत और गध न हो। वहुत-सी जगहो के पानी मे नमक या दूसरे खनिज पदार्थ अधिक घुले होते है । कही-कही गदी और सडी-गली चीजे घुल कर पानी मे मिल जाती है, जिसके कारण पानी मे बीमारियो के इतने छोटे-छोटे कीड़े पैदा हो जाते है, जो दिखाई तक नही देते । ऐसी जगहो का पानी स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकर होता है ।

नल का पानी सबसे अच्छा होता है । हाथ के कुए का पानी भी काफी अच्छा होता है, पर नल या हाथ के कुए सब जगह नही होते । इसलिए अधिकतर लोग कुओ का पानी पीते है। पर बहुत-से कुओ का भी पानी पीने लायक नही होता । आम तौर से, ऐसे कुओ का पानी पीना चाहिए, जो काफी गहरे हो, जो एक निश्चित समय के बाद बराबर साफ किए जाते हो, जिनमे हर महीने पोटाश छोडी जाती हो और जिनकी मुडेर इतनी ऊची हो कि गदगी बाहर से बह कर उनमे न गिरे। कुए के चारो ओर सफाई रखनी चाहिए। अच्छा तो यह है कि कुए को टीन से छा दिया जाए, जिससे हवा के साथ उड़ कर न तो उसमे घास-पात गिर सके और न ही उड़ती चिडियो की बीट। कुछ लोगो का कहना है कि पानी को उबाल कर पीना ही सबसे अच्छा है।

इसी प्रकार, खाने की चीज़ो को साफ रखना भी बहुत जरूरी है । इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि खाने की किस चीज का किस चीज के साथ मेल है, और किस चीज का मेल नही है । कौन चीज कितनी खाई जाए, इसका ध्यान रखना भी जरूरी है, क्योकि उनका केवल साफ होना ही काफी नही है । उनमे आपस मे सन्तुलन का होना भी ज़रूरी है, नही तो स्वास्थ्य बिगडने का डर रहता है— सफाई की इन सब बातो के साथ ही, जहा तक हो सके, रोटी, चावल आदि के साथ हरी सब्जी भी काफी मात्रा मे खानी चाहिए । हरी साग-सब्जी को अच्छी तरह धोकर खाने से पेट की बहुत-सी बीमारिया नही होती । इसलिए उनके गुण और वजन का भी ध्यान रखना चाहिए। चूहे या दूसरे जानवर खाने की चीजो को गदा न करने पाए। मिठाई की दुकानो और होटलो मे खूब सफाई रहनी चाहिए। दुकानो और होटलो की सफाई पर सार्वजनिक स्वास्थ्य विभाग को नजर रखनी चाहिए । उसे

इस बात पर भी रोक लगानी चाहिए कि दूध, मक्खन, तेल, घी, मसाले, आटे और दूसरी चीजों मे दुकानदार मिलावट न करें।

घर को हवादार और ऊंची जगह पर बनाना चाहिए, जहा धूप और रोशनी खूब अच्छी तरह पहुच सके। मकान का रुख पूरब की ओर रहना अच्छा है, जिससे सुबह-शाम घर में धूप पहुचती रहे। जाडे के दिनो मे इससे बहुत आराम मिलता है। कमरो मे दरवाजों के साथ-साथ खिडकियो का होना जरूरी है और वे आमने-सामने हो, जिससे हवा आर-पार जा सके। कमरो की ऊचाई कम-से-कम बारह फुट होनी चाहिए। दरवाजे छ' फुट ऊंचे और तीन फुट चौडे अच्छे रहते है। कमरो का फर्श ढलुवा हो, जिससे पानी आसानी से बह जाए और सीलन पैदा न हो। मकान के चारो ओर पेड-पौधे हो, तो बहुत ही अच्छा है। उनसे घर ठंडा रहता है और गर्मी कुछ कम हो जाती है। पर पेड-पौधे घर से बिल्कुल सटे हुए न हो। इससे सीलन पैदा हो जाती है। रसोईघर भी हवादार होना चाहिए, जिससे चूल्हे का धुआ और रसोई की गध आसानी से बाहर निकल जाए। इसके लिए रसोईघर मे चिमनी जरूर लगानी चाहिए। इक्के-दुक्के मकान का साफ-सुथरा या ढग से बना होना काफी नही होता। मुहल्ले या गाव के सभी मकानो को वैसा ही होना चाहिए। बेढगे या गदे घरो मे रहने वालो का स्वास्थ्य ठीक नही रहता और उनकी या उनके कारण पैदा होने वाली बीमारियो से साफ मकान वाले भी नही बच पाते। लेकिन अगर घरो के बीच काफी फासला और खुली जगह हो, तो एक हद तक साफ मकान वालो का बचाव हो जाता है।

कुछ बीमारियां ऐसी होती है, जो इक्के-दुक्के लोगो को ही लगती है, मगर कुछ ऐसी भी होती है, जो एक से दूसरे तक फैलती रहती है। उन्हे छूत की बीमारियां कहते है। ताऊन, हैजा, चेचक, दिक, इन्फ्लुएजा, पीलिया, डिप्थीरिया, खसरा, काली खांसी, गलसुजा, आदि ऐसी ही बीमारिया है। कोढ की बीमारी भी उन्ही मे से एक है, पर वह वर्षों साथ रहने के बाद लगती है। इन्हें रोकने के लिए सार्वजनिक स्वास्थ्य के महकमे की देख-रेख के अलावा हर आदमी का सहयोग भी जरूरी है। ऊपर बताई गई छूत की बीमारियो मे से अधिकतर ऐसी है, जो कीडो से पैदा होती है। बीमार के सास लेने, खांसने, थूकने और बात करने से उन बीमारियो के कीडे बाहर निकल कर दूसरो को भी लग जाते है। इसलिए रोगी को खासते समय अपने मुह पर कपडा रख लेना चाहिए, और जहा-तहा थूकना नही चाहिए। उसके पेशाब-पाखाना करने की जगह भी तय होनी चाहिए। जहा-तहां पेशाब-पाखाना करने से हैजा, मियादी
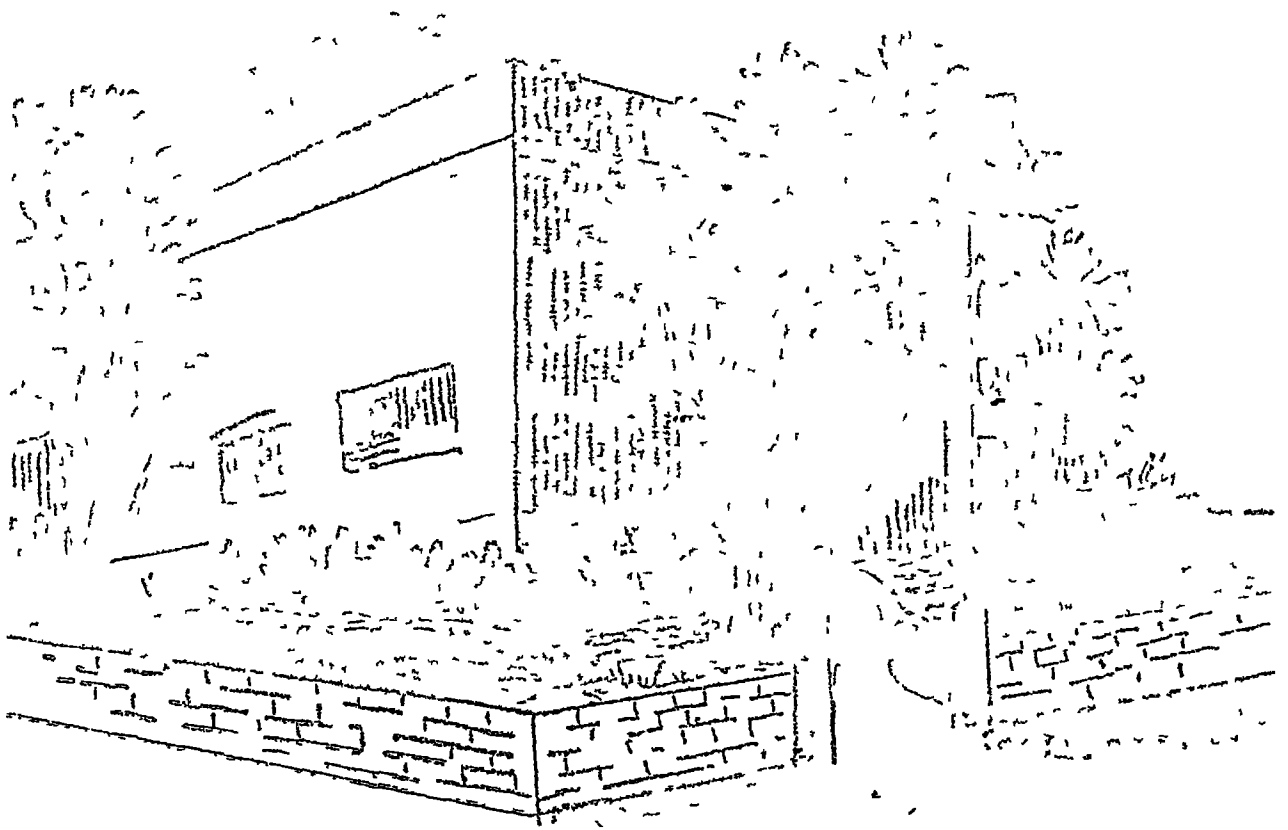
एक आदर्श घर

बुखार और पेचिश जैसी बीमारिया फैल सकती है। उनके फैलने मे मक्खियो, गर्द, गदे पानी और खाने की गदी चीजो का भी बहुत हाथ होता है। इसलिए मक्खियो से बचना स्वास्थ्य के लिए बहुत जरूरी है। खाने-पीने की चीजो की सफाई के अलावा खाना खाने से पहले और उसके बाद हाथ और नाखून की, रसोईघर की और बरतनो आदि की सफाई भी बहुत जरूरी है। एक के बरतने की चीजो को, जैसे तौलिया, कघी, साबुन, दात का ब्रुश, आदि दूसरो को नही बरतना चाहिए। आम तौर से जिल्द के रोग इन्ही चीजो से फैलते है।

घर के लोगो को, पडोसियो या गाव वालो को चाहिए कि छूत के रोग की खबर सार्वजनिक स्वास्थ्य के विभाग को तुरन्त दे दे। छूत के रोगो को छिपाना नही चाहिए। इससे रोगी का रोग दूर होने मे भी देर लगती है और उससे मिलने-जुलने वाले भी बीमारी का शिकार हो जाते है। इसलिए हर हालत मे—रोगी का इलाज हो रहा हो तब भी—सार्वजनिक स्वास्थ्य के विभाग को रोग की खबर दे देनी चाहिए, जिससे वह दूसरो तक रोग को फैलने से रोकने के उपाय कर सके।

ऐसे रोगी को या तो घर के किसी सबसे अलग कमरे में रखना चाहिए या उसे छूत के रोगियो के अस्पताल मे भरती करा देना चाहिए। रोगी को घर मे अलग रखना आसान नही होता, क्योकि न तो घर मे इतने कमरे ही होते है और न परिवार के

लोग इस बात पर कुछ ध्यान ही देते है। इसलिए घर से अस्पताल अच्छा रहता है। जो लोग छूत के रोगी से मिलते-जुलते है या जो बीमारी फैली जगह से दूसरी जगहो को जाते है, उन्हे खास समय तक किसी डाक्टर की देख-रेख मे अलग रहना चाहिए। जिस प्रकार हैजा और चेचक का टीका लगवाए विना और स्वास्थ्य का प्रमाणपत्र लिए विना किसी को देश से बाहर नही जाने दिया जाता, उसी तरह चेचक आदि छूत के रोग वाले स्थान से किसी को दूसरी जगह नही जाने देना चाहिए।

जहा छूत की कोई बीमारी फैली हुई हो, वहा के ऐसे लोगो को भी, जो बीमार न हो, टीक और सूई लगवा कर अपने-आपको रोग के कीडो से सुरक्षित कर लेना चाहिए। टीके और सूइया विना बीमारी फैले भी लगवाते रहना चाहिए। हैजे की सूई का असर केवल छ महीने तक रहता है। मियादी वुखार की सूई एक साल के बाद लगवा लेनी चाहिए। चेचक से बचने का टीका हर चौथे साल लगवाना चाहिए। परन्तु अगर चेचक कही आसपास फैली हो, तो टीका तुरन्त लगवा लेना चाहिए।

अगर रोग पैदा करने वाले कीडो को मार दिया जाए, तो रोग का फैलना अपने-आप रुक जाएगा। गर्मी, धूप और कीटनाशक दवाओ से यह काम लिया जा सकता है। जहा छूत का कोई रोग फैल रहा हो, वहा के लोगो को अपने बरतन, बिछौने, तकिए के गिलाफ, तौलिए, आदि खौलते पानी मे दस मिनट तक उबाल लेने चाहिए या पाच फी सदी फिनाइल, कारबोलिक या दो फी सदी लाइसोल वाले पानी मे एक घटा डुबा कर रखने चाहिए। ऐसा करने से बीमारी के कीडे मर जाते है। उन्हे मारने के लिए पेशाब-पाखाने और थूकने के वरतनो मे भी पाच फी सदी चूना, पाच फी सदी कारबोलिक या दो फी सदी लाइसोल डाल कर उन्हे एक घटे तक ढक देना चाहिए। पलग, विस्तर, कम्वल, आदि को भी झाड कर दिन भर धूप मे सुखा लेना चाहिए। ऊनी और कीमती कपडो को पेट्रोल से धो सकते है। कमरो को कीडो से वचाने के लिए सफेदी, गंधक का धुआ, फारमेलिन की भाप, आदि काम मे लाए जाते है। इसी तरह, देह को कीडे के विष से वचाने के लिए साबुन, स्पिरिट, डेटोल, आदि का इस्तेमाल किया जा सकता है।

जच्चा-बच्चा के स्वास्थ्य की ओर ध्यान देना सार्वजनिक स्वास्थ्य विभाग का खास काम है। अगर शुरू मे ही रोग का पता लग जाए, तो उसका इलाज करना आसान होता है। इसीलिए अच्छे स्कूलो मे समय-समय पर बच्चो के स्वास्थ्य की जाच होती रहती है। बहुत छोटे बच्चो को भी रोग से बचाव के लिए उसी तरह टीके

लगवा लेने चाहिए, जैसे बड़ो के लगते है। यानी हैजे के टीके छ-छ महीने पर, मियादी बुखार के एक-एक साल बाद और चेचक के हर चौथे साल। गर्भवती स्त्रियो के इलाज मे बहुत सावधानी बरतनी चाहिए। बच्चा होने से पहले किसी डाक्टर से समय-समय पर सलाह लेते रहना चाहिए। गर्भवती स्त्रियों की ठीक से देखभाल न होने के कारण पैदा होने वाली खराबियो को दूर करने के लिए सार्वजनिक स्वास्थ्य विभाग जच्चा-बच्चा या प्रसूति केन्द्रों की व्यवस्था करता है। हमारे देश मे ऐसे केन्द्रो की अभी बहुत कमी है।

सार्वजनिक स्वास्थ्य का अर्थ सबका स्वास्थ्य है, और सबका स्वास्थ्य तभी ठीक रह सकता है, जब सब उसके लिए यत्न करे।
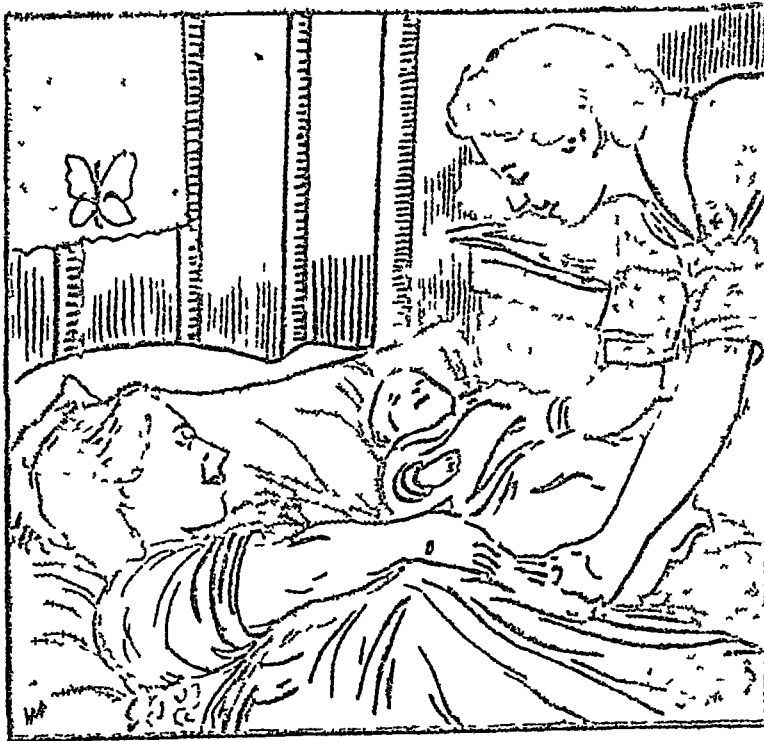
प्रसूता मां और बच्चे की देखभाल
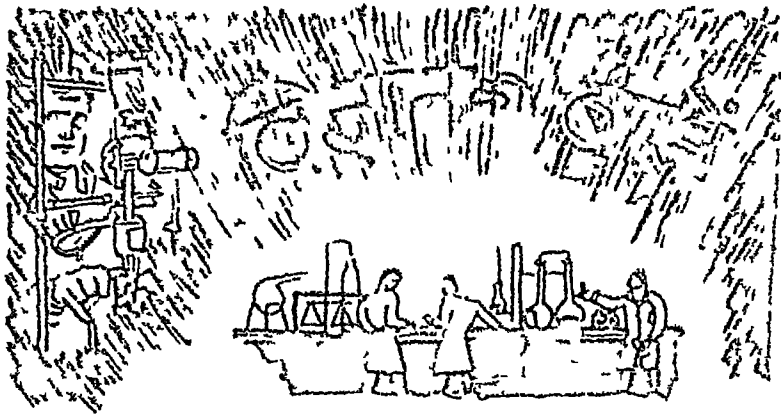
समय पर विजय

आज से लाखो साल पहले कल-कारखाने नही थे। लोगो के जीवन मे काम बहुत कम थे, फ़ुरसत अधिक थी, इसलिए जो काम होते थे, वे भी धीरे-धीरे फ़ुरसत से होते थे। यही कारण था कि पुराने लोगो को समय के छोटे-छोटे भागो का हिसाब रखने की जरूरत नही हुई।

उन दिनो गुफाओं मे रहने वाला आदमी किसी ऊची चट्टान की छाया से ही समय का अनुमान मोटे तौर से लगा लेता था। सुबह जब चट्टान की छाया खब लम्बी होती, तो पुरुष शिकार के लिए निकल जाते, और दोपहर को जब छाया चट्टान के नीचे आ जाती, तो वे शिकार लेकर वापस लौट आते थे। गरज यह कि वे सूरज से ही घडी का समय लेते थे।
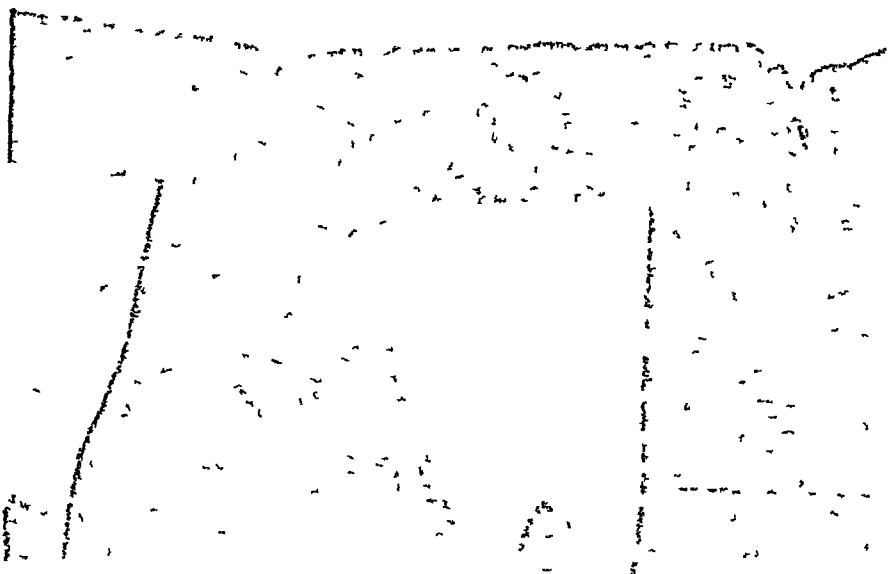
चट्टानो की छाया से समय का अन्दाज

जन्तर मन्तर की धूप घडी

समय की इकाइयां

बहुत समय बाद आदमी ने खेती करना सीखा और सिचाई की सुविधा देख कर उसने बडी-बडी नदियो की घाटियो मे खेती की और घर बसाए। तब उसने देखा कि नदियो का पानी एक खास समय पर चढता और एक खास समय पर उतरता है। इससे उसने यह सीखा कि यदि वह पानी को उस समय, जब वह चढता है, गड्ढो और तालाबो मे जमा न कर ले, या खेतो को तुरन्त न सीच ले, तो उसे साल भर सूखे का शिकार होना पडेगा। इसका फल यह हुआ कि उसने बाढ का ठीक-ठीक समय जानने के लिए सूर्य, चन्द्र और ग्रहो की चाल का हिसाब लगाया और समय की इकाइया तय करने की कोशिश की। समय की सही इकाई तय करने के लिए उसे कोई ऐसा काम बार-बार करना था, जिसके करने मे हर बार बराबर समय लगे। इस बात का पता तो आदमी ने पहले ही लगा लिया था कि पृथ्वी अपना एक चक्कर पूरा करने मे हर रोज लगभग एक-सा समय लेती है। इससे उसने यह परिणाम निकाला कि सूर्य के एक बार निकलने से दूसरी बार निकलने तक के समय मे पृथ्वी एक बार अपनी जगह पर घूम जाती है। उस समय को उसने 'एक दिन' कहना तय किया। सूर्य, चन्द्र और ग्रहो की चाल का और भी बारीकी से हिसाब लगा कर धीरे-धीरे आदमी ने देखा कि पृथ्वी अपनी जगह पर घूमती रहती है और साथ-ही-साथ सूर्य के चारो ओर चक्कर लगाती रहती है। और यह चक्कर $365\frac{1}{4}$ दिन मे पूरा होता है। इसलिए उसने उस समय को, जिसमे पृथ्वी

सूर्य के चारो ओर अपना एक चक्कर पूरा कर लेती है 'एक साल' का नाम दिया । फिर, उसने साल को बारह महीनो में, और एक दिन को, सुबह, दोपहर, शाम और रात मे बाटा ।

पर जब आदमी की सभ्यता आगे बढी और उसने शहरो में रहना शुरू किया, तब उसने महसूस किया कि दिन को केवल सुबह, दोपहर, शाम और रात में बाटने से उसका काम अच्छी तरह नही चलता । इसलिए उसने एक दिन को 8 पहरो में बाटा और आगे चल कर उसने एक दिन को 24 घटो मे, हर घटे को 60 मिनट मे, और हर मिनट को 60 सैकड मे बाट दिया । सबसे पहले बाबुल के लोगो ने एक घटे को 60 मिनट मे और एक मिनट को 60 सैकड में बाटा था । 60 की सख्या चुनने की वजह यह थी कि वह ऐसी छोटी-से-छोटी सख्या है, जो बहुत-सी सख्याओ से पूरी-पूरी बट जाती है । 60 को दो, तीन, चार, पाच, छ , दस, बारह, पन्द्रह, बीस, और तीस से हम पूरा-पूरा बाट सकते है ।

धूप घडी—समय की इकाइया तय हो जाने के बाद समय को नापने के साधन सोचे गए । लगभग 3,000 साल पहले धूप घडी बनाई गई । उसके लिए जमीन मे एक डडे को इस तरह गाड दिया जाता था कि वह जमीन की सतह से उस जगह

धूप घडी
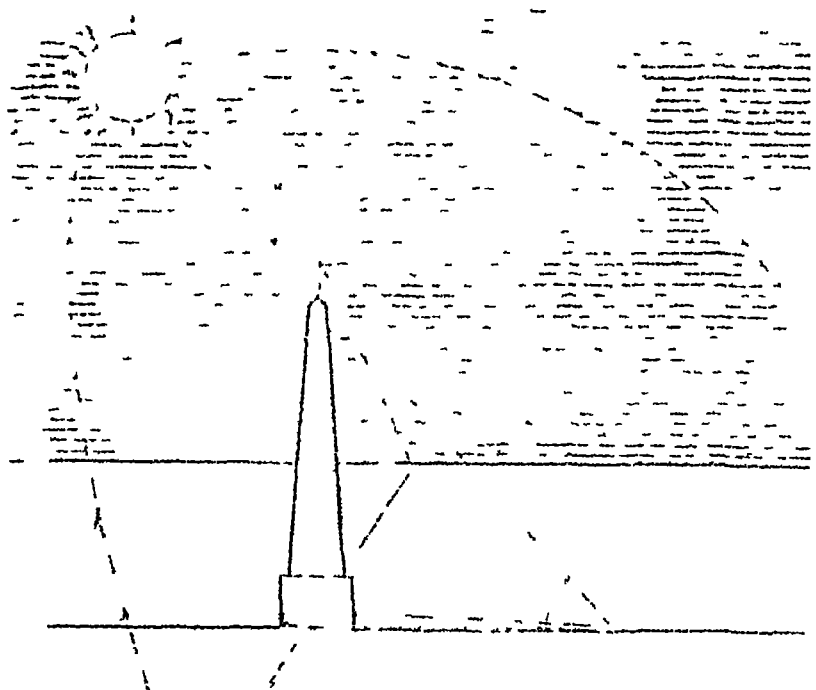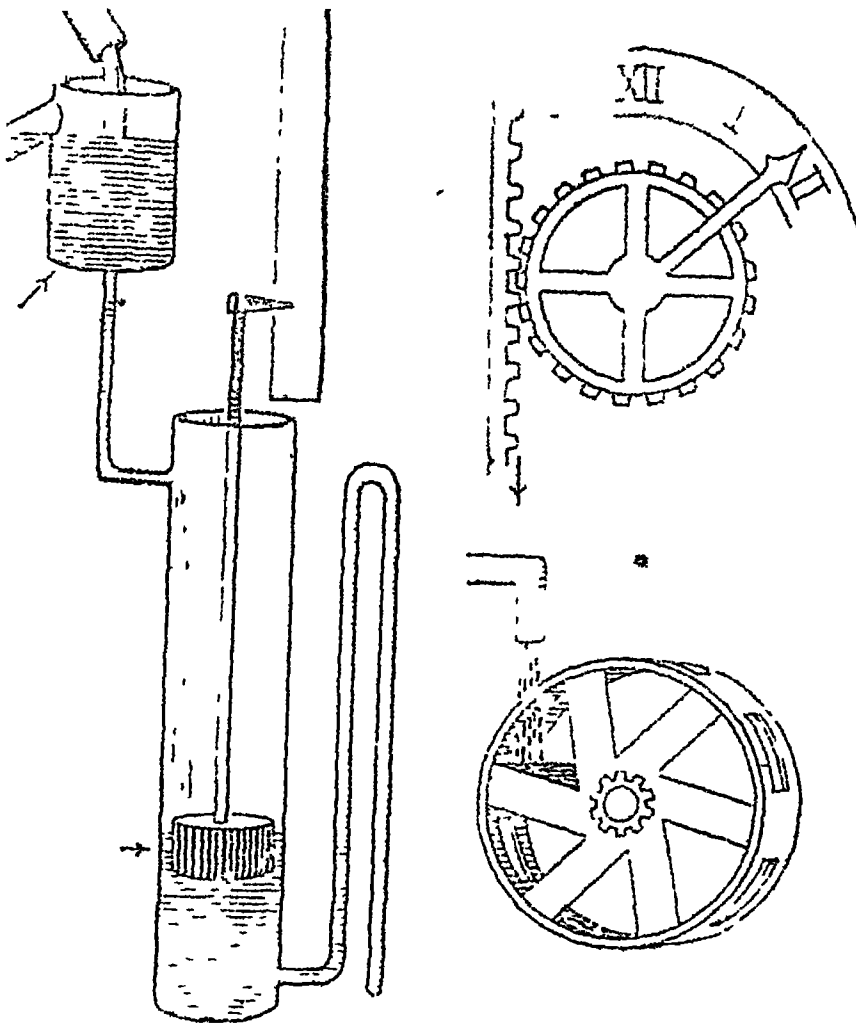
जल घड़ी

के अक्षाश के वरावर कोण वनाता हुआ झुका रहे। ठीक दोपहर को डडे की छाया छोटी-से-छोटी हो जाती थी। तब छाया के सिरे पर बारह लिख दिया जाता था। फिर उस छाया के बराबर अर्द्धव्यास लेकर एक वृत्त खीचते थे और जिस तरह घडी के डायल पर लिखा होता है, उसी तरह वृत्त के वराबर-बराबर बारह भाग करके हर भाग पर क्रम से एक से लेकर ग्यारह तक के अक लिख देते थे।

लेकिन वादल छा जाने पर या रात होने पर वह घडी वेकार हो जाती थी। इसलिए ऐसी घडी की जरूरत महसूस हुई, जो सूर्य के भरोसे न रहे। इसके बाद जल घडी और रेत घडी वनाई गई। जल घडी से समय मालूम करने का ढग यह था कि किसी वरतन के पेदे मे एक वहुत छोटा-सा छेद करके उसमे पानी भर दिया जाता था और बरतन को किसी ऊची जगह पर इस प्रकार रख दिया जाता था कि छेद ढके नही और उससे बूद-बूद पानी टपकता रहे। उसके ठीक नीचे एक दूसरा छिछला वरतन रख दिया जाता था, जिसमे धीरे-धीरे एक ही गति से पानी टपकता रहता था। नीचे वाले वरतन मे पानी की सतह की ऊचाई एक बधी हुई गति से धीरे-धीरे बढती रहती थी, जिसे देख कर समय की नाप की जाती थी। आगे चल कर जल घडी मे वहुत-से सुधार किए गए। जैसे नीचे के वरतन को बेलन के आकार का बना कर उसमे टपकते हुए पानी की सतह पर लकड़ी का एक पुतला तैरा दिया जाता था। पुतले का हाथ बरतन की दीवार पर रहता था। उस दीवार पर ऊपर से नीचे तक निशान बने होते थे। वरतन मे पानी बढ़ने के साथ-साथ पतला ऊपर उठता जाता था और उसका

रेत घडी

हाथ धीरे-धीरे एक के बाद दूसरे निशान पर पहुचता जाता था। इस तरह पुतले का हाथ घडी की घटे वाली सूई का काम करता था।
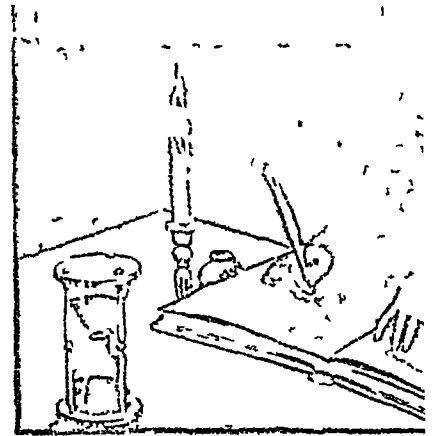
कहा जाता है कि यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिक अफलातून ने जल घडी मे एक ऐसी सीटी लगाई थी, जो रोज सुवह 4 वजे वज उठती थी। सीटी की आवाज सुन कर उसके शिष्य पढने के लिए ठीक समय पर जाग जाते थे।

अठारहवी सदी तक जल घडियो का उपयोग वडे पैमाने पर होता था। वे सस्ती थी और उनके अन्दर पेचीदा पुर्जे न होने से उनकी मरम्मत आसानी से हो सकती थी। वढिया प्रकार की जल घडियो मे लीवर लगे थे, जो हर एक घटे के वाद धातु की एक गोली नीचे गिरा देते थे और यह गोली नीचे रखी हुई एक घटी से टकरा कर टन की आवाज पैदा करती थी।

रेत घड़ी—समय के छोटे-छोटे भागो को नापने के लिए रेत घडी भी बनाई गई। रेत घडी डमरू की शक्ल की और काच की वनी होती थी। वीच का हिस्सा एकदम पतला होता था—इतना पतला कि ऊपर और नीचे के हिस्सो के वीच एक वहुत पतली नली भर रह जाती थी। ऊपर वाले आधे हिस्से मे रेत भर दी जाती थी, जो उस नली से होकर निचले हिस्से मे गिरती रहती थी। इस तरह ऊपर की कुल रेत एक खास समय के भीतर घडी के निचले हिस्से मे पहुच जाती थी। यूनानी लोग उस रेत घडी से जेब घडी का भी काम लेते थे। सभा-सोसायटी मे भाषण देने वाले को रेत घडी से नाप कर एक या दो 'रेत' का समय दिया जाता था। जहाज की रफ्तार नापने के लिए या लम्बी दौड का समय मालूम करने के लिए भी रेत घडी इस्तेमाल की जाती थी। रेत घडी थी तो काम की चीज, लेकिन उसमे सवसे वडी कमी यह थी कि उससे समय का एक छोटा-सा हिस्सा ही नापा जा सकता था।

(बत्ती की घडी से समय की माप

मोमबत्ती से भी समय नापने का एक तरीका निकाला गया था। मोमबत्ती पर नीचे से ऊपर तक बराबर-बराबर की दूरी पर निशान बना दिए जाते थे। मोमबत्ती के एक निशान से दूसरे निशान तक जलने मे लगभग बराबर समय लगता था, इस तरह जले हुए भागो को गिन कर समय की नाप की जाती थी। परन्तु हवा के झोको और दूसरे कारणो से भी मोमबत्ती के जलने की रफ्तार घट-बढ जाती थी। इसलिए मोमबत्ती की घडी से समय की माप हमेशा सही नही होती थी।

कलपुर्जों वाली घड़ी—सन् 1000 से 1800 तक के समय को यूरोप मे मध्य युग कहते है। उस युग के गिर्जाघरो मे पादरियो को बहुत-से नियम-कायदो मे बध कर जीवन बिताना पडता था। इसलिए वक्त की पाबन्दी के लिए घडी का प्रयोग सबसे पहले गिर्जाघरो मे शुरू हुआ। यूरोप मे तेरहवी सदी मे इस तरह की पहली घडी मार्को पोलो के साथ ईरान से इटली गई थी। तब उसे देख कर वहा पादरियो ने घडिया बनानी शुरू की। ईरान मे इस तरह की घडिया पहले से बनती थी।

प्राचीन पेंडुलम घडी
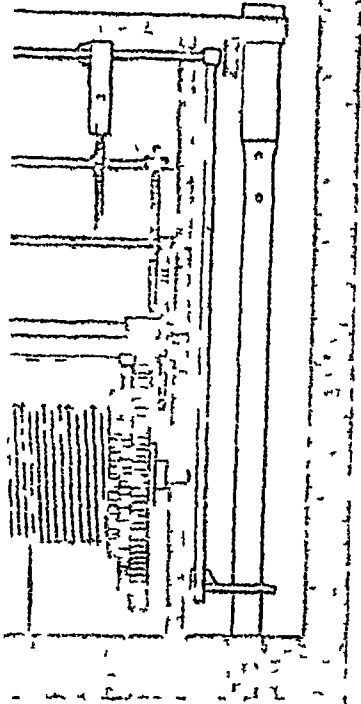
इस तरह की पहली घडी कमानी से नही, बल्कि लटकते हुए बाट के जोर से चलती थी। एक बेलन पर लिपटी रस्सी के निचले छोर पर एक बाट बधा रहता था। वह बाट अपने वजन की वजह से धीरे-धीरे नीचे सरकता जाता था और उसके साथ-साथ बेलन भी घूमता जाता था। बेलन से दातेदार पहिए जुडे होते थे, जो बेलन के साथ-साथ हरकत करते थे। उन्ही पहियो से जुडी हुई एक सूई डायल पर चलती थी, और समय बतलाती थी। घडी बनाने का यह ढग यूरोप वालो ने ईरानियो से सीखा था।

पर उस घडी मे खराबी यह थी कि बाट ज्यो-ज्यो नीचे सरकता जाता था, त्यो-त्यो उसके नीचे गिरने की रफ्तार बढती जाती थी। इसलिए घडी तेज चलने और गलत समय देने लगती थी। बाद मे उस खराबी को दूर करने के लिए उसमे 'एस्केपमेंट' नाम का एक पुर्जा लगाया गया, जिसकी मदद से घडी की चाल एक-सी

गैलीलियो द्वारा पेंडुलम के सिद्धान्त
का 1583 में आविष्कार

रहने लगी। उन घडियों के पुर्जे भारी-भरकम होते थे और उन्हे अक्सर लोहार ही ठोक-पीट कर तैयार करते थे। मिसाल के लिए, सन् 1380 मे बनी पेरिस की एक घडी मे लटकने वाले बाट का वजन 250 सेर था और व्यास एक फुट। उससे चलने वाले दातेदार पहियों का व्यास डेढ फुट था। वह घडी 500 वर्ष तक पेरिस की जनता को सही समय बताती रही थी, और वह पेरिस के सग्रहालय मे आज भी मौजूद है।

पेंडुलम वाली घड़ी—आजकल की दीवार घडी की चाल को साधने के लिए एक लटकन का उपयोग किया जाता है, जिसे पेंडुलम कहते है। लगभग 400 साल पहले यूरोप में दूरबीन का रिवाज चलाने वाला गैलीलियो नामक वैज्ञानिक इटली मे पीसा नगर के एक गिर्जे मे प्रार्थना करने गया। उस गिर्जे की छत से झाड-फानूस के लैम्प लटक रहे थे, जो हवा मे इधर-उधर झूल रहे थे। उसने अन्दाजा लगाया कि लैम्प को इधर से उधर झूलने में बराबर समय लग रहा था, चाहे झूलने की जगह का विस्तार कम हो या ज्यादा। इस पर गैलीलियो ने अपने अन्दाजे की सचाई परखने के लिए अपने हाथ की नाडी की चाल से लैम्प के झूलने का समय नापा और उसने पाया कि उसका अन्दाजा बिल्कुल सही था। गैलीलियो की इसी खोज की बुनियाद पर पेंडुलम वाली घडी की ईजाद हुई। बाद मे घडी के दातेदार पहियो को हरकत देने के लिए लटकने वाले बाट की जगह कमानी का उपयोग किया जाने लगा और घडी की चाल को एक-सा बनाए रखने के लिए एस्केपमेंट के साथ पेंडुलम लगाया गया।

झूलता हुआ पेंडुलम जब एक खास जगह पहुचता है, तब उसके सिरे पर लगा एस्केपमेंट का पहिया लगर की पकड से छट कर केवल एक

पेंडुलम घडी को कैसे चलाता है
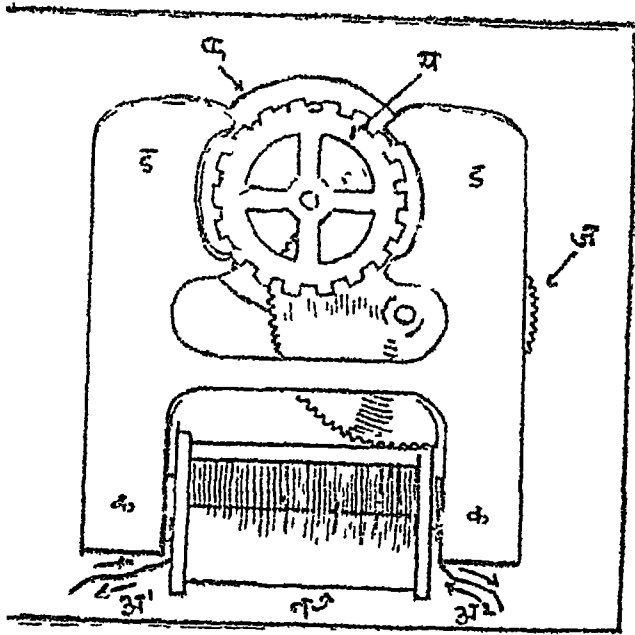
बिजली की घडी का भीतरी भाग

दात आगे खिसक कर रुक जाता है और जव पेडुलम द्वारा उसी जगह पहुचता है, तव एस्केपमेट का पहिया लगर से छट कर फिर एक दात आगे खिसक जाता है। पेडुलम की लम्वाई इतनी रखी जाती है कि हर एक सेकड के वाद वह एस्केपमेट के पहिए को हरकत देता रहे। इस तरह एस्केपमेट का पहिया हर एक सेकड के वाद एक-एक दात आगे खिसकता रहता है। एस्केपमेट के पहिए का सम्बन्ध दूसरे दातदार पहियो के द्वारा मिनट और घटे की सूई से इस तरह वना रहता है कि जव एस्केपमेट का पहिया 60 वार घूमे, तव मिनट की सूई का पहिया एक वार घूमे, और जब मिनट वाला पहिया 60 वार घूमे, तव घटे वाली सूई का पहिया केवल एक वार घूमे।

यात्रियो की सुविधा के लिए वाद मे जेव घडिया और कलाई घडिया भी बनी। उनमे घडी की चाल साधने के लिए पेडुलम के वजाय वालकमानी काम मे लाई जाती है। वालकमानी के खुलने और बद होने से लगर इधर-उधर हिलता है। लगर के हिलने से एस्केपमेट का पहिया एक-एक सेकड के बाद एक-एक दाता घूमता रहता है। जेब या कलाई की घडियो के पहिए भी कमानी की ऐठन के बल ही घूमते है।

बिजली की घड़ी—बडे-वडे होटलो या कारखानो मे, जहा पचासो दीवार घडिया लगी रहती है, रोजाना सव घडियो मे कूक भरना झझट का काम है। फिर, उन सवकी चाल को एक-सा वनाए रखना भी आसान नही है। इसलिए अब अक्सर उन जगहो मे बिजली से चलने वाली घडिया लगाई जाती है। विजली की घडी मे कमानी और एस्केपमेट लगाने की जरूरत नही होती, और न उसमे पेडुलम और लगर ही होते है। इसीलिए चलते समय उनमे टिक-टिक की आवाज नही होती। उनके अन्दर बिजली की मोटर लगी रहती है। मोटर के घूमने की रफ्तार इस वात पर निर्भर होती है कि ए० सी० बिजली एक सेकड मे कितनी बार अपनी दिशा वदलती है। जब तक उसकी दिशा वदलने की रफ्तार एक-सी रहती है, तब तक घडी की चाल भी एक समान रहती है। बिजली से घडी को चलाने मे विजली का खर्च भी वहुत कम होता है। एक यूनिट मे घडी महीनो चल सकती है। एक यूनिट विजली की कीमत 25-30 नए पैसे होती है।

कुछ अद्‌भुत घडिया
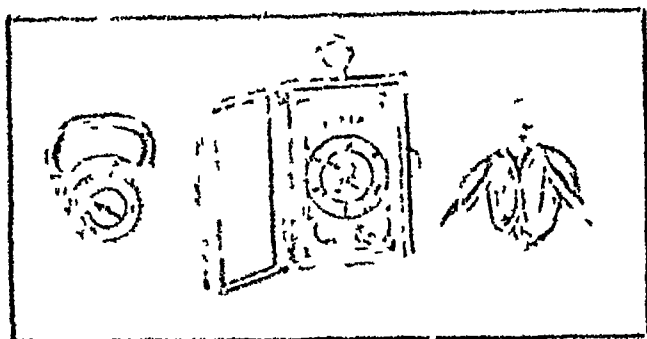
बडे आकार की घडिया अक्सर बिजली से चलाई जाती है। उदाहरण के लिए, लिवरपूल नगर मे 220 फुट ऊची मीनार पर एक बहुत बडी घड़ी लगी हुई है, जिसके डायल का व्यास 25 फुट है। वैसी ही चार घडिया मीनार के चारो ओर लगी है। डायल पर लिखे अक करीब-करीब एक-एक गज लम्बे है। सूइयो की लम्बाई 14 फुट और उनके बीच की चौडाई 3 फुट है। भीतर के कल-पुर्जों समेत घडी का वजन 50 मन है। प्रतिदिन 10 बजे दिन को ग्रीनविच की वेधशाला से उस घडी का समय मिलाया जाता है। वह घडी इतने कुशल कारीगर ने तैयार की है कि हफ्ते भर मे उसके समय मे केवल दो सेकड का अन्तर पडता है।

ज़मीन पर लिटाई हुई शायद सबसे बडी घडी दक्षिण अफ्रीका के रैण्ड हवाई अड्डे पर है। उसके डायल का व्यास 30 फुट है। मीलो ऊचाई पर उडते हुए हवाई जहाज़ से घडी के डायल पर आसानी से समय देखा जा सकता है।

समय का सही ज्ञान प्राप्त करने के लिए वेधशालाओ मे कीमती यन्त्र लगे रहते है। वहा दूरबीन की सहायता से आसमान के सितारो को देख कर ठीक-ठीक समय मालूम किया जा सकता है। फिर, उसी समय के अनुसार लोग अपनी घडियो का टाइम सही करते है। रेडियो द्वारा दिन में कई बार सही समय का ऐलान किया जाता है।

चार-पाच सौ साल पहले हमारे देश मे भी विद्वानो ने जयपुर, वाराणसी, दिल्ली, आदि में समय की सही जानकारी प्राप्त करने लिए वेधशालाए बनाई थी। दिल्ली के जन्तर मन्तर में लगी धूप घडी और दूसरे यन्त्र अब भी ठीक हालत मे मौजूद है।
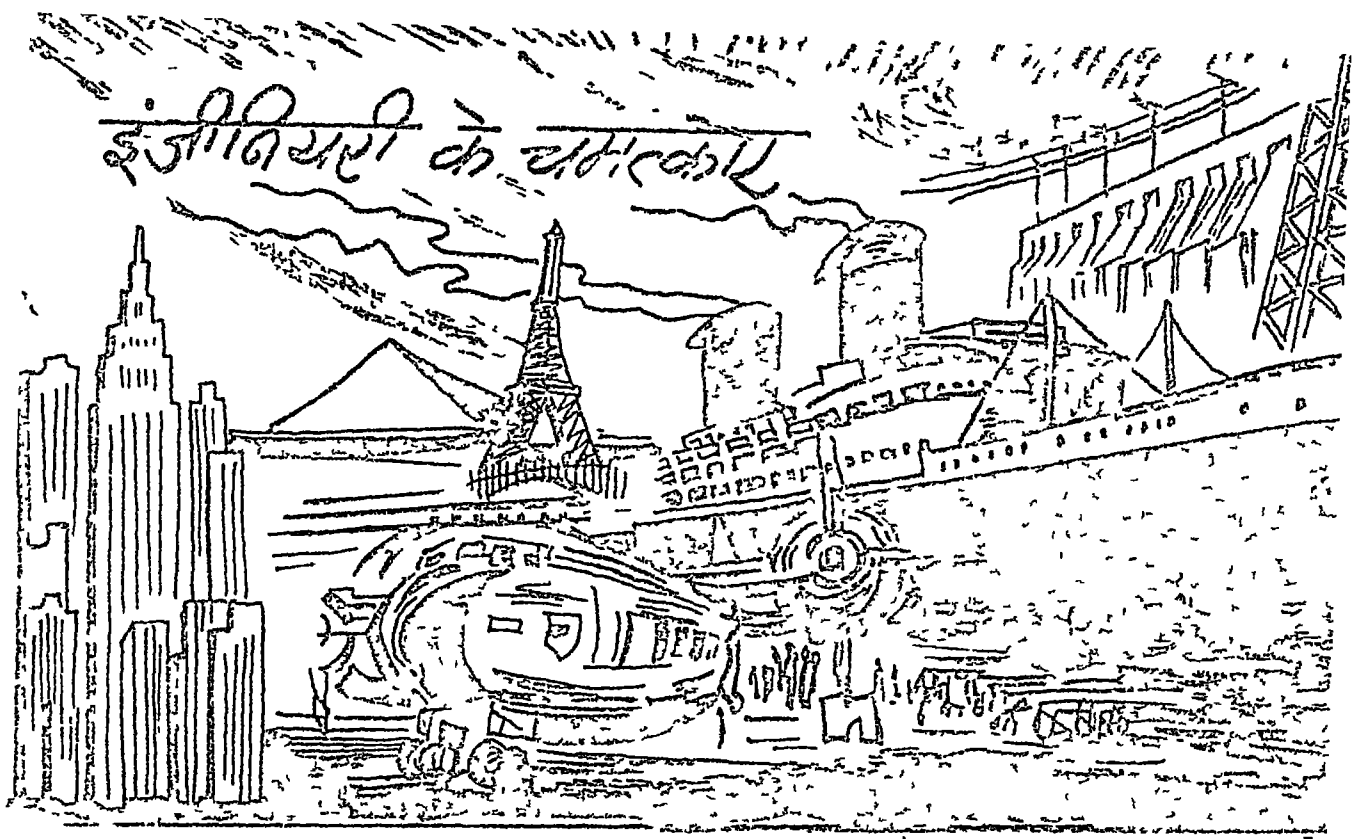
(1) स्वेज़ नहर

एशिया और अफ्रीका के महाद्वीप जहा पहले कभी एक-दूसरे से जुडे हुए थे, वहा अब एक बहुत बडी नहर है । उस नहर को स्वेज नहर कहते है । वह भूमध्यसागर को लाल सागर से जोडती है । पर स्वेज नहर सिचाई की नहर नही है, वह यूरोप और एशिया के बीच जहाजो के आने-जाने का रास्ता है ।

पुराने जमाने मे जब स्वेज नहर नही थी, यूरोप के व्यापारी जहाज पूरे अफ्रीका का चक्कर लगा कर भारत आते थे । पर स्वेज नहर के खुल जाने के बाद यूरोप और दक्षिण एशिया के बीच की दूरी बहुत कम हो गई है । अब भारत आने के लिए जहाजो को अफ्रीका का चक्कर नही लगाना पड़ता और इस नहर के कारण जहाजो का रास्ता पहले से 5,000 मील कम हो गया है ।

स्वेज नहर के किनारे एक जगह ताबे की एक बहुत बडी मूर्ति खडी है । वह मूर्ति एक फ्रासीसी राजदूत और इजीनियर की है, जिसका नाम लेस्सप्स था । लेस्सप्स ने ही आजकल की स्वेज नहर का नक्शा बनाया था और उसी ने खुदाई की देख-रेख की थी । उसी ने इस काम के लिए एक स्वेज कम्पनी भी बनाई थी । लेस्सप्स की मूर्ति

की दाहिनी भुजा दक्षिण की ओर उठी हुई रास्ता बताती रहती है। उस मूर्ति के नीचे फ्रेंच भाषा मे लिखा है, "सब राष्ट्रो के वास्ते धरती का द्वार खोल देने के लिए"। सचमुच ही स्वेज नहर के बन जाने से कम-से-कम यूरोप के लोगो के लिए दक्षिण एशिया के देशो के द्वार खुल गए। दक्षिण एशिया मे ही भारत जैसा देश था, जिसे 'सोने की चिडिया' कहा जाता था। इसलिए कोई आश्चर्य नही कि स्वेज नहर के खुलने से यूरोप के लोगो को ऐसा लगा, मानो उनके लिए समूची धरती का द्वार खुल गया हो।
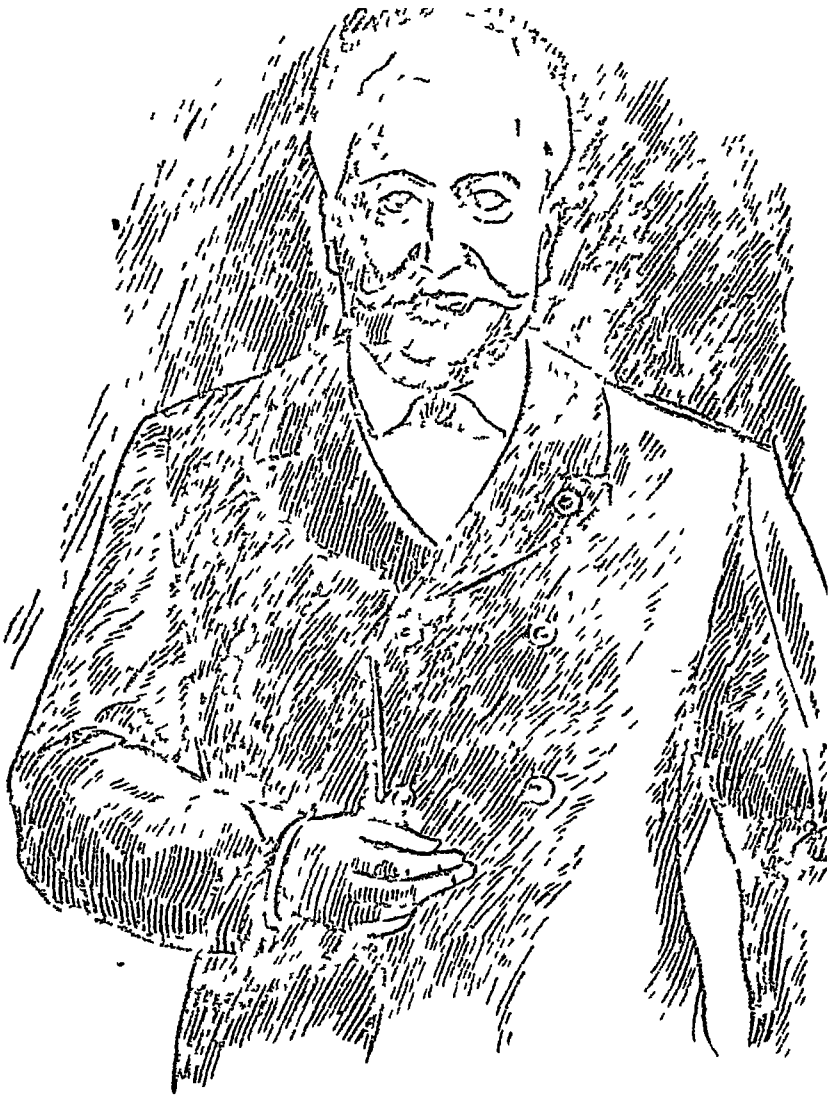
एम० द लेस्सप्स

यो, स्वेज नहर भूमध्यसागर और लाल सागर को जोडने वाली पहली नहर नही है। तिजारत के लाभ के लिए इन दोनो सागरो को जोडने का विचार सबसे पहले आज से चार हजार साल पूर्व मिस्र के सम्राट् ऐसोस्त्रिस को सूझा था। बड़ी मेहनत और काफी लागत से उसने यहा पहली नहर खुदवाई थी। सदियो तक उस जमाने के बडे-से-बडे जहाज उस नहर से दोनो सागरो के बीच आते-जाते रहे। फिर जब मिस्री सभ्यता की अवनति का समय आया, तब देख-रेख न हो सकने के कारण ऐसोस्त्रिस की खुदवाई नहर मे मिट्टी भर गई। उसके बाद ईरानियो का जमाना आया। ईसा से पाच सौ साल पहले ईरान के सम्राट् दारा ने मिस्र को फतह किया। दारा ने उस नहर को फिर से ठीक कराया। सैकडो बरस दारा की बनवाई नहर से जहाज आते-जाते रहे।
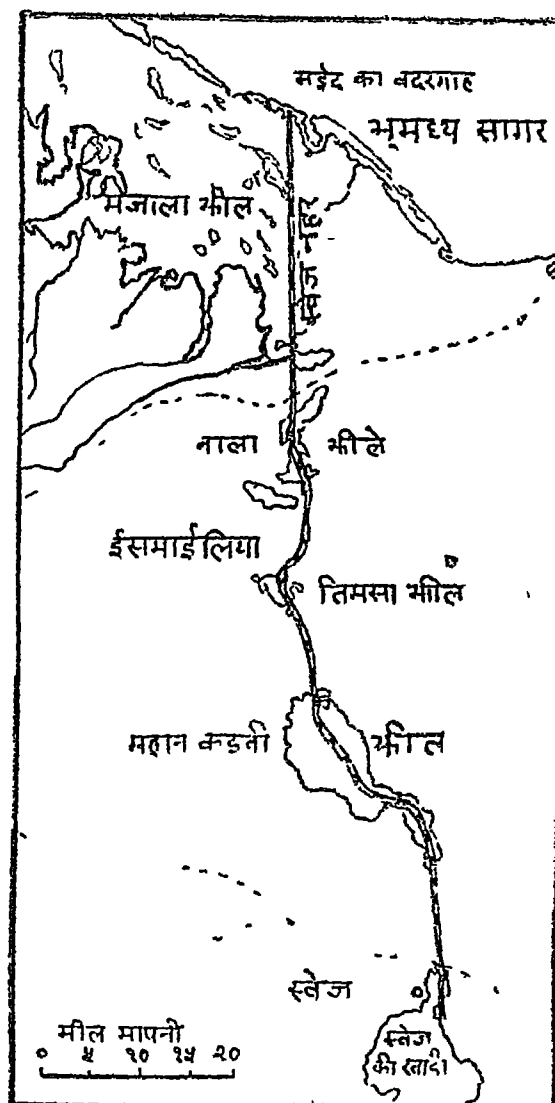
स्वेज नहर का चित्र

ईरानियो का भी जमाना खत्म हुआ। सातवी सदी ईसवी मे अरबो ने मिस्र को फतह किया। खलीफा उमर ने नए सिरे से जाच-पडताल करा कर वहा एक नहर खुदवाई, जो सदियो तक काम देती रही। अरबो का भी दौर समाप्त हुआ। नहर मे फिर मिट्टी भर गई। फ्रासीसियो ने खलीफा उमर की नहर को ही साफ करा कर और अधिक चौडा करके उसे स्वेज नहर का नाम दिया।

13वी और 14वी सदी मे तुर्की का साम्राज्य शक्तिशाली हो गया और पश्चिम यूरोप के लिए तुर्की से लेकर भारत आदि आने-जाने का रास्ता बद हो गया। तब कोलम्बस और वास्को-दे-गामा जैसे यूरोप के साहसी नाविक भारत पहुचने के लिए नया रास्ता खोजने निकले। वास्को-दे-गामा अफ्रीका का चक्कर लगा कर 20 मई, 1498 को भारत क मलावार तट पर पहुचा, और मलावार

के राजा जमोरिन का पत्र लेकर अपने देश पुर्तगाल लौट गया। उसके बाद अफ्रीका के किनारो का पूरा चक्कर काट कर यूरोप से दक्षिण एशिया को जहाज आने-जाने लगे।

पर वह रास्ता आसान नही था। एक तो आठ-नौ हजार मील की दूरी तय करना कठिन काम था, दूसरे अफ्रीका के किनारो पर यूरोप के समुद्री लुटेरे, जहाज लिए, जगह-जगह घूमते थे। हमले का डर बराबर बना रहता था। इसलिए यूरोप के लोगो ने यह सोचना शुरू किया कि जो हो, उन्हे अब लाल सागर के रास्ते भारत आदि पहुचने का रास्ता निकालना ही पड़ेगा।

लेस्सप्स फ्रास के राज-प्रतिनिधि की हैसियत से मिस्र आया। उसने धरती को फिर से काट कर स्वेज नहर बनाने का नक्शा तैयार किया। 1854 मे उसने अपनी योजना मिस्र के बादशाह सईद पाशा के सामने रखी और उसके लिए धन मागा। सईद पाशा ने स्वीकार कर लिया। सईद पाशा के अलावा फ्रास के धनी व्यापारियो ने भी इस काम मे कुछ धन लगाने का फैसला किया।

बादशाह सईद पाशा

1858 मे काम शुरू हो गया। उन दिनो खुदाई की वैसी मशीने नही थी, जैसी आजकल है। सारा काम हाथ से ही करना पडता था। मीलो दूर जाकर नील नदी से पानी ढोकर मजदूरो के लिए लाना पड़ता था। शुरू मे मिस्र के बादशाह ने नहर खोदने के लिए 25,000 मजदूर नियुक्त किए थे, जिन्हे हर तीसरे महीने बदल दिया जाता था। उन्ही तीन महीनो मे अनेक मजदूर कडी धूप, सख्त मेहनत और प्यास के शिकार होकर प्राण गवा देते थे। दस साल की लगातार मेहनत के बाद नहर तैयार हुई। उन दस बरसो मे लगभग 1,20,000 मिस्री मजदूरो ने इस काम मे अपने प्राण गंवाए। एक अग्रेज लेखक ने लिखा है कि अगर मिस्र के मजदूरो और कारीगरो ने गुलामो की तरह बेगार न की होती, तो दुनिया को अभी 50 बरस और स्वेज नहर की प्रतीक्षा करनी पडती। स्वेज नहर को बनाने मे लगभग 23 करोड रुपये खर्च हुए, जिसमे से आधा मिस्र ने दिया। 17 नवम्बर, 1869 के दिन नहर का उद्घाटन हुआ। इस अवसर को शानदार तरीके से मनाने पर मिस्र ने भारी रकम खर्च की।

आज स्वेज नहर 100 मील लम्बी और 26 फुट गहरी है। चौडाई पेंदी मे 72 फुट, और ऊपर 190 से 328 फुट तक है।

एशिया और यूरोप के बीच सबसे निकट का रास्ता होने के कारण यूरोप के सभी देश स्वेज नहर पर अधिकार करने की कोशिश करते रहे है। शुरू मे स्वेज नहर की मालिक 'स्वेज कम्पनी' पर मिस्र और फ्रास का मिला-जुला अधिकार था। आगे चल कर ब्रिटिश सरकार ने मिस्र के बादशाह इस्माइल पाशा को लगभग सवा पाच करोड रुपये देकर स्वेज कम्पनी के सारे मिस्री हिस्से खरीद लिए। इसके बाद स्वेज कम्पनी पर ब्रिटेन और फ्रास का अधिकार हो गया। जहाजो के आने-जाने का भाडा वसूल करके स्वेज कम्पनी भारी मुनाफा उठाने लगी। पर उस मुनाफे मे से मिस्र को कुछ भी नही दिया जाता था। मिस्र के लोगो को यह बात बहुत खटकी, क्योकि मिस्रियो की ही कुर्बानी से स्वेज नहर बनी थी। इसलिए ब्रिटिश और फ्रासीसी सरकारे हमेशा मिस्र मे ऐसे आदमी को शासक बनाए रखने की कोशिश करती, जो उनके इशारो पर चलता रहे। पर मिस्री जनता इस स्थिति से तंग आ गई, और 1955 मे कुछ देशभक्त सैनिक अफसरो ने उस समय के शासक शाह फारूक को गद्दी से उतार दिया। राजशाही के स्थान पर लोकतन्त्री सरकार कायम हो गई। थोडे अरसे बाद कर्नल नासिर मिस्र के राष्ट्रपति चुने गए।

कर्नल नासिर ने राष्ट्रपति होते ही मिस्र की आर्थिक स्थिति सुधारने के प्रयत्न शुरू किए। उन्होने ऐलान किया कि स्वेज नहर मिस्र की सम्पत्ति है। साथ ही, उन्होने ब्रिटेन और फ्रास को उचित मुआवजा देने का भी वचन दिया। पर ब्रिटेन और फ्रास इस बात को सहन न कर सके। उन्होने इजराइल के साथ मिल कर मिस्र पर हमला कर दिया। सारी दुनिया के स्वतन्त्रता प्रेमियो ने इस हमले का विरोध किया। अन्त मे, सयुक्त राष्ट्र सघ मे सवाल पेश हुआ, और सभी राष्ट्रो के दबाव से ब्रिटेन और फ्रास मिस्र से अपनी फौजे हटाने पर मजबूर हो गए।

अब स्वेज़ नहर की मालिक मिस्र की जनता है।

(2) पनामा नहर

अमरीका की पनामा नहर ससार की सुप्रसिद्ध नहरो मे है। वह उत्तरी और दक्षिणी अमरीका के बीच पनामा थल-सधि पर बनी है, और प्रशान्त महासागर को अटलाटिक महासागर से जोड़ती है। पनामा नहर के बनने से पहले उत्तरी अमरीका के पूर्वी किनारे से पश्चिमी किनारे की ओर जाने वाले जहाजो को दक्षिणी अमरीका का पूरा चक्कर लगाना पडता था। इस प्रकार सफर बहुत लम्बा हो जाता था और खर्च अधिक पडता था। साथ ही, रास्ते मे केपहार्न के पास भयानक तूफानो से टक्कर होती रहती थी। पनामा नहर वनने से पहले सभी जहाज अमरीका पहुचने के लिए मैगलन थल-सधि से गुजरते थे। मैगलन थल-सधि मे वर्फ जमी होने के कारण कभी-कभी जहाज़ उसमे फस जाते थे और उन्हे बडी कठिनाइयो का सामना करना पड़ता था।

पनामा नहर का निर्माण इजीनियरी का एक चमत्कार माना जाता है। नहर सम्वन्धी इजीनियरी की वह, निश्चय ही, एक अद्भुत करामात है। कारण यह है कि जिस पनामा थल-सधि की भूमि पर वह बनी है, उसकी सतह वेहद नाहमवार है। बीच के भाग मे क्यूलेब्रा की पहाड़िया है, जो काफी ऊची और लगभग तीस मील लम्बी है। इसके अतिरिक्त, जहा से नहर बनानी थी, वहा चैग्रेस नाम की एक नदी वहती थी।
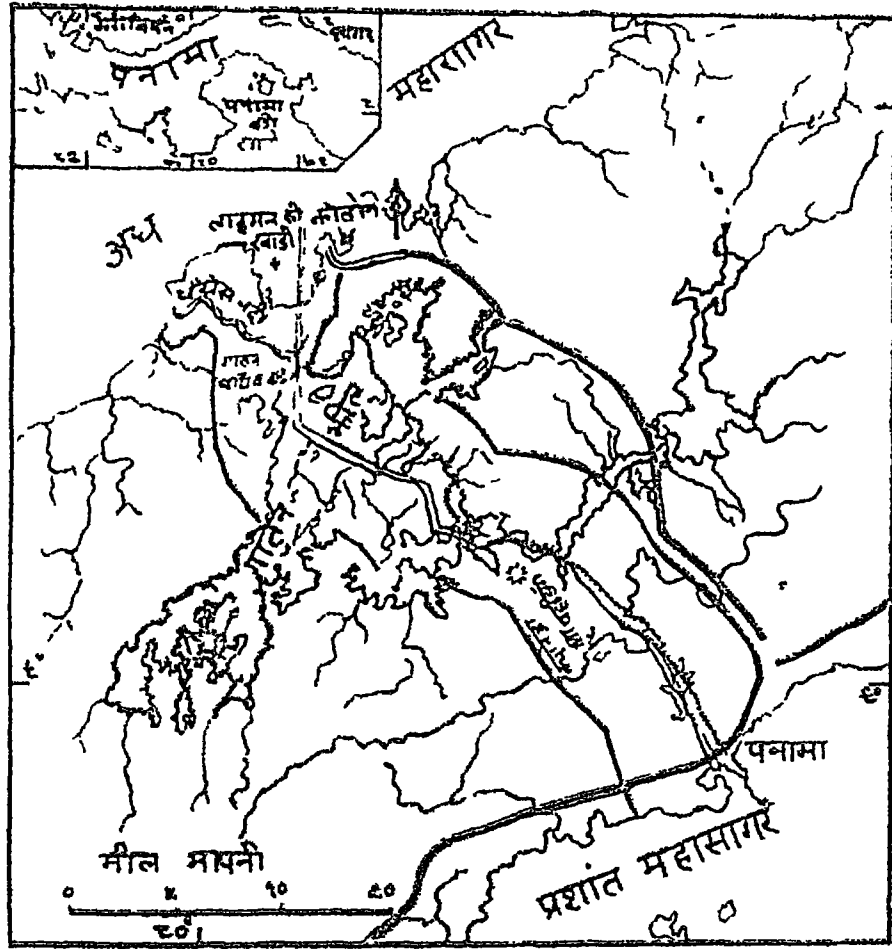
पनामा नहर का चित्र

पर आदमी की बुद्धि और इजीनियरी के कौशल ने सब कठिनाइयो को पार कर लिया। पहल तो यह निश्चय किया गया कि स्वेज की तरह पनामा नहर की सतह सब कही एक-सी नही रखी जाएगी। और दूसरे यह कि चैग्रेस नदी पर दो मजबूत बाध बना कर उस नदी को क्यूलेब्रा की पहाडी पर चढाया जाएगा। पहले निश्चय का फल यह हुआ कि नहर की सतह सब कही एक-सी रखने में जो भारी खुदाई करनी पडती, उसकी मेहनत और उसका खर्च बच गया, हालाकि फिर भी क्यूलेब्रा की पहाडियो को कही-कही 500 फुट तक गहरा काटना पडा। दूसरे निश्चय का फल यह हुआ कि पहाडी प्रदेश के ऊचे भाग मे चैग्रेस नदी ने न केवल एक 23 $\frac{1}{2}$ मील लम्बी और विस्तृत झील का रूप धारण कर लिया, बल्कि वह पनामा नहर का मध्य भाग भी बन गई। नहर के इस मध्य भाग की सतह नहर के दोनो सिरो की सतहो से 85 फुट ऊची है। इस झील को गातुन झील कहते है।

चैग्रेस नदी पर दो बाध बाधे गए। इनमे से एक को गातुन और दूसरे को गैम्बोआ कहते है। इन बाधो के जरिए नदी के बहाव को रोक कर पानी को समुद्र की
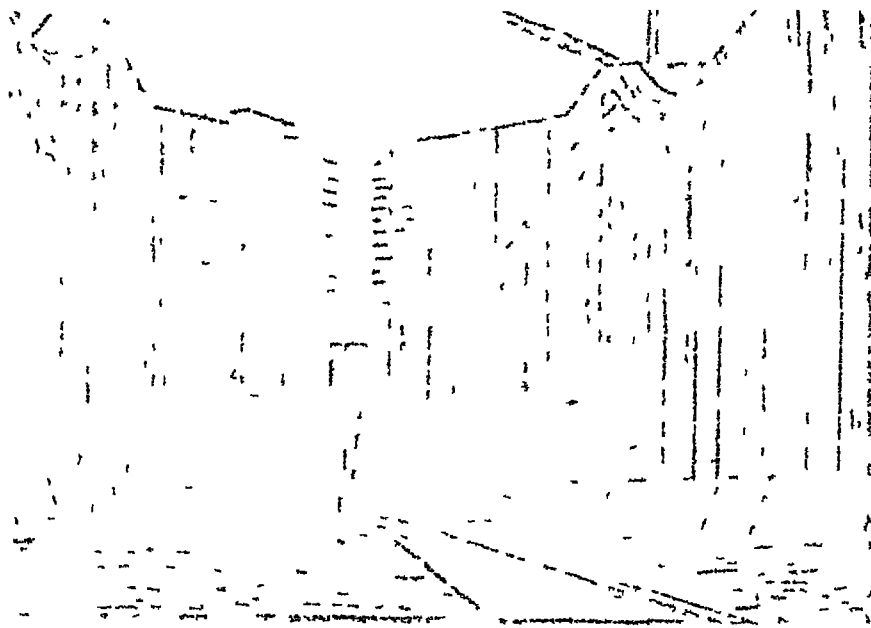
गातुन के जल रोकने के फाटक

सतह से 85 फुट की ऊचाई पर जमा कर लिया गया है। स्वय बाध 105 फुट ऊचा है। इसमे लोहे के 17 फाटक लगे है, जिनसे बरसात की बाढ का पानी झील मे से बाहर निकाल दिया जाता है। चैग्रेस नदी के पानी को बाध कर उसे झील के रूप मे बदल देने के कारण पनामा नहर का पानी कभी कम नहीं हो सकता। जिस तरह झील मे से फालतू पानी निकालने का प्रबन्ध है, वैसे ही पानी की आवश्यकता से अधिक आमद रोकने का भी प्रबन्ध है।

पनामा नहर की लम्बाई लगभग सवा चालीस मील है। उसे बनाने का काम सन् 1904 मे शुरू हुआ और सन् 1914 मे जाकर खतम हुआ। नहर को बनाने मे लगभग 50,000 मजदूरो ने काम किया। 24,00,00,000 घनगज मिट्टी खोदी गई, और लगभग 45 अरब रुपये खर्च हुए। पनामा नहर बनाने मे करीब दस साल लगे और अनेक प्रकार की कठिनाइया पेश आई। परन्तु मनुष्य ने अपनी लगन, उत्साह और मेहनत से इन सब कठिनाइयो पर विजय प्राप्त की।

नहर खोदने मे जो सबसे बडी कठिनाई सामने आई, वह यह थी कि नहर के इलाके मे मलेरिया और दूसरे भयानक रोगो के कीडो की भरमार थी। इसका नतीजा यह

गातुन पर फालतू पानी निकालने का बाध

जल रोकने के फाटक
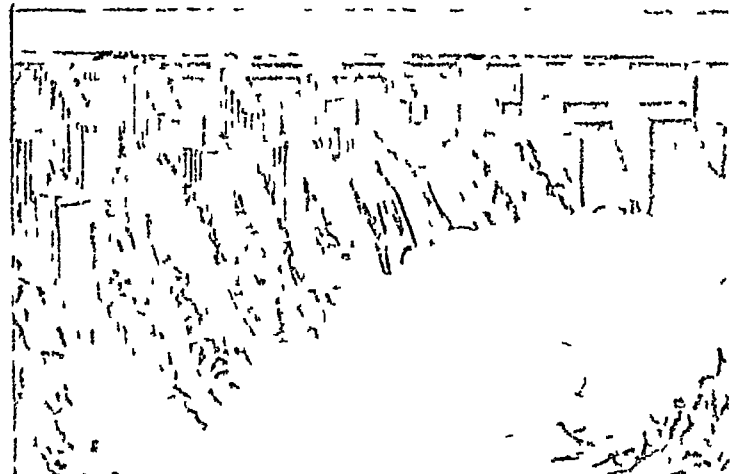
हुआ कि काम करने वाले मजदूर मलेरिया और पीले बुखार के शिकार होकर भारी सख्या में मरने लगे । इस कारण खुदाई का काम जब-तब रुक जाता था। पर बाद मे बीमारी के कीडो से मजदूरो को बचाने का पूरा प्रबध कर लिया गया, और काम तेजी से चलने लगा, ऊची-नीची भूमि को नापने और वहा मशीने आदि लगाने मे लगभग तीन बरस लगे।

इस तरह, दस साल तक लगातार काम करने के बाद पनामा नहर तैयार हुई, और 15 अगस्त, 1914 को जहाजो के आने-जाने के लिए खोल दी गई। पर उसका बाकायदा उद्घाटन अमरीका के राष्ट्रपति ने 12 जुलाई, 1915 को किया।
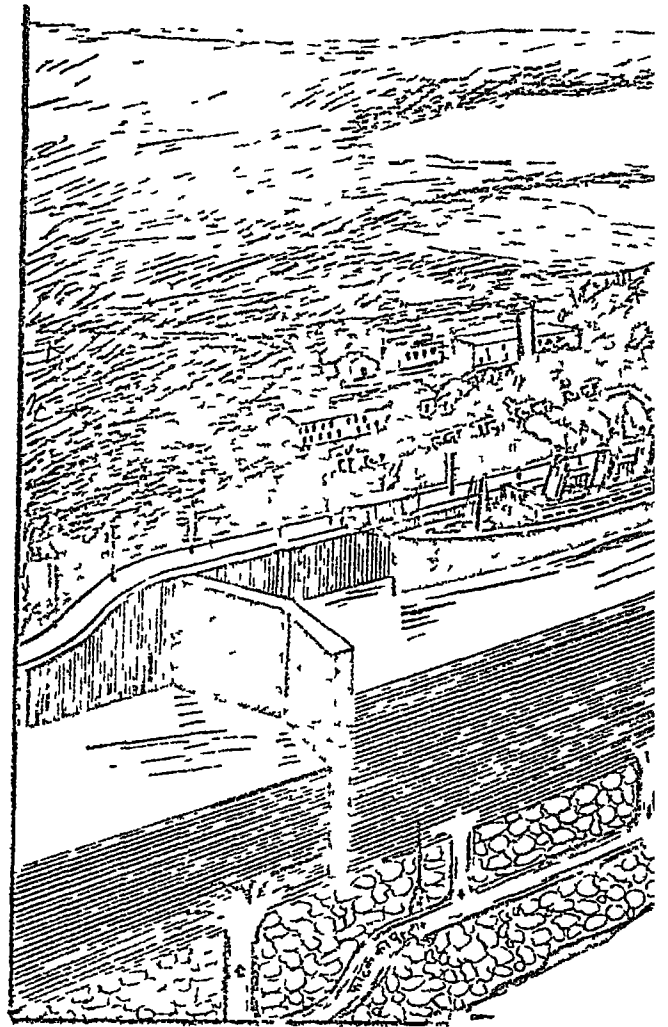
पनामा नहर की अधिक-से-अधिक गहराई 41 फुट है। स्वेज नहर के बाद दुनिया मे वह दूसरे नम्बर की नहर मानी जाती है। उसका व्यापारिक महत्व बहुत अधिक है, क्योकि उसके द्वारा अमरीका के पूर्वी किनारे से पश्चिमी किनारे तक आने-जाने का मार्ग बहुत छोटा और सुगम हो गया है। अब आने-जाने मे पहले से खर्च भी कम लगता है और समय की भी बचत होती है।

पनामा नहर की सबसे बडी और आश्चर्यजनक विशेषता यह है कि वह धरती की ऊची सतह पर खोदी गई है, और चैग्रेस नदी के पानी का बहाव रोक और मोड कर उसे ऊपर पहुचाया गया है। इतनी ऊचाई पर जहाजो को चढाने का प्रबध भी कुछ कम विचित्र नही है।अटलाटिक महासागर से प्रशान्त महासागर मे जाने के लिए जहाज पहले लाइमन की खाडी मे पहुचते है और वहा से पनामा नहर मे दाखिल होते है। इसके बाद लगभग 6 मील तक पनामा के निचली सतह वाले 500 फुट चौडे हिस्से मे बेरोक-टोक चलने के बाद वे गातुन बाध के सामने आते है। बाध मे जल रोकने के बाडे
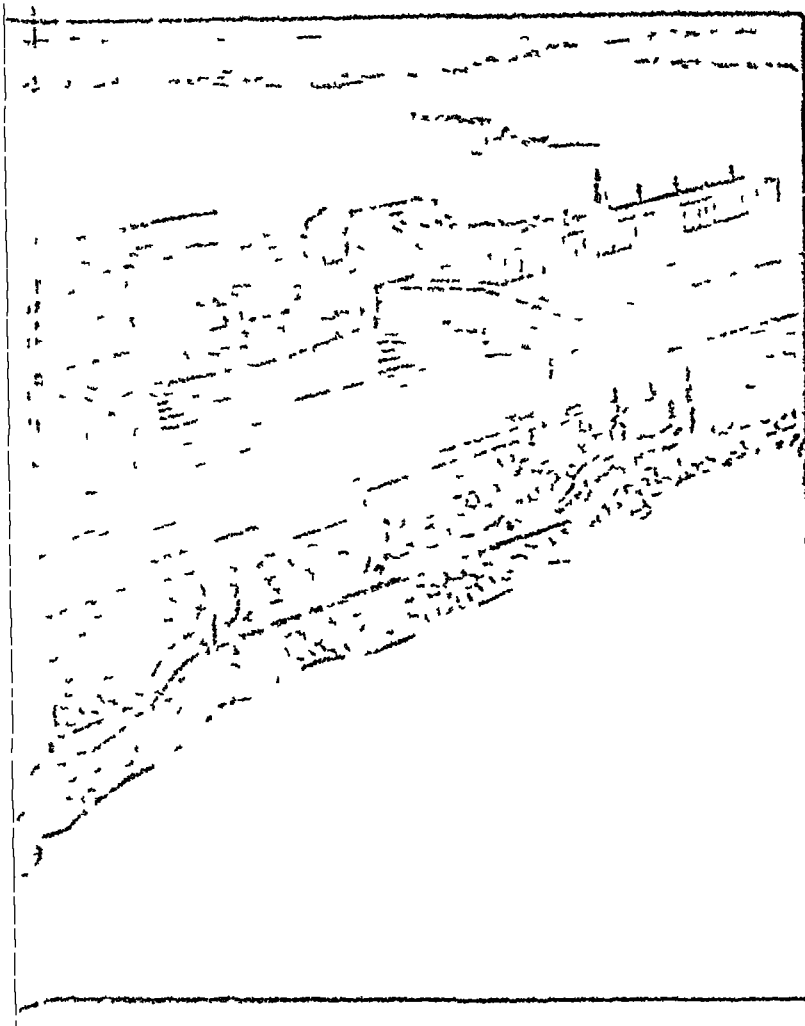
कैसे काय करते हैं

(नाक्स बने हुए है)। इनके फाटक 65 फुट लम्बे और 7 फुट मोटे है और इनकी ऊचाई 47 फुट से 82 फुट तक है। जहाज जब बाडे के फाटक के पास पहुचने को होते है, तब नहर के दोनो तटो के बीच पानी के भीतर एक मोटी और मजबूत जजीर पनबिजली के जोर से उठा दी जाती है। इससे जहाज रुक जाते है और पानी रोकने के फाटक से उनके टकराने का खतरा नही रहता। फिर पनबिजली के जरिए ही फाटक खोल दिए जाते है और जहाज बाडे में चले जाते है। फिर फाटक बद कर दिए जाते है। इसके बाद बाडे की चार-दीवारियो में बने सूराखो से बाडे में पानी गिरने लगता है। बाडे में ज्यो-ज्यो पानी बढता जाता है, त्यो-त्यो जहाज पानी की ऊची होती हुई सतह पर ऊपर उठते जाते है। इस प्रकार 30 फुट ऊचे उठ कर वे पहले की तरह ही दूसरे जल-रोक बाडे मे पहुचते है और वैसे ही 30 फुट और ऊचा उठते है। अन्त मे इसी तरह तीसरे बाडे में पहुच कर वे नहर की निचली सतह से 85 फुट ऊचा उठ कर गातुन झील में पहुच जाते है। बाडो के अन्दर जहाज अपने इजिनो का उपयोग नही करते, क्योकि उससे जहाज के नहर के फाटको से टकराने का डर रहता है। इसलिए जहाजो को किनारे की पटरी पर चलने वाले रेल के इजिन खीचते है। इस काम को दो से लेकर आठ तक इजिन करते है। झील मे फिर जहाज अपनी साधारण चाल मे चलने लगते है। $23\frac{1}{2}$ मील लम्बी झील के अन्तिम सिरे पर पहुच कर जहाजो को दो जल-रोक बाडो द्वारा फिर नहर की नीची सतह पर उतारा जाता है और वे आठ मील चल कर प्रशान्त महासागर मे पहुच जाते है। जल-रोक बाडो द्वारा जहाज को नीचे उतारने या ऊपर चढाने की क्रिया सचमुच ही अद्भुत है।
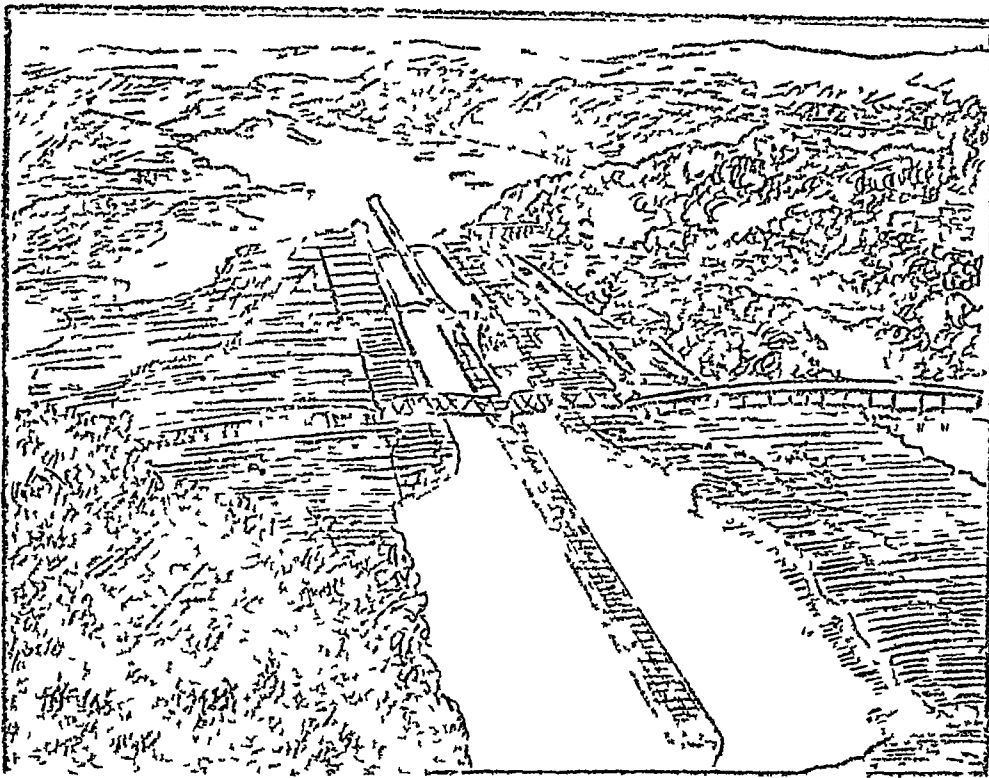
पनामा नहर

पनामा नहर के बनने मे कितने ही ठेकेदारो का दिवाला तक निकल गया। पहले नहर बनाने का ठेका एक फ्रासीसी कम्पनी ने लिया था, जो मजदूरो मे भयकर बीमारी फैलने, रुपये का उचित प्रबध न होने और कर्मचारियो द्वारा गबन किए जाने के फलस्वरूप दिवालिया हो गई। उसके वाद एक दूसरी फ्रासीसी कम्पनी को ठेका दिया गया। पर उसे भी सफलता नही मिली। तव अन्त मे नहर वनाने का काम अमरीका की सरकार के सुपुर्द किया गया और अनेक कठिनाइयो के बाद नहर का निर्माण हो सका।

पनामा नहर से अमरीका के व्यापार को बेहद लाभ हुआ है। ससार के जिन देशो का व्यापार अमरीका के पश्चिमी किनारे से होता है, पनामा नहर के कारण उनका बहुत-सा खर्च बच जाता है। युद्ध काल मे तो वह अमरीका के लिए बहुत ही उपयोगी है, क्योकि युद्ध के समय उस नहर से केवल सयुक्त राज्य अमरीका ही लाभ उठा सकता है।

पनामा जिस भूमि पर वनी है, वह मध्य अमरीका के पनामा गणराज्य की है। पनामा गणराज्य पहले कोलम्बिया राज्य का एक भाग था। सयुक्त राज्य अमरीका ने सन् 1904 मे लगभग 13 करोड रुपये मे दी-लेस्सप्स नाम की कम्पनी से नहर के समूचे कारोवार को खरीद लिया। बाद मे जब कोलम्बिया से पनामा अलग हो गया, तब सयुक्त राज्य अमरीका ने पनामा राज्य से एक नवीन सधि की, जिसके अनुसार लगभग 3 करोड बीस लाख रुपये पनामा को उसी समय तथा उस तिथि के 9 वर्ष बाद लगभग 8 करोड 10 लाख रुपये वार्षिक देना तय हुआ। वाद मे 1938 मे एक नई सधि हुई, जिसके अनुसार सयुक्त राज्य अमरीका से लगभग 85 लाख रुपये सालाना नहर के कर के

रूप मे पनामा गणराज्य को प्राप्त होते है। नहर का प्रबन्ध तथा नहर के किनारो पर बसे प्रसिद्ध नगर कोलन और पनामा की सुरक्षा तथा सफाई का प्रबध सयुक्त राज्य अमरीका के हाथ मे है। नहर के उत्तर मे करेबियन सागर तथा दक्षिण में प्रशान्त महासागर है। पनामा नहर के क्षेत्र का शासन एक गवर्नर के अधीन है, जिसे सयुक्त राज्य अमरीका नियुक्त करता है। नियमों के अनुसार वह पनामा गणतन्त्र के अधीन होना है, किन्तु सकटकालीन अवस्था मे सारा प्रबध संयुक्त राज्य अमरीका के प्रधान सेनापति की आज्ञा के अनुसार चलता है। नहर के दोनो किनारो पर बडी-बडी कम्पनियो को इमारतें बनवाने की आज्ञा दे दी गई है, जिससे जमीन के किराए के रूप मे हर साल काफी बडी रकम मिल जाती है। किनारो की कुछ जमीन खेती के लिए भी किसानो को किराए पर दी जाती है। पनामा गणतन्त्र की आर्थिक उन्नति में उसने भारी योग दिया है। पनामा नहर का निर्माण प्रकृति पर मनुष्य की विजय का एक जीता-जागता उदाहरण है।

(1)

चमड़े का काम

आज से हज़ारो साल पहले ही आदमी जानवरो की खाल का उपयोग जान गया था। तब वह गुफाओ मे रहता था और पेट भरने के लिए जानवरो का शिकार करता था। उसी समय उसने अनुभव से यह बात सीखी होगी कि ठड से बचने के लिए जानवरो की खाल पेड की पत्तियो और छाल से अधिक उपयोगी है। तभी तो उसने खाल से पोशाक बनाना शुरू किया।

धीरे-धीरे उसने यह भी महसूस किया कि खाल पर लगे बाल बेकार है। इसलिए आगे चल कर उसने उन बालो को खुरचने के लिए पत्थर के औजार बनाए। उस जमाने के बने हुए ऐसे औजार कई जगह पाए गए है।

वेदो मे ठठेरे, जुलाहे, बढई और दूसरे कारीगरो के साथ मोची या चमार का भी वर्णन मिलता है। आगे चल कर महाभारत काल मे चमडे के जूते, मशक, आदि चीजे बनने लगी थी। शेर और हिरन के चमडे से बने तकिए और गाय की खाल से बनी तलवार की म्याने उस समय खूब प्रचलित थी।

बाइबिल मे एक जगह लिखा है कि "आदम और उनकी पत्नी के लिए ईश्वर ने खाल के कोट बनाए।" बाइबिल मे साइमन नाम के एक आदमी का जिक्र मिलता है, जो खाल को कमा कर चमडा बनाने का काम करता था। इन बातो से सिद्ध होता है कि आदमी चमड़े का उपयोग न-जाने कितने पुराने समय से करता आ रहा है।

खालो को कमाने का आदिम तरीका

ताजा खाल को कडी पडने या सडने से बचाने और उससे मुलायम, मजबूत और टिकाऊ चमडा बनाने को 'कमाना' कहते हैं।

आदमी जब गुफाओ मे रह कर जगली जीवन बिताता था, तब उसे खाल को 'कमाने' की कला नही मालूम थी। तब वह खाल को केवल धूप मे सुखा कर काम मे लाता था। किन्तु सूखने पर खाल कडी हो जाती थी। तब वह उसे नरम बनाने के लिए सुखाते समय हाथ से मलता था और, बाद मे, उस पर जानवरो की चर्बी रगडता था। आगे चल कर उसे यह भी पता चला कि मिट्टी की कुछ ऐसी किस्मे है, जिन्हे रगडने से खाल मजबूत और टिकाऊ बन सकती है। इसके अलावा कई ऐसे फल है, जिनका रस मलने से चमडा बिगडने नही पाता। उस युग के आदमी ने कुछ ऐसे पेडो का भी पता लगाया, जिनकी डाल से टपकने वाले बरसात के पानी के प्रयोग से भी खाल मुलायम और टिकाऊ हो जाती है।

आदिम काल मे खाल 'कमाने' की कला आज की तरह उन्नत नही थी। पर इस बात के प्रमाण मिलते है कि इस कला का जन्म आज से हजारो साल पहले हो चुका था। यूरोप के अजायबघरो मे चमडे की ऐसी अनेक पोशाके रखी है, जिन्हे रोमन सिपाही पहना करते थे। वे पोशाके बहुत मजबूत और मुलायम है। उन्हे देख कर अनुमान होता है कि आज से हजारो वर्ष पहले भी चमडे का काम काफी उन्नत हो चुका था।

जानवरो की उतारी हुई ताजा खाल को कच्ची खाल कहते है। खाल मे कई तहे होती है। सबसे ऊपर रोए या बडे-बडे बाल होते है। उनके नीचे असली खाल होती है। खाल की सतह दानेदार या खुरदरी होती है। खुरदरी सतह के नीचे एक और सतह होती है, जिस पर नसे होती है। उसके नीचे मास की तह होती है।

उतारे जाने के कुछ ही देर बाद खाल खराब होने लगती है। इसलिए कमाने से पहले ताजा खाल मे नमक पोत कर उसे धूप मे सूखने के लिए छोड़ देते है। इससे खाल कठोर जरूर हो जाती है, किन्तु कुछ दिनो तक सडने या खराब नही हो पाती। खाल इसी दशा मे कसाईखाने से कारखाने या एक देश से दूसरे देशो को भेजी जाती है।

कारखाने मे पहुचने के बाद खाल को बहते हुए पानी मे अच्छी तरह और देर तक धोया जाता है। धोने से खाल पर लगा नमक, मैल और खून साफ हो जाता है। साथ ही भीगने से खाल मुलायम भी हो जाती है।

धुलाई के बाद खाल के बालो को साफ किया जाता है। इस काम मे चूने का घोल इस्तेमाल किया जाता है। अग्रेजी मे इस क्रिया को 'लाइमिग' कहते है। चूने के प्रभाव से बालो की जडे कमजोर और ढीली हो जाती है। फिर खाल को लकडी के पटरो पर इस तरह फैला देते है कि उनकी बालो वाली सतह ऊपर रहे। उसके बाद कारीगर खुरचने वाले औजारो से बालो को खुरच कर निकाल देते है। खुरचने वाले औजार का फल चौडा होता है और उसके दोनो तरफ लकडी की मूठ होती है।

ऊन वाली खाल को चूने के पानी मे नही डाला जाता। चूने के पानी से ऊन खराब हो जाती है। ऊन को खाल से अलग करने के लिए एक दूसरा तरीका काम मे लाया जाता है। खाल की धुलाई के बाद उसको तहखानो मे लटका दिया जाता है। कलो के जरिए इन तहखानो मे भाप पहुचाई जाती है, और भाप की नमी से खाल पर जमी ऊन को ढीला किया जाता है। इस तरह खाल को चार या पाच दिन तक तहखाने मे रखा जाता है। उसके बाद उसे बाहर निकाल लिया जाता है।

ऊन, रोऐं या बाल को अलग करने के बाद खाल की दूसरी ओर की सतह को खुरचते है, ताकि नसो के रेशे, चर्बी और मास के अश भी निकल जाए। दोनो ओर की सतह के साफ हो जाने पर चमडा तैयार हो जाता है। पर इसके बाद भी उसे किसी घोल या तेजाब से सुधार कर ऐसा बनाया जाता है कि उससे चीजे बन सके। घोल या तेजाब से निकालने के बाद खाल को बहते हुए साफ पानी से फिर धोया जाता है, ताकि घोल का असर भी दूर हो जाए। अब खाल कमाने योग्य हो जाती है। खाल कमाने के चार खास तरीके है।

1 टैनिंग वैज्ञानिक रीति से चमडा कमाने को टैनिंग कहते है। बबूल, बलूत, आवला, आदि कई तरह के पेडो की छाल, पत्ती, लकड़ी और फलो से एक तरह का कसैला रस निकलता है, जिसे 'टैनिक एसिड' या टैनिन कहते है। खाल कमाने मे इस रस को मुख्य रूप से काम मे लाया जाता है। इसीलिए इस तरह चमडे के कमाने को 'टैन' करना या 'टैनिंग' कहते है। टैनिंग के लिए घोल यानी टैनिन

बनाने के लिए इन पेडो की छाल, पत्ती और फलो का निर्यास या रस निकाला जाता है और उसके कड़ेपन के हिसाव से उसकी कई श्रेणिया वना ली जाती है। फिर अलग-अलग श्रेणी के रस को अलग-अलग हौजो मे भर दिया जाता है। पहले हौज़ मे हल्का, दूसरे मे कडा, तीसरे मे उससे अधिक कडा और अन्तिम हौज मे सबसे कड़ा रस भर दिया जाता है। साफ की हुई खाल को पहले सबसे हल्के रस वाले हौज मे डाला जाता है। कई दिनो तक भीगने के बाद उसे दूसरे हौज मे डाला जाता है। फिर तीसरे, चौथे और पाचवे मे। इस तरह खाल को बारी-बारी से हर हौज मे कई दिनो तक भिगोया जाता है। अन्तिम हौज के सवसे कडे रस मे भीगने के वाद उसे निकाल कर धोया और सुखाया जाता है। फिर उस पर भारी-भारी बेलन (रोलर) चला कर उसको समतल और चिकना वनाया जाता है। इन सारे कामो को टैनिग यानी चमडा कमाना कहते है।

2 **चमडे को सफेद करना :** इस काम मे मुख्य रूप से फिटकरी और नमक के घोल काम मे लाए जाते है। दस्ताना बनाने का चमडा तैयार करने के लिए उस घोल मे आटा और अडे की जर्दी भी मिलाई जाती है।

3 **साबर का चमडा बनाना** कमाने की इस विधि मे खास तौर से तेल का उपयोग किया जाता है। चूने के पानी मे भिगोने के बाद, यानी लाइमिग के वाद, खाल को काड नाम की मछली के तेल मे डाला जाता है। फिर पोटाश और सोडे के घोल मे भिगोने के वाद उसे सुखा लिया जाता है।

4 **क्रोम टैनिग** खाल कमाने के इस ढग मे प्रधानत 'पोटैसियम वाइक्रोमेट, हाइड्रोक्लोरिक एसिड' का इस्तेमाल किया जाता है। इन चीजो मे खाल को सिझाने के बाद उसे कुछ समय सुहागे के घोल मे रख कर एक निश्चित समय पर निकाल कर रग दिया जाता है। इस ढग से वने चमडे को क्रोम लेदर कहते हैं।

विभिन्न पशुओ की खालें और उनके उपयोग

विभिन्न प्रकार के चमडे तैयार करने के लिए साप, मगर, भेड, वकरी, हिरन, सूअर, गाय, भैस, घोडा, गैडा, आदि अलग-अलग तरह के जानवरो की खाले कमाई जाती है। पर सव जानवरो की खाल एक जैसी नही होती। सबके गुण और दोष अलग-अलग होते है। इसीलिए भिन्न-भिन्न जानवरो के चमडे से भिन्न-भिन्न सामान वनाए जाते है। एक ही जानवर के चमडे से हर चीज नही बन सकती।

भेड की खाल से बना चमडा अस्तर के काम के लिए बहुत उपयोगी होता है। उससे छोटी-छोटी और सुन्दर चीजे बनाई जाती है, जैसे बटुए, किताबो की जिल्दे, आदि। भेड की खाल से 'टैन' किए हुए भेड के प्राकृतिक रग के चमडे से अधिकतर छोटी-छोटी सुन्दर चीजे बनाई जाती है। गद्दे या स्त्रियो के हाथ-बटुए आदि बडी चीजे बनाने मे उसका उपयोग न करना ही अच्छा होता है। भेड का ऐसा चमडा भी मिलता है, जिस पर सूअर, मगर या दूसरे पशुओ की खाल की तरह रग-बिरगी छीटे और बनावटे छपी होती है।

बकरे की खाल लगभग भेड की खाल जैसी ही होती है। किन्तु उसके बडे-बडे टुकडो मे जो बुन्दकिया होती है, वे भेड की खाल के छीटो के मुकाबले मे भद्दी होती है। मोरक्को इसी चमडे से बनाया जाता है।

गाय-बैल की खाल भारी चीजे बनाने के काम आती है, जैसे जूते का तला आदि।

बछडे की खाल का बना और पेडो की छाल से टैन किया हुआ चमडा अपने प्राकृतिक रग मे बढिया वस्तुए बनाने के लिए सबसे अच्छा होता है। हमारे देश मे बछडे की अच्छी किस्म की खाल नही मिलती। अग्रेजी बछडे की खाल माडेलिंग, शक्लो मे नमूने बनाने, के लिए सबसे अच्छी होती है। वह रग भी बहुत जल्दी पकडता है। 'विलो काफ' नाम का चमडा जूते और पोर्टफोलियो आदि बनाने के लिए बहुत अच्छा रहता है।

साबर के चमडे की सतह मखमल की तरह चिकनी होती है। ऐनक आदि के शीशे साफ करने और दस्तानो जैसी मुलायम चीजे बनाने के लिए उसका अधिक उपयोग होता है।

स्वेड की सतह साबर के चमडे की सतह से मिलती-जुलती होती है। इस चमडे से छोटे बैग, जते, जाकेट, आदि चीजे बनाई जाती है।

गोह का चमडा स्त्रियो के हैंडबैग, स्लीपर, वगैरह बनाने के लिए अच्छा होता है। इससे अधिकतर दूसरे चमडो पर सजावट का काम किया जाता है।

मगर का चमडा बहुत कडा और मजबूत होता है। इसलिए इसके चमडे से ज्यादातर सफरी, सदूक, आदि बनते है।

चमड़ा सूक्ष्म छेदो से भरा होता है । वह सोख्ते की तरह पानी को सोख लेता है। वह बहुत ही मजबूत और एक हद तक लचीला होता है। उसे आसानी से खींचा, ताना और मोडा जा सकता है । इन गुणो के कारण चमडे के हजारो उपयोग होते है ।

भारत में चमड़े का कलात्मक काम

भारत मे चमडे का काम न-जाने किस युग से होता आ रहा है। सन् 1925 तक जूते, सूटकेस, जीन और बटुए जैसी चमडे की बनी आम जरूरत की चीजे हमारे देश मे कई जगह बडे पैमाने पर तैयार होती रही। उसके बाद सन् 1930 के लगभग चमडे का एक नए ढग का कलात्मक या फैसी काम प्रचलित हुआ। पहले-पहल इस ढग का काम 'विश्वभारती' ने किया। यह एक शिक्षा सस्था है, जिसको रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने स्थापित किया था। देश के भिन्न-भिन्न भागो से ही नही, बल्कि श्रीलका, नेपाल, काबुल, आदि बाहर के देशो से भी अनेक विद्यार्थी यहा आए और उन्होने इस कला को सीखा। धीरे-धीरे यह कला एक नया उद्योग बन कर सारे भारत मे फैल गई। दूसरे महायुद्ध के समय हमारे देश मे इसके छोटे-बडे बहुत-से कारखाने खुल गए। उन दिनो इसका व्यापार बहुत उन्नति पर था।

चमडा सजाने के ढग और आवश्यक औजार

चमडे को सजाने के लगभग 25 ढग है। हर ढग मे कुछ खास औजारो की जरूरत पडती है। सजाने के कुछ आम और जाने-पहचाने ढग ये है (1) माडेलिग, (2) एप्लिके, (3) प्रिंटिग, (4) ब्लाइड और गोल्ड टूलिग (5) पोकर वर्क, (6) स्टेंसिलिग, (7) पियर्स्ड वर्क, और (8) वटिक वर्क ।

माडेलिग के लिए पेडो की छाल से कमाया हुआ वछडे, वकरे या भेड का कोमल और प्राकृतिक रग का चमडा ठीक रहता है। चमडा पहले पानी से नरम किया जाता है। फिर जिस चित्र (डिजाइन) को बनाना होता है, उसे चमड़े के ऊपर उतार लिया जाता है। इसके वाद एक खास औजार काम मे लाया जाता है, जिसे माडेलर कहते है। माडेलर का सिरा चम्मच की शक्ल का होता है। वह लगभग एक इच लम्बा और चौथाई इच चौडा होता है। माडेलर आम तौर से इस्पात का वना होता है, जिस पर क्रोमियम या निकल की कलई होती है। उसमे लकडी की एक मूठ लगी होती है।

माडेलर
छेद करने का यंत्र
1
2
3
4
माडेलिंग का ढंग
5
डिजाइन पंच
6
कमाने के बाद चमड़े का रूप
B
A
D
A
C
8
7
स्टेन्सिल का ब्रुश
9
10
11
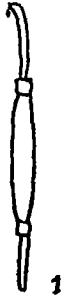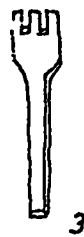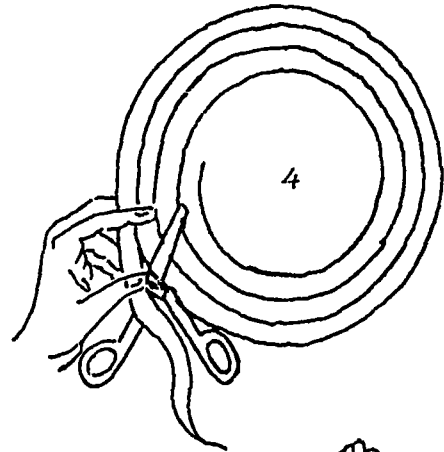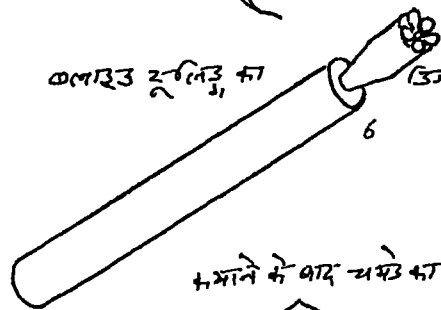
औज़ार और हाथ का काम
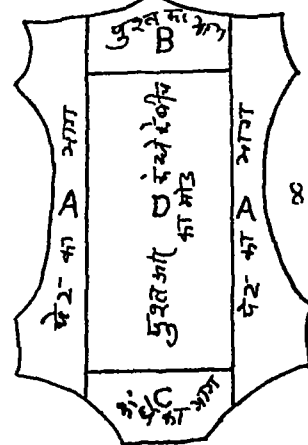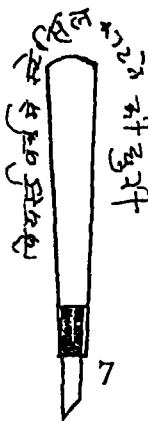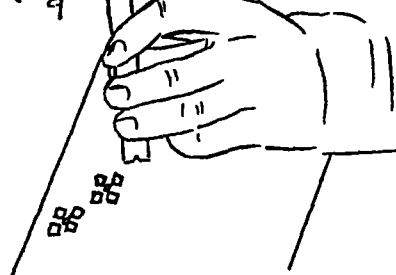
माडेलर की मूठ को दाहिने हाथ से पकडा जाता है और उसके उभरे हुए हिस्से से चमडे के ऊपर वने हुए नमूने से छूटे चमडे के सारे वाहरी हिस्से को दवाते जाते है। ऐसा करने से नमूना चमडे पर उभर जाता है।

एप्लिके एप्लिके के काम मे एक चमडे के ऊपर दूसरे चमडे के विभिन्न नमूने काट-काट कर लगाए जाते है। पहले चमडे को सजा कर जमीन तैयार कर ली जाती है। उसके ऊपर चमडे के रग-विरगे टुकड़े इस प्रकार लगा कर सी दिए जाते है कि विभिन्न प्रकार के नमूने वन जाते है। सजाने के लिए स्वेड चमडा, वछडे का चमडा या मोरक्को चमडा वहुत अच्छा रहता है।

प्रिंटिग धातु या लकडी के ठप्पो द्वारा चमडे पर छपाई करने को प्रिंटिग कहते है। चमडे की छपाई कागज की छपाई की तरह होती है पर चमडे की छपाई के लिए विशेप प्रकार का प्रेस होता है।

ब्लाइंड और गोल्ड टूलिग यह काम चमडे के ऊपर डिजाइन पच से किया जाता है। डिजाइन पच, सुम्बे की शक्ल का औजार होता है, जिसका निचला हिस्सा नुकीला होने के वजाय गोल, तिकोना या चौकोर होता है। उसके निचले हिस्से मे नमूने वने होते है। डिजाइन पच को सीधा खडा करके हल्के-हल्के हथौडे से ठोकते हुए उसको वरावर फासले पर खिसकाते रहते है, जिससे चमडे पर वहुत अच्छे-अच्छे नमूने वन जाते है। गोल्ड टूलिग का भी काम इसी तरह किया जाता हे। लेकिन नमूने छापने से पहले चमडे पर सोने का वर्क लगा दिया जाता है, और डिजाइन पच को आग पर गर्म करके हथौडे से ठोका जाता है। इस प्रकार चमडे पर सुनहरे नमूने वन जाते है। यह ढग अधिकतर जिल्दसाजी के काम मे वरता जाता है।

पोकर वर्क यह जलती हुई गर्म सूई से चमडे की सतह को खुरच कर किया जाता हे। इस काम मे इस्तेमाल होने वाली सूई को 'पोकर' कहते है। इसके सिरे का व्यास ¼ इच होता है, और सूई लकडी की मूठ मे जडी होती है। काम करते वक्त पोकर को गर्म करके लाल कर लेते है और उससे चमडे पर वने हुए डिजाइन को खुरचते जाते है। इस प्रकार खुरचने से जहा-जहा डिजाइन की रेखाए वनी होती है, वहा-वहा का चमडा जल जाता है और वहुत अच्छे नमूने वन जाते है।

स्टेंसिलिंग इसमें पहले किसी ऐसे कागज पर नमूने स्टेंसिल कर लेते है जो पानी का रग न सोख सके। तव व्रुश की नोक पर थोडा-थोडा पानी का रंग,

पेस्टल कलर, या रोशनाई लगा कर ब्रुश को कटे हुए स्टेंसिल के नमूनो के ऊपर दबाते जाते है। इस प्रकार चमडे पर सुन्दर डिजाइन बन जाते है।

पियर्स्ड वर्क इसमे नमूने को कागज पर नही, वल्कि चमडे पर ही स्टेंसिल कर लेते है। फिर तेज चाकू से स्टेंसिल के नमूने को चमडे से काट कर अलग कर देते है। इसके वाद इन नमूनो के नीचे रग-रग के चमडो का अस्तर लगा दिया जाता है। इस तरह विभिन्न रग और शक्ल के सुन्दर डिजाइन तैयार हो जाते है।

बटिक वर्क कपडे को सजाने की एक विधि है, जो जावा से प्रचलित हुई है। इसमे पिघले हुए गर्म मोम से कपडे के ऊपर विभिन्न डिजाइन और नमूने वना लेते है। फिर कपडे को रग लेते है। कपडे पर जहा-जहा मोम लगा होता है वहा-वहा रग नही चढता। वाद मे कपडे को गर्म पानी मे धो लेते है, जिससे कपडे की सतह पर से मोम धुल जाती है और कपडे पर विभिन्न प्रकार के बेलबूटे वन जाते है।

इसी तरह से चमडे पर भी बटिक का काम किया जाता है। पर इसमे रग की रोक के लिए मोम इस्तेमाल करने की वजाय गोद इस्तेमाल करते है। पहले चमडे पर नमूने (डिजाइन) बना लेते है। फिर चित्रकारी के ब्रुश से डिजाइन मे गोद भर देते है। सूख जाने पर गोद अपने आप जहा-तहा से चिटक जाती है। उसके बाद रग को स्पिरिट मे घोल कर डिजाइन के ऊपर लगा देते है। वह रग गोद की चिटकी हुई जगहो मे अच्छी तरह बैठ जाता है। रग करने के बाद पानी से गोद धो देते है। तब चिटकी हुई जगहो मे भरे हुए रग से प्राकृतिक डिजाइन बन जाता है। चमडे पर बटिक के काम का आविष्कार शान्तिनिकेतन के श्री सन्तोप कुमार भज ने किया था।

चमडे के काम के खास-खास औजार ये है कैंची, रापी, बेलन, सगमरमर की सिल या शीशा, सेटस्क्वाएर, माडेलर, ट्रेसर, छेद करने का यन्त्र, परकार, पीतल का फुटा, मूगरा, हथौडा, वटन पच, डाई, डिजाइन पच, पालिश और रग करने के ब्रुश।

उत्पादन का व्यापारिक ढंग

हाथ के औजारो द्वारा किए जाने वाले कुछ साधारण कामो का वर्णन ऊपर किया जा चुका है। चमडे के काम के अनेक दूसरे ढग भी है। वडे पैमाने पर माल

मशीनो द्वारा तैयार किया जाता है। पर मशीनो का उपयोग कुछ ही कामो मे किया जा सकता है, जैसे छपाई, स्टेंसिल काटना, स्प्रे वर्क तथा पियर्स्ड वर्क मे। व्यापारिक ढग से माल तैयार करने मे अलग-अलग नाप और शक्ल के चमडे के टुकडे काटने, रोलिंग करने, कतरन काटने, फैलाने, छेद करने, लोहा करने, पट्टी काटने, पालिश आदि करने के लिए मशीनो का उपयोग होता है।

भारत में चमड़ा और चमडे की बनी वस्तुए

चमडे का काम भारत मे अधिकतर छोटे पैमाने या घरेलू उद्योग के तौर पर होता है। यहा चमडे के सिर्फ कुछ ही बडे कारखाने है। फिर भी भारत की गिनती दुनिया मे सबसे अधिक चमडा पैदा करने वाले देशो मे है। अनुमान है कि चमडे के लगभग 1 करोड से अधिक टुकडे प्रतिवर्ष इस देश मे तैयार किए जाते है। चमडे के कारखाने के सबसे बडे केन्द्र कलकत्ता, मद्रास और कानपुर है। लगभग 25 करोड रुपये की लागत का चमडा हर साल भारत से विदेशो को भेजा जाता है। इसमे अधिकतर चमडा जूते वनाने के काम आता है। जूतो के बाद सूटकेस, घोडे के साज़, पेटिया, थैले, पर्स, आदि का नम्बर आता है।

(2) मिट्टी के बर्तन

मिट्टी के वरतन-भाडे और खिलौने बनाने की कला बहुत पुरानी है। मिट्टी के पके हुए वरतन-भाडे और खिलौने आदि, जो नील की घाटी की खुदाई में निकले है, उन्हे 13,000 वर्ष पुराना वताया जाता है। मिट्टी म पका कर लाल किए हुए पानी रखने के घडे भी मिस्र मे वहुत-सी जगहो पर पाए गए है। ये रगे हुए है। इनमे लाल रग के भी है और काले रग के भी। इन पर प्राय पालिश भी किया

मिस्र के पुराने बरतन

हुआ है। ये ईसा से 5,000–3,500 वर्ष पहले के बने हुए है। बेनहसन के भित्ति-चित्रो मे, जो 3,000–1,000 वर्ष ईसापूर्व के है, यह भली-भाति दिखाया गया है कि कुम्हार के चाक पर बरतन कैसे बनाए जाते थे और किस तरह उन्हे आवो मे पकाया जाता था। इन चित्रो से पता चलता है कि उस युग मे मिट्टी के बरतन बनाने की कला मिस्र मे काफी उन्नति पर थी। बहुत-सी मूर्तिया, बोतले, ताबीज और मिट्टी की दूसरी चीजे, जो सफेद रेत की बनी हुई है और जिन पर उम्दा नीली चमकदार पालिश है, मिस्र की पुरानी कब्रो मे मिली है। ये चीजे 1,500 वर्ष ई० पू० से कम पुरानी नही बताई जाती। असीरिया और बेबीलोन मे मिट्टी की तख्तिया मिली है। ये 3,000 वर्ष पुरानी है। इन पर वहा के इतिहास की कहानी खुदी है। उम्दा रगी हुई और पालिश की हुई ईटे, जिन पर अवकाश के समय उभारदार सजावट भी की जाती थी, ईसा से 900 वर्ष पूर्व बनाई जाती थी।

चीन मे भी मिट्टी के चमकदार बरतन बहुत पहले से बनते आए है। चीन के इतिहासकारो के अनुसार ईसा से कोई ढाई हजार साल पहले चीन मे मिट्टी के चमकदार बरतन बनने लगे थे। पहले-पहल हान वश के समय मे पत्थर के भाडे बनाए गए थे। उन दिनो के चीनी कुम्हार अधिकतर बढिया मिट्टी का और उन्हे पकाने के लिए अधिक तेज आच का प्रयोग करने लगे थे। इस तरह उन्होने काच का सामान या घने कणवाले पत्थरो के बरतन बनाने मे सफलता प्राप्त की थी। आखिरकार सातवी सदी मे उन जगहो मे, जहा केओलीन नाम की मिट्टी मिलती थी, कुम्हारो ने पोर्सलेन या 'चीनी मिट्टी' के बरतन बनाने शुरू किए। चूकि चीनी मिट्टी अधिकतर चीन मे ही पाई जाती है, इसलिए मिट्टी के बने हुए अच्छे बरतनो

मिस्र के पुराने बरतन
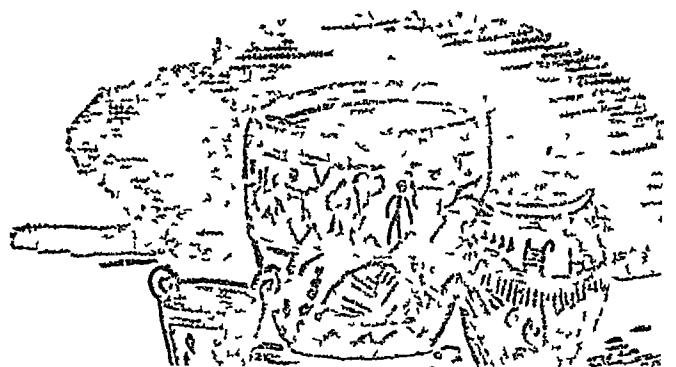
सुमेर के पुराने बरतन
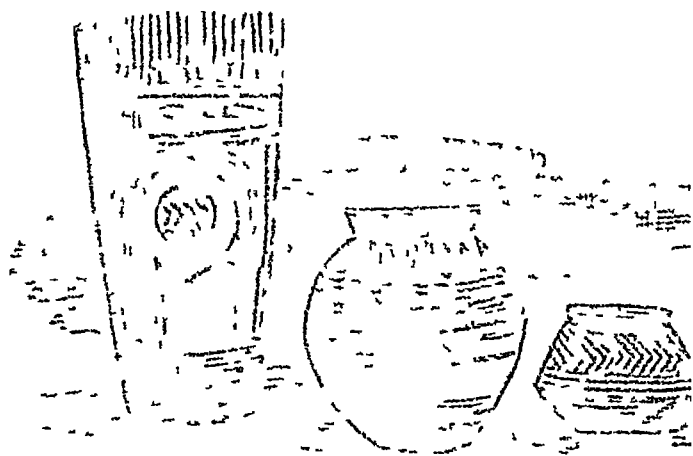
का नाम 'चाइना-वेयर' था चीनी के वरतन पड गया। 'सिलेडन' नाम के प्रसिद्ध वरतन, जिनका रग सफेदी मायल हरा-नीला होता है, पन्ने के रग को मात करते है। इसी तरह, अन्य कितनी ही तरह के रगो के वरतन वने। उनकी कारीगरी देखते ही वनती है—मुर्गी के अडे के छिलके जितने पतले और खूव चमकदार। रगो और पालिश के हिसाव से उनके अलग-अलग नाम भी पड गए। वैल के खून के रग वाले वरतनो को 'सग डि वोफ' कहा गया। आग की लपट के रग जैसे पोर्सलेन 'क्षाम्त्रो' कहलाते है। चीनी मिट्टी के वरतन वनाने की यह कला मिग वश (1368–1643) के समय मे चीन मे अपने पूरे निखार पर थी।

भारत मे मिट्टी के वरतन वनाने की कला सिन्धु-घाटी की सभ्यता के युग मे ही काफी उन्नति पर थी। मोहनजोदडो और हडप्पा की खुदाई मे मिले हुए वरतन इस वात के सवूत है। उत्तर भारत मे चमकदार वरतन मुसलमानो के समय मे वनने आरम्भ हुए, पर दक्षिण भारत मे वे मुसलमानो के शासन से भी पहले वनने लगे थे। उत्तर भारत के अनेक स्थानो, कब्रो, मस्जिदो, किलो, आदि की पालिशदार ईटे इस देश मे मिट्टी के काम की प्राचीन कारीगरी के नमूने है। निजामावाद (आजमगढ) के मिट्टी के काले वरतनो और दिल्ली, खुर्जा, जयपुर, लखनऊ, वम्बई, वेल्लोर, आदि के चमकदार वरतनो की भी अपनी एक अलग विशेषता है। अव मद्रास, वम्बई,

चीन के पुराने बरतन

बगलोर, दिल्ली, बगाल, ग्वालियर, आदि मे कारखाने खुल गए हे, जिनमे मिट्टी के बरतन, खिलौने और चीनी मिट्टी की और बहुत-सी चीजे बडे पैमाने पर बनाई जाती है ।

कुम्हार के काम के लिए मिट्टी सबसे महत्त्वपूर्ण कच्चा माल है । सब जगह की मिट्टी एक तरह की नही होती, न ही हर मिट्टी मे एक-से खनिज पदार्थ होते है । अलग-अलग जगहो की मिट्टी भी अलग-अलग तरह की होती है । सफेद, पीली, भूरी, बादामी, आदि कितने ही रगो की चीनी मिट्टी हमे मिलती है । इन सबकी बनावट और मिलावट एक-दूसरे से अलग होती है ।

हर प्रकार की मिट्टी अपने मूल रूप मे पत्थर या चट्टान होती है । हवा, आग, पानी और दूसरे मौसमी परिवर्तनो की वजह से पत्थर या चट्टान छीजती रहती है और धीरे-धीरे, युगो के बाद, मिट्टी का रूप धारण कर लेती है । सफेद चीनी मिट्टी मे, जो प्राकृतिक मिट्टी का सबसे शुद्ध रूप है, अल्युमिना (वह द्रव्य जिससे अल्यूमिनियम बनता है), सिलिका (एक प्रकार का सफेद खनिज पदार्थ) और थोडी मात्रा मे अलकली (खार) मिली होती है । दूसरी साधारण मिट्टी मे अल्युमिना और सिलिका के अतिरिक्त लोहा, चूना, पोटाश, सोडा, मैगनेशिया और कार्बन मिले होते है ।

भारत मे साधारण मिट्टी से घडे, कूडे, सुराही और बिना चमक के मिट्टी के बरतन अब भी वैसे ही बनते है, जैसे कि प्राचीन काल मे बनाए जाते थे । उन्हे बनाने के तरीके मे कोई विशेष अन्तर नही आया है ।

कुम्हार मैदानो या नदी किनारे की मिट्टी जमा कर लेते है । अधिकतर चिकनी और रेतीली दो तरह की मिट्टी की जरूरत होती है । मिट्टी को काम लायक बनाने के लिए कुछ दिन उसे पडी रहने देते है, क्योकि ताजा मिट्टी से बनी चीजे बढिया नही होती । छोटे आकार की चीजे बनाने के लिए चिकनी मिट्टी का ही प्रयोग करना चाहिए । कभी-कभी जो चीज बनानी हो, उसके अनुसार चिकनी और बालुई मिट्टी दोनो को मिला कर काम लिया जाता है । यह मिलावट हाथ से भी कर ली जाती है, और पैरो से रौद कर भी ।

कुम्हार का चाक, जिसका आमतौर से भारत मे इस्तेमाल किया जाता है, गाडी के पहिए की शक्ल का होता है । इसका बीच का भाग एक कीली पर टिका होता है

भारतीय कुम्हार का चाक

और इसे डडे के सहारे घुमाया जाता है। दूसरे देशो, और कही-कही भारत मे भी, एक दूसरी तरह का भी चाक काम में लाते है, जिसे 'पाव-चाक' कहते है। 'पाव-चाक', जैसा कि उसके नाम से प्रकट है, पाव मार-मार कर चलाया जाता है। बरतन को चाक पर आकार देने के बाद उसे धूप मे सुखा लिया जाता है। बरतन पर नक्काशी, रगाई, बेलबूटे, आदि बनाने का काम कभी-कभी उसी समय कर लिया जाता है जब वह कुछ-कुछ गीला और नरम होता है। बरतन जब बिल्कुल सूख जाता है, तब उसे आवे में पका लिया जाता है। बरतनो को आवे में एक-पर-एक खूब अच्छी तरह जमा कर रख देते है। बरतनो के इधर-उधर घास, कडा, कोयला, आदि ईंधन रख कर आवे को ऊपर से मिट्टी से लेप देते है। लेपते समय धुआ निकलने के लिए कुछ सूराख छोड दिए जाते है। जब आग लगाई जाती है, तब बरतनो पर सीधे आच पडती है। बरतनो की टूट-फूट और उनके टेढे-मेढे हो जाने का यह एक बडा कारण है। आवे में दो-तीन घटे आग दी जाती है, यहा तक कि उसका भीतर का भाग लाल पड जाता है। आग देने के बाद आवे को ठडा होने के लिए छोड दिया जाता है। एक-दो दिन बाद उसमे से बरतन निकाल लिए जाते है।

कुछ जगहों पर नई किस्म के आवे काम मे लाए जाते है, जिनमे आंच सीधे बरतनो पर नही पडती। ऐसे आवो में बरतनो को ताप सहने वाली मिट्टी के बने हुए बक्सो मे भर कर रखा जाता है। ये बक्से बनावट मे बेलन की तरह होते हैं। इन बक्सो को इस तरह एक-पर-एक रखा जाता है कि उनकी कतारें बन जाती है। यह आवा ऐसा मालूम होता है, जैसे जमीन के ऊपर एक कुआ बनाया गया हो। यह वास्तव मे एक बेलन की शक्ल का खोखला कमरा होता है। इसका फर्श मेहराबदार होता है, जिसमें कई सूराख होते है। मेहराबदार फ़र्श और ज़मीन की

सतह से नीचे भट्ठी वनाई जाती है। वरतन भरे वक्सो की कतार फर्श पर खडी रहती हे। भट्ठी की आग फर्श के सूराखो मे से होकर ऊपर आवे मे पहुचती है। इस तरह वरतनो पर सीधे आच नही पडती।

वरतनो को शक्ल देने के कई तरीके प्रचलित है। इनमे सवसे अधिक प्रचलित तरीका चाक पर बरतन वनाने की विधि है। साचो मे कडी गीली मिट्टी डाल कर और उसे दवा कर भी वरतन वनाते है। तीसरा प्रसिद्ध तरीका ढलाई का है। इस तरीके मे 'प्लास्टर आफ पेरिस' नाम की मिट्टी के वने साचो मे पतली गीली मिट्टी डालते है। वडे पैमाने पर चीजे वनाने के लिए यह तरीका काम मे लाया जाता है। चौथे तरीके को 'जौलीइग' कहते है। इसमे लसदार मिट्टी वना कर और उसे प्लास्टर के वने साचे पर रख कर नहन्नी आदि कटाव करने वाले औजारो से काट-तराश कर मनमाना आकार देते है। मिट्टी को मोड कर चीजे वनाने का भी एक ढग है। इस ढग से मिट्टी के बरतन वनाने के लिए मिट्टी कडी सानी जाती है और जिस तरह लकड़ी को मोडते है, उसी तरह मिट्टी को भी मोड लेते है। हाथ से पथाई करने का भी एक तरीका है । साधारण ईंटे लकडी के साचो द्वारा हाथ से ही पाथी जाती है ।

ईट की पथाई मे मिट्टी का लौदा तैयार करके उसे दोनो हाथो से उठा कर जोर से साचे मे पटक देते है। फालतू मिट्टी को एक तार से छाट देते है। फिर साचा उलट देते है और ईट तैयार हो जाती है। सूख जाने के बाद ईंटे भट्ठे मे लगा दी जाती है और उनके बीच-बीच मे कोयला रख दिया जाता है। ईंटे भट्ठे मे इसी तरह पकाई जाती है। भट्ठे को बाहर से लेप देते है। फिर उसमे आग लगा देते है। भट्ठा पकने में कई हफ्ते लग जाते है। इसी तरह खपरे भी हाथ से पाथे जा सकते है। खपरे पाथने का ढग भी लगभग वैसा ही है, जैसा कि ईट पाथने का । ईंटे और खपरे मशीनो से भी बनाए जाते है।

पथरौटी बरतन चूकि प्लास्टिक मिट्टी के वनते है, इसलिए वे रगीन होते है। चीनी मिट्टी के बरतन अधिकतर सफेद होते है। पथरौटी बरतन बहुत तेज आच पर पकाए जाते है (लगभग 13,000 डिग्री सेटीग्रेड) । इसलिए वे सीसे की तरह सख्त हो जाते है। वे इतने सख्त होते है कि हवा-पानी या कोई और चीज मुश्किल से उनके आर-पार जा सकती है ।इन पर आमतौर से नमक की मदद से चमक

भट्ठे में ईंटें रखी जा रही है।

लगाई जाती है। इसके लिए जब ग्रावा लगभग पकने पर ग्रा जाता है, तब उसमे खाने वाला नमक डाल देते हैं। गदे पानी की निकासी के पाइप, टाइल्ज, तेजाब रखने के मर्तबान, फूलदान, ग्रादि इसी तरह बनाए जाते हैं।

पोर्सलेन से भी बहुत तरह की चीजे बनती है। इसके लिए चीनी मिट्टी, चकमक पत्थर ग्रौर फेल्स्पर, ये तीन चीजे ग्रापस मे मिला ली जाती है। इसमे 50 फीसदी चीनी मिट्टी, 20–25 फीसदी चकमक पत्थर ग्रौर 25–30 फीसदी फेल्स्पर मिलाया जाता है। कारखानो मे मशीनो के जरिए बडे पैमाने पर चीजे तैयार की जाती हैं। पीसने वाली मशीन से सब चीजे पहले पीस ली जाती है, फिर एक-दूसरी मशीन से सब चीजे पानी में घोल दी जाती है। फिर चुम्बक लोहे के यन्त्र से उस घोल मे से लोहे का ग्रश ग्रलग कर लिया जाता है। इसके बाद छन्ने की मशीन से उस घोल का पानी ग्रलग करके उसे गाढी लेई जैसा बना लेते है। फिर एक मशीन के जरिए उसमे से हवा के बुलबुले निकाल दिए जाते हैं।

बरतन पर चमकीले पदार्थ से पुताई करके उसमे ग्लेजे या चमक लाई जाती है। सिलिका, फेल्स्पर, क्षार, सोहागा, चूना, ग्रल्युमिना, ग्रादि को चमक पैदा करने के लिए इस्तेमाल करते है। पालिश ऐसी भी हो सकती है, जिसके ग्रार-पार दिखाई दे ग्रौर उसमे रग हो, ग्रौर ऐसी भी, जिसके ग्रार-पार दिखाई दे ग्रौर बे-रग हो। साथ ही, वह ऐसी भी हो सकती है, जिसके ग्रार-पार दिखाई न दे ग्रौर उसमे रग हो। बरतनो पर चमक या ग्लेज तीन प्रकार की होती है (1) कच्ची, (2) बालू या चकमक पत्थर मिली हुई, ग्रौर (3) नमक की। कच्ची पालिश उन पदार्थों से तैयार की जाती है, जो पानी मे नही घुलते। पक्की चमक या ग्लेज ऐसे पदार्थों से बनती है, जो पानी मे घुल सकते है। ऐसे पदार्थ सिलिका या दूसरे न घुलने वाले पदार्थो

में मिला कर आग पर पिघला लिए जाते हैं। पिघलाने के बाद जो चीज तैयार होती है, वह पानी मे नही घुलती और उसे ही पक्की ग्लेज या पालिश कहते हैं।

पालिश या ग्लेज की सामग्री को खूब बारीक पीस कर पानी मे पूरी तरह घोल लिया जाता है, जिससे वे आपस मे खूब हल हो जाए। पालिश को बरतन पर ब्रुश या स्प्रे द्वारा छिडक कर लगाते है। पालिश को बरतन पर उडेल कर या बरतन को पालिश के घोल मे डुबो कर भी चमक लाई जाती है। बरतनो को रगने के लिए विभिन्न धातुओ के ऑक्साइड काम मे लाए जाते हैं। तावे के ऑक्साइड से हरा, कोबाल्ट के ऑक्साइड से नीला, एण्टीमोनी के ऑक्साइड से पीला और इसी तरह दूसरी धातुओ के ऑक्साइडो से दूसरे रग तैयार किए जाते है।

बरतनो पर रगो से चित्रकारी, बेलबूटे या नमूने आदि भी बनाए जाते है। ये इन्हे ग्लेज करने से पहले भी बनाए जाते है और बाद मे भी। पालिश करने से पहले जो रग काम मे लाए जाते है, उन्हे 'अण्डर ग्लेज कलर' कहते है। ये रग पालिश करने पर न तो फैलते है और न खराब होते है। पालिश के बाद वाले रग 'ओवर ग्लेज कलर' कहलाते है। इसके लिए वे रग काम मे लाए जाते है, जो पालिश पर चढ सके। पकाने से पहले भी बरतनो पर रग, नक्काशी, आदि का काम कर लिया जाता है।

आवे कई तरह के होते है। आवे की बनावट अधिकतर इस बात पर निर्भर करती है कि उसमे कितनी आच देनी है, और कौन-सा ईंधन इस्तेमाल करना है। छोटे पैमाने पर काम करने के लिए ऐसे आवो की आवश्यकता होती है, जिनमे रुक-रुक कर ऊपर या नीचे से हवा आती-जाती हो, और बडे पैमाने पर काम करने के लिए ऐसे आवो की आवश्यकता पडती है, जिनमे लगातार हवा जाती रहे। सुरगदार आवे हाल की ईजाद है, जो बडे पैमाने पर काम करने के लिए अच्छे होते है।

बरतनो पर चित्र बनाए जा रहे हैं।
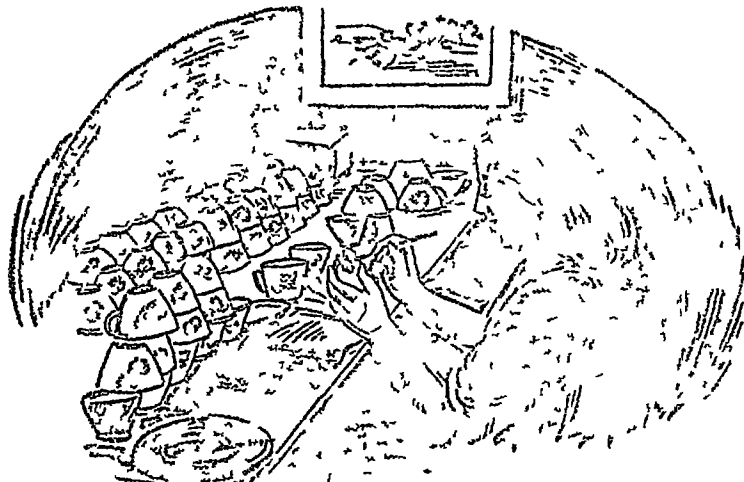
बरतनो पर बेलबूट बनाए जा रहे है ।

आवे मे लकडी, कोयला, तेल, गैस, आदि का इस्तेमाल ईंधन के रूप मे होता है। आजकल बिजली के आवो का भी चलन हो गया है। आवे मे आच इतनी देर तक दी जाती है कि ताप आवश्यकता के अनुसार हो जाए। ताप को नापने के लिए एक विशेष प्रकार की चीज का प्रयोग होता है, जिसे 'कोन' कहते हैं। इस 'कोन' की विशेषता यह है कि वह एक खास गर्मी पहुचने पर नरम होकर टेढा हो जाता है। अत जितनी आच देनी होती है, उतनी आच मे पिघलने वाला कोन आवे मे रख दिया जाता है। एक सूराख मे से कोन को देखते रहते हैं। उसके टेढा होते ही आच बद कर दी जाती है और आवे के पूरी तरह ठडे हो जाने पर पालिशदार बरतन बाहर निकाल लिए जाते है।

सौन्दर्य की खोज में
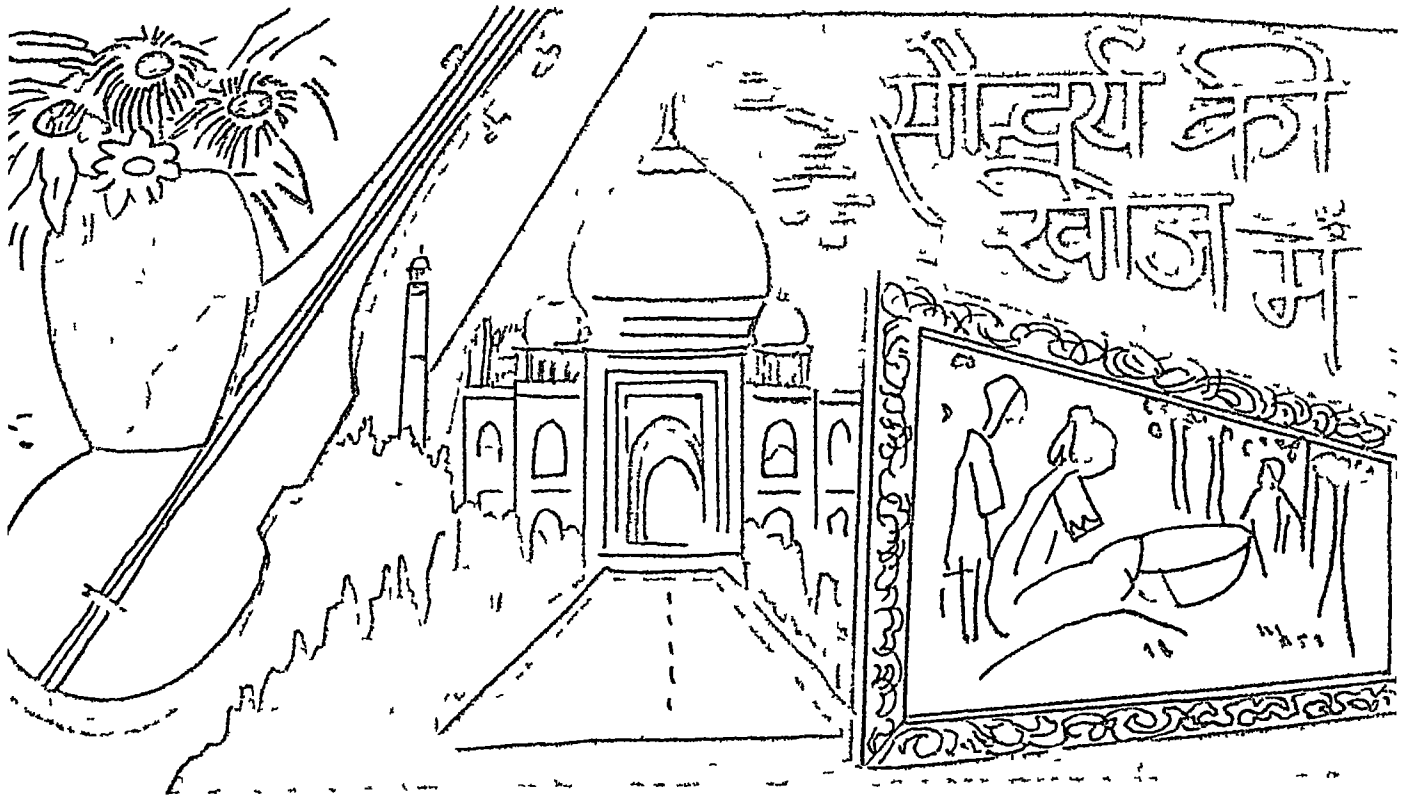
सांची के स्तूप

भोपाल रेलवे स्टेशन के पास साची एक स्थान है। यह एक 300 फुट ऊची पहाडी पर वसा है। पहाडी की ढलान नाना प्रकार के पेडो और लताओ से हरी-भरी है। वसन्त ऋतु मे जब ढाक के फूल खिलते हैं, तब दूर से ऐसा मालूम होता है, जैसे वन मे आग लगी हुई हो। शायद स्थान की इस सुन्दरता पर मुग्ध होकर ही बौद्ध उपासको ने वहा अपने स्तूप, चैत्य तथा विहार स्थापित किए। वैसे, साची का बुद्ध भगवान के जीवन की किसी प्रमुख घटना से सम्बन्ध नही है।

ऐसा अनुमान किया जाता है कि पहले-पहल अशोक ने वहा स्तूपो की नीव डलवाई थी। शिलालेखो से पता चलता है कि साची का गौरव ई० पू० तीसरी सदी से बारहवी सदी ईसवी तक रहा। साची का प्राचीन नाम 'काकनावे'
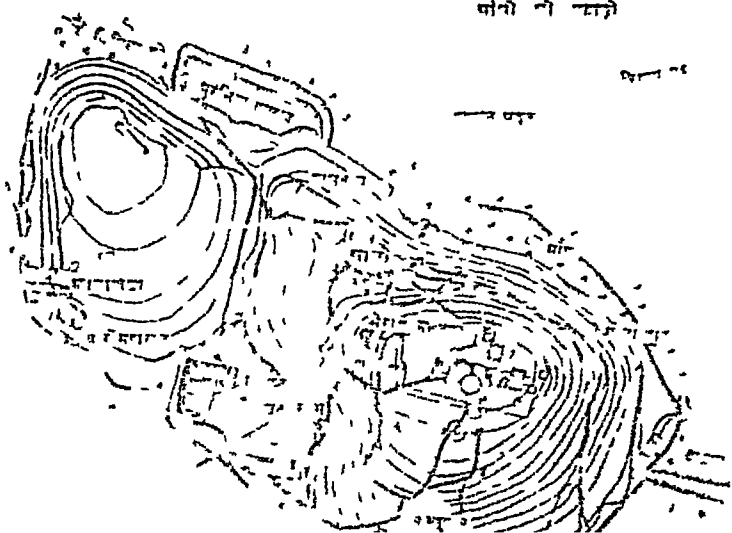
या 'काकनाय' था। बाद मे चन्द्रगुप्त द्वितीय के समय मे उसका नाम 'काकनादवोट' पडा। 13वी सदी के वाद साची का गौरव समाप्त हो चला। कुछ मुसलमान शासको ने साची के पास भिलसा नगर को तो नष्ट किया, किन्तु साची की इमारतो को किसी ने हानि नही पहुचाई। सन् 1818 मे जनरल टेलर ने उन्हे पूरी तरह सुरक्षित पाया। किन्तु वाद मे शिकारियो और कुछ उत्साही परन्तु अनुभवहीन पुरातत्व-प्रेमियो ने साची की कई इमारतो तथा स्मारको को तोड-फोड डाला। अन्त मे सन् 1912 मे सर जान मार्शल नाम के एक अग्रेज पुरातत्वविशेषज्ञ ने इन स्मारको की सफाई तथा मरम्मत का काम अपने हाथ मे लिया। वह लगभग सात वर्ष तक वहा काम करवाते रहे। आज साची के स्मारक फिर जाग उठे है, और साची ससार भर के इतिहासज्ञो और कला-प्रेमियो का तीर्थस्थान वन गया है।

साची के सबसे महत्वपूर्ण स्तूप को 'महान् स्तूप' कहा जाता है। वह अडाकार है। नीचे का उसका घेर पहले केवल 60 फुट था। बाद मे उसके चारो ओर एक ऊची मेधि (चबूतरे की तरह दीवार) वना दी गई, जिससे उसका घेर 60 से 120 फुट हो गया। उस मेधि पर चढ कर भिक्षु और उपासक स्तूप की परिक्रमा करते थे। स्तूप की रक्षा के लिए चारो ओर खडे तथा बेडे पत्थरो की वेदिका (बाड या चारदीवारी) वनी है। उसमे चार द्वार थे, जिन पर कई तरह की सजावट अकित थी। आम तौर मे विश्वास किया जता है कि 'महान् स्तूप' को अशोक (272 ई० पू० से 232 ई० पू०) ने वनवाया था। शुरू मे वह सादी ईटो का एक छोटा-सा स्तूप रहा होगा, जिसकी चोटी पर वेदिका (खम्भो की बाड) से घिरी एक छतरी थी। ऐसा लगता है कि अशोक के समय मे स्तूप के चारो ओर केवल लकडी की वेदिका थी। लगभग सौ वर्प वाद यानी ई० पू० दूसरी सदी (शुंग काल) मे ईटो के स्तूप की बाहरी सतह को पत्थरो से छा दिया गया। फिर लकडी के स्थान पर पत्थर की वेदिका वनी। इसके वाद द्वारो का निर्माण हुआ। पहले दक्षिण और फिर

महान् स्तूप, उत्तर-पूर्व की ओर से देखने पर
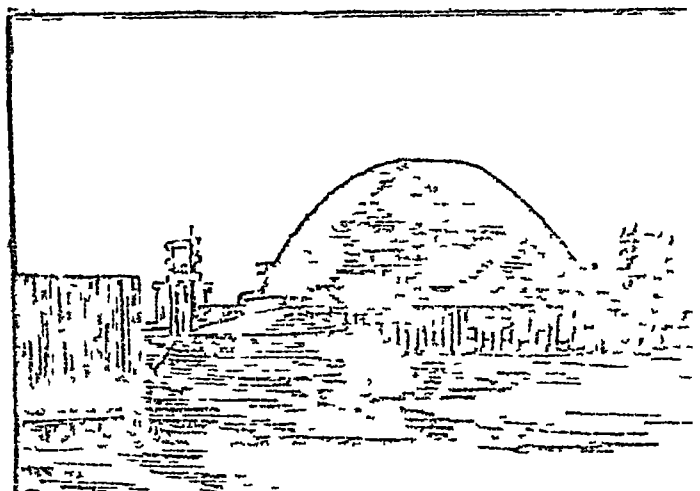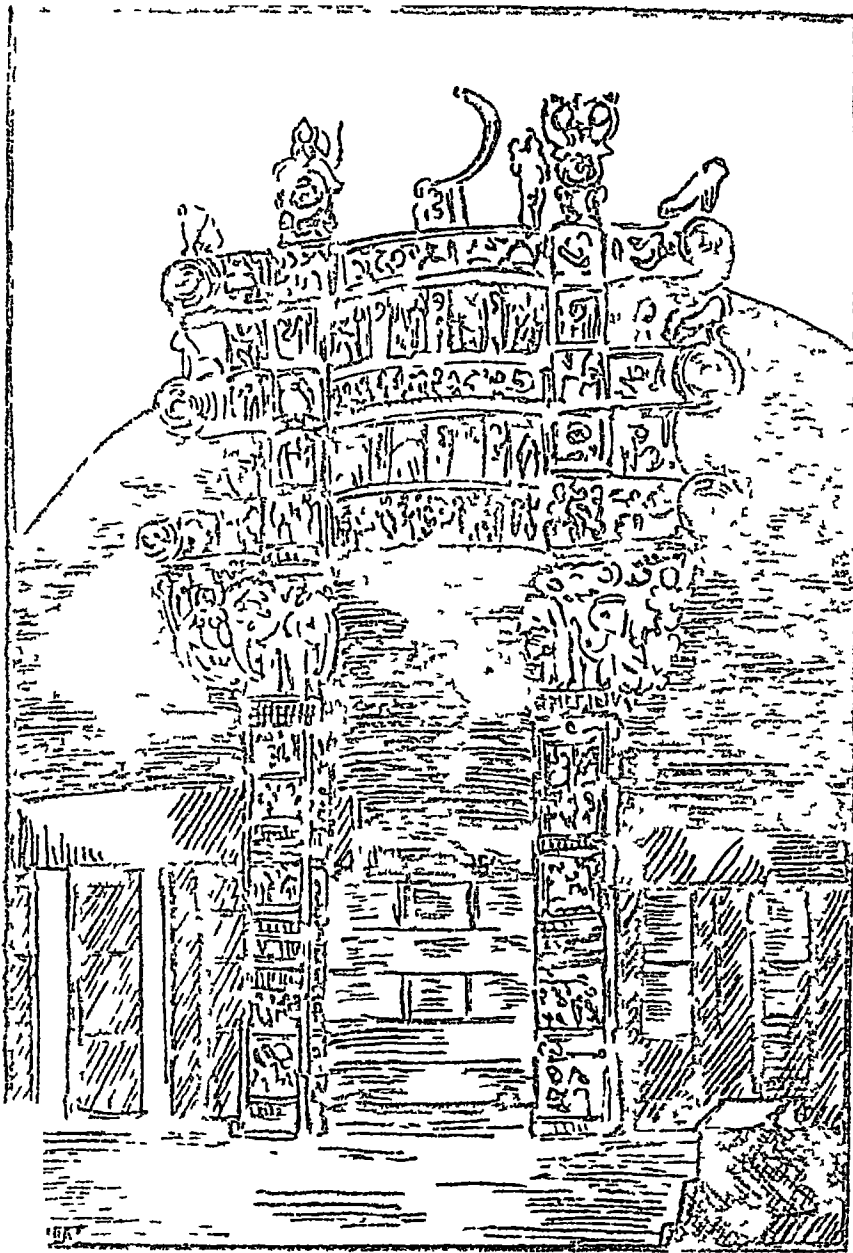
महान् स्तूप का
उत्तरी द्वार

पश्चिमी द्वार, सजावटयुक्त
दाया खम्भा
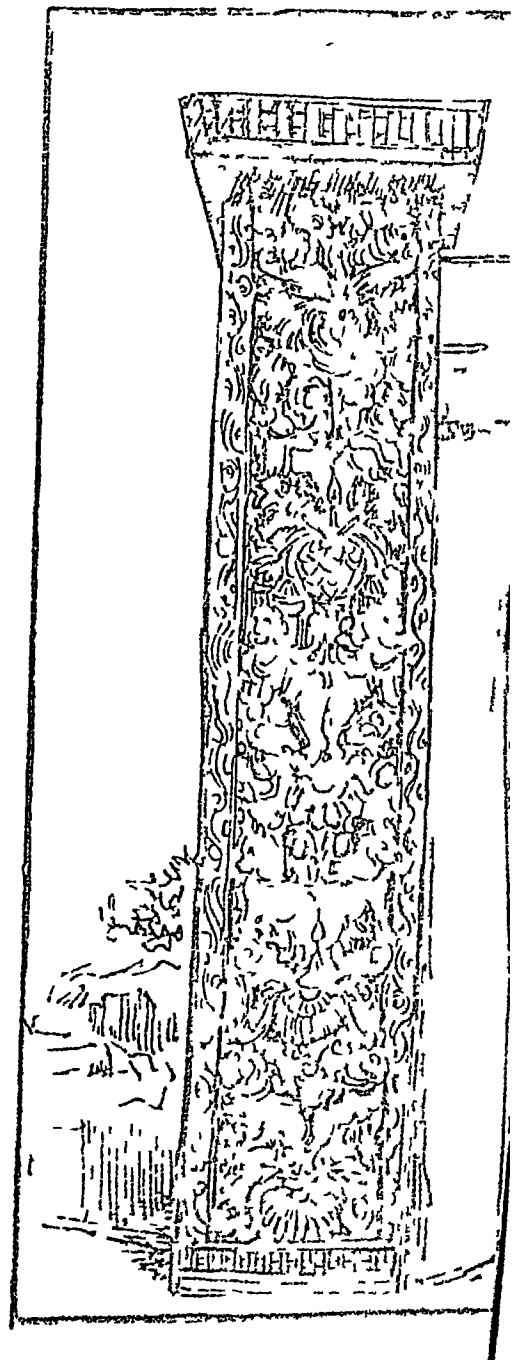
क्रम से उत्तर, पूर्व और पश्चिम के द्वार बने। ये सब द्वार सम्भवत 20 या 30 वर्ष के भीतर बने होगे।

स्तूप की चोटी पर जो छतरी थी, वह टूट गई थी। ऐसी छतरिया प्राय पत्थर के चबूतरे पर टिकी होती थी। किन्तु महान् स्तूप की छतरी चबूतरे पर न टिक कर पत्थर के उस भारी सदूक पर टिकी थी, जिसमे कभी महात्मा बुद्ध के फूल रखे थे। स्तूप की वेदिका के हिस्से, यानी उसके खम्भे, उसकी सूची (दो

खम्भो को जोडने वाला बेडा पत्थर) और उसका उष्णीष (स्तम्भो के सिरे पर रखने के पत्थर) अलग-अलग उपासको के दान से बनाए गए थे। कई खम्भो पर दाताओ के नाम भी खुदे है। पत्थर के जगले की वेदिका से पता चलता है कि उस प्राचीन काल मे भी पत्थर के काम की कला बहुत उन्नति कर चुकी थी। जगले और स्तूप के बीच की भूमि पर बडे-बडे पत्थर बिछाए गए थे। स्तूप के तल से सटी हुई दीवार के चारो ओर भी एक वेदिका बनी थी। उसमे खुदे हुए पशु-पक्षी और मनुष्यो के चित्र बहुत ही सुन्दर है। प्राचीन काल मे महान् स्तूप के द्वार और वेदिका लाल रग से पुते थे। स्तूप की सतह पर सफेद रग चढा था, जिसके चिह्न आज तक मौजूद है। साची मे सबसे दर्शनीय चीज महान् स्तूप ही है, जिसके चारो ओर वेदिका के चार द्वार है। उनमे सबसे पहले दक्षिण वाला द्वार बना था, जो मेधि (स्तूप से सटे चबूतरे) पर चढने की सीढी के ठीक सामने था। पर उत्तर दिशा का द्वार ही इस समय सबसे अधिक सुरक्षित है। उसमे दो खम्भे है और उसके सिरे पर रखी हुई तीन सूचिया है। खम्भो के ऊपरी भाग मे बडे-बडे पत्थर है, जिन पर कमरे से सटे पेट वाले शेर तथा बौनो की मूर्तिया है। पत्थरो से ही झूलती हुई यक्षिणियो अथवा लोक-कल्पना की देवियो की भी मूर्तिया है। यक्षिणियो को प्राय पेडो की टहनी पकडे दिखाया गया है। इसलिए उन्हे शालभजिका या टहनी तोडने वाली देवी भी कहते है।

द्वार के खम्भो के ऊपर जो तीन सूचिया (खम्भो को जोडने वाले बेडे पत्थर) है, उनके बीच मे भी छोटे-छोटे खम्भे लगे है। उन खम्भो पर यक्ष (लोक-देवता) और यक्षिणियो की मूर्तिया अकित है। एक दूसरे खम्भे के बीच घुडसवार या हाथी भी बने है। ऊपरी सूची के दाए-बाए बाहर निकले दोनो कोनो पर बैठे हुए शेर की मूर्तिया है। सबसे ऊपर की सूची पर दो त्रिरत्नो या बौद्ध धर्म के सूचक गोल छल्लसो के ऊपर रखे सीग से बने तीन चिह्नो के बीच मे 'धर्मचक्र' स्थिर है, जिसका एक भाग टूट गया है। सूचियो तथा द्वार के खम्भो पर उभार कर कोरे गए केवल सामने से ही दीखनेवाले अर्द्धचित्र बने है। उनमे बुद्ध के पूर्व जन्म की कहानिया (जातक कथाए), बुद्ध के जीवन तथा मृत्यु के बाद की घटनाए, बोधिवृक्ष, स्तूप, हाथी, वन तथा तालाबो के चित्र अकित है।

साची मे बुद्ध भगवान को कही भी मनुष्य के रूप मे नही दिखाया गया है। यह बात ध्यान देने की है कि ईसा से पूर्व पहली सदी की भारतीय कला मे बुद्ध

पंखधारी शेर
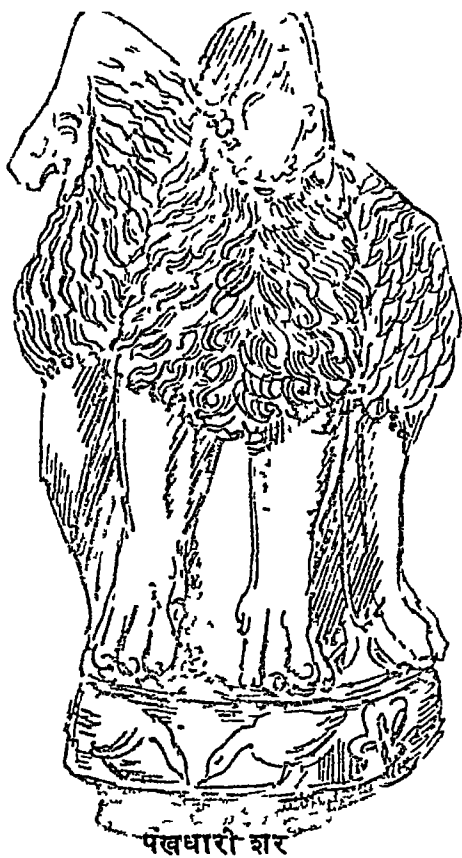
को मनुष्य रूप मे कही भी चित्रित नही किया गया। उससे पहले बुद्ध के जीवन सम्बन्धी घटनाओ के चित्रण मे जब कही बुद्ध की उपस्थिति की आवश्यकता होती थी, तब कलाकार पगडी, बोधिवृक्ष, स्तूप या चरण जैसी साकेतिक वस्तुओ से उनको दिखाते थे। महात्मा बुद्ध की मृत्यु के बाद इन्ही वस्तुओ के रूप मे उनको पूजा जाता था। साची से कुछ पहले का बना एक और स्तूप मध्य भारत मे सतना स्टेशन के पास भरहुत नामक स्थान पर है। यहा खम्भो पर जो चित्र अकित है, उनका भी परिचय वही खुदे लेखो से मिल जाता है। उसके उत्तरी द्वार पर बुद्ध के जीवन की चार प्रमुख घटनाए अकित है। उनका जन्म, परमज्ञान (बोधिवृक्ष के नीचे प्राप्त हुआ ज्ञान), धर्मचक्र-प्रवर्तन (ऋषिपत्तन या सारनाथ मे बुद्ध का सबसे पहला उपदेश) और परिनिर्वाण (मोक्ष)।

साची के द्वारो और दूसरे स्थलो पर प्राय यक्षो की मूर्तिया दीख पडती है। इसका कारण यह है कि यक्ष ग्रामो के देवता तथा चारो दिशाओ के रक्षक माने जाते थे। साची मे पशु, पक्षी, पेड, फूल, लता, आदि का बहुत सुन्दर चित्रण है। चित्रित पशुओ मे हाथी, घोडा, बैल, ऊट और पखधारी शेर मुख्य है। कई जगह कमल के फूल भी अकित है। यह शायद इसलिए कि कमल का लक्ष्मी से सम्बन्ध माना जाता है। कही-कही पर 'अगूर की बेल' तथा एक और लता, जिसमे पीले-पीले बहुत ही सुन्दर फूल होते है, अकित है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि अगूर और दूसरे प्रकार की बेल का चित्रण पश्चिम एशिया से आया, क्योकि वे लताए पश्चिम एशिया की कला मे अक्सर दीख पडती है। भारत मे उनका चित्रण गिनी-चुनी जगहो पर ही मिलता है।

सन् 1882-83 मे स्तूप के दक्षिणी द्वार की मरम्मत का काम बहुत बडे पैमाने पर किया गया था। उसके सिरे की सूची पर बुद्ध के जन्म का दृश्य अकित है। कमल पर खडी माया देवी के अगल-बगल मे एक-एक हाथी है। बीच वाली सूची पर वह दृश्य है, जब सम्राट् अशोक ने नेपाल की तराई मे रामग्राम के स्तूप की यात्रा की थी। सबसे नीचे की सूची पर बौनो के मुंह से कल्पलता दौड़ती
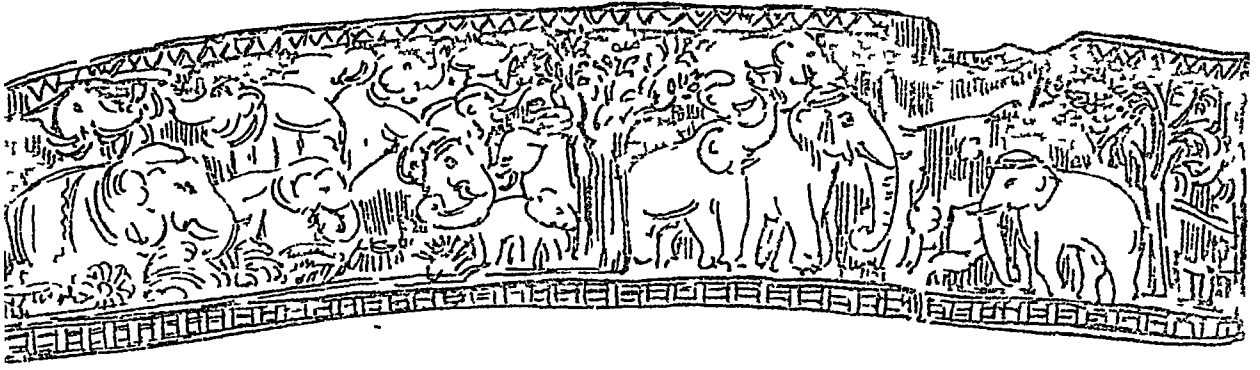
छद्दन्त जातक (सबसे नीचे का चित्रयुक्त मुख भाग)

दिखलाई गई है। कल्पलता को भारत मे सौभाग्य, आशीर्वाद तथा जीवन का प्रतीक माना गया है।

सूचियो के पीछे तीन स्तूपो और पाच पेडो के द्वारा, जिनके नीचे गद्दी वनी है, प्रतीक रूप मे छ मानुषी बुद्ध (बुद्ध भगवान से पहले के छ बुद्ध) तथा गौतम बुद्ध दिखलाए गए हैं।
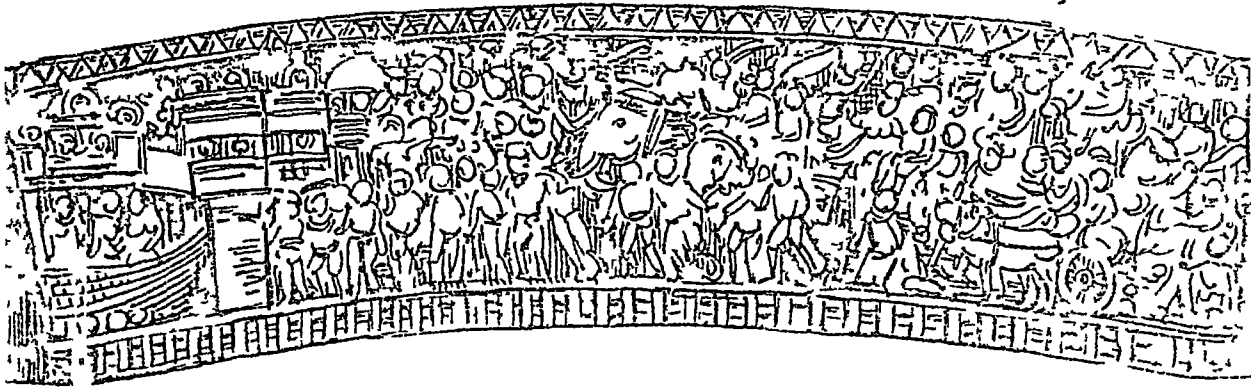
धातु वितरण (बीच का चित्रयुक्त पृष्ठ भाग)

वीच की सूची पर छदत जातक की कथा अकित है। वह कथा यह है कि एक वार बोधिसत्व (ज्ञान प्राप्त करने से पहले बुद्ध का नाम) हाथियो के एक जत्थे के नेता के रूप मे प्रकट हुए। उनके छ दात थे। हाथियो का यह जत्था हिमालय मे छदत सागर के पास रहता था। जत्थे के नेता के दो पत्निया थी, चूलसुवुद्धा तथा महासुवुद्धा। चूलसुवुद्धा महासुवुद्धा से डाह रखती थी। इस कारण उसने प्रार्थना की कि दूसरे जन्म मे वह वनारस के राजा की पत्नी वने। उसकी प्रार्थना स्वीकृत हुई। वनारस की रानी वन कर उसने एक शिकारी को वोधिसत्व को मारने के लिए भेजा। इसी सूची पर, पीछे की ओर, धातु वितरण का दृश्य भी अकित है। इसकी

दक्षिणी द्वार, वाया खम्भा, भीतर की ओर का चित्र
देवलोक में गौतम के केशो की पूजा

कथा यह है कि बुद्ध की मृत्यु होने पर उनके शरीर की राख कुशीनगर के मल्लो (कुशीनगर मे रहने वाली एक जाति) के पास रखी गई । उस राख मे सात अन्य जातियो ने भी अपना हिस्सा मागा। इस पर भारी युद्ध हुआ । इसी घटना को बौद्ध-साहित्य मे धातु वितरण कहते हैं। इस घटना के चित्रण मे जो चहल-पहल और भीड-भाड दिखाई गई है, वह वहुत ही सजीव है। पर सवसे वढ कर राजा-महाराजाओ और गरीबो के कधे-से-कधा मिला कर एक साथ चलने के जो दृश्य उसमे अकित है, भारतीय कला मे वे और कही नही दीखते। उसी द्वार पर एक जगह बुद्ध के बाल तथा चूडा की पूजा का दृश्य अकित है। इसकी भी एक कथा है। भिक्षु वनने से पहले गौतम ने अपने केश काट डाले थे और केशो तथा पगडी को हवा मे फेक दिया था। देवताओ ने उन्हे थाम लिया और उन्हे वे अपने साथ देवलोक मे ले गए, जहा उनकी पूजा होने लगी। उत्तरी द्वार के सिरे की सूची पर स्तूप वृक्ष और आसन के रूप मे सात बुद्धो का साकेतिक चित्रण है। यह माना जाता है कि गौतम से पहले छ बुद्ध और जन्मे थे और सातवा अवतार स्वय बुद्ध का था। इस प्रकार सात बुद्ध माने जाते है। सबसे नीचे की सूची पर वेस्सतर जातक की कथा अकित है। कहा जाता है कि बुद्ध होने से पहले बोधिसत्व बेस्सतर नामक एक दानी राजकुमार के रूप मे प्रकट हुए थे, जिसने अपना धन, सफेद हाथी, रथ, घोडे, स्त्री तथा बच्चे सभी एक-एक करके दान कर दिए थे। बीच की सूची पर कपिलवस्तु से गौतम की विदाई का दृश्य अकित है। सबसे नीचे अशोक बोधिवृक्ष की पूजा करते दिखाए गए है। निकट ही एक दूसरे स्तूप के दोनो ओर कमल के फूल लाते हुए हाथी दिखलाए गए है। ऐसा खयाल किया जाता है कि नेपाल की तराई मे रामग्राम मे जो स्तूप था, वह इसी शैली का था।

पश्चिमी द्वार की ऊपरी सूची पर बुद्ध से पहले के छ बुद्धो और मैत्रेय (भविष्य मे उत्पन्न होने वाले बुद्ध) का अकन किया गया है। पीछे की ओर मल्ल
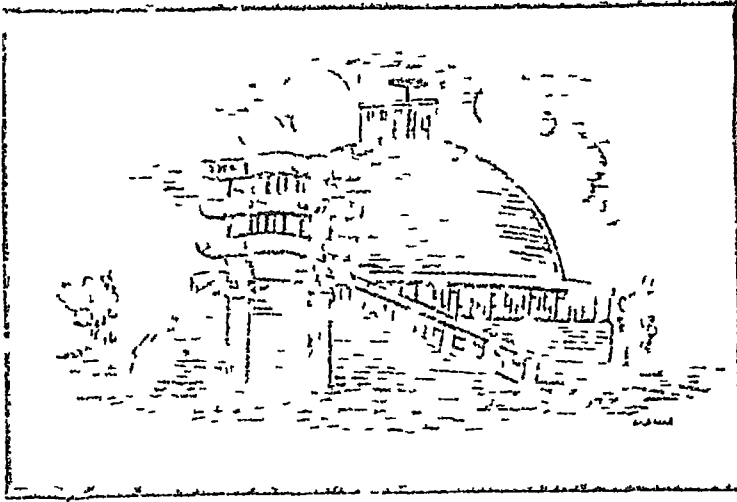
स्तूप 3, दक्षिण और दक्षिण-उत्तर की ओर से

साची मे सबसे दर्शनीय स्तूपो की वेदिकाए है। उन्हे देखने से पता चलता है कि कलाकार पत्थर पर सुन्दर-से-सुन्दर वेलवूटे वना सकते थे। किन्तु मनुष्य की आकृति वनाने के लिए उन्हे अभी और कुछ सीखना था। मनुष्यो के चेहरे का वे केवल तीन-चौथाई भाग ही दिखा सकते थे, और मनुष्य का चित्रण वे प्राय एक ही सतह पर कर सकते थे।

साची के स्तूप वडे पैमाने पर वनाए गए थे। उन्हे वनाने मे अनेक कलाकारो ने योग दिया था। साची की कला कही-कही वहुत अच्छी है और कही-कही बहुत साधारण। इससे मालूम होता है कि जिन कलाकारो ने साची के स्तूप वनाने मे योग दिया था, उनमे सबके हाथ मजे हुए नही थे। फिर भी कही-कही इतना वारीक काम है कि देखते ही वनता है। एक द्वार पर खुदे लेख से ज्ञात होता है कि वहा की सजावट का नमूना विदिशा के, जिसे आजकल भिलसा कहते है, दन्तकारो, यानी हाथीदात पर काम करने वालो, ने बनाया था।

साची की कला के विषय अधिकतर धार्मिक है। किन्तु लौकिक विषय भी लिए गए है। भारतीय कलाकारो ने साची की कला मे उस समय के भारतीय समाज तथा जीवन के सुन्दर चित्र भी प्रस्तुत किए है।

भारतीय नाच

मनुष्य शुरू से ही नाच से आनन्द लेता और उससे अपना मन बहलाता आ रहा है। आज से हजारो वरस पहले भी आदमी नाच से अपने नीरस और कष्ट भरे जीवन का बोझ हल्का करता था, और आज भी करता है।

नाच एक बहुत पुरानी कला है। नाच हर देश मे मनबहलाव का एक मुख्य साधन रहा है। नाच केवल मनुष्यो के ही नही, देवताओं के भी मनबहलाव का साधन रहा है। लगभग हर देश और हर जाति के धार्मिक कामो मे नाच का एक अपना स्थान है। हमारे देश मे तो यह कहा जाता है कि नाच का आरम्भ ही देवताओ ने किया था। इसकी कहानी बडी दिलचस्प है। कहते है कि देवताओ को प्रसन्न करने के लिए भरत मुनि ने नाटक की रचना की। नाटक के बीच मे उन्होने नाच भी रखा। फिर उन्होने जाकर शिव और पार्वती को अपना वह नाटक और नाच दिखाया। शिव और पार्वती उनके खेल को देख कर इतने प्रसन्न हुए कि उन्होने अपने शिष्य ताडु को आज्ञा दी कि तुम अपना नाच दिखा कर इसके सब नियम भरत मुनि को सिखा दो। भरत मुनि ने ताडु की शिक्षा से नाच की अपनी जानकारी और भी बढा ली। ताडु के नाम पर ही उस नाच का नाम ताडव नृत्य पडा। पार्वती जी भी नाचने की कला मे दक्ष थी। उन्होने राजा बाण की पुत्री ऊषा को नाच सिखाया। ऊषा का ब्याह श्रीकृष्ण के पोते अनिरुद्ध से हुआ। ससुराल पहुच कर ऊषा ने द्वारका और सौराष्ट्र की स्त्रियो को वह नाच सिखाया। इसी तरह धीरे-धीरे वह नाच सारे भारत में फैल गया। इस नाच मे कोमल भाव अधिक थे, इसलिए इसे लास्य नृत्य कहा गया। भरत के नाट्यशास्त्र में ताडव और लास्य, दोनो तरह के नाचो के नियम मिलते है।

ऊपर की कहानी सच हो या न हो, इसमें सन्देह नही कि भरत के समय तक हमारे देश में नाच की कला मे काफी उन्नति हो चुकी थी। भरत मुनि का समय आज से लगभग दो हज़ार वर्ष पहले का माना जाता है। दूसरी बातो से भी हमें पता चलता है कि उन दिनो साहित्य, सगीत, चित्रकला, आदि की तरह नाच का भी समाज में काफी मान था। इसका एक कारण यह भी है कि भारत मे नाच को केवल मनबहलाव की चीज न मान कर इसे परमात्मा को पाने का एक साधन माना गया। भारत मे यह विश्वास किया जाता रहा है कि नाच भगवान शिव की लीला है। नाच के द्वारा सासारिक आनन्द तो मिलता ही है, स्वय परमात्मा भी मिल सकता है। नाच के ही कारण शिव का एक नाम नटराज है। नाच की मुद्रा मे मुरली बजाते हुए कृष्ण की मूर्ति कहा नही दिखाई देती!

दूसरी कलाओ की तरह, भारत मे नाच का भी धर्म के साथ बहुत गहरा सम्बन्ध है। प्राचीन काल के मन्दिरो मे बनी हुई मूर्तियो और चित्रो में नृत्य मुद्राए भरी पडी है। नाचते समय कोई भाव दिखाने के लिए शरीर और खास कर हाथो की जो शक्ले बनती है,

उन्हे मुद्रा कहते है। अगर समाज ने नाच को पवित्र और अच्छा न समझा होता, तो अजता और एलोरा की गुफाओ मे, कोणार्क, भुवनेश्वर और खजुराहो के मन्दिरो मे, नाच की मुद्राओ की यह भरमार कभी नही होती।

समय के साथ-साथ हर चीज वदलती है। नाचने की कला मे भी परिवर्तन होता रहा। मध्य युग मे वाहर के हमलो और राजनैतिक उथल-पुथल के कारण देश के वहुत से भागो मे नाच की उन्नति रुक गई। इसका नतीजा यह भी हुआ कि नाच का धार्मिक और आत्मा को ऊचा उठाने वाला रूप मद पड गया और वह राजदरबारो मे केवल मनोरजन का साधन रह गया। यहा से इस कला का पतन शुरू हुआ। नर्तक का सम्मान कम होने लगा। समाज मे उसका आदर घटने लगा। धीरे-धीरे ऐसी हालत हो गई कि कम-से-कम उत्तर भारत मे तो, पेशेवर नाचने वालियो के घरो के अलावा समाज मे नाच के लिए कोई जगह ही नही रह गई। दक्षिण भारत मे उत्तर भारत की तुलना मे नाच का दर्जा इतना नही गिरा। पर वहा भी जनसाधारण के जीवन से निकल कर नाच केवल मन्दिरो और राजदरबारों तक ही सीमित रह गया।

बीसवी सदी मे जब देश मे जागरण की लहर उठी, तब उसके साथ-साथ कला के क्षेत्र मे भी जागृति आई। पुरखो के समय से चली आने वाली अच्छी बाते, जो बीच मे रुक गई थी, उनका रिवाज फिर से शुरू हुआ। अपनी सस्कृति की पुरानी परम्पराओ के लिए हमारे मन मे नए सिरे से आदर जागा। उनमे फिर से जान डालने और उनको जन-साधारण मे प्रचारित करने की कोशिश की गई। नाच भी उनमे से एक था। पढे-लिखे और अच्छे घरानो के लोगो ने इस ओर ध्यान दिया। दक्षिण मे दासी आट्टम अथवा सादिर नृत्य को, जो केवल देवदासियो और पेशेवर नाचने वालियो तक ही सीमित था, भरतनाट्यम् का नाम दिया गया। नाच के पहनावे और तरीको मे भी बहुत-से परिवर्तन हुए। धीरे-धीरे वह नाच ऐसी अवस्था मे पहुच गया कि आज फिर से वह जनसाधारण मे प्रचलित होता जा रहा है। अब भरतनाट्यम् को सम्मान की दृष्टि से देखा जाने लगा है। उत्तर भारत मे यह परिवर्तन अधिक धीमा और कठिन सिद्ध हुआ। यहा नाच का प्रचार वहुत धीरे बढा। पर अब पहले के मुकाबले मे ज्यादा लोग नाच मे रुचि लेने लगे है।

शास्त्रो मे नाच के तीन अग माने गए है (1) नृत्त, (2) नाट्य, और (3) नृत्य। लय के अनुसार शरीर के अगो को घुमाने-फिराने, थिरकाने और नाच की मुद्राए बनाने को नृत्त कहते है। नृत्त मे केवल नाच होता है। इसमे न तो मन के भाव दिखाए जाते है, न

उत्तर भारत की मुख्य शैली है। आजकल यह नाच जिस तरह होता है, उसे देखने से दो बाते साफ जाहिर होती है। एक तो यह कि इस पर मुस्लिम काल की गहरी छाप है। दूसरे यह कि इस नाच का मन्दिरो और धार्मिक समारोहो से गहरा सम्बन्ध रहा होगा। महाराजा कालका प्रसाद और विन्दादीन जैसे चोटी के कलाकारो ने इसे एक नया ही रूप और गौरव दिया है।

कत्थक

कत्थक नाच राजदरवारो मे पनपा है, और मनोरजन का साधन रहा है। इसीलिए उसका धार्मिक पहलू दव गया और शृगार का पहलू अधिक उभर आया। भाव और अभिनय की गहराई पर ध्यान नही दिया गया, वल्कि लय, गति और उसके अनुसार पैर चलाने की वारीकियो पर जोर दिया गया। नाचने वाला तरह-तरह की पेचीदा गतियो और तवले-पखावज के बोल आदि पर अधिक ध्यान देता रहा। इस नाच मे राधा-कृष्ण की छेड-छाड आदि ही अधिक रहती है।

कत्थक नाच मे घुघरुओ का उपयोग एकदम अनूठा होता है। घुघरुओ की सहायता से नाचने वाला वहुत मनोहर वातावरण पैदा कर देता है।

मौजूदा कत्थक नाच के सगीत मे लय का जितना महत्व है, उतना स्वर का नही। सारगी अथवा दूसरे वाजो पर धुन की एक कडी शुरू से आखिर तक वजती रहती है, जिसे लहरा कहते है। पिछले कुछ दिनो से कत्थक नाच मे सगीत को और अधिक वढावा देने की ओर कलाकारो का ध्यान गया है। इसी प्रकार पोशाक और सजावट मे भी पेशवाज और चूडीदार पाजामा जैसी दरवारी पोशाको को छोड कर अधिक उम्दा ढग के कपडे पहनने की जरूरत महसूस की जा रही है।

भरतनाट्यम् दक्षिण भारत का मुख्य शास्त्रीय नाच है। इसे देश का प्रतिनिधि नाच भी माना जाता है, क्योकि पिछली सदियो मे इसके रूप मे वहुत कम परिवर्तन

हुआ है । यह नाच अधिकतर मन्दिरो मे ही रहा, जहा देवदासियो ने अपनी मेहनत से इसके असल रूप को जीवित रखा ।

भरतनाट्यम् मे नाच की पुरानी शैली की सभी बाते थोडे-बहुत हेर-फेर के साथ आज भी मौजूद है। इसमे नृत्त और नृत्य, दोनो बराबर मिले है, और अभिनय पर बहुत अधिक जोर दिया जाता है। इस नाच मे बडे-बडे कवियो और गवैयो की रचनाओ पर अभिनय किया जाता है। इसलिए इसमे तरह-तरह के भावो और उनकी गहराई दोनो पर जोर दिया जाता है। भरतनाट्यम् सीखने वाले को नाच के अलावा गाने का भी ज्ञान होना जरूरी है। सगीत और साहित्य के साथ इस नाच का गहरा सम्बन्ध होने की वजह से इसको अधिक आदर मिला है। इसकी पोशाक और सजावट मामूली होते हुए भी कलापूर्ण होती है । भरतनाट्यम् केवल स्त्रिया ही करती है, मगर इसके सभी बडे-बडे उस्ताद पुरुष ही होते आए है ।

भरतनाट्यम्

देश के उत्तर-पूर्वी भाग मे एक मणिपुर प्रदेश है । वहा का नाच **मणिपुरी** नाच के नाम से मशहूर है । शास्त्रीय शैलियो मे इसका विशेष स्थान है । मणिपुरी नाच मन के कोमल भावो को उकसाने वाला होता है । मणिपुरी नाच की विशेषता यह है कि इसे बहुत से लोग ज्यादातर मिल कर ही नाचते है । सामूहिक नाच होने की वजह से यह कत्थक और भरतनाट्यम् की तरह नही होता । यह नाच मणिपुर के जीवन का अग है और अभी तक मन्दिर और धार्मिक जीवन से इसका गहरा सम्बन्ध है । शास्त्रीय शैली की भाति इसमे भी दक्षता हासिल करने के लिए देर तक शिक्षा और अभ्यास की जरूरत होती है । आम तौर से मणिपुर के हर लडके-लडकी को यह नाच आता है । इस नाच मे भी राधा-कृष्ण के प्रेम की बाते होती है। पर यह प्रेम सासारिक प्रेम नही, अलौकिक प्रेम माना गया है। नाचते हुए राधा-कृष्ण को मणिपुर निवासी भगवान का रूप

मान कर भक्ति के साथ उनकी पूजा करते है, और नाच को पवित्र काम मानते है।

मणिपुरी शैली मे नाचने और मन के भाव प्रकट करने की वारीकी पर विशेष ध्यान दिया जाता है। इस नाच की लय जटिल होते हुए भी वडी मधुर और सुहावनी लगती है। मणिपुरी नाच की पोशाक और सजावट पर वहा के वातावरण की गहरी छाप है। इतनी सुन्दर पोशाक और सजावट दूसरे किसी नाच की नही होती। मणिपुरी गीतो मे भी धार्मिक वाते अधिक होती है।

मणिपुरी

कथकली नाच दक्षिण भारत के केरल प्रदेश का शास्त्रीय नाच है। इस नाच मे एक कथा को लेकर चलते है। शुरू से अन्त तक उसी कथा को सही-सही निभाने पर ध्यान रखते है। इस हिसाव से यह किसी एक आदमी का नाच नही है, वल्कि नृत्य यानी नाच द्वारा नाटक की परम्परा से जुडा हुआ है। कथकली नाच के लिए वडे अभ्यास और परिश्रम की आवश्यकता होती है। यह नाच केरल प्रदेश मे जनसाधारण की चीज है और मनोरजन का सुगम साधन है। इसका कारण यह जान पडता है कि जन-साधारण मे रामायण, महाभारत, आदि की कथाओ के नाटक का जो चलन था, वही शास्त्रीय नाच के नियमो मे बध-सवर कर कथकली नाच कहलाया। नाच की मुद्राओ का जितना उपयोग इस नाच मे होता है, उतना दूसरे किसी नाच मे नही होता। इसलिए इसे मुद्राओ की भाषा कहा जाता है। कथकली नाच मे गीत के साथ तरह-तरह की मुद्राए दिखाई जाती है, और मामूली नाच के रूप मे कोई-न-कोई पौराणिक घटना पेश की जाती है। इस नाच की पोशाक और सजावट वडी मनोहर लेकिन जटिल होती है।

इन चार मुख्य शास्त्रीय शैलियो के अलावा हमारे देश मे नाच की और भी
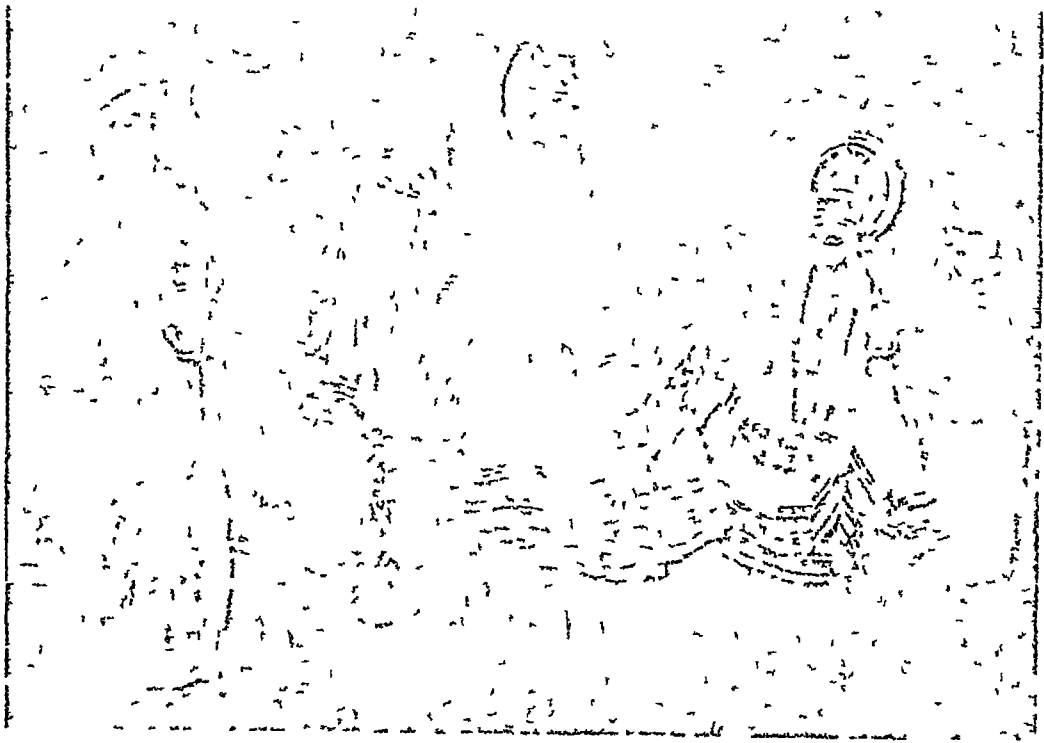
कथकली

कितनी ही शैलिया है। ये दूसरी शैलिया भी लगभग इन्ही के जोड की है, और नाच की शास्त्रीय परम्परा से उनका काफी लगाव है। इनमे उडीसा के ओडीसी और आन्ध्र के कुचीपुडी नाच खास है। हाल ही मे सगीत नाटक अकादमी ने एक नाच गोष्ठी की थी, जिसमे और भी कई नाचो का, विशेषकर असम के 'सत्रीय' नाच और कर्नाटक के

कुचीपुडी
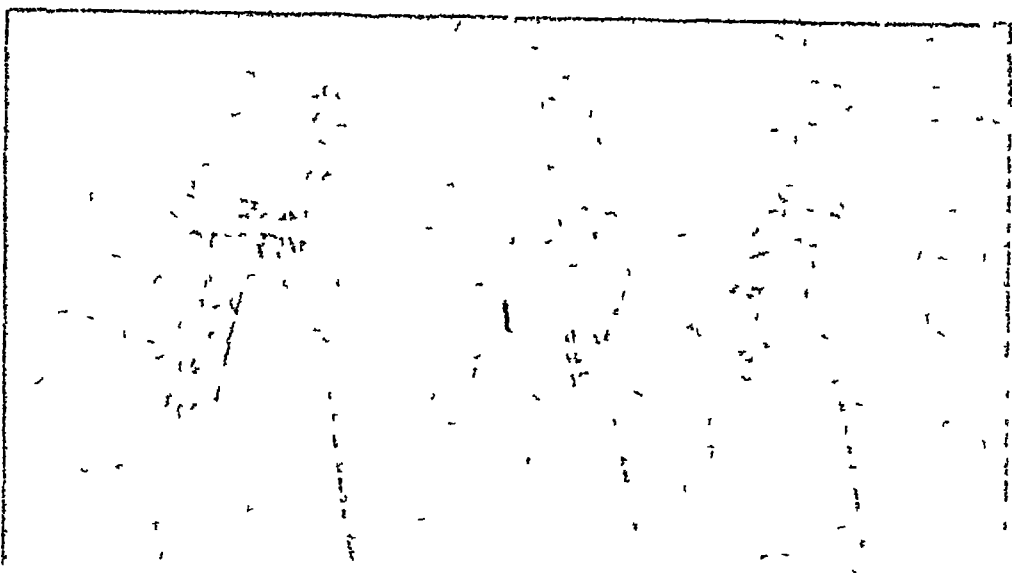
आदिवासियो का नाच

यक्षगान आदि का प्रदर्शन किया गया था। हमारे देश मे लोक-नृत्य और आदिवासियो के नाच की भी एक वडी प्रचलित और प्रसिद्ध परम्परा है। असल मे उसे देखे और पहचाने विना शास्त्रीय नाच को पूरी तरह नही समझा जा सकता। इन लोक-नृत्यो मे भी मोटे तौर से वे सव गुण और नियम मिलते है, जो शास्त्रीय नाच मे पाए जाते है। इससे यह विश्वास और भी पक्का हो जाता है कि हमारे मौजूदा नाच, जिन्हे हम शास्त्रीय नाच कहते है, लोक-नृत्य अथवा धार्मिक नाचो के ही विकसित और सुधरे हुए रूप है।

राजस्थानी लोक-नृत्य

आज़ादी के बाद हमारा ध्यान नाच की अपनी परम्परा की ओर अधिक गया है। हर साल गणतन्त्र दिवस के मौके पर दिल्ली तथा देश की दूसरी जगहो मे लोक-नृत्य भी किया जाता है। अब हम यह समझने लगे है कि हमारे देश मे नाच केवल पैसे वालो के लिए ही नही है, बल्कि यह जनसाधारण के आनन्द और मनोरजन का भी साधन है। नाच के द्वारा जनसाधारण का केवल मनोरजन ही नही होता, उसके जरिए वे अपने परिश्रम और दुख-दैन्य के भार से दबे जीवन को सरस और सुन्दर भी बना सकते है। इसी से आशा है कि नाच की हमारी कला मे और भी निखार आएगा।

बैल
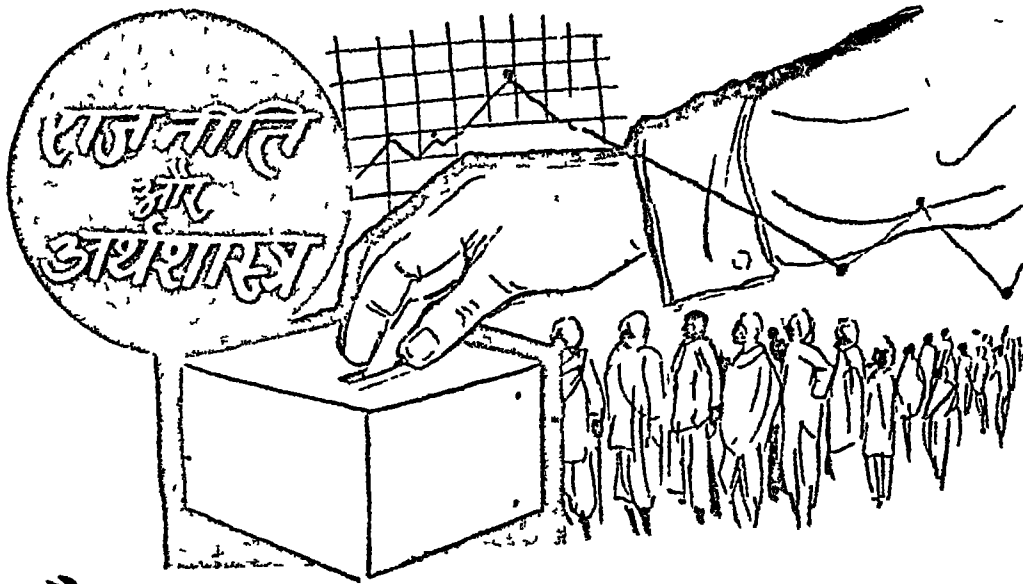
सहयोग और कल्याण

आदमी खाना अकेले बैठ कर खा सकता है, पर खाने के लिए अन्न का होना जरूरी है और आदमी अकेले अन्न नही उपजा सकता। इसी तरह जीवन के लिए जरूरी कामो मे से अधिकतर अकेले नही किए जा सकते। इसलिए आदमी को आपस मे मिल-जुल कर, आपसी सहयोग से, काम करना पडता है। यह आपसी सहयोग काम को पूरा करने के लिए जितना जरूरी है, उतना ही काम मे आने वाली बाधाओ को दूर करने के लिए भी जरूरी है। आपसी सहयोग के जरिए ही आदमी बाधाओ से टक्कर लेता है, उनके खिलाफ सघर्ष या कोशिश करता है। इस प्रकार आदिम युग से आज तक आदमी आपसी सहयोग द्वारा काम और बाधाओ के खिलाफ सघर्ष करता हुआ आगे बढा है। आदमी की आज तक की उन्नति की कहानी उसके आपसी सहयोग और बाधाओ के खिलाफ सघर्ष की कहानी है।

पहला सबक

शुरू-शुरू मे आदमी को नही मालूम था कि आग कैसे जलती है और पानी कहा से आता है। इसी प्रकार उसे और भी बहुतेरी बाते नही मालूम थी। समय-समय पर वह जगलो मे धाय-धाय जलती हुई आग की ऊची-ऊची लपटे देखता था और समझता था कि वह देवता की माया है। इसी प्रकार वह लहराती हुई नदियो को बहते देखता था, घटाटोप बादलो मे से मूसलधार वर्षा होते देखता था और वह समझता था कि देवता पानी बरसाते है और नदिया देविया है।

वह प्रकृति की शक्तियो से डर कर उनकी पूजा करने लगा। उसको आशा थी कि पूजा से प्रसन्न होकर प्रकृति जहा एक ओर अपनी कृपा द्वारा उसे लाभ पहुचाएगी,

वहा उसे अपने कोप से भी वचाएगी। पर उसने अनुभव से सीखा कि केवल पूजा-पाठ काम नही आता। कभी पानी न वरसा और उसकी खेती सख गई और कभी इतना मूसलधार पानी वरसा कि उसकी खेती वह गई।

उसने पूजा करना तो नही छोडा, पर पानी के देवता इन्द्र के सहारे वैठे रहना भी उसने स्वीकार नही किया। उसने कुए खोदे, तालाव वनाए और नदियो से पानी निकालने के तरीके खोज निकाले। अव वह अपनी बुद्धि और मेहनत से अपने खेतो की सिचाई करने लगा। इस तरह के कामो मे उसे आपस मे मिल-जुल कर मेहनत करने की आवश्यकता पडी। इस प्रकार आदमी के आपसी सहयोग का सिलसिला शुरु हुआ। उसी आपसी सहयोग के वल पर वह प्रकृति की शक्तियो से टक्कर लेता हुआ, उनके खिलाफ सघर्ष करता हुआ आगे वढा। उन्नति की ओर आदमी का वह पहला कदम था। वहा से चल कर उसने आज तक उन्नति की अनगिनत मजिले तय की है।

आदमी की उन्नति के इतिहास को मोटे तौर पर पाच हिस्सो या पाच युगो मे वाटा जा सकता है (1) आदिम साम्यवाद का युग, (2) दासता का युग, (3) सामन्ती युग, (4) पूजीवाद का युग, और (5) समाजवाद का युग।

आदिम साम्यवाद

हजारो साल पहले आदमी जगल मे घूम-फिर कर जीवन विताता था। उसकी जरुरत वहुत कम थी। पेडो के फल खा लिये, नदी या झरने से पानी पी लिया, छालो और पत्तो से तन ढक लिया और कही आड खोज कर पड रहा। वस, यही जीवन था।

मगर ऐसी जिन्दगी मे जगली जानवरो से खतरा था। इसलिए आदमी ने शिकार करना सीखा और हथियार वनाए। वह मास खाने लगा और खाल के कपडे पहनने लगा। कई लोग मिल कर जगली जानवरो का मुकावला करने लगे। जानवरो मे कुछ पालतू वनाने योग्य जान पडे। उन्हे पाल लिया। वे शिकार मे मदद करने लगे। कुछ जानवरो से दूध दुहा जाने लगा। जगली जानवरो से वचने और पालतू जानवरो की हिफाजत के लिए लोग सुरक्षित जगह पर मिल-जुल कर रहने लगे। खाल को सीने के लिए औजार भी वने। इस युग मे कोई किसी के अधीन न था। सव वरावर के सहयोगी थे। एक दूसरे की मदद करना हर एक का कर्त्तव्य था। भूमि, पालतू पशु, थोडे-से औजार और

आदिम पुरुष

परिश्रम के अलावा किसी के पास और कोई पूजी न थी। दूसरे को उसकी जरूरत की चीजे दे देने और उससे अपनी जरूरत की चीजे ले लेने का आम रिवाज था। सभी लोग मिल कर मेहनत करते थे। इस मेहनत मे सबका समान रूप से भला था। जब जरूरत पडी, तब सबने मिल कर मेहनत कर ली। मेहनत की जरूरत न रही, तो सबका समय आराम या हँसी-खुशी मे बीत गया। जगली जानवरो या दूसरे कबीले के लोगो से लडते समय बच्चो और पालतू जानवरो को सुरक्षित स्थान यानी घर मे छोड दिया जाता था। धीरे-धीरे उनकी देखरेख के लिए औरतो को घर मे छोड जाने का रिवाज वना।

पर धीरे-धीरे इस समानता के युग मे बडे और छोटे होने लगे। कुछ लोग मुखिया और अगुआ वनने लगे। ईर्ष्या और द्वेप उपजा। अपने और पराए मे भेद होने लगा। चीजे जमा करने की इच्छा वढी। समाज मे धनी और गरीव होने लगे। धनी लोग अपनी जरूरत से ज्यादा जमीन, औजार और पालतू पशु रखने लगे। गरीव उनके अधीन होने लगे। गरीब धनी लोगो के हुक्म पर काम करने लगे। धनी लोग स्वामी कहे जाने लगे और गरीब लोग दास। इस तरह, आदिम साम्यवाद का युग समाप्त हुआ और दासता का युग आया।

दासता का युग

जिन लोगो के पास अपनी जरूरत से ज्यादा जमीन, जगल, पालतू पशु और खेती के औजार थे, उन्हे काम लेने के लिए मातहतो यानी दासो की जरूरत पडी। दासो के परिश्रम से स्वामी की सम्पत्ति वढती थी। परिश्रम मे मकान वनाना, शिकार करना, जगल काटना, खेती करना, औजार वनाना, पालतू जानवरो को चराना, आदि सभी तरह के काम शामिल थे। जिस स्वामी के पास अधिक दास होते, वही अधिक सम्पत्ति वाला भी समझा जाता था। इसलिए स्वामियो मे एक-दूसरे से आगे

धनी आदमी गरीब को दास समझता था।
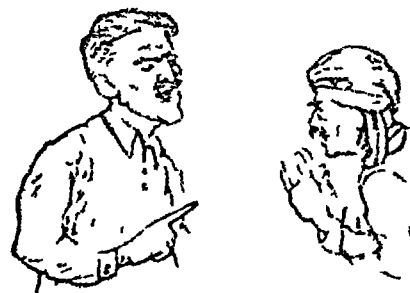
बढने के लिए सम्पत्ति के साथ-साथ दासो पर कब्ज़ा करने की भी होड चली। इससे युद्धो के बीज पडे।

स्वामियो को जरूरत पडी कि दास उनकी और उनकी सम्पत्ति की रक्षा के लिए लडे। लेकिन दास स्वामी की इस इच्छा को पूरा करने के लिए खुशी से अपनी जान देने के लिए तैयार न थे। एक स्वामी के दासो मे आपसी मेल-जोल बहुत था। वे सब मिल कर काम करते थे। वे सब असन्तुष्ट थे कि उनके परिश्रम से स्वामी की सम्पत्ति बढ रही है, लेकिन वे दीन-के-दीन रह रहे है। एक दास पर सख्ती होती थी, तो दूसरो को उसके साथ सहानुभूति होती थी। धीरे-धीरे स्वामियो की समझ मे यह बात आ गई कि यदि दासो को सम्पत्ति मे हिस्सा न दिया गया, तो सम्पत्ति की रक्षा में उनकी दिलचस्पी नही हो सकती। इसलिए दासो को भूमि देकर रैयत या किसान बना लिया गया। उन्ही मे से स्वामी ने सिपाही भर्ती करके फौज बनाई। ये किसान और सिपाही मातहत तो थे, पर दास न थे।

सामन्ती युग

इस युग मे स्वामी सामन्त बन गए। अब उनके पास फौज थी। अनगिनत मातहत किसान थे। इन्ही सामन्तो को ज़मीदार, ताल्लुकदार, नवाब, राजा, महाराजा, बैरन, लार्ड, आदि अलग-अलग नामो से पुकारा गया है। इनका युग दुनिया के हर देश मे सदियो तक रहा है। इस युग की कई खास बाते है। किसान के पास भूमि थी। वह भूमि पर मेहनत करके अन्न उपजाता था। किसान के ही घरो के लोग सिपाही बन कर सामन्त के लिए जान देते थे। युद्ध के लिए अच्छे-अच्छे हथियारो की ज़रूरत पडती थी। सामन्त के मातहत गावो मे ही इन हथियारो के बनाने वाले कारीगर पैदा हुए।

सिपाही सामन्त से ही वेतन पाते थे। उन्हें वेतन देने के लिए सिक्के का चलन हुआ। सिक्के की वजह से माल खरीदा और बेचा जाने लगा। कुछ लोग दुकानदारी का धन्धा करने लगे। जगह-जगह पर पैठ, बाज़ार, मडी और मेले लगने लगे, जिनमे पशु और माल बेचे और खरीदे जाते थे। देहात के कारीगर कपडा, औज़ार

इन्हीं सामन्तो को जमींदार, ताल्लुकदार, आदि नामो से पुकारा जाता था।

हथियार और जरूरत के दूसरे सामान वना कर बाजारो मे बेचते थे। इस युग मे लोगो की रोजी खेती, दस्तकारी, व्यापार या नौकरी हो गई थी। सामन्त इन किसानो, व्यापारियो और कारीगरो से उनकी आमदनी का एक हिस्सा कर के रूप मे वसूल करता था। कर की वसूली वेतन पाने वाले नौकर करते थे।

सामन्तो को इस प्रकार बिना परिश्रम सम्पत्ति मिलती थी। इससे उनमे ठाट-बाट और आरामतलबी बढी। जिस सामन्त का जितना बडा इलाका होता, जितनी अधिक रैयत होती, उसकी सम्पत्ति उतनी ही अधिक बढती। इसीलिए सामन्तो ने एक-दूसरे के राज्य पर कब्जा करने की कोशिश शुरू कर दी। राज्यो मे आपस मे युद्ध होने लगे। आरामतलबी और युद्ध, दोनो मे खर्च बढता है, इसलिए सामन्तो को धन की ज्यादा जरूरत पडी। उन्होने यह बढा हुआ खर्च भी रैयत से वसूलना शुरू किया। किसान और देहाती कारीगर यो ही तबाह होने की हालत मे थे। उनकी कमाई का काफी हिस्सा मडियो के व्यापारियो की जेब मे चला जाता था। उनके परिवार भी बढ रहे थे। बढे हुए परिवार का खर्च चलाना कठिन हो रहा था। इसलिए सामन्तो ने जब कर बढाया, तब किसान अपनी जमीन और कारीगर अपना धन्धा छोड कर भाग खडे हुए और मडियो मे आकर वसने लगे। सामन्ती युग के अन्तिम दौर मे मडिया धीरे-धीरे शहर का रूप लेने लगी। देहात से किसान और कारीगर रोजी की तलाश मे

जिस सामन्त की जितनी बडी रैयत होती, उसकी सम्पत्ति उतनी ही अधिक होती।

मिल
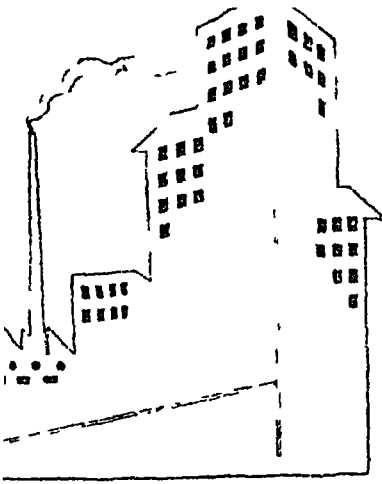
शहरो मे इकट्ठा होने लगे, जो नौकरी, चाकरी या मजदूरी कुछ भी करने को तैयार थे।

मशीन का जन्म

ठीक इसी समय दुनिया मे एक नई घटना घटी। विज्ञान ने भाप से काम लेने की तरकीव मालूम कर ली। इससे पहले लोग आदमी, जानवर, हवा और पानी की शक्ति से ही काम लेते थे। अब भाप की शक्ति से भी काम लिया जा सकता था। चूकि भाप की शक्ति आदमी, जानवर, हवा और पानी से कही अधिक होती है, इसलिए वडे-वडे कारखाने भाप से चलने सम्भव हो गए और यह भी सम्भव हो गया कि उनके द्वारा काफी सामान बनाया जाए। लेकिन वडे कारखाने बनाने के लिए वडी पूजी की भी जरूरत थी। शहरो के व्यापारियो के पास पूजी थी। व्यापारी काफी अर्से से व्यापार करते आ रहे थे। इनका व्यापार न केवल अपने देशो मे, वल्कि दूसरे देशो मे भी फैला हुआ था। विदेशो से व्यापार करने के लिए इन व्यापारियो ने मिल-जुल कर बडी-बडी कम्पनिया वना ली थी, जैसे भारत से व्यापार करने के लिए इग्लैण्ड मे ईस्ट इडिया कम्पनी बनी थी। इस कम्पनी ने भारत मे राज करना भी शुरू कर दिया था। यही हाल यूरोप की दूसरी कम्पनियो का भी था। एशिया और अफ्रीका मे व्यापार करके इन कम्पनियो ने धन जमा कर लिया था। इसी धन से उन्होने वडे-वडे कारखाने बनाए, जो भाप से चलते थे। वाद मे विज्ञान ने बिजली की शक्ति से भी काम करने की तरकीव निकाली और वहुत-से कारखाने बिजली से भी चलने लगे।

पूजीवाद का युग

इसके वाद जो युग आया, उसको पूजीवाद कहा जाता है। पूंजीपतियो ने वडे-वडे कारखाने खोले। इनमे गावो से आए हुए किसान और कारीगर मजदूर वन कर काम करने लगे। वडे-वडे कारखानो मे धडाधड माल वनने लगा। इस युग मे छोटे कारीगर और किसान कारखानेदारो से वहुत पीछे रह गए। घरो मे छोटे औज़ारो से काम करने वाले कारीगर इतना ज्यादा माल तैयार नही कर पाते थे। कारखानेदार किसान को कच्चे माल की कीमत कम-से-कम देते है। मज़दूरो को मजदूरी भी कम-से-कम दी जाती है। इसका फल यह हो रहा है कि कारीगर भी गरीव होता जा रहा है और

किसान भी। लोग बरावर गाव छोड-छोड कर मजदूरी की खोज मे शहर की ग्रोर खिचे चले ग्रा रहे है। गावो की तवाही ग्रौर शहरो मे ग्रावादी की वाढ पूंजीवादी युग की खास पहचान है।

इस युग मे पूजीपति ग्रपने कारखाने मे माल इस्तेमाल के लिए नही, वल्कि मुनाफे के लिए तैयार कराता है। मुनाफे से पूजी वढती है, तो उससे नए कारखाने बनाए जाते है। उनसे मुनाफा वढता है। कारखानो मे तैयार माल देश मे ही नही, विदेशो मे भी वेचा जाता है। विदेशो मे माल विकने के लिए यह जरूरी है कि वहा ऐसे कारखाने न हो, जो इनके तैयार माल से मुकावला करे। इस ख्याल से कि वे मुल्क ग्रागे न वढ जाए, उन्हे गुलाम वनाने की कोशिश की जाती है। इसे साम्राज्यवाद कहते है। यह पूंजीवादी युग की एक खास देन है। दूसरे देशो को गुलाम वनाने या ग्रपने ग्रसर मे रखने के लिए पूजीपतियो मे एक होड-सी होती है, जिसका फल ग्रक्सर युद्ध होता है। ये युद्ध विश्व-महायुद्ध तक का रूप ले लेते है।

होते-होते पूंजीवाद का यह फल होता है कि दुनिया दो भागो मे बट जाती है। एक तरफ उन्नत पूंजीवादी देश ग्रौर दूसरी तरफ पिछडे हुए गुलाम या ग्रधीन देश। उन्नत पूजीवादी देशो मे भी कुछ पूजीपतियो को छोड कर ग्राम जनता मजदूर, नौकरी पेशा ग्रौर गरीब रह जाती है। तव समाज के हित ग्रौर पूजीपति के हित में संघर्ष शुरू हो जाता है। गरीब चाहते है कि जरूरी सामान सस्ता मिले। पूजीपति चाहते हैं कि माल के दाम चढे रहे।

यह सघर्ष तीन मोर्चों पर शुरू हुग्रा। तीनो मोर्चो पर सघर्ष करने वालो ने ग्रापस। सहयोग किया। मजदूरो ने ग्रपने सगठन बना कर मुनासिब वेतन ग्रौर उचित सुविधाग्रो के लिए जोर लगाया। जनता ने पूंजीपति की मनमानी रोकने के लिए कानून वनवाने की जरूरत महसूस की। बडे-बडे ग्रान्दोलन हुए कि कानून ग्राम जनता की राय से ही बनने चाहिए। जनता द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियो को कानून बनाने का हक इन्ही ग्रान्दोलनो के कारण मिला। इसे लोकतन्त्र के लिए सघर्ष कहते है। पिछडे ग्रौर गुलाम देशो की जनता ने विदेशी गुलामी के खिलाफ ग्राजादी की लडाई छेडी। ग्राज ग्रधिकाश देश विदेशी गुलामी की जजीरे तोड कर ग्राजाद हो चुके है। इस दौर में कई नए विचार सामने ग्राए। उनमें से कुछ ये है

कारखाने मजदूरो के बल पर चलते है, इसलिए उनका प्रबध मजदूरो ग्रौर ग्राम जनता की इच्छा के ग्रनुसार होना चाहिए। राज्य मे कानून जनता के लिए बनते

कारीगर और पूजीपति

है इसलिए कानून बनाने का भी हक जनता को ही होना चाहिए। हर देश की जनता को इस बात का हक होना चाहिए कि वह अपनी मर्जी से अपनी तरक्की का रास्ता चुने। यह बेजा बात है कि कोई देश किसी दूसरे देश को गुलाम और पिछड़ा हुआ रखे। इन विचारो ने पूजीवाद और साम्राज्यवाद की जडे हिला दी। परन्तु पूजीपति और साम्राज्यवादी, दोनो मिल कर भी जनता की महान् शक्ति के सामने टिक न सके। यह बात आखिर मान ली गई कि आदमी को हक होगा कि वह किसी के मुनाफे के लिए मेहनत नही करेगा, बल्कि अपने और पूरे समाज के लिए मेहनत करेगा। यही असूल आदिम साम्यवाद मे भी था। आज इसी को समाजवाद कहा जाता है।

समाजवाद

आज कई देशो मे पूजीवाद और साम्राज्यवाद आखिरी सासे ले रहा है, और कई देशो मे समाजवाद के प्रयोग हो रहे है। सोलह वर्ष हुए, भारत आजाद हुआ है। भारतीय जनता आज समाजवाद के दरवाजे पर खडी है।

समाजवाद मे पूरी जनता को सबके हित मे अपना हित देख कर आपसी सहयोग करना होता है। यह तभी सम्भव है, जब सबकी मेहनत का फल कुछ लोगो को नही, बल्कि सब लोगो को मिले। कल-कारखानो मे जो कुछ बने या उससे जो मुनाफा हो, उसका इस्तेमाल एक व्यक्ति या कुछ व्यक्तियो के गुट के भले के लिए न होकर पूरे समाज के भले के लिए हो। कारखानो पर एक पूजीपति या कई पूजीपतियो के गुट का अधिकार होने के बजाय उन पर पूरे समाज का अधिकार हो। इसलिए कहा जाता है कि पैदावार के साधन पर व्यक्तियो का नही, बल्कि समाज का अधिकार होना चाहिए। कल-कारखाने भाप, बिजली, आदि की शक्ति, नई वैज्ञानिक खोजे, भूमि, उसके जगल और खनिज पदार्थ—इन सबकी गिनती पैदावार के साधनो मे की जाती है।

इस सिलसिले मे यह सवाल किया जाता है कि यदि सब साधन समाज के हो गए, तो व्यक्ति का क्या रहेगा? दूसरे शब्दो मे यह सवाल यो समझना चाहिए कि व्यक्ति का समाज से क्या नाता होगा। समाजवाद के युग मे व्यक्ति और समाज मे भेद नही रह जाता। व्यक्ति समाज का छोटा रूप और समाज व्यक्ति का बडा रूप हो जाता है।

किसी व्यक्ति का अहित हो, तो पूरे समाज का अहित हुआ। समाज का अहित हो, तो हर व्यक्ति का अहित हुआ। यहा तक कि अहित करने वाले व्यक्ति का अपना भी अहित हो जाता है। इसी प्रकार व्यक्ति का हित समाज का हित और समाज का हित हर व्यक्ति का हित हुआ। ऐसी हालत मे समाज के लिए सब व्यक्तियो मे सहयोग ही हो सकता है। व्यक्ति और समाज मे कभी संघर्ष नही हो सकता। आदमी का आदमी से सघर्ष सच्चे समाजवाद के युग मे असम्भव है। इस युग मे तो सघर्ष केवल प्रकृति से होगा। इस सघर्ष मे सब मनुष्य समाज के हित के लिए एक-दूसरे से सहयोग करेंगे।

शुरू मे हमने देखा कि मनुष्य का आपसी सघर्ष इसलिए शुरू हुआ कि कुछ लोगो ने अपनी जरूरत से ज्यादा चीजो पर कब्जा कर लिया था। कुछ लोगो के पास अधिक सम्पत्ति हो और कुछ लोगो के पास न हो या बहुत कम हो, तो सघर्ष जरूर होगा। इसीलिए कहते है कि मनुष्य का आपसी सघर्ष असमानता के कारण होता है। इससे यह मालूम हुआ कि यदि समाजवाद के युग मे असमानता रही, तो इस युग में भी आपसी सघर्ष हो सकता है।

भारत में सहयोग

भारत आजाद देश तो है, लेकिन अभी पिछडा हुआ है। आजाद भारत की आजादी तभी पक्की होगी, जब वह इस काबिल हो जाएगा कि उन्नत देशो के कन्धे-से-कन्धा मिला कर खडा हो सके। दो सौ साल की गुलामी के दौर मे हम उन्नति की दौड मे और देशो से बहुत पीछे रह गए है। हमे जल्द-से-जल्द उनके बराबर पहुचना है। इस पिछडेपन को जल्द-से-जल्द दूर करने के लिए हमारी सरकार ने देश मे पच-वर्षीय योजनाए शुरू की है। दो योजनाए पूरी हो चुकी है। तीसरी योजना का तीसरा वर्ष चल रहा है। इन योजनाओं को समाजवाद की तरफ पहले कदम कह सकते है। इस समाजवाद को जल्द लाने के लिए योजना के साथ पूरी जनता का सहयोग, और इस योजना के रास्ते मे जो बाधाए आए, उनके साथ सघर्ष जरूरी है।

तीसरी योजना के तीन अग है। पहले अग मे बडे-बडे कारखानो को कायम करना है, दूसरे अग मे छोटे-छोटे धन्धो और कारीगरो को सहायता देना और तीसरे अग मे खेतिहरो और खेती की तरक्की के लिए काम करना है। तीनो अगो की अलग-अलग तरक्की तो होगी ही, इन तीनो अगो को भी एक-दूसरे से सहयोग करना होगा, तभी योजना सफल होगी।

दुनिया के मजदूर, इकट्ठे हो जाओ !

नमूने के लिए बडे कारखानो को ले लीजिए। इन कारखानो मे मजदूरो की पचायते बनेगी। इन पचायतो को कारखाने के मालिको और सरकार के प्रतिनिधियो का सहयोग लेकर कारखानो का पूरा प्रबध करना है। प्रबध मे काम, मजदूरी, कारखाने की तरक्की, सस्ता और काफी माल तैयार करने की कोशिश, मजदूरो की दवादारू, पढाई-लिखाई, खेल-कूद, सभी कुछ शामिल है।

इसी तरह छोटे उद्योग-धन्धो के सहकारी सगठन बनेगे। इन छोटे-छोटे धन्धो के सामने सबसे बडी कठिनाई यह है कि न उनके पास पूजी है, न माल की निकासी के अच्छे जरिए है। सहकारी सगठन इन कठिनाइयो का हल निकालेगे।

सबसे ज्यादा गरीबी और तबाही देहात मे है। भारत की अधिकाश आबादी गावो मे बसी है। इसीलिए कहा जाता है कि असली भारत गावो मे रहता है। गावो की हालत सुधारे बिना भारत को उन्नत देश नही कहा जा सकता। गावो मे खास उद्यम खेती है और जो थोडे-बहुत कारबार है, उनकी भी उन्नति खेती की उन्नति पर निर्भर है। खेती की हालत आज अच्छी नही है। खेत छोटे है। गरीबी के कारण किसान अच्छी खाद और अच्छे बीज का उपयोग नही कर पाते। किसानो के बच्चे अच्छी शिक्षा नही पा सकते। इसीलिए खेती के अच्छे ढग भी वे नही जान पाते। किसानो के अनपढ होने का फायदा बनिये, सूदखोर महाजन, सरकारी कारिन्दे सभी उठाते है। खेतो की सिचाई का उचित प्रबध नही है और बरसात अक्सर धोखा देती है। सरकार बीज और खाद का प्रबध कर रही है। लेकिन इतने से ही सारी

मुसीबते दूर नही होगी। तीसरी योजना मे गाव की पचायतो को बेहतर करना भी शामिल है। ये पचायते गाव की भलाई के लगभग सभी काम करेगी और ये पचायते सबके सहयोग से बनेगी। दवादारू, पढाई, सडके, ताल, पोखर, आदि का पूरा प्रबध यही पचायते करेगी।

आज हम सहयोग और सघर्ष के उस नए मोड पर है, जहा सब मनुष्य आपस मे सहयोग करके प्रकृति की उन बाधाओ से सघर्ष करेगे, जो हमारी उन्नति के रास्ते मे आएगी। शास्त्रो मे कहा गया है—"सघे शक्ति कलौ युगे" (कलियुग मे सघ यानी सहयोग ही शक्ति है)। कलियुग को अब कलयुग यानी कल-कारखानो का युग समझना चाहिए। आज सभी समझदार कौमे आपस मे सहयोग करके, प्रकृति से सघर्ष करके, उससे नई शक्ति जीत कर पूरे समाज का जीवन सुखी बनाने के लिए आगे बढ रही है।

(1)

वालीबाल

●
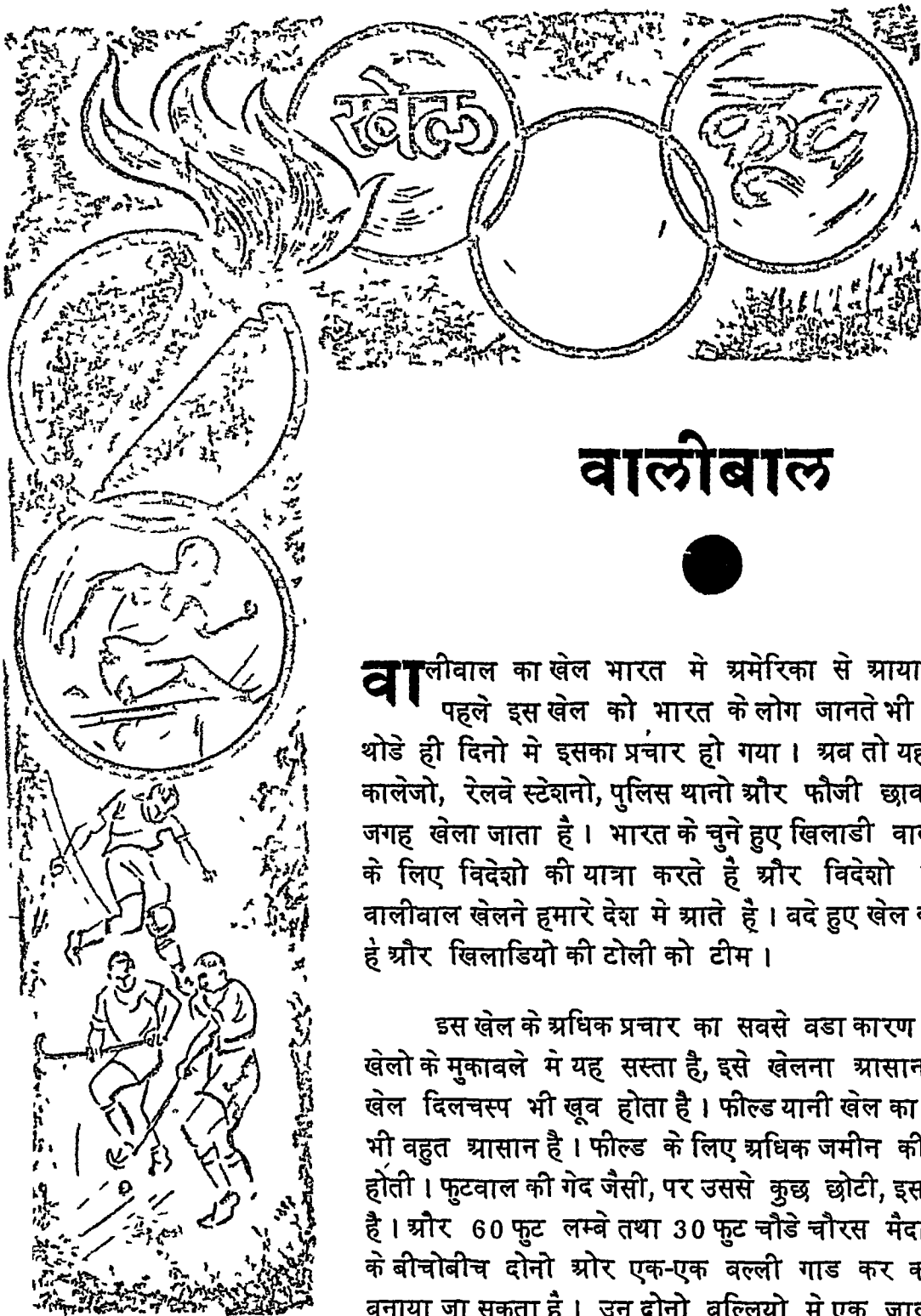
वालीवाल का खेल भारत मे अमेरिका से आया है। कुछ वर्ष पहले इस खेल को भारत के लोग जानते भी न थे। लेकिन थोडे ही दिनो मे इसका प्रचार हो गया। अब तो यह खेल स्कूलो, कालेजो, रेलवे स्टेशनो, पुलिस थानो और फौजी छावनियो मे हर जगह खेला जाता है। भारत के चुने हुए खिलाडी वालीवाल खेलने के लिए विदेशो की यात्रा करते है और विदेशो के खिलाडी वालीवाल खेलने हमारे देश मे आते है। बदे हुए खेल को मैच कहते है और खिलाडियो की टोली को टीम।

इस खेल के अधिक प्रचार का सवसे वडा कारण यह है कि और खेलो के मुकावले मे यह सस्ता है, इसे खेलना आसान है और यह खेल दिलचस्प भी खूव होता है। फील्ड यानी खेल का मैदान वनाना भी वहुत आसान है। फील्ड के लिए अधिक जमीन की जरूरत नही होती। फुटवाल की गेद जैसी, पर उससे कुछ छोटी, इसकी गेद होती है। और 60 फुट लम्बे तथा 30 फुट चौडे चौरस मैदान की लम्बाई के बीचोबीच दोनो ओर एक-एक वल्ली गाड कर कही भी फील्ड वनाया जा सकता है। उन दोनो वल्लियो मे एक जाल वाधा जाता है, जिसे नेट कहते है। नेट जमीन से 8 फुट 2 इच की ऊचाई पर वाधा जाता है। नेट की लम्वाई 31 फुट 2 इच और चौडाई 3 फुट सवा
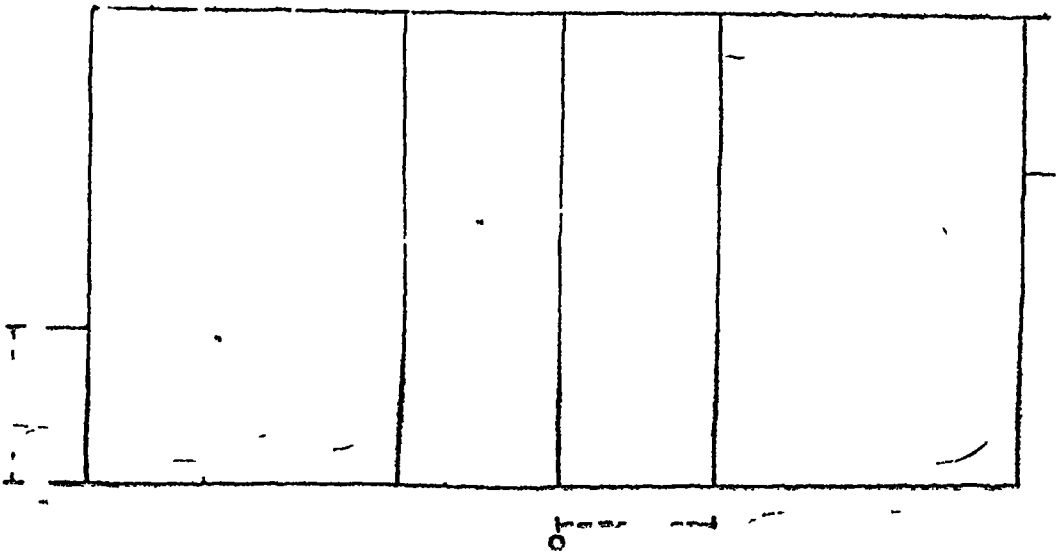
वालीबाल का मैदान

3 इच होती है। नेट के दोनो तरफ मैदान के दो बराबर भाग बन जाते है। उन्हे कोर्ट कहते हैं।

इस खेल मे दो टीमे एक-दूसरे के खिलाफ खेलती है। एक टीम के खिलाडी फील्ड मे नेट के एक तरफ और दूसरी टीम के खिलाडी नेट की दूसरी तरफ खडे हो जाते है। हर टीम मे 12 खिलाडी होते हैं। पर एक-एक समय मे दोनो ओर के केवल 6-6 खिलाडी ही खेलते है। बाकी खिलाडी बदली के लिए तैयार खडे रहते है। खिलाडी बदलने के लिए हर टीम का कप्तान रेफरी से 1 मिनट के आराम की माग कर सकता है। उस एक मिनट के समय को टाइम आउट कहते है। टाइम आउट मे खिलाडी का बदलना आवश्यक है। टाइम आउट मे सब खिलाडी मैदान से बाहर नही जा सकते। केवल एक खिलाडी बाहर जाता है और उसके बदले मे दूसरा मैदान मे आ जाता है। वह बाहर गए हुए खिलाडी की जगह पर ही खेल सकता है। मैचो मे हर खिलाडी की पीठ पर नम्बर होता है।

दोनो टीमो के 6-6 खिलाडी अपनी-अपनी कोर्ट मे तीन-तीन की दो कतारो मे खडे होते हैं। तीन खिलाडी तो नेट से दस फुट की दूरी पर एक लाइन मे खडे होते है, और बाकी तीन उनसे बीस फुट पीछे एक लाइन मे खडे होते है। पहली पक्ति को हमला करने की रेखा कहते है और दूसरी पक्ति को बचाव की रेखा।
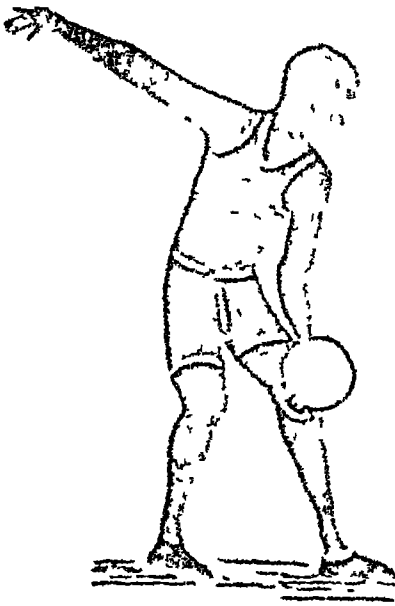
दाहिने कोने का एक खिलाड़ी सर्विस करता है।

जिस टीम को कोर्ट के चुनाव का अधिकार हो, यह बात गतपुतली या सिक्के को उछाल कर तय की जाती है। जो टीम जीतती है, वह कोर्ट चुनती है और दूसरी टीम को पहली सर्विस मिलती है। सर्विस पाने वाली टीम के बचाव रेखा के खिलाड़ियों में से, दाहिने कोने का एक खिलाड़ी, बाएं हाथ में गेंद लेकर उसे दाहिने हाथ की हथेली से मार कर नेट से बिना टकराए नेट के उस पार भेजता है। गेंद के इस तरह फेंके जाने को ही सर्विस कहते हैं। अगर गेंद नेट से टकरा जाए या दूसरी कोर्ट की सीमा के बाहर गिरे, तो सर्विस दूसरी टीम को मिल जाती है। अगर सर्विस की गेंद नेट को पार करने से पहले सर्विस करने वाली टीम के खिलाड़ी से छू जाए, तो भी सर्विस दूसरी टीम को मिल जाती है।

टीमों के कप्तान पहले से ही यह तय कर लेते हैं कि खेल शुरू होने पर कौन खिलाड़ी किस जगह पर खड़ा होगा। हर खिलाड़ी, अपनी सीमा में रह कर, आगे-पीछे, दाए-बाए हट कर, गेंद को इस तरह उछालता है कि या तो गेंद दूसरी कोर्ट में चली जाए या उसकी ही टीम के किसी दूसरे खिलाड़ी को मिल जाए, ताकि वह उसे इस ढंग से नेट के उस पार फेंके कि दूसरी टीम के खिलाड़ी गेंद को लौटा न सके। दूसरी टीम के खिलाड़ी अगर गेंद को न लौटा पाए और गेंद उनके कोर्ट में गिर जाए, तो सर्विस करने वाली टीम एक नम्बर जीत लेती है। लेकिन सर्विस करने वाली टीम अगर गेंद न वापस कर पाए और गेंद उसके कोर्ट में गिर पड़े, तो वह केवल अपनी सर्विस गंवाती है। गेंद को दूसरी ओर लौटाने में तीन खिलाड़ियों से अधिक के हाथ गेंद पर नहीं लगने चाहिए और यह भी जरूरी है कि उनके हाथ बारी-बारी से गेंद पर लगें। टीमों के नम्बर गिनने में सर्विस करने वाली टीम के नम्बर पहले बताए जाते हैं, जैसे 12 10। इसका मतलब हुआ कि सर्विस करने वाली टीम के 12 नम्बर हैं और दूसरी के 10।

जब तक एक टीम की सर्विस लगातार चालू रहती है, तब तक दोनों टीमों के खिलाड़ी अपनी-अपनी जगह पर ही खेलते रहते हैं। लेकिन सर्विस बदलने पर जिस टीम को सर्विस मिलती है, उस टीम के खिलाड़ी बाएं से दाहिने एक-एक जगह आगे खिसक जाते हैं। इसी तरह फिर सर्विस बदलने पर दूसरी टीम के खिलाड़ी अपनी जगह बदलते

है । यह सिलसिला अन्त तक चलता रहता है और खिलाडी को हर जगह से खेलने का अवसर मिल जाता है ।

वालीवाल 3 या 5 भागो में खेला जाता है, जिन्हे सेट कहते है । एक सेट 15 नम्बरो का होता है । जो टीम 15 नम्वर पहले वना ले, वह जीत जाती है । उसके वाद दोनो टीमे कोर्ट वदल लेती है ।

3 सेट के खेलो मे 2 और 5 सेट के खेलो में 3 सेट जीतने वाली टीम पूरे मैच मे विजयी मानी जाती है । अगर किसी सेट मे दोनो टीमो के 14–14 नम्बर आ जाए, तो जो टीम उसके वाद एक साथ दो नम्वर और वना ले, वह जीत जाती है ।

कोर्ट वदलने के वाद अगर एक टीम के खिलाडी अपने खडे होने की तरकीव विल्कुल ही वदल दे, तो भी कोई हर्ज नही होता । तीन सेट के मैच मे अगर दोनो टीमे एक-एक सेट जीते, तो तीसरे सेट मे टीम क आठ नम्वर जीतने क बाद कोई भी टीम रेफरी से कोर्ट वदलने की प्रार्थना कर सकती है ।

बाल के स्वागत के लिए तैयार

अगर गेद एक टीम के किसी खिलाडी को भी न छूकर उसके वाहर गिर जाए, तो उस टीम को एक नम्बर मिल जाता है । लेकिन अगर सर्विस दूसरी टीम की हो, तो उसे सर्विस मिल जाती है। लेकिन अगर उस टीम के किसी खिलाडी से छू जाने के वाद गेद वाहर गिरे, तो दूसरी टीम की सर्विस कायम रहती है और उसे एक नम्वर का लाभ भी हो जाता है ।

खेलते समय गेद कमर के ऊपर कही भी लगे, तो कोई हर्ज नही है। मगर गेद को रुकना नही चाहिए । उसे तुरन्त उछालना चाहिए । सर्विस मे नेट से टकरा कर गेद को रुकना नही चाहिए । ऊपर से नेट को छूता हुआ जाने पर भी सर्विस ठीक नही मानी जाती। रुकने पर तो सर्विस छिन जाती है, पर ऊपर से नेट को छूकर जाने मे दुवारा सर्विस करनी पडती है । सर्विस के वाद गेद लौटाने की कोशिश मे यदि गेद दो वार तक

वालीवाल का खेल

नेट मे टकरा कर एक तरफ रह जाए और तीसरी बार नेट को ऊपर से छूती हुई पार हो जाए, तो भी कोई हर्ज नही है। मगर यदि तीसरी बार भी टकरा कर रह जाए, तो सर्विस या नम्बर का नुकसान होता है। अगर गेंद सर्विस करने वाली टीम के कोर्ट मे तीसरी बार टकरा कर रह जाए, तो केवल सर्विस जाती है और यदि दूसरी टीम के कोर्ट मे रह जाए, तो वह एक नम्बर हारती है। किसी खिलाड़ी को तो नेट कभी भी नही छूना चाहिए।

यदि एक टीम के दो खिलाडी एक साथ गेंद को छू दे, तो गेंद को एक ही बार छूना माना जाएगा। अगर दोनो कोर्टो का एक-एक खिलाड़ी गेंद को नेट के ऊपर एक साथ छू दे, तो उसके बाद किसी भी कोर्ट मे गेंद का आना नए सिरे से माना जाएगा और कोर्ट की टीम को उस गेंद मे दुबारा 3 बार हाथ लगाने का अधिकार मिल जाएगा।

यदि कोई भी टीम किसी नियम को तोड दे, तो दूसरी टीम को नम्बर मिल जाता है। टाइम आउट मे कोई खिलाड़ी नियम के विरुद्ध कोर्ट से निकले, तो भी यही नतीजा होता है।

अगर खेल पाच सेट का हो, तो पहले तीन सेट तक हर सेट के बाद दो मिनट की छुट्टी होती है, जिसमे खिलाडी या दूसरे लोग भी कोर्ट के बाहर-भीतर आ-जा सकते है। उसके बाद चौथे सेट के अन्त मे पाच मिनट की छुट्टी होती है।

वालीवाल के खेल मे कई अग्रेजी शब्दो का प्रयोग होता है। उन्हे ठीक से समझे विना खेल का पूरा आनन्द नही उठाया जा सकता।

(1) डेडबाल गेद की उस हालत को कहते है जब उसके गिरने या छूने से किसी तरफ का नम्बर नही घटता-वढता। यह तब होता है, जब किसी टीम को एक प्वाइट मिल गया हो और नई सर्विस न हुई हो। उस बीच मे खेल रुक जाता है। रुके हुए खेल में गेंद को 'डेडबाल' कहा जाता है।

(2) **टचबाल** उस समय होता है, जव कोई खिलाड़ी गेद को छू भर दे। टचवाल से बहुधा हार जीत मे वदल जाती है। मान लीजिए एक कोर्ट मे से फेकी गेद दूसरी कोर्ट के वाहर गिरने वाली है। अगर वह बाहर गिर जाए, तो गेद फेकने वाली टीम एक प्वाइट गवाएगी। लेकिन अगर सीमा से बाहर गेद गिरने से पहले ही दूसरी टीम का कोई खिलाडी उसे छू भर दे, तो फेकने वाली टीम को एक प्वाइट मिल जाएगा। कोई गेद बिल्कुल ठीक जा रही हो, लेकिन फेकने वाली टीम का ही कोई खिलाडी उसे अनुचित रीति से छू दे, तो एक प्वाइट दूसरी टीम को मिल जाएगा।

(3) **होल्डिग :** अगर गेद खिलाडी के हाथ लगते ही फौरन न उछले और कुछ देर हाथो मे रुक जाए तो उसे 'होल्डिग' कहते हैं। सर्विस करते समय सर्विस करने वाले के अलावा और कोई गेद की होल्डिग करे, तो दूसरी टीम को एक प्वाइट मिल जाता है।

(4) **ब्लाकिग :** दूसरी टीम द्वारा मारे गए गेद को जाल के पास रोकने को ब्लाकिग कहते हैं।

(5) **फाउल :** नियम विरुद्ध खेलने को 'फाउल' कहते है।

(6) मैच खिलाने वाले जज को **रेफरी** कहते है। वह नियमो के अनुसार खेल को जारी रखता या रोकता है। वह बताता है कि किसने कव फाउल किया । यदि कोई खिलाड़ी शरारत करे, तो वह उसको फील्ड से निकाल सकता है। खेल के सिलसिले मे हर बात के फैसले का अधिकार केवल रेफरी को होता है। रेफरी के फैसले को वदलने का अधिकार किसी को नही होता :

भारत मे वहुत-से लोग गेद को एकदम दूसरी कोर्ट मे पहुचा देते है । यह तरीका गलत है। ससार भर मे खेल खेलने का जो ढग है, उसमें गेद को 'पास' देकर नेट के पास खडे खिलाडी के पास पहुचाते है, ताकि वह उसे दूसरी कोर्ट मे इतने जोर से मारे कि वह उस कोर्ट के खिलाड़ियो से उठ न सके। जो टीमे पास नही दे सकती, बहुधा उन्हे हार का ही मुह देखना नसीव होता है।

वालीवाल का खेल गावो और शहरो के लिए समान रूप से आसान है । इसी से इसको लोकप्रियता बढती जा रही है।

(2) ट्रैक ऐण्ड फील्ड

ट्रैक ऐण्ड फील्ड नाम से कई खेलों का एक साथ बोध होता है। इसमे अनेक प्रकार की दौड़, कूद और हर्डलिंग शामिल है। ये खेल जिस रूप मे आजकल खेले जाते है, उस रूप मे इन खेलो की नीव सन् 1894 मे फ्रास के बैरन द का बर्तिन ने डाली थी। उन्होने सोचा था कि इन खेलो के बहाने खिलाडी, विद्वान, और राज्य के अधिकारी एक-दूसरे से मिल-जुल सकेंगे। पर 'ट्रैक ऐण्ड फील्ड' के खेलों का चलन भारत मे कुछ ही समय से हुआ है। गवर्नमेंट कालेज लाहौर के प्रिंसिपल श्री एच० सी० बक ने भारत में सबसे पहले इन खेलो को शुरू किया था। इसमे पटियाला के राजा भूपेन्द्र सिंह और दौराबजी ताता ने बडी मदद की थी। ट्रैक ऐण्ड फील्ड के कुछ खेलो का नीचे वर्णन किया जाता है।

(1) छोटी दौड

100 मीटर, 200 मीटर और 400 मीटर की दौडे छोटी दौड मानी जाती है। यूरोप और अमरीका के खिलाडियो में कई अच्छे दौडने वाले है, जिनके दौडने मे एक खास कला होती है। भारतीय दौडने वालो मे अभी इस कला की कमी है। छोटी दौडे लाइने खीच कर उनके बीच मे दौडी जाती है। दो लाइनो के बीच मे एक खिलाडी दौडता है।

भारत मे अब तक सबसे तेज दौडने वाले ने 10.4 सेकड मे 100 मीटर की दौड पूरी की है। पर ससार मे यह दौड 10 1 सेकड मे पूरी की जा चुकी है। पिण्टो, वी० के० राय और मिल्खा सिंह भारत मे सबसे तेज दौडने वाले माने जाते है।

400 मीटर की दौड छोटी दौडो मे सबसे कठिन मानी जाती है क्योकि इसमे काफी दूर तक दम साधना पडता है। अमरीका के ओटिस डेविस और जर्मनी के श्री काफमान ने 400 मीटर की दौड सबसे कम समय मे 44 9 सेकड मे पूरी की थी।

ओलिम्पिक खेलो में 100 मीटर की दौड

(2) मझोली दौड़

400 मीटर से 1500 मीटर तक की दौड मझोली दौड कही जाती है। इसमे खिलाडी पर दो लाइनो के बीच दौडने की पावन्दी नही होती। कई लोग एक साथ दौड सकते है। भारत मे 400 मीटर की दौड मे मिल्खा सिह का और 1500 मीटर की दौड मे महेन्द्र सिह का रिकार्ड है। ससार के अच्छे दौडने वालो मे विट्फील्ड, मेरन्सा, बैनिस्टर, लैडी आदि के नाम लिए जाते है।

थोडी दूरी की दौड
शुरु करते समय

दोडने के लिए तैयार
चार्ली पैडाक
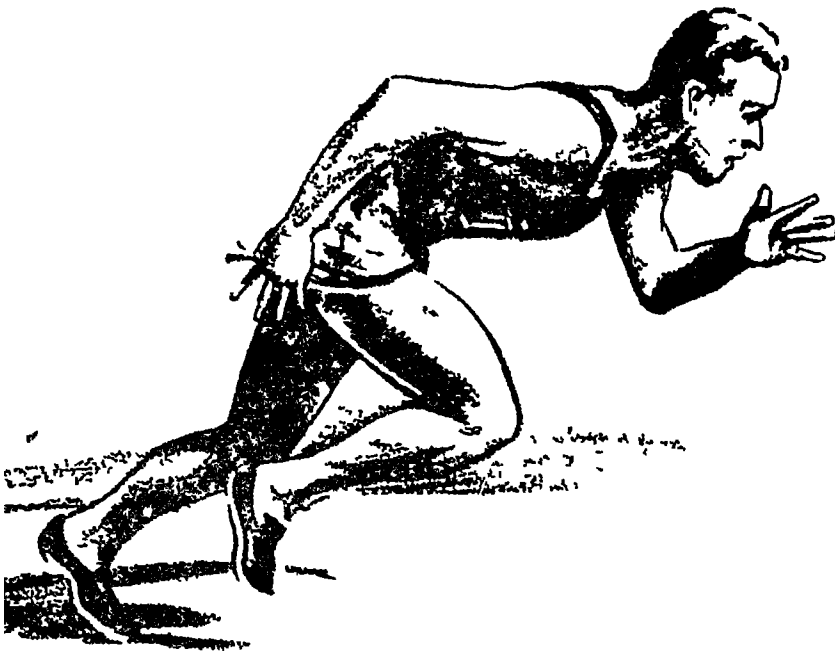
(3) लम्बी दौड

लम्बी दौड वह है, जिसमे 5 हजार से 10 हजार मीटर की दौड होती है। इन दौडो मे दम साधने के अलावा अधिक तेजी की भी जरूरत पडती है, क्योकि सबसे कम समय मे पूरा फासला तय करने वाला ही जीतता है। यही नही, कम-से-कम समय मे फासला तय करने का पिछला रिकार्ड तोडने वाले खिलाडी का दुनिया मे नाम भी होता है।

'मैरेथन' नाम की खास लम्बी दौड है, जो 26 मील की होती है। 'मैरेथन' यूनान का एक सिपाही था, जो लडाई की खबर अपनी चौकी तक पहुचाने के लिए 26 मील तक बहुत तेज दौडा था और चौकी पर पहुच कर खबर देने के बाद मर गया था। उसी वीर सिपाही की याद मे यह दौड शुरू की गई है।

'मैरेथन' दौड को छोड कर दूसरी सब लम्बी दौडे 400 मीटर गोलाई वाले मार्ग के कई चक्कर लगा कर पूरी की जाती है।
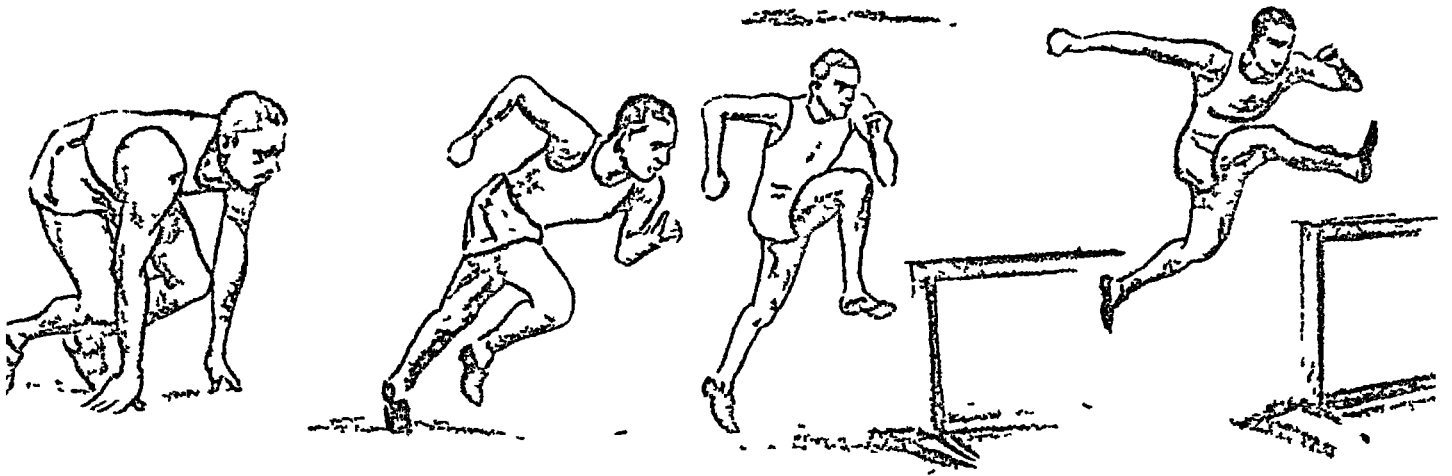
हर्डल दौड

हर्डल (रुकावट)

हर्डल शब्द अग्रेजी का है। इसका अर्थ 'रुकावट' है। यह भी एक प्रकार की दौड है, जिसमे दौडने वाले को मार्ग मे कई रुकावटे छलागते हुए दौड जारी रखनी पडती है। हर्डल कई किस्म के होते है। पुरुषो के लिए 110 और 440 मीटर की तथा स्त्रियो के लिए 80 मीटर की हर्डल दौडे होती है।

हर्डल दौडे 110 मीटर से 880 मीटर तक की होती है। 80 मीटर की दौड केवल स्त्रियो और बच्चो के लिए होती है। हर्डल दौडो मे रास्ते मे कई हर्डल या रुकावटे होती है। हर्डल लकडी या लोहे के बने होते है और 4 फुट चौडे तथा साढे तीन फुट ऊचे होते है। इनके पीछे 8 पौड का वजन रखा होता है। हर्डल को कतरा कर या गिरा कर निकलने का नियम नही है।

भारत मे श्री चन्द्र, जगमोहन सिह और जगदेव सिह हर्डल दौड के सबसे अच्छे खिलाडी माने जाते है।

रिलेज

इन खेलो मे केवल चार की 100 और 400 मीटर की दो दौडे होती है। चार आदमियो की एक टोली होती है। चारो खिलाडी एक के बाद एक दौडते है। एक

हर्डल दौड समाप्ति पर

फुट का एक डडा हर खिलाडी को एक के बाद एक रास्ते मे पकडाया जाता है। बिना डंडा लिए कोई नही दौड सकता। डडा बदलने की कुशलता और तेजी पर ही टीम की जीत निर्भर है। इस खेल मे बहुत अभ्यास की आवश्यकता पडती है।

कूद

(1) लम्बी कूद

दौड़ और हर्डल की तरह कूद के खेल भी कई तरह के होते है। चार तरह की कूदें ससार भर में प्रचलित है।

ससार में सबसे लम्बी छलाग का रिकार्ड अमरीका के आर० बारटन का है, जिसने सन् 1962 में 27 फुट 1½ इच लम्बाई की छलाग लगाई थी।

(2) ऊंची कूद

अभी कुछ समय पहले तक ऊची कूद का खेल दो खम्भो में बराबर ऊचाई पर डोरी बाध कर खेला जाता था। लेकिन आजकल लकडी के खम्भो और सूत की डोरी के बजाय अलमीनियम के सामान का इस्तेमाल होने लगा है। कूद कर खिलाडी के गिरने की जगह पर 13 फुट लम्बा और 13 फुट चौडा अखाडा-सा खोद दिया जाता है, जिसमें भुरभुरी मिट्टी या महीन बुरादा भर दिया जाता है।

चार्ल्स डूम्स और यूरी स्टेपनोव ऊची कूद में ससार के अच्छे खिलाडी माने जाते है। दोनों 7 फुट से अधिक ऊचाई कूद कर पार कर चुके है। ससार में सबसे ऊची कूद का रिकार्ड रूस के वी ब्रुमेल का है, जिसने 7 फुट 4 इच की ऊची छलाग लगाई है।

(3) हाप, स्टेप, ऐण्ड जम्प

यह खेल लम्बी कूद से बहुत हद तक मिलता-जुलता है। फर्क सिर्फ इतना है कि इस कूद मे पहले एक कदम पर उछला जाता है। इसके बाद एक कदम लेकर तब छलाग मारी जाती है। कूदते समय जिस तख्ते पर पैर रखने होते है, उससे 30 फुट के फासले पर अखाड़े जैसा गड्ढा होता है, जिसमे खिलाडी छलाग लगाता है। भारत मे महेन्द्र सिह

इस कूद में 50 फुट 3 इंच की लम्बाई तक कूद चुके है। दुनिया मे पोलैण्ड के जे० श्मिस्त का इस खेल मे 55 फुट $10\frac{1}{2}$ इच का रिकार्ड है।

(4) पोल वाल्ट

यह एक प्रकार की ऊची कूद है, जिसमे एक वास की मदद ली जाती है। कूदने वाला वास लिए हुए दौडता है और अखाडे के पास रखे वक्से मे वास टिका कर उसी के सहारे अधिक-से-अधिक ऊचाई तक उठता हुआ वास को अलग फेक कर कूद जाता है। निश्चित ऊचाई पर एक डडा बधा होता है। उसके इसी पार वास छोड कर खिलाडी उस पार कूद कर अखाडे मे गिरता है।

यह कूद देखने मे बडी मनमोहक लगती है। भारत मे अभी इसका अधिक प्रचार नही है। इसीलिए भारत मे इसके अच्छे खिलाडी भी नही है। फिनलैण्ड के पी० निकुला 16 फुट $2\frac{1}{2}$ इच की ऊचाई कूद कर दुनिया मे नाम कमा चुके है।

फेंक

(1) गोला फेंकना

यह खेल आदमी की दूर तक फेकने की शक्ति और योग्यता की जाच के लिए खेला जाता है।

पुरुषो को 16 पौड का गोला और स्त्रियो को 8 पौड 13 औस का गोला फेकना पडता है। 7 फुट व्यास के एक घेरे के अन्दर खडे होकर या घेरे के भीतर दौड कर गोले को फेकना पडता है।

भारत मे अभी तक डी० ईरानी सबसे अधिक दूरी तक गोला फेकने वाले माने जाते है। ससार मे अमरीका के डी० लाग अन्य सब खिलाड़ियो को पछाड़ चुके है। उनका गोला 65 फुट $10\frac{1}{2}$ इच दूर गिरा था।

(2) चक्का फेंकना

इस खेल मे गोले के बजाय लकडी या लोहे का बना चक्का फेका जाता है, जिसका वजन 4 पौंड 1 औंस होता है। इसको 8 फुट व्यास के एक घेरे मे रह कर फेंकना होता है। स्त्रियो के लिए चक्का छोटा और हल्का होता है।

यह खेल सबसे पहले यूनान मे आरम्भ हुआ था, जिसे बाद में सभी देशो ने अपना लिया। भारत में प्रद्युम्न सिंह और इंद्र मोहिनी इस खेल के चैम्पियन हैं।

(3) भाला फेंकना

इस खेल में यह देखा जाता है कि कौन कितनी दूर भाला फेक सकता है। पुरुषो को साढे 8 फुट लम्बा भाला फेंकना होता है, जिसका वजन 1 पौंड 12 औंस होता है। स्त्रियो का भाला छोटा और हल्का होता है। फेंकने वाला कुछ दूर भाग कर भाला फेंकता है। भारत मे अवतार सिंह पहले पुरुष है, जो 200 मीटर से ऊपर की दूरी पर भाला फेंकने में सफल हुए है। भारतीय स्त्रियो ने इस खेल मे भाग लेना कुछ ही समय से शुरू किया है और भारत मे ई० जे० डेवनपोर्ट का 145 फुट 5 इच की दूरी पर भाला फेंकने का रिकार्ड है।

ससार मे इस समय 12 पुरुष ऐसे है, जो 260 फुट से भी दूर तक भाला फेक चुके है। इटली के मो० लीवोर का 284 फुट 7 इच की दूरी पर भाला फेकने का रिकार्ड है।

(4) लगर फेंकना

यह बडा प्राचीन खेल है। प्राचीन काल मे पानी के जहाज लगर डाल कर रोके जाते थे। अब भी बडी-बडी नावो को लगर डाल कर ही रोकते है। लगर इतना भारी होता है कि तेज लहरो या नदी के बहाव के मुकाबले मे भी जहाज या नाव को एक जगह रोके रहे। लगर फेंकने का अभ्यास करने के लिए ही यह खेल शुरू किया गया था।

आजकल लगर फेंकने के खेल मे लोहे की 4 फुट लम्बी जजीर मे बधे एक लोहे के गोले का इस्तेमाल होता हे। गोले का वजन 16 पौंड होता है। जजीर को पकड कर गोले को नचाते है और फिर उसे दूर फेकने की कोशिश करते है। फेंकने वाले को 8 फुट व्यास के घेरे के भीतर ही रह कर लगर को फेकना पडता है। भारत मे देवीदयाल 166 फुट 10 इच की दूरी पर लगर फेक चुके है। अमरीका के खिलाड़ी एच० कान्नली 230 फुट 9 इच की दूरी तक लगर फेक चुके है।

(1)

हिन्दी

पंच परमेश्वर

जुम्मन शेख और अलगू चौधरी मे गाढी मित्रता थी, साझे मे खेती होती थी। कुछ लेन-देन मे भी साझा था। एक को दूसरे पर अटल विश्वास था। जुम्मन जब हज करने गए थे, तब अपना घर अलगू को सौप गए थे, और अलगू जब कभी बाहर जाते, तो जुम्मन पर अपना घर छोड देते थे। उनमे न खान-पान का व्यवहार था, न धर्म का नाता, केवल विचार मिलते थे। मित्रता का मूल मन्त्र भी यही है।

इस मित्रता का जन्म उसी समय हुआ, जब दोनो मित्र बालक ही थे, और जुम्मन के पूज्य पिता, जुमराती, उन्हे शिक्षा प्रदान करते थे। अलगू ने गुरुजी की बहुत सेवा की, खूब रकाबिया माजी, खूब प्याले धोए। उनका हुक्का एक क्षण के लिए भी विश्राम न लेने पाता था, क्योकि प्रत्येक चिलम अलगू को आध घण्टे तक किताबो से अलग कर देती थी। अलगू के पिता पुराने विचार के मनुष्य थे। उन्हे शिक्षा की अपेक्षा गुरु की सेवा-सुश्रूषा पर अधिक विश्वास था। वह कहते थे कि विद्या पढने से नही आती, जो कुछ होता है, गुरु के आशीर्वाद से। बस, गुरुजी की कृपादृष्टि चाहिए। अतएव यदि अलगू पर जुमराती शेख के आशीर्वाद अथवा सत्सग का कुछ फल न हुआ, तो यह मान कर सन्तोष कर लूगा कि अलगू के विद्योपार्जन मे मैंने यथाशक्ति कोई बात उठा नही रखी। विद्या उसके भाग्य ही मे नही थी, तो कैसे आती?

मगर जुमराती शेख स्वय आशीर्वाद के कायल न थे। उन्हे अपने सोटे पर अधिक भरोसा था, और उसी सोटे के प्रताप से आज आसपास के गावो मे जुम्मन की पूजा होती थी। उनके लिखे हुए रेहननामे या बैनामे पर कचहरी का मुहर्रिर भी कलम न उठा

सकता था। हलके का डाकिया, कास्टेबिल और तहसील का चपरासी—सब उनकी कृपा की आकाक्षा रखते थे। अतएव अलगू का मान उसके धन का कारण था, तो जुम्मन शेख अपनी अनमोल विद्या से सबके आदर पात्र बने थे।

: 2 :

जुम्मन शेख की एक बूढी खाला (मौसी) थी। उसके पास कुछ थोडी-सी मिलकियत थी, परन्तु उसके निकट सम्बन्धियो मे कोई न था। जुम्मन ने लम्बे-चौडे वादे करके वह मिल्कियत अपने नाम लिखवा ली थी। जब तक दानपत्र की रजिस्ट्री न हुई थी, तब तक खालाजान का खूब आदर-सत्कार किया गया। उन्हे खूब स्वादिष्ट पदार्थ खिलाए गए। हलवे-पुलाव की वर्षा-सी की गई, पर रजिस्ट्री की मुहर ने इन खातिरदारियो पर भी मानो मुहर लगा दी। जुम्मन की पत्नी—करीमन—रोटियो के साथ कडवी बातो के कुछ तेज-तीखे सालन भी देने लगी। जुम्मन शेख भी निठुर हो गए। अब बेचारी खालाजान को प्राय नित्य ही ऐसी बातें सुननी पडती थी—

बुढिया न जाने कब तक जिएगी। दो-तीन बीघे ऊसर क्या दे दिया, मानो मोल ले लिया। बघारी दाल के बिना रोटिया नही उतरती। जितना रुपया इसके पेट में झोक चुके, उतने से तो अब तक गाव मोल ले लेते।

कुछ दिन तक खालाजान ने सुना और सहा, पर जब न सहा गया, तब जुम्मन से शिकायत की। जुम्मन ने स्थानीय कर्मचारी—गृहस्वामिनी—के प्रबध मे दखल देना उचित न समझा। कुछ दिन तक और यो ही रो-धोकर काम चलता रहा। अन्त में एक दिन खाला ने जुम्मन से कहा—बेटा, तुम्हारे साथ मेरा निवाह न होगा। तुम मुझे रुपये दे दिया करो, मै आप पका-खा लूंगी।

जुम्मन ने धृष्टता के साथ उत्तर दिया—रुपये क्या यहा फलते है?—खाला ने नम्रता से कहा—मुझे कुछ रूखा-सूखा चाहिए भी कि नही।—जुम्मन ने गम्भीर स्वर मे जवाब दिया—तो कोई यह थोडे ही समझा था कि तुम मौत से लड़ कर आई हो!

खाला ने जुम्मन से शिकायत की।

खाला विगड गई, उसने पचायत करने की धमकी दी। जुम्मन हँसे, जिस तरह कोई शिकारी हिरन को जाल की तरफ जाते देख कर मन-ही-मन हँसता है। वह बोले--हा, जरूर पचायत करो। फैसला हो जाए। मुझे भी यह रात-दिन की खटपट पसन्द नही।

पचायत मे किसकी जीत होगी, इस विषय मे जुम्मन को कुछ भी सन्देह न था। ग्रासपास के गावो मे ऐसा कौन था, जो उसके ग्रनुभवो का ऋणी न हो, ऐसा कौन था, जो उसको शत्रु वनाने का साहस कर सके ? किसमे इतना वल था, जो उसका सामना कर सके ? ग्रासमान के फरिश्ते तो पचायत करने ग्रावेगे नही।

: 3 :

इसके वाद कई दिन तक बूढी खाला हाथ मे एक लकडी लिए ग्रासपास के गावो मे दौडती रही। कमर झुक कर कमान हो गई थी। एक-एक पग चलना दूभर था, मगर वात ग्रा पडी थी। उसका निर्णय करना जरूरी था।

विरला ही कोई भला ग्रादमी होगा, जिसके सामने बुढिया ने दुख के ग्रासू न वहाए हो। किसी ने तो यो ही ऊपरी मन से हू-हा करके टाल दिया, ग्रौर किसी ने इस ग्रन्याय पर जमाने को गालिया दी, कहा--कब्र मे पाव लटके हुए है, ग्राज मरे, कल दूसरा दिन, पर हवस नही मानती। ग्रब तुम्हे क्या चाहिए ? रोटी खाग्रो ग्रौर ग्रल्लाह का नाम लो। तुम्हे ग्रव खेतीबारी से क्या काम ? कुछ ऐसे सज्जन भी थे, जिन्हे हास्य रस के रसास्वादन का ग्रच्छा ग्रवसर मिला। झुकी हुई कमर, पोपला मुह, सन के-से वाल, इतनी सामग्रिया एकत्र हो, तव हँसी क्यो न ग्रावे ? ऐसे न्यायप्रिय, दयालु, दीनवत्सल पुरुष वहुत कम थे, जिन्होने उस ग्रवला के दुखडे को गौर से सुना हो ग्रौर उसको सात्वना दी हो। चारो ग्रोर से घूम-घाम कर वेचारी ग्रलगू चौधरी के पास ग्राई, लाठी पटक दी ग्रौर दम लेकर वोली--वेटा, तुम दम भर के लिए मेरी पचायत मे चले ग्राना।

अलगू—मुझे बुला कर क्या करोगी ? कई गाव के आदमी तो आवेगे ही।

खाला—अपनी विपत तो सवके आगे रो आई। अव आने-न आने का अख्तियार उनको है।

अलगू—यो आने को आ जाऊगा, मगर पचायत मे मुह न खोलूगा।

खाला—क्यो वेटा ?

अलगू—अव इसका क्या जवाव दू ? अपनी खुशी । जुम्मन मेरा पुराना मित्र है । उससे विगाड नही कर सकता।

खाला—क्या विगाड के डर से ईमान की वात न कहोगे ?

हमारे सोए हुए धर्म ज्ञान की सारी सम्पत्ति लुट जाए, तो उसे खवर नही होती, परन्तु ललकार सुन कर वह सचेत हो जाता है। फिर उसे कोई नही जीत सकता। अलगू इस सवाल का कोई उत्तर न दे सका, पर उसके हृदय मे ये शब्द गूज रहे थे—

"क्या विगाड के डर से ईमान की वात न कहोगे ?"

: 4 :

सध्या समय एक पेड के नीचे पचायत बैठी। शेख जुम्मन ने पहले से ही फर्श विछा रखा था। उन्होने पान, इलायची, हुक्के, तम्बाकू, आदि का भी प्रवध किया था। हा, वह स्वय अलवत्ता अलगू चौधरी के साथ जरा दूर पर बैठे हुए थे। जब पचायत मे कोई आ जाता था, तव दवे हुए सलाम से उसका स्वागत करते थे। जव सूर्य अस्त हो गया और चिडियो की कलरवयुक्त पचायत पेडो पर बैठी, तव यहा भी पचायत शुरू हुई। फर्श की एक-एक अगुल जमीन भर गई, पर अधिकाश दर्शक ही थे। निमन्त्रित महाशयो मे से केवल वे ही लोग पधारे थे, जिन्हे जुम्मन से अपनी कुछ कसर निकालनी थी। एक कोने मे आग सुलग रही थी। नाई तावडतोड चिलम भर रहा था। यह निर्णय करना असम्भव था कि सुलगते हुए उपलो से अधिक धुआ

संध्या समय पंचायत बैठी।

निकलता था या चिलम के दमो से। लडके इधर-उधर दौड़ रहे थे, कोई आपस मे गाली-गलोज करते और कोई रोते थे। चारो तरफ कोलाहल मच रहा था। गाव के कुत्ते इस जमाव को भोज समझ कर झुड-के-झुड जमा हो गए थे।

पच लोग बैठ गए, तो बूढी खाला ने उनसे विनती की—

पचो, आज तीन साल हुए, मैंने अपनी सारी जायदाद अपने भानजे जुम्मन के नाम लिख दी थी। इसे आप लोग जानते ही होगे। जुम्मन ने मुझे ताहयात रोटी-कपडा देना कबूल किया। साल भर तो मैंने इसके साथ रो-धोकर काटा। पर अब रात-दिन का रोना नही सहा जाता। मुझे न पेट की रोटी मिलती है और न तन का कपडा। बेकस बेवा हू। कचहरी-दरबार नही कर सकती। तुम्हारे सिवा और किससे अपना दुख सुनाऊ? तुम लोग जो राह निकाल दो, उसी राह पर चलू। अगर मुझमे कोई ऐब देखो, तो मेरे मुह पर थप्पड मारो। जुम्मन मे बुराई देखो, तो उसे समझाओ, क्यो एक बेकस की आह लेता है। मै पचो का हुक्म सिर-माथे पर चढाऊगी।

रामधन मिश्र, जिनके कई असामियो को जुम्मन ने अपने गाव मे बसा लिया था, बोले—जुम्मन मिया, किसे पच बदते हो? अभी से इसका निबटारा कर लो। फिर जो कुछ पच कहेगे, वही मानना पडेगा।

जुम्मन को इस समय सदस्यो मे विशेषकर वे ही लोग दीख पडे, जिनसे किसी-न-किसी कारण उनका वैमनस्य था। जुम्मन बोले—पच का हुक्म अल्लाह का हुक्म है। खालाजान जिसे चाहे, उसे बदे। मुझे कोई उज्र नही।

खाला ने चिल्ला कर कहा—अरे अल्लाह के बन्दे! पचो का नाम क्यो नही बता देता? कुछ मुझे भी तो मालूम हो!

जुम्मन ने क्रोध से कहा—अब इस वक्त मेरा मुह न खुलाओ। तुम्हारी बन पडी है, जिसे चाहो, पच बदो।

खालाजान जुम्मन के आक्षेप को समझ गई, वह बोली—बेटा, खुद डरो! पच न किसी के दोस्त होते है, न किसी के दुश्मन, कैसी बात कहते हो! और तुम्हारा किसी पर विश्वास न हो, तो जाने दो, अलगू चौधरी को तो मानते हो? लो, मै उन्ही को सरपच बदती हू।

जुम्मन शेख आनन्द से फूल उठे, किन्तु भावो को छिपा कर बोले—अलगू चौधरी ही सही, मेरे लिए जैसे रामधन वैसे अलगू।

अलगू इस झमेले मे फसना नही चाहते थे। वे कन्नी काटने लगे, बोले—खाला, तुम जानती हो कि मेरी जुम्मन से गाढी दोस्ती है।

खाला ने गम्भीर स्वर से कहा—बेटा, दोस्ती के लिए कोई अपना ईमान नही बेचता। पच के दिल मे खुदा वसता है। पचो के मुह से जो वात निकलती है, वह खुदा की तरफ से निकलती है।

अलगू चौधरी सरपच हुए। रामधन मिश्र और जुम्मन के दूसरे विरोधियो ने वुढिया को मन मे वहुत कोसा!

अलगू चौधरी बोले—शेख जुम्मन! हम और तुम पुराने दोस्त है! जव काम पडा, तुमने हमारी मदद की और हमसे भी जो कुछ वन पडा, तुम्हारी सेवा करते रहे है, मगर इस समय तुम और वूढी खाला, दोनो हमारी निगाह मे बराबर हो। तुमको पचो से जो कुछ अर्ज करनी हो, करो।

जुम्मन को पूरा विश्वास था कि अव वाजी मेरी है। अलगू यह सब दिखावे की वाते कर रहा है। अतएव शान्त चित्त होकर बोले—पचो! तीन साल हुए, खालाजान ने अपनी जायदाद मेरे नाम हिव्वा कर दी थी। मैने उन्हे ताहयात खाना-कपडा देना कवूल कर लिया था। खुदा गवाह है, आज तक मैने खालाजान को कोई तकलीफ नही दी। मै उन्हे अपनी मा के समान समझता हू। उनकी खिदमत करना मेरा फर्ज है, मगर औरतो मे जरा अनवन है, इसमे मेरा क्या वस है? खालाजान मुझसे माहवार खर्च अलग मागती है। जायदाद कितनी है, यह पचो से छिपी नही है। उससे इतना मुनाफा नही होता कि माहवार खर्च दे सकू। इसके अलावा हिव्वानामे मे माहवार खर्च का कोई जिक्र नही। नही तो मै भूल कर भी इस झमेले मे न पडता। वस, मुझे यही कहना है। आइन्दा पचो को अख्तियार है, जो फैसला चाहे, करे!

अलगू चौधरी को हमेशा कचहरी से काम पडता था। अतएव वह पूरा कानूनी आदमी था। उसने जुम्मन से जिरह शुरू की। एक-एक प्रश्न जुम्मन के हृदय पर हथौडे की चोट की तरह पडता था। रामधन मिश्र इन प्रश्नो पर मुग्ध हुए जाते थे। जुम्मन चकित थे कि अलगू को हो क्या गया है! अभी यह अलगू मेरे साथ वैठा हुआ कैसी-कैसी वाते कर रहा था। इतनी देर मे ऐसा कायापलट

हो गया कि मेरी जड खोदने पर तुला हुआ है। न मालूम कब की कसर यह निकाल रहा है? क्या इतने दिनो की दोस्ती कुछ काम न आवेगी?

जुम्मन शेख तो इसी सकल्प-विकल्प मे पडे हुए थे कि इतने मे अलगू ने फैसला सुनाया—

जुम्मन शेख! पचो ने इस मामले पर विचार किया। उन्हे यह नीतिसगत मालूम होता है कि खालाजान को माहवार खर्च दिया जाए। हमारा विचार है कि खाला की जायदाद से इतना मुनाफा अवश्य होता है कि माहवार खर्च दिया जा सके। बस, यही हमारा फैसला है। अगर जुम्मन को खर्च देना मजूर न हो, तो हिब्बानामा रद्द समझा जाए।

: 5 :

यह फैसला सुनते ही जुम्मन सन्नाटे मे आ गए। जो अपना मित्र हो, वह शत्रु का व्यवहार करे और गले पर छुरी फेरे, इसे समय के फेर के सिवा और क्या कहे? जिस पर पूरा भरोसा था, उसने समय पडने पर धोखा दिया। ऐसे ही अवसरो पर झूठे-सच्चे मित्रो की परीक्षा की जाती है। यही कलियुग की दोस्ती है। अगर लोग ऐसे ही कपटी, धोखेबाज न होते, तो देश मे आपत्तियो का प्रकोप क्यो होता। यह हैजा, प्लेग, आदि व्याधिया दुष्कर्मो के ही दण्ड है।

मगर रामधन मिश्र और अन्य पच अलगू चौधरी की इस नीतिपरायणता की प्रशसा जी खोलकर कर रहे थे—इसका नाम पचायत है! दूध का दूध और पानी का पानी कर दिया। दोस्ती दोस्ती की जगह है, किन्तु धर्म का पालन मुख्य है। ऐसे ही सत्यवादियो के बल पृथ्वी ठहरी है, नही तो यह कब की रसातल को चली जाती।

इस फैसले ने अलगू और जुम्मन की दोस्ती की जड हिला दी। अब वे साथ-साथ बाते करते नही दिखाई देते। इतना पुराना मित्रता रूपी वृक्ष सत्य का एक झोका भी न सह सका। सचमुच वह बालू की ही जमीन पर खडा था।

उनमे अब शिष्टाचार का अधिक व्यवहार होने लगा। एक-दूसरे की आवभगत ज्यादा करने लगे। वे मिलते-जुलते थे, मगर उसी तरह, जैसे तलवार से ढाल मिलती है।

बैल पछाही जाति के सुन्दर, बडे-बडे सींगों वाले थे ।
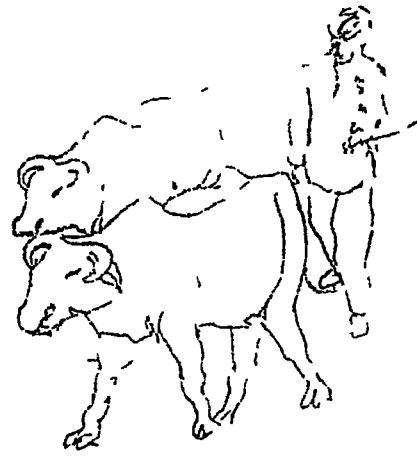
जुम्मन के चित्त मे मित्र की कुटिलता आठो पहर खटका करती थी। उसे हर घडी यही चिन्ता रहती थी कि किसी तरह बदला लेने का अवसर मिले।

: 6 :

अच्छे कामो की सिद्धि मे बडी देर लगती है, पर बुरे कामो की सिद्धि मे यह बात नही होती, जुम्मन को भी बदला लेने का अवसर जल्द ही मिल गया। पिछले साल अलगू चौधरी वटेसर के मेले से बैलो की एक बहुत अच्छी जोडी मोल लाए थे। बैल पछाही जाति के सुन्दर, बडे-बडे सीगो वाले थे। महीनो तक आस-पास के गावो के लोग उनके दर्शन करते रहे। दैवयोग से जुम्मन की पचायत के एक महीने बाद इस जोडी का एक बैल मर गया। जुम्मन ने दोस्तो से कहा—दगाबाजी की सजा है। इन्सान सब्र भले ही कर जाए, पर खुदा नेक-बद देखता है।—अलगू को सदेह हुआ कि जुम्मन ने बैल को विप दिला दिया है। चौधराइन ने भी जुम्मन पर ही इस दुर्घटना का दोपारोपण किया। उसने कहा—जुम्मन ने ही कुछ कर-करा दिया है।—चौधराइन और करीमन मे इस विषय पर एक दिन खूब ही वाद-विवाद हुआ। दोनो देवियो ने शव्दवाहुल्य की नदी वहा दी। व्यग्य, वक्रोक्ति, अन्योक्ति और उपमा आदि अलकारो मे वाते हुई। जुम्मन ने किसी तरह शान्ति स्थापित की। उन्होने अपनी पत्नी को डांट-डपट

चौधराइन और करीमन में खूब वाद-विवाद हुआ ।
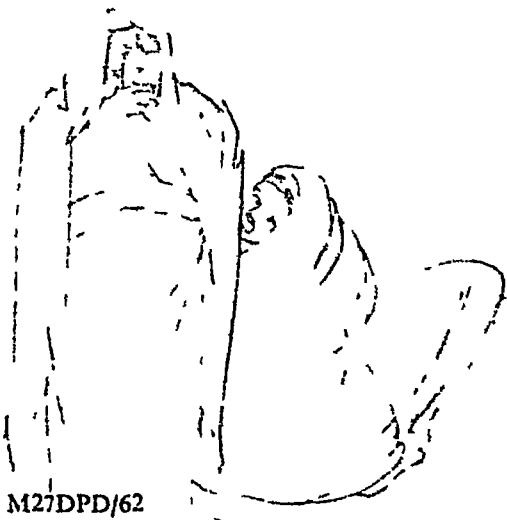
कर समझा दिया। वह उसे उस रणभूमि से हटा भी ले गए। उधर अलगू चौधरी ने समझाने-बुझाने का काम अपने तर्कपूर्ण सोटे से लिया।

अब अकेला बैल किस काम का ? उसका जोड बहुत ढूढा गया, पर न मिला। निदान यह सलाह ठहरी कि इसे बेच डालना चाहिए। गाव मे एक समझू साहु थे, वह इक्का गाडी हांकते थे। गाव से गुड़-घी लाद कर मण्डी ले जाते, मण्डी से तेल-नमक भर लाते और गाव मे बेचते। इस बैल पर उनका मन लहराया। उन्होंने सोचा, यह बैल हाथ लगे, तो दिन भर मे बेखटके तीन खेप हो। आजकल तो एक ही खेप के लाले पड़े रहते हैं। बैल देखा, गाड़ी मे दौड़ाया, बाल-भौरी की पहचान कराई, मोल-तोल किया और उसे लाकर द्वार पर बाध दिया। एक महीने मे दाम चुकाने का वायदा ठहरा। चौधरी को भी गरज थी ही, घाटे की परवाह न की।

समझू साहु ने नया बैल पाया, तो लगे उसे रगेदने। वह दिन मे तीन-तीन, चार-चार खेपे करने लगे। न चारे की फिक्र थी, न पानी की, बस, खेपो से काम था। मण्डी ले गए, वहा कुछ सूखा भूसा सामने डाल दिया। बेचारा जानवर अभी दम भी न लेने पाया था कि फिर जोत दिया। अलगू चौधरी के घर था, तो चैन की वशी बजती थी। बैलराम छठे-छमाहे कभी बहली मे जोते जाते थे। वहा बैलराम का रातिब था साफ पानी, दली हुई अरहर की दाल और भूसे के साथ खली, और यही नही, कभी-कभी घी का स्वाद भी चखने को मिल जाता था। शाम-सवेरे एक आदमी खरहरे करता, पोछता और नहलाता था। वहा वह सुख-चैन, यहा कहा यह आठो पहर की खपन ! महीने भर मे वह पिस-सा गया। इक्के का जुआ देखते ही उसका लहू सूख जाता था। एक-एक पग चलना दूभर था। हड्डिया निकल आई थी, पर था वह पानीदार, मार की बरदाश्त न थी।

एक दिन चौथी खेप मे साहुजी ने दूना बोझा लादा। दिन भर का थका जानवर, पैर न उठते थे। पर साहुजी कोड़े फटकारने लगे। बस, फिर क्या था, बैल कलेजा तोड कर चला, कुछ दूर दौडा और चाहा कि जरा दम ले लू, पर साहुजी को जल्द पहुचने की फिक्र थी, अतएव उन्होने कई कोडे वडी निर्दयता से फटकारे। बैल ने एक बार जोर लगाया, पर अब की बार शक्ति ने जवाब दे दिया। वह धरती पर गिर पडा, और ऐसा गिरा कि फिर न उठा। साहुजी ने बहुत पीटा, टाग पकड कर खीचा, नथो मे लकडी ठूंस दी, पर मृतक भी कही उठ सकता है ? तब साहुजी को कुछ शक हुआ। उन्होंने बैल को गौर से देखा, खोल कर अलग

किया, और सोचने लगे कि गाडी कैसे घर पहुचे। बहुत चीखे-चिल्लाए, पर देहात का रास्ता बच्चो की आख की तरह साझ होते ही बद हो जाता है। कोई नजर न आया—आस-पास कोई गाव भी न था। मारे क्रोध के उन्होने मरे हुए बैल पर और दुर्रे लगाए, और कोसने लगे—अभागे! तुझे मरना ही था, तो घर पहुच कर मरता! ससुरा बीच रास्ते मे ही मर रहा! अब गाडी कौन खीचे?—इस तरह साहुजी खूब जले-भुने। कई बोरे गुड और कई पीपे घी उन्होने बेचे थे, दो-ढाई सौ रुपये कमर मे बधे थे। इसके सिवा गाडी पर कई बोरे नमक के थे, अतएव छोड कर जा भी न सकते थे। लाचार बेचारे गाडी पर ही लेट गए। वही रतजगा करने की ठान ली। चिलम पी, गाया, फिर हुक्का पिया। इस तरह साहुजी आधी रात तक नीद को बहलाते रहे। अपनी जान मे तो वह जागते रहे, पर पौ फटते ही जो नीद टूटी और कमर पर हाथ रखा, तो थैली गायब! घबरा कर इधर-उधर देखा, तो कई कनस्तर तेल भी नदारद। अफसोस मे बेचारे ने सिर पीट लिया और पछाडे खाने लगे। प्रात काल रोते-बिलखते घर पहुचे। सहुआइन ने जब यह बुरी खबर सुनी, तब पहले रोई, फिर अलगू चौधरी को गालिया देने लगी—निगोडे ने ऐसा कुलच्छना बैल दिया कि जनम भर की कमाई लुट गई।

इस घटना को हुए कई महीने बीत गए। अलगू जब अपने बैल के दाम मागते, तब साहु और सहुआइन, दोनो ही झल्लाए हुए कुत्तो की तरह चढ बैठते और अड-बड बकने लगते—वाह! यहा तो सारे जन्म की कमाई लुट गई। सत्यानाश हो गया, इन्हे दामो की पडी है। मुर्दा बैल दिया था, उस पर दाम मागने चले है। आखो मे धूल झोक दी, सत्यानाशी बैल गले बाध दिया, हमे निरा पोगा ही समझ लिया? हम भी बनिया के बच्चे है, ऐसे बुद्धू कही और मिलेगे, पहले जाकर किसी गड्ढे मे मुह धो आओ, तब दाम लेना। न जी मानता हो, तो हमारा बैल खोल ले जाओ। महीना भर के बदले दो महीना जोत लो। और क्या लोगे?

चौधरी के अशुभचिन्तको की कमी न थी। ऐसे अवसरो पर वे भी एकत्र हो जाते और साहुजी के बर्राने की पुष्टि करते। परन्तु डेढ सौ रुपये से इस तरह हाथ धो लेना आसान न था। एक बार वह भी गर्म पडे। साहुजी बिगड़ कर लाठी ढूढने घर चले गए। अब सहुआइन ने मैदान लिया। प्रश्नोत्तर होते-होते हाथापाई की नौबत आ पहुची। सहुआइन ने घर मे घुस कर किवाड बद कर लिए। शोरगुल सुन कर गाव के भलेमानस जमा हो गए। उन्होने दोनो को समझाया। साहूजी को

दिलासा देकर घर से निकाला । वे परामर्श देने लगे कि इस तरह से काम न चलेगा। पचायत कर लो । जो कुछ तय हो जाए, उसे स्वीकार कर लो । साहुजी राजी हो गए । अलगू ने भी हामी भर ली ।

: 7 :

पचायत की तैयारिया होने लगी। दोनो पक्षो ने अपने-अपने दल वनाने शुरू किए। इसके वाद तीसरे दिन उसी वृक्ष के नीचे पचायत वैठी। वही सध्या का समय था । खेतो मे कौए पचायत कर रहे थे। विवादग्रस्त विषय यह था कि मटर की फलियो पर उनका कोई स्वत्व है या नही, और जव तक यह प्रश्न हल न हो जाए, तव तक वे रखवाले की पुकार पर अपनी अप्रसन्नता प्रकट करना आवश्यक समझते थे। पेड की डालियो पर बैठी शुकमण्डली मे यह प्रश्न छिडा हुआ था कि मनुष्यो को उन्हे वेमुरौव्वत कहने का क्या अधिकार है, जव उन्हे स्वय अपने मित्रो से दगा करने मे भी सकोच नही होता । पचायत बैठ गई, तो रामधन मिश्र ने कहा—अव देरी क्या है? पचो का चुनाव हो जाना चाहिए। वोलो चौधरी, किस-किस को पच वदते हो?

अलगू ने दीन भाव से कहा—समझू साहु ही चुन ले।

समझू खडे हुए और कडक कर वोले—मेरी ओर से जुम्मन शेख ।

जुम्मन का नाम सुनते ही अलगू चौधरी का कलेजा धक्-धक् करने लगा, मानो किसी ने अचानक थप्पड मार दिया हो ।

रामधन अलगू के मित्र थे। वह वात को ताड गए, पूछा—क्यो चौधरी, तुम्हे कोई उज्र तो नही ?

चौधरी ने निराश होकर कहा—नही, मुझे क्या उज्र होगा ?

अपने उत्तरदायित्व का ज्ञान वहुधा हमारे सकुचित व्यवहारो का सुधारक होता है। जव हम राह भूल कर भटकने लगते है, तव यही ज्ञान हमारा विश्वसनीय पथ-प्रदर्शक वन जाता है।

पत्र सम्पादक अपनी शान्त कुटी मे बैठा हुआ कितनी धृष्टता और स्वतन्त्रता के साथ अपनी प्रवल लेखनी से मन्त्रिमण्डल पर आक्रमण करता है, परन्तु ऐसे अवसर आते है, जव वह स्वय मन्त्रिमण्डल मे सम्मिलित होता है। मण्डल के भवन मे पग धरते ही उसकी

लेखनी कितनी मर्मज्ञ, कितनी विचारशील, कितनी न्यायपरायण हो जाती है, इसका कारण उत्तरदायित्व का ज्ञान है। नवयुवक युवावस्था मे कितना उद्दण्ड रहता है। माता-पिता उसकी ओर से कितने चिन्तित रहते है। वे उसे कुल-कलक समझते हैं, परन्तु थोडे ही समय मे परिवार का बोझ सिर पर पडते ही वह अव्यवस्थित चित्त, उन्मत्त युवक कितना धैर्यशील, कैसा शान्तचित्त हो जाता है, यह भी उत्तरदायित्व के ज्ञान का फल है।

जुम्मन शेख के मन मे भी सरपच का उच्च स्थान ग्रहण करते ही अपनी जिम्मेदारी का भाव पैदा हुआ। उसने सोचा, मै इस वक्त न्याय और धर्म के सर्वोच्च आसन पर बैठा हू। मेरे मुह से इस समय जो कुछ निकलेगा, वह देववाणी के सदृश है—और देववाणी मे मेरे मनोविकारो का कदापि समावेश न होना चाहिए। मुझे सत्य से जौ भर भी टलना उचित नही।

पचो ने दोनो पक्ष से सवाल-जवाब करने शुरू किए। बहुत देर तक दोनो दल अपने-अपने पक्ष का समर्थन करते रहे। इस विषय मे तो सब सहमत थे कि समझू को बैल का मूल्य देना चाहिए। परन्तु दो महाशय इस कारण रिआयत करना चाहते थे कि बैल मर जाने से समझू को हानि हुई। इसके प्रतिकूल दो सभ्य मूल के अतिरिक्त समझू को दण्ड भी देना चाहते थे, जिससे फिर किसी को पशुओ के साथ ऐसी निर्दयता करने का साहस न हो। अन्त मे जुम्मन ने फैसला सुनाया—

अलगू चौधरी और समझू साहु! पचो ने तुम्हारे मामले पर अच्छी तरह विचार किया। समझू को उचित है कि बैल का पूरा दाम दे। जिस वक्त उन्होने बैल लिया था, उसे कोई बीमारी न थी। अगर उसी समय दाम दे दिए जाते, तो आज समझू उसे फेर लेने का आग्रह न करते। बैल की मृत्यु केवल इस कारण हुई कि उससे बडा कठिन परिश्रम लिया गया और उसके दाने-चारे का कोई अच्छा प्रबध नही किया गया।

रामधन मिश्र बोले—समझू ने बैल को जान-बूझ कर मारा है, अतएव उससे दण्ड लेना चाहिए।

जुम्मन बोले—यह दूसरा सवाल है। हमको इससे कोई मतलब नही।

झगडू साहु ने कहा—समझू के साथ कुछ रिआयत होनी चाहिए।

जुम्मन बोले—यह अलगू चौधरी की इच्छा पर निर्भर है। वह रिआयत करे, तो उनकी भलमनसी।

अलगू चौधरी फूले न समाए, उठ खडे हुए और जोर स वोले—पच परमेश्वर की जय !

इसके साथ चारो ओर से प्रतिध्वनि हुई—पच परमेश्वर की जय !

प्रत्येक मनुष्य जुम्मन की नीति को सराहता था। इसे कहते है न्याय ! यह मनुष्य का काम नही, पच मे परमेश्वर वास करते है, यह उन्ही की महिमा है। पच के सामने खोटे को कौन खरा कह सकता है ?

थोडी देर वाद जुम्मन अलगू के पास आए और उनके गले लिपट कर बोले—भैया, जव से तुमने मेरी पचायत की, तव से मै तुम्हारा प्राणघातक शत्रु वन गया था, पर आज मुझे ज्ञात हुआ कि पच के पद पर वैठ कर न कोई दोस्त होता है, न दुश्मन। न्याय के सिवा उसे और कुछ नही सूझता । आज मुझे विश्वास हो गया कि पच की ज़बान से खुदा बोलता है।—अलगू रोने लगे। इस पानी से दोनो के दिलो का मैल धुल गया। मित्रता की मुरझाई हुई लता फिर हरी हो गई।
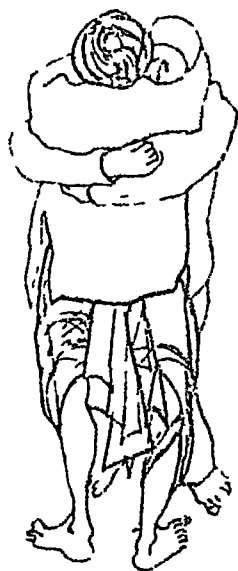
(2) खोया हुआ बालक

वसन्त का त्योहार था। तग गलियो और मोहल्लो-टोलो की ठडी परछाइयो में से लकदक कपडे पहने लोगो के दल-के-दल एक के ऊपर एक उडे चले आ रहे थे। लगता था, जैसे किसी मठ से उजले खरगोशो के दल-के-दल उबल पडे हो। नगर द्वार के बाहर रुपहली धूप के उफनते ज्वार मे हुमकते वे मेले की ओर बढ रहे थे। कुछ पैदल चल रहे थे, कुछ घोडो पर सवार थे, और कुछ पालकियो या बैलगाडियो मे बैठे हिचकोले खा रहे थे। एक नन्हा बच्चा अपने माता-पिता के पैरो के बीच से भागता-निकलता, जिन्दगी और किलकारियो से छलछला रहा था। हँसी-खुशी से भरपूर सुबह का सुहावना समय सबका स्वागत कर रहा था और बिना झिझक उन्हें फूलो और गीतो से झूमते हुए खेतो मे निकल आने का निमन्त्रण दे रहा था।

रास्ते के दोनो ओर लगी हुई दुकानो के मनोहर खिलौनो मे उलझ कर जब वह लडका पिछड जाता, तब उसके माता-पिता पुकार उठते—"आओ बेटा, आओ!"

वह अपने माता-पिता की ओर दौड पडता। उसके पाव उनकी पुकार की आज्ञा का पालन करते, मगर उसकी आखे पीछे छूटे हुए खिलौनो पर तब भी मडराती रहती। और उस जगह पहुचने पर जहा रुक कर वे उसका इन्तजार कर रहे थे, वह अपने दिल की चाह को न दबा पाता, हालाकि उनकी आंखो मे इन्कार की वह पुरानी और सर्द घुडक उसके लिए कोई नई चीज नही थी।

"मै यह खिलौना लूगा!"—उसने मनुहार की।

पिता ने सदा की भाति अपने उसी ढग से आखे तरेरी। लेकिन आज उन्मुक्त उमगो से पिघल कर उसकी मा कुछ नरम थी, उसके हाथ मे अपनी उगली थमाती हुई बोली—"जरा देखो तो बेटा, वह सामने क्या है?"

मन की न हो पाने का क्षोभ एक हल्की-सी सुबकी बन कर अभी उसके फड़कते होठो से अच्छी तरह निकल भी न पाया था कि सामने का दृश्य देख कर उसकी आंख

प्रसन्नता से खिल उठी और 'ओ—मा—आ' की अस्पष्ट-सी ध्वनि को उसके होठो पर उभरने का मौका नही मिला ।

धूल से भरे रास्ते पर वे अब तक चल रहे थे। टेढा-मेढा साप की तरह बल खाता वह उत्तर की ओर चला गया था। उसे छोड वे अव एक खेत की पगडडी पर आ गए ।

खेतो मे सरसो फूली हुई थी। जहा तक नजर जाती थी, ऐसा मालूम होता था, जैसे समतल धरती पर पिघला हुआ सोना लहरा रहा हो—मानो पिघली हुई पीली रोशनी का एक दरिया हो, जिसमे हवा के प्रत्येक झोके के साथ लहरिया उमड रही हो, जो बीच-बीच मे भरी-पूरी और खूब प्रचुर धारा मे विछलती है, परन्तु फिर दूर रुपहली धूप के समुद्र की मरीचिका की ओर सतत दौडी चली जाती है। जहा वह खेत समाप्त होता था, वहा एक ओर मिट्टी के छोटे-छोटे घरो का एक समूह पीले कपडे पहने हुए नर-नारियो की भीड के कारण अलग उभर आया था। भीड मे से खुल कर सीटिया बजाने, टिटकारिया लेने, फुदकने, चहकने, गरजने और भन-भन करने की अजीव पचमेली आवाजो का प्रचण्ड स्वर झुरमुटो मे झूमता नीलकठी आकाश की ओर लपक रहा था। ऐसा मालूम होता था, जैसे शकर का अट्टहास दिग्दिगन्त को गुजा रहा हो।

मै यह खिलौना लूगा

वालक ने अपने माता-पिता की ओर सिर उठा कर देखा। अनन्त उल्लास और अद्भुत कौतुक के इस सागर से उसका रोम-रोम लहरा रहा था। उसके माता-पिता के चेहरे भी इस उल्लास से खिले थे। उसने इसका अनुभव किया और पगडडी छोड वछडे की भाति कुलाचे भरता खेत मे दौड गया। उसके नन्हे पाव और भी दूर के खेतो की सुगध से मदमाती हवा के झकोरो की ताल के साथ थिरक रहे थे।

पतगो का एक झुड अपने चटक वैगनी पखो को फरफराता हवा मे इधर-से-उधर तैर रहा था। कभी-कभी यह झुड फूलो के मधु की खोज मे निकले किसी एकाकी काले भौरे या तितली की उड़ान का रास्ता काट जाता था। वालक टकटकी वाधे हवा मे

उनका पीछा करता और जब उनमे से कोई भौरा या तितली पख समेट कर फूल पर बैठने को होती, तव उसे पकडने को लपकता। मगर जैसे ही वह उसे पकडने को होता, वैसे ही वह पख मार फरफरा कर हवा मे उड जाती। एक ढीठ काला भौरा, जो उसकी पकड मे नही आया था, उसके कान के इर्द-गिर्द गुजार करता हुआ उसे लुभाने का प्रयत्न करने लगा। और ठीक उस समय, जबकि वह भौरा उसके होठ पर बैठने ही जा रहा था, उसकी मा ने चेतावनी के स्वर मे पुकारा—"आओ बेटा, आओ, इधर पगडडी पर आ जाओ।"

खुशी से छलछलाता वह अपने माता-पिता की ओर दौडा और थोडी देर उनके आगे-आगे चलता रहा। लेकिन शीघ्र ही वह फिर पीछे छूट गया। पगडडी के किनारे धूप का आनन्द लेने के लिए अनेक छोटे-छोटे कीट-पतग अपने-अपने छिपने के स्थानो से निकल-निकल कर झाक रहे थे। वह उनके साथ उलझ गया।

उसी जगह बरगद का एक बूढा पेड, बौर से लदे नीम, कटहल, जामुन, चपा और सिहस के पेडो पर अपनी शक्तिशाली भुजाए फैलाए खडा था। सुनहरे तेजपात और गुलाबी गुलमोहर की क्यारियो पर उसकी छाया ऐसे पड रही थी, जैसे दादी नन्ही बच्चियो को अपने आचल की ओट मे किए हो। लेकिन इस ओट मे होते हुए भी लजाती हुई कलिया अपने अगो को आधा खोले सूर्य-देवता को उन्मुक्त भाव से अपनी श्रद्धाजलिया अर्पित कर रही थी। उनके पराग की मीठी सुगध शीतल मद पवन के हल्के नन्हे झकोरो के साथ घुल-मिल रही थी। मद पवन के नन्हे झकोरो से वे अपनी धीमी सासो मे सुगन्ध रचा भी न पाते कि हवा का तेज झोका उसे उडा कर ले जाता।

वह तितली को पकडने दौडता

बालक के झुरमुट मे प्रवेश करते ही ताजा खिले फूलो की एक बौछार-सी उसके ऊपर बरस पड़ी। अपने माता-पिता की

उसने कबूतरों की गुटुर-गूं सुनी ।

सुधि भूल कर वह दोनो हाथो से बरसती हुई पखुड़ियो को बटोरने लगा। तभी कबूतरो की गुटुर-गू उसे सुनाई दी और वह 'कबूतर ! कबूतर !' का शोर मचा अपने माता-पिता की ओर दौड़ा। उसके बेसुध हाथो से पखुडिया बिखर गईं। उसके माता-पिता के चेहरो पर एक अजीब-सा भाव था। तभी किसी कोयल ने प्रेम मे पगी तान छेड कर उसकी आत्मा के पख खोल दिए।

"आओ बेटे, आओ !" उन्होने बच्चे को पुकारा, जो अब भाग कर बरगद के पेड के चारो तरफ उछल-कूद रहा था। उसे पकड कर वे फिर उसी तग और टेढी-मेढी पगडडी पर ले आए, जो सरसो के खेतो पर से मेले की ओर जाती थी।

जब वे गाव के निकट पहुचे, तब बालक ने और भी कई जन-सकुल पगडडिया देखी। ये सब मेले के भवर मे जाकर खो गई थी। और अब मेले-ठेले की जिस दुनिया मे वह पैठ रहा था, उसकी रेल-पेल और हगामा देख उसने आकर्षण और विकर्षण, दोनो का एक साथ अनुभव किया।

फाटक के एक कोने मे एक मिठाई वाला आवाज लगा रहा था—"गुलाब जामुन, रसगुल्ला, बर्फी, जलेबी !" उसकी दुकान के चारो ओर एक भीड जमा थी, जिसमे चादी-सोने के वरक से सजी रग-बिरगी मिठाइयो का ढेर लगा था। बालक आंखे फाड कर टकटकी लगाए देखता रहा और बर्फी के लिए, जो उसकी मन-भावनी मिठाई थी, उसके मुह मे पानी भर आया। "बर्फी, मैं बर्फी लूंगा !"—वह धीरे से बुदबुदाया। लेकिन माग करते समय उसके मन मे यह भी धुधला-सा चेत था कि उसकी माग पर कोई ध्यान नही देगा, और उसके माता-पिता कहेगे कि वह चटोरा है। इसलिए जवाब का इन्तज़ार किए बिना ही वह आगे बढ़ गया।

सब-के-सब गुब्बारो को अपना लेने की चाह उस पर हावी हो गई।

एक माली ने आवाज़ लगाई—"माला लो, माला, गुलमोहर की माला।" बालक ने महसूस किया कि थके पवन के पखो पर तिरती आती सुगन्धो की मधुरता उसका दिल अपनी ओर खीच रही है। वह उस डलिया की ओर बढा, जिसमे फूलो का ढेर लगा था और अर्धस्फुट स्वर में बुदबुदाया—"मै वह माला लूगा।" लेकिन वह भली-भाति जानता था कि उसके माता-पिता फूलो को खरीदने से इन्कार कर देंगे, और कहेंगे कि उह, इनमें क्या रखा है! इसलिए जवाब का इन्तजार किए बिना वह फिर आगे बढ गया।

एक आदमी एक बास पकडे खडा था। बास मे बधे पीले, लाल, हरे और बैगनी रग के गुब्बारे उड रहे थे। उनके रेशमी रंगों के इन्द्रधनुषी सौन्दर्य ने बालक का मन डोल गया और सब-के-सब गुब्बारो को अपना बना लेने की अदम्य चाह उस पर हावी हो गई। लेकिन वह भली-भाति जानता था कि उसके माता-पिता कभी गुब्बारे खरीद कर न देंगे, और कह देंगे कि इतना बडा हो गया, क्या गुब्बारो मे ही खेलता रहेगा! इसलिए वह फिर आगे बढ गया।

एक मदारी साप के आगे बीन बजा रहा था। साप डलिया में कुंडली मारे इस शान से फन उठाए बैठा था, मानो वह फन न हो, हस की गर्दन हो। इधर नन्हें झरने की पतली धारा की भाति सगीत की अदृश्य लहरिया उसके कानो में चुपचाप घर कर रही थी।

एक गहरी चीख उसके गले से उभरी

रहा है। पहले तो चक्कर बडा ही तेज मालूम हुआ। पर फिर वह धीमा होने लगा। शीघ्र ही दातो तले उगली दबाए बालक ने उसे रुकते देखा। इस बार इससे पहले कि हिडोले पर बैठ कर चक्कर लगाने का सम्भावित आनन्द प्राप्त करने की उसकी अदम्य कामना माता-पिता की अन्तहीन अस्वीकृतियो का ध्यान आते ही ठडी हो, साहस बटोर कर उसने प्रार्थना की—"पिताजी, मै हिडोले पर बैठना चाहता हू, मा, मै "

कोई जवाब न मिला। वह माता-पिता की ओर देखने के लिए मुडा। वे वहा न थे। उसने पीछे घूम कर देखा। वहा भी उनका कोई पता न था।

एक खूब गहरी चीख उसके सूखे गले तक उभरी, अपने शरीर को झकझोर कर वह एकाएक उस जगह से दौडा, और भयभीत हो चिल्लाने लगा—"मा, ओ मा, पिताजी " गर्म और तेज आसू उसकी आखो से ढुलकने लगे। घबराहट मे वह कभी इस ओर और कभी उस ओर, सभी दिशाओ मे दौडता। उसे पता नही था कि किधर जाए। "मा, पिताजी " वह चिल्ला रहा था। थूक निगलते-निगलते उसका गला अब कुछ गीला और फटा-फटा-सा हो गया था। उसकी वसन्ती पगडी खुल कर नीचे लटक आई थी और उसके पसीने से तर कपडे जहा-तहा कीचड से लिवड गए थे। उसे अपना हल्का शरीर ऐसा भारी लग रहा था, जैसे वह सीसे का बना हो।

कुछ देर अधी दौड-भाग और इधर-उधर भटक लेने के बाद वह थक कर खडा हो गया। उसकी चीखे सुवकियो मे वदल गई। डवडवाई धुधली आखो से उसने देखा कि थोडी दूर हरी घास पर बैठे नर-नारी बाते कर रहे है। चमकीले पीले वस्त्रो के बीच आखे गडा-गडा कर उसने देखा, मगर उनमे उसके माता-पिता नही थे, जो केवल हँसने और गप लगाने के लिए ही हँस और बाते कर रहे थे। वह फिर तेजी से दौडा, इस वार एक मन्दिर की ओर, जहा लोगो की खूब भीड जमा थी। यहा जमीन का एक-एक चप्पा नर-नारियो से भरा था। फिर भी वह लोगो की टागो के बीच से निकला। नन्ही सुवकियो के साथ उसके मुह से निकल रहा था—"मा, ओ मा, ओ पिताजी " मन्दिर के द्वार के पास भीड बहुत घनी थी—भारी-भरकम और चौडे कधो वाले लोग लाल आखो से चिगारिया छोडते एक-दूसरे को धकिया रहे थे। उनकी टागो के बीच से निकलने के लिए बेचारे वच्चे ने वडा सघर्ष किया, और अगर वह अपने गले का पूरा जोर लगा कर

गले मे पहनने के लिए एक माला ले दू। पसद है न ?" बच्चे ने फूलो की डलिया की ओर से अपनी नाक घुमा ली, और फिर वही सिसकती बुदबुदाहट—"मा के पास जाऊगा, पिताजी के पास जाऊगा ।"

बेचैन बच्चे को मिठाई देकर प्रसन्न करने की तरकीब सोच वह व्यक्ति उसे मिठाई वाले की दुकान पर ले आया। "बताओ तो, कौन-सी मिठाई लोगे, मेरे मुन्ना !"—उसने पूछा। बच्चे ने मिठाई की दुकान की ओर से अपना मुह मोड़ लिया और सिसकिया भरता हुआ वही कहता रहा—"मै मा के पास जाऊगा, पिताजी के पास जाऊगा !"

(1) स्वामी दयानन्द

जीवन मे आए दिन ऐसी छोटी-मोटी घटनाए होती रहती है, जो वडी अर्थसूचक होती है, पर हम उनकी ओर ध्यान नही देते। उदाहरण के लिए, हिन्दू परिवार का हर आदमी अक्सर देखता है कि देवताओ की मूर्तियो पर चढाए गए प्रसाद को चूहे खाते रहते है। इस पर न वडे ध्यान देते है, न वच्चे। पर इसी छोटी-सी वात ने किशोर मूलशकर को स्वामी दयानन्द सरस्वती वना दिया।

महापुरुप और साधारण लोगो मे यही एक वडा अन्तर होता है कि साधारण लोग छोटी-छोटी वातो को यह कह कर टाल देते है कि ऐसा तो होता ही रहता है। पर महापुरुप उन पर सोचते है और उनकी तह मे जाने की कोशिश करते है। वे किसी वात को केवल इसलिए नही मान लेते कि ऐसा परम्परा से होता आया है।

वालक मूलशकर के पिता शिव के भक्त थे। वे हर साल शिवरात्रि के दिन व्रत रखते और अपने घर वालो से रखवाते थे। एक वार शिवरात्रि के दिन शिवजी की मूर्ति पर प्रसाद चढा। तेरह वरस के वालक मूलशकर को वताया गया कि शिवजी प्रसाद का भोग करेंगे। रात का समय था। सव लोग सो गए थे। पर व्रत की थकान के वावजूद मूल-शकर जाग रहा था। उसने देखा कि शिवजी पर चढे प्रसाद को एक चूहा बार-बार

खा रहा है। मूलशकर के मन मे प्रश्न उठा कि क्या शिवजी मे इतनी भी शक्ति नही है कि चूहे से अपने प्रसाद की रक्षा कर सके? यह देख कर उसके मन को ठेस लगी। उसका मन विद्रोह कर उठा, उसकी आत्मा पुकार उठी कि यह पत्थर का शिव, उसकी पूजा और व्रत सव ढकोसला है। और उसने निश्चय किया कि वह घर-वार, माता-पिता, धन-दौलत सव कुछ छोड कर सच्चे शिव का पता लगाएगा। वही वालक मूलशकर आगे चल कर स्वामी दयानन्द सरस्वती कहलाया।

स्वामी दयानन्द

वम्वई के उत्तर मे गुजरात प्रदेश के एक हिस्से को काठियावाड या सौराष्ट्र कहते है। उसी काठियावाड मे मोरवी नाम की एक रियासत थी, उस रियासत के टकारा नाम के नगर मे सन् 1834 मे मूलशकर का जन्म हुआ था।

मूलशकर के पिता का नाम कर्शन जी था। वह साहूकारा करते थे और कहा जाता है कि वहा के मुसलमान व्यापारी उनसे हजारो रुपये कर्ज लेते थे। कर्शन जी के पास रुपया था, जमीन-जायदाद थी और वह रियासत मे जमादार भी थे। जमादार का पद आजकल के तहसीलदार के वरावर होता था। जमादार ही रियासत की फौज का भी इन्तजाम करता था।

चूहा प्रसाद खा रहा था

कर्शन जी शकर के कट्टर भक्त थे। उन्होने डैमी नदी के किनारे कुवेर-नाथ महादेव का एक मन्दिर भी वनवाया था, जो अव तक वहा मौजूद है। 8 वर्ष

की उम्र मे मूलशकर का जनेऊ हुआ। उसके बाद ही कर्शन जी उनको पूजा-पाठ करने और उपवास करने के लिए मजबूर करने लगे। मूलशकर की मा उतने छोटे बच्चे से उपवास कराने के विरुद्ध थी। मा और बाप के बीच कहा-सुनी हुई और बात उस समय टल गई।

मूलशकर की पढाई-लिखाई पाच वर्ष की उम्र से ही शुरु हो गई थी और कुछ ही दिन मे उन्हे सस्कृत के बहुत-से श्लोक याद हो गए थे। 14 वर्ष की उम्र होते-होते उन्होने सस्कृत भाषा और व्याकरण अच्छी तरह सीख लिया था। कहते है कि पूरा यजुर्वेद उन्होने जबानी याद कर लिया था और उन्हे दूसरे वेदो के भी बहुत-से मन्त्र जबानी याद हो गए थे। मूलशकर की बुद्धि तेज थी और उन्हे विद्या से प्रेम था।

उसी समय यह घटना हुई, जिससे मूलशकर का मन दुनिया से उचटने लगा और जिसका जिक्र पहले किया जा चुका है। मूलशकर तब 13 वर्ष के थे। पिता की आज्ञा से उन्होने शिवरात्रि का व्रत रखा। दिन भर वह पिता और दूसरे लोगो के साथ शहर के बाहर एक शिव मन्दिर मे पूजा के लिए गए। शिवरात्रि की पूजा रात मे चार बार की जाती है। यह नियम है कि पूजा करने वाले को रात भर जागना चाहिए। मूलशकर ने पहली बार व्रत रखा था। नियम का पालन करने के लिए वह बराबर जागते रहे। लेकिन उनके पिता और पुजारी लोग आधी रात की पूजा के बाद मन्दिर के बाहर जाकर मीठी नीद का आनन्द लेने लगे। मन्दिर मे अकेले मूलशकर जाग रहे थे। थोडी देर बाद एक चूहा निकला और शिवजी की मूर्ति पर चढाए गए प्रसाद को कुतर-कुतर खाने लगा। मूलशकर पुराणो मे शकर के तेज और वीरता की बहुत-सी कथाए पढ चुके थे। चूहे को बार-बार मूर्ति का अपमान करते और पुजारियो को मीठी नीद सोते देख कर उनके मन मे यह बात घर कर गई कि न तो मन्दिर की मूर्ति मे सच्चे शिवजी थे और न सो जाने वाले लोग शिवजी के सच्चे भक्त थे। उसी समय उन्होने तय किया कि वह सच्चे शिव का पता लगाएगे और कभी किसी मूर्ति की पूजा नही करेगे। पिता को जब उनके विचार मालूम हुए, तब वह बहुत बिगडे। उन्होने मूलशकर को एक सिपाही के साथ घर भेज दिया। उन्होने सख्ती के साथ मूलशकर को ताकीद की कि व्रत न तोडना। परन्तु मूलशकर ने आज्ञा मानने से इन्कार कर दिया और व्रत तोड दिया।

उसी जमाने में एक और घटना हुई, जिसका मूलशकर के जीवन पर गहरा प्रभाव पडा। एक बार मूलशकर एक मित्र के यहा किसी उत्सव में शरीक होने गए थे। वहा अचानक उन्हे खबर मिली कि उनकी बहन की मृत्यु हो गई है। मूलशकर जब घर से चले

थे, तब उनकी बहन बिल्कुल अच्छी थी। बहन की अचानक मृत्यु की खबर सुन कर उनके हृदय पर गहरी चोट लगी। तीन ही वर्ष के बाद उनके परिवार मे एक और मौत हुई। इस बार उनके चाचा चल बसे। मूलशकर के मन मे बार-बार प्रश्न उठने लगा कि मृत्यु क्यो होती है और उसे कैसे जीता जा सकता है? अब उनके लिए सच्चे शिवजी का पता लगाना और भी आवश्यक हो गया था।

एक ओर मूलशकर के मन मे विचारो की ये आधिया उठ रही थी, दूसरी ओर उनके पिता ने बेटे का चौदहवा साल लगते ही उसके विवाह की ठान ली। पिता को अधिक पढाई-लिखाई पसद नही थी। वह लडके को थोडा पढा कर अपनी तरह जमादार बनाना चाहते थे। लेकिन मूलशकर काशी जाकर पढना चाहते थे। बहुत कहने-सुनने पर पिता कुछ दिनो के लिए मूलशकर की मगनी को रोक देने के लिए राजी हो गए। लेकिन मूलशकर को काशी भेजने से उन्होने साफ इन्कार कर दिया। उन्होने उनकी पढाई का दूसरा प्रबध किया। उनकी जमीदारी मे घर से कुछ ही मील दूर एक विद्वान पडित रहते थे। मूलशकर को उनके ही पास पढने भेज दिया गया।

इसके बाद पिता ने फिर पडित जी के पास से बेटे को वापस बुला लिया और विवाह की तैयारी शुरू कर दी। उधर मूलशकर विवाह करके गृहस्थी के झझट मे फसने के लिए बिल्कुल तैयार न थे। वह तो घर से दूर रह कर सच्चे शिव का पता लगाना चाहते थे। उनके विचारो के लिए वह परीक्षा की घडी थी। एक तरफ माता-पिता, घर-बार, धन-दौलत और विवाहित जीवन के आनन्द का मोह था और दूसरी तरफ मौत को जीतने और ससार के कल्याण के लिए सच्चे शिवजी को ढूढने की इच्छा। मूलशकर इस परीक्षा मे सफल हुए। उधर उनके विवाह की तैयारिया हो रही थी, इधर वह सदा के लिए घर-बार छोड कर काटो की राह पर चल पडे। उनकी उम्र उस समय 22 वर्ष की थी।

घर छोड कर पहले वह एक भक्त सज्जन के पास गए, जो थोडी ही दूरी पर रहते थे। पर वह भक्त मूलशकर की ज्ञान की प्यास न बुझा सके। उसके बाद मूलशकर ने वैरागियो जैसे भगवा रग के कपडे पहने और 3 महीने तक यहा-वहा वैरागियो की टोलियो के साथ घूमते रहे। एक दिन वह एक मेले मे पहुचे, जहा उनके गाव के कुछ लोगो ने उनको पहचान लिया और उनके पिता को खबर कर दी। पिता उन्हे पकड कर फिर घर ले आए और उन पर सिपाहियो का पहरा बैठा दिया। तीन दिन पिता की कैद मे रह कर चौथे दिन वह फिर निकल भागे। उसके बाद वह फिर कभी घर न लौटे।

मूलशकर ने दूसरी और अन्तिम बार घर छोडने के बाद 8 वर्ष तक नर्मदा नदी के
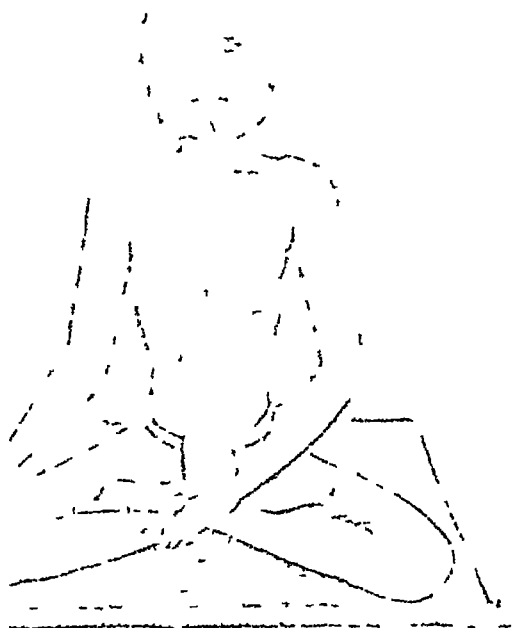
स्वामी विरजानन्द

किनारे योग और प्राणायाम का अभ्यास किया। उन्होने अब ब्रह्मचारी का वाना पहन लिया था और उनका नाम दयानन्द पड चुका था। योग के वल पर, वाद के जीवन मे, उन्होने एक वार चार घोडो की वग्घी को हाथ से रोक कर एक राजा साहव को चकित कर दिया था। एक दूसरे अवसर पर उन्होने केवल एक अगूठे पर जोर देकर पूरे वदन को पसीना-पसीना कर लिया था। लेकिन इस योग से भी उनके मन को शान्ति न मिली। वह उत्तर भारत की ओर चल पडे और वडे-वडे तीर्थो के चक्कर लगाते रहे। तीर्थो मे तरह-तरह के साधुओ का जमघट होता है। सधुओ के अलग-अलग सम्प्रदाय है, उनके अलग-अलग मत है। मूलशकर सभी तरह के साधुओ से मिले, उनसे अपने प्रश्नो के उत्तर पूछते रहे, उनसे वाद-विवाद करते रहे। पर 14 वर्ष बीत जाने पर भी उनको कोई सच्चा गुरु नही मिला।

सच्चे गुरु की खोज मे दयानन्द मथुरा पहुचे। मथुरा मे एक विद्वान् सन्यासी रहते थे, जिनका नाम स्वामी विरजानन्द था। स्वामी विरजानन्दजी नेत्रहीन थे, पर विद्या और ज्ञान मे बहुत वढे-चढे थे। दयानन्द ने उन्ही को अपना गुरु वनाया। उनकी पाठशाला मे दयानन्द ने तीन वर्ष मे और वहुत कुछ सीखा। विरजानन्दजी ग्रथ पढाने के अलावा उपदेश भी दिया करते थे। उन उपदेशो मे समाज की कुरीतियो, साधुओ के पाखण्ड, छुआछूत की निन्दा, देश की गुलामी आदि की वाते होती थी। उन उपदेशो ने स्वामी दयानन्द को पक्का देशभक्त और निर्भीक समाज-सुधारक वना दिया।

विद्या पढ चुकने पर गुरु को दक्षिणा देने की प्रथा पुरानी है। दयानन्द के पास गुरु को देने के लिए कुछ न था। इसलिए उन्होने कुछ लोग ही गुरु-दक्षिणा मे भेट की। विरजानन्दजी ने उस दक्षिणा को अस्वीकार करते हुए कहा—"मै तो दक्षिणा मे तुम्हारा पूरा जीवन मागता हू। जव तक जीओ, तव तक सच्चे धर्म का प्रचार करो। पाखण्ड मिटाने के लिए काम करो और जरूरत पडने पर उसके लिए प्राण भी दे दो।" शिष्य दयानन्द ने गुरु की वात गाठ वाध ली।

स्वामी दयानन्द अपने गुरु के वडे भक्त थे। कहा जाता है कि कभी-कभी गुरुजी थोडी वात पर भी विगड पडते थे। एक वार उन्होने नाराज होकर दयानन्द को लाठी से

मारा, जिसकी चोट का निशान उनके शरीर पर जीवन भर बना रहा। दयानन्द उस चोट के निशान को दिखा कर सदा अभिमान के साथ कहा करते थे कि "यह गुरुजी का प्रसाद है। इसी की वदौलत कुछ सीख सका हू।" स्वामी विरजानन्द की मृत्यु की खवर पाकर स्वामी दयानन्द वहुत दुखी हुए थे। अपने दुख को उन्होने इन शब्दो मे प्रकट किया था,—"आज व्याकरण का सूर्य अस्त हो गया।"

स्वामी दयानन्द गुरु और ज्ञान की तलाश मे तीर्थो और देश के वहुत-से भागो का चक्कर लगा चुके थे। अव उन्होने सच्चे धर्म के प्रचार के लिए पूरे देश का दौरा शुरू किया। उनकी वाते सुन कर वहुत-से लोग उनके मत को मानने वाले वन गए। लेकिन जहा एक ओर स्वामीजी के मत को मानने वालो की सख्या बढी, वहा दूसरी ओर वहुत-से लोग उनके विरोधी भी हो गए। स्वामीजी के विरोधियो मे आम तौर से मठो के महन्त, मन्दिरो के पुजारी, और नाच-रग मे मस्त रहने वाले राजा लोग थे। उन विरोधियो ने स्वामीजी को मार डालने की भी कोशिश की।

कर्णवास नाम के स्थान पर एक आदमी को स्वामीजी की हत्या करने को भेजा गया। पर जब वह स्वामीजी के सामने पहुचा, तब उसकी हिम्मत जवाब दे गई और वह उनके चरणो मे गिर कर माफी मागने लगा। कई और लोगो ने स्वामीजी के विरुद्ध चाले चली, पर किसी को सफलता न मिली। स्वामीजी अपने विरोधियो को सजा दिलाने के भी खिलाफ थे। वह कहा करते थे कि "मै लोगो को छुडाने आया हू, बधवाने नही।"

बडे-बडे विद्वानो से स्वामीजी की बहसे हुई। ये बहसे धार्मिक विषयो पर होती थी। ऐसी धार्मिक बहसो को शास्त्रार्थ कहते हैं। स्वामीजी के सामने शास्त्रार्थ मे कोई भी न टिक सका। विरोधी लोग स्वामीजी की वातो का जवाब न दे पाते थे। इसलिए

स्वामीजी के सामने शास्त्रार्थ में कोई
न टिक पाता।

हार कर वे कही-कही ओछेपन पर उतर आते थे । एक वार सूरत में स्वामीजी पर पत्थर वरसाए गए, जिस पर स्वामीजी ने कहा—"जनता मुझ पर पत्थर भी फेके, तो मै उसे फूल ही मानता हू ।"

अन्त मे, जो होना था, होकर रहा। 30 सितम्बर, सन् 1883 की वात है। उस दिन केवल एक रसोइया स्वामीजी की सेवा मे था। स्वामीजी जोधपुर मे थे। जोधपुर के राजा की ऐयाशी की वहुत निन्दा कर चुके थे, जिससे राज दरवार की वेश्याए चिढ गई थी। उन वेश्याओ ने स्वामीजी के विरोधियो से साठ-गांठ की और स्वामीजी के रसोइए को लालच देकर पटा लिया। रसोइए ने स्वामीजी को दूध में शीशा पीस कर दे दिया। पता लगने पर स्वामीजी ने उलटे उसे कुछ रुपये दिए और नेपाल भाग जाने की सलाह दी, ताकि वह गिरफ्तार होने से वच सके।

जहर देने वाला रसोइया उनके कदमो पर गिर पड़ा।

जहर ने रातोरात असर किया। स्वामीजी की हालत विगडने लगी। 16 अक्तूवर तक जोधपुर में ही इलाज होता रहा। उसके वाद लोग स्वामीजी को आवू ले गए। वहा भी हालत न सुधरी। वहा से उन्हे अजमेर पहुचाया गया। वहा भी इलाज से कोई लाभ न हुआ। 30 अक्तूवर को हालत वहुत विगड गई। तव स्वामीजी ने इलाज वद कर दिया। उसी दिन शाम को होठो पर मुस्कान लिए, मन्त्र पढते हुए और प्राणायाम करते हुए उन्होने शरीर त्याग दिया। उस दिन वडी दीवाली थी। स्वामीजी के चेहरे पर मरते समय भी तेज था। वह एक वार भी कराहे नही। यह देख कर लोगो को वडा अचम्भा हुआ। एक वडे नास्तिक श्री गुरुदत्त एम० ए० भी वहा मौजूद थे। उनका कहना था कि ईश्वर कोई चीज नही है। वह स्वामीजी की मौत का दृश्य देख कर वहुत प्रभावित हुए और उन्हें ईश्वर पर विश्वास हो गया।

एक देश के लिए एक भाषा की वात भी पहले उन्होने ही सोची थी और हिन्दी को

राष्ट्रभाषा बनाने का उपदेश दिया था। उनका सबसे महत्वपूर्ण ग्रथ 'सत्यार्थप्रकाश' हिन्दी मे ही है। उसका अनुवाद अब देश की लगभग हर भाषा मे हो चुका है। मुसलमानो और ईसाइयो के नेताओ से वह धर्म पर बहसे करते थे। पर वह सम्प्रदायवादी नही थे।

स्वामीजी के समय मे देशप्रेम की भावना आम लोगो मे नही के बराबर थी। स्वामीजी ऐसे महापुरुष थे, जिनकी आखे दूर तक देखती थी। उन्होने इस बात को अच्छी तरह समझ लिया था कि देश मे फैली हुई कुरीतियो का कारण बहुत हद तक हमारी गुलामी है। इसलिए उन्होने जन्म से गुजराती होते हुए भी धर्म-प्रचार और समाज-सुधार के साथ-साथ यह विचार भी अपने सामने रखा कि भारत एक देश है और पूरे देश को आजाद होना चाहिए। यही कारण है कि जब उन्होने आर्य समाज की नीव डाली और देश के हर हिस्से मे उसकी शाखाए खोली, तब अग्रेज शासक चौकन्ने हो गए। आर्य समाज मे शरीक होने वाले लोगो की पुलिस उसी प्रकार निगरानी करने लगी, जैसे बाद मे काग्रेस मे शरीक होने वालों की करती थी।

(2) रामानुजन

प्रथम महायुद्ध से भी पहले का समय था। देश पराधीन तो था ही, जल्दी आजादी मिलने की भी कोई सूरत सामने न थी। जो भारतीय बडी-बडी डिग्रिया प्राप्त कर बडे-बडे पदो पर नियुक्त थे, उनका भी कोई विशेष मान न था। ऐसी स्थिति मे यह बात अनहोनी-सी लगती है कि एक गरीब ब्राह्मण का लडका दुनिया के नामी विद्वानो के बीच अपने ज्ञान और अपने देश की धाक जमा दे। पर रामानुजन गणित के ऐसे ही महान् पडित थे। उनके पास किसी विश्वविद्यालय की कोई डिग्री नही थी। उनके पास किताबे खरीदने तक के लिए पैसे न थे। पर उनकी योग्यता देख कर विलायत के विद्वान् भी हक्के-बक्के रह गए।

मद्रास प्रदेश मे तजौर नाम का एक जिला है । उस जिले मे एक नगर कुभकोणम् है । उस नगर के एक कुलीन और निर्धन परिवार मे सन् 1887 में रामानुजन का जन्म हुआ । रामानुजन के पिता कपडे की एक दुकान मे मुनीम थे ।

पिता ने बेटे को सात वर्ष की आयु मे हाई स्कूल मे पढने भेजा । तीन वर्ष में ही गणित मे उनकी गति देख कर लोग अचम्भा करने लगे । दस वर्ष की आयु मे ही वह गणित के कठिन-से-कठिन प्रश्न चुटकी वजाते मे हल कर देते । तेरह वर्ष की आयु मे तो उनकी योग्यता देख कर उनके अध्यापक चकित रह गए । एफ० ए० के विद्यार्थी को त्रिभुजो के सम्बन्ध मे एक कठिन विषय पढाया जाता है, जिसे त्रिकोणमिति (ट्रिग्नोमेट्री) कहते है । रामानुजन अभी दर्जा आठ मे ही पढ रहे थे कि उन्होने त्रिकोणमिति के कई गुर निकाल लिए । वह समझते थे कि वे गुर उनकी नई खोज थे । उन दिनो त्रिकोणमिति की एक पुस्तक पढाई जाती थी, जिसके लेखक श्री लौनी नाम के एक अग्रेज थे । वह किताव रामानुजन को कई वर्ष वाद देखने को मिली । उन्हे यह देख कर कुछ निराशा हुई कि उनकी खोज दुनिया को पहले से ही मालूम थी । रामानुजन को सोलह वर्ष की आयु तक गणित की कोई अच्छी पुस्तक देखने को भी नही मिली थी ।

गणित के विद्यार्थियो को एफ० ए० के कोर्स मे कई नई चीजे सीखनी पडती है । 'अनन्त श्रेणी' भी इनमे से एक है । 1, 2, 3, 4 को हजारो अको तक कोई भी जोड सकता है । इसी तरह एक, आधा, चौथाई, आदि के सिलसिलो को भी जोडना या गुणा करना किसी हद तक सम्भव है । उस सिलसिले को, जिसके अगले अक का पिछले अक से एक निश्चित सम्बन्ध हो, श्रेणी कहते हैं । अनन्त श्रेणी उस श्रेणी को कहते है, जिसके अको की सख्या की अन्तिम सीमा निश्चित हो । रेडियो, इजीनियरी, विजली, प्रकाश, चन्द्रमा, आदि की गति का हिसाव गणित के द्वारा ही लगाया जाता है । ऐसे हिसाब मे अक्सर अनन्त श्रेणी से काम लेना पडता है । अत अनन्त श्रेणी के हल का कोई तरीका भी होना चाहिए । इसके कुछ तरीके एफ० ए० के विद्यार्थियो को बताए जाते है । लेकिन बहुत-सी अनन्त श्रेणिया ऐसी कठिन है कि उन्हे वडे-वडे गणित जानने वाले भी आसानी से हल नही कर सकते ।

रामानुजन अभी इट्रेस पास भी नही हुए थे कि अनन्त श्रेणी से भिड गए । वह समय बडा विचित्र था । पराधीन भारत मे अच्छी शिक्षा की ओर विदेशी सरकार का ध्यान न था । आज इस विषय पर वहुत अच्छी पुस्तके मौजूद है । कई भारतीय विद्वानो ने अनन्त श्रेणी पर खोजे भी की है । उनकी पुस्तके भारत के हर अच्छे पुस्तकालय मे मिलती है ।

रामानुजन

विदेशी विद्वानो ने भी इस विषय पर बहुत कुछ लिखा है। उनकी पुस्तकें भी भारत में सबको मिल सकती हैं। लेकिन तब यह हालत नही थी। तब तक किसी भारतीय ने इस विषय पर कुछ लिखा ही न था और इस बारे में खोज नही हुई थी कि सस्कृत मे इस विषय की पुस्तकें है या नही। अग्रेजी में विट्टेकर नाम के एक लेखक ने 'आधुनिक विश्लेषण' (मॉडर्न ऐनेलिसिस) नाम की एक अच्छी पुस्तक लिखी थी। पर वह भारत मे कही नही मिलती थी। अनन्त श्रेणी पर ब्रामविक की पुस्तक अच्छी मानी जाती है। यह पुस्तक भी उस समय तक नही लिखी गई थी। ऐसी दशा मे रामानुजन क्या पढते ? अपनी योग्यता कैसे बढाते ? निर्धन थे, इसलिए विदेश से पुस्तकें मगा नही सकते थे। किसी प्रकार उन्हें 'कार' की लिखी 'सिनापसि' नाम की पुस्तक मिल गई। वह बहुत घटिया पुस्तक मानी जाती थी। आज उस पुस्तक को कोई पूछता तक नही। रामानुजन के जीवन के साथ उसका सम्बन्ध होने के कारण उसे बस याद भर कर लिया जाता है। लेकिन उसी पुस्तक ने रामानुजन को रास्ता दिखाया।

रामानुजन की जीवनी दो भारतीयो ने लिखी है। उनक नाम है —शेपु अय्यर और रामचन्द्र राव। उनका कहना है कि रामानुजन ने 'कार' की पुस्तक के कई गुर इट्रेंस पास करने से पहले ही सिद्ध कर दिखाए थे। 'कार' की पुस्तक मे 6,165 गुर है और सभी बहुत कठिन माने जाते है। इस विपय पर रामानुजन ने और कोई पुस्तक नही देखी थी। इसलिए उन्हे अपने हर हल पर नई खोज का गुमान होता था। और यह सच भी था कि रामानुजन सचमुच दुनिया को कई नई खोजे दे गए। अनन्त श्रेणी के वारे में उनकी खोजे सदा अमर रहेगी।

दिसम्बर, सन् 1903 में रामानुजन ने मैट्रिक पास किया। उन दिनो मद्रास प्रात मे अग्रेजी या गणित मे विशेप योग्यता दिखाने पर विद्यार्थियो को 'सुब्रह्मण्यम् छात्रवृत्ति' मिलती थी। रामानुजन ने भी गणित मे विशेप योग्यता दिखाई, इसलिए उन्हें भी यह छात्रवृत्ति मिली और जनवरी मे रामानुजन कुभकोणम् के आर्ट कालेज की एफ० ए० कक्षा में दाखिल हुए। अब उनका मन गणित छोड कर और किसी विपय में नही लगता था। इसलिए वह अन्य विपयो मे कमजोर रह गए और फेल हो गए। उनका वजीफा बद हो गया। लाज के मारे वह कालेज छोड कर घर से भाग निकले और काफी घूम-घाम कर सन् 1905 में फिर कालेज लौटे। परन्तु उनकी हाजिरी कम हो गई थी, इसलिए उन्हे परीक्षा में वैठने नही दिया गया। सन् 1906 में वह मद्रास के पच्छिपावा कालेज में भर्ती हुए। कुछ दिनो वाद वह बीमार पड गए और पढाई छोड कर घर लौट आए। वह दिसम्वर 1907 में एफ० ए० की परीक्षा मे प्राइवेट वैठे, लेकिन फेल हो गए। उनकी स्कूली शिक्षा यही समाप्त हो गई, लेकिन उनका गणित-प्रेम जीवन भर वना रहा। गणित छोड़ कर किसी अन्य विषय मे उनका मन कभी न लगा।

सन् 1909 मे उनका विवाह हो गया। अव उन्हे रोजी की चिन्ता हुई। लेकिन विना डिग्री के नौकरी नही मिलती थी। किसी प्रकार सन् 1912 मे उन्हे मद्रास पोर्ट ट्रस्ट मे क्लर्की मिल गई। श्री रामस्वामी अय्यर और दोनो भारतीय जीवनी-लेखको ने नौकरी पाने में उनकी वडी सहायता की थी।

गणित मे उनकी खोजे सन् 1911 मे छपी। उनको देख कर दुनिया भर के विद्वान दंग रह गए। सर फ्रांसिस स्प्रिग और सर गिलबर्ट वाकर नाम के दो अग्रेजो नें उन्हे विशेप छात्रवृत्ति दिलाई। सन् 1913 मे प्रोफेसर हार्डी से रामानुजन का पत्र-व्यवहार शुरू हुआ। प्रोफेसर हार्डी कैम्ब्रिज में गणित की एक शाखा के प्रोफेसर थे। हार्डी ने एक पुस्तक मे उन सवका वर्णन किया है। उन पत्रो मे रामानुजन ने गणित के

120 गुरो को सिद्ध किया था। इन गुरो मे से कुछ तो पहले ही सिद्ध हो चुके थे, उन्हे रामानुजन ने एक नए ढग से हल किया था। लेकिन कई गुरो के हल बिल्कुल नए थे। रामानुजन के नए हलो मे से कुछ पर बाद मे वाइली, फ्रिस्टन, डिक्सन, वाट्सन जैसे प्रसिद्ध गणितज्ञो ने खोजे की।

प्रोफेसर नेवाइल और प्रोफेसर हार्डी ने सन् 1914 मे रामानुजन को लदन बुला लिया। लदन मे रामानुजन को बहुत कुछ पढने-लिखने का मौका मिला। रामानुजन की कुछ खोजे छप चुकी है। छपी हुई खोजे 400 पृष्ठो से अधिक है। लेकिन उनकी इससे कही अधिक खोजे अनछपी पडी है।

सन् 1917 मे रामानुजन बीमार पड गए। इस बीमारी से वह कभी अच्छे न हुए। इसी बीमारी ने अन्त मे उनकी जान भी ले ली। लेकिन रामानुजन ने बीमारी मे भी परिश्रम करना बद न किया।

सन् 1918 मे वह ट्रिनिटी कालेज कैम्ब्रिज के फेलो बनाए गए। उसी साल इग्लैण्ड की रायल सोसाइटी ने भी उन्हे फैलो बनाया। यह एक बहुत बडा सम्मान था, जो उन दिनो भारतीयो को मुश्किल से ही मिलता था।

रामानुजन की अन्तिम और बहुत ही महत्वपूर्ण खोज को आजकल 'माकथीटा फकशन' कहा जाता है। इस खोज के छपने के दो मास बाद तैतीस वर्ष की आयु मे सन् 1920 मे रामानुजन इस दुनिया से उठ गए। उनकी आखिरी खोज का महत्व दुनिया ने पन्द्रह वर्ष बाद पहचाना। भौतिक विज्ञान, खगोल विज्ञान, परमाणु शक्ति सभी मे उसका महत्व है।

रामानुजन बडे धार्मिक व्यक्ति थे। देवी-देवताओ के वह बडे भक्त थे। पुनर्जन्म और परलोक मे उनका विश्वास था। वह कहा करते थे कि नामक्कल की देवी मुझे सपने मे गुर और उनके हल बता जाती है। बिस्तर से सोकर उठते ही वह हिसाब लगाना शुरू कर देते थे। उच्च कुलीन ब्राह्मणो जैसा खान-पान और रहन-सहन उन्होने लदन मे भी बनाए रखा। बीमारी मे भी उन्होने मदिरा, मास, शोरबा, आदि नही छुआ। वह विलायत मे अपना भोजन खुद पकाते थे। वह बिना नहाए रसोई मे कभी नही जाते थे। विलायत मे भी रामानुजन उस समय की भारतीयता की जीती-जागती तस्वीर बन कर रहे।

उनके जीवन की एक घटना जानने लायक है। रामानुजन तब लदन मे थे। वह पटनी के अस्पताल मे बीमार पड़े थे। प्रोफेसर हार्डी अपनी मोटर मे बैठकर रामानुजन

को देखने आए । मोटर का नम्बर 1729 था । दोनो की बातचीत के दौरान सख्याओ की चर्चा चली । प्रोफेसर और रामानुजन का ध्यान मोटर के नम्बर पर गया । प्रोफेसर साहब का खयाल था कि वह सख्या बडी बेतुकी और बेकार किस्म की सख्या है, इससे कोई खड आदि नही बन सकते है । रामानुजन ने बिना एक क्षण रुके टोक दिया । उन्होने कहा—"जी नही, यह बडी दिलचस्प सख्या है । यह सख्या दो सख्याओ के घनफल का जोड है ।" प्रोफेसर कलम-कागज लेकर बैठ गए और कुछ देर हिसाब लगाने के बाद उन्होने हार मान ली । हिसाब लगाने पर पता चला कि 12 और 1 का घनफल ($12^3+1^3=1729$) जोडा जाए, तो 1729 आएगा । रामानुजन ने फिर कहा कि ऐसी दो सख्याए और है । यह भी सही था, क्योकि $10^3+9^3=1729$ होता है । आम तौर पर इतने बडे हिसाब जबानी लगा लेना बहुत कठिन होता है । प्रोफेसर हार्डी चक्कर मे आ गए । उन्होने अपनी पुस्तक मे लिखा है कि प्रत्येक सख्या रामानुजन की मित्र थी ।

विदेशियो ने लिखा है कि 19वी और 20वी शताब्दी मे रामानुजन की जोड का कोई दूसरा गणितज्ञ नही हुआ । पुराने गणितज्ञो मे यूलर और जैकोबी का बडा मान है । रामानुजन उन्ही के बराबर माने जाते है । गणित के बहुत-से गुर रामानुजन ने ऐसे निकाले है, जिन्हे आज तक कोई सिद्ध नही कर पाया है। इन गुरो का हल करने की जो विधिया उन्होने निकाली, वे उनकी अपनी थी । वे विधिया बहुत पेचीदा है । सरल विधियो की खोज की जा रही है ।

गणित की सेवा करके रामानुजन ने न केवल भारत का मान बढाया, बल्कि दुनिया भर के विज्ञान की सेवा भी की । पढने-लिखने का अवसर असल मे उन्हे लदन मे 5 वर्ष के लिए मिला । अग्रेजी के अतिरिक्त उन्हे और कोई विदेशी भाषा नही आती थी । उन्होने बहुत कम उम्र पाई । उनके पास कोई डिग्री नही थी । फिर भी वह इतना बडा काम कर गए, जितना 19वी और 20वी सदी मे कोई नही कर पाया । रोगर्स नाम के एक गणितज्ञ रामानुजन से पहले हो चुके है । बीजगणित के विद्यार्थियो को रोगर्स के कई गुर पढाए जाते है । लेकिन आज उन गुरो मे रोगर्स के साथ रामानुजन का भी नाम जुडा हुआ है । उन गुरो को 'रोगर्स-रामानुजन-साध्य' कहा जाता है । रामानुजन से पहले उन्हे कोई नही हल कर पाया था । लागरे को आज का बहुत बड़ा गणितज्ञ माना जाता है । वह रामानुजन के बाद है । एक खास अनन्त श्रेणी का

जोड लागरे के नाम से प्रचलित है । पर वह अनन्त श्रेणी रामानुजन के गुरो की वदौलत ही हल हो सकी ।

रामानुजन की मृत्यु पर एक विदेशी विद्वान ने कहा है "रामानुजन के काम के महत्व के वारे मे अलग-अलग मत हो सकते है । उनके काम को जाचने की कसौटिया भी अलग-अलग हो सकती है । अभी तक यह नही मालूम कि भविष्य मे गणित की धारा पर उनके कामो का क्या प्रभाव होगा । यदि वह कुछ दिन और जीवित रहते, तो कही अधिक महान् होते । लेकिन कुछ भी हो, उनकी गम्भीरता, लगन और मौलिकता बेजोड है । यह कहा जा सकता है कि यदि उन्हे नियमित शिक्षा की साधारण सुविधाए मिलती, तो गणित की दुनिया को जो कुछ उन्होने दिया, उससे कही अधिक दे सकते । लेकिन तव वह केवल विलायती छाप के एक प्रोफेसर होते । दुनिया स्वतन्त्र, परिश्रमी और स्वय अपने भरोसे पर काम करने वाले रामानुजन को खो देती ।"

रामानुजन को न पढने की सुविधा प्राप्त थी, न उनके पास पुस्तके खरीदने के लिए पैसे थे, न उन्होने लम्बी उम्र ही पाई, फिर भी वह केवल अपनी जी तोड मेहनत की वदौलत गणित के आकाश पर तारा बन कर चमके । ये सव सुविधाए उनको प्राप्त होती, तो न जाने गणित की विद्या को उन्होने कितना आगे वढाया होता । उनका जीवन हर गरीव भारतीय के लिए मेहनत और अपने काम के लिए लगन का नमूना है । विना धन, विना साधन, विना सहारे, केवल अपनी प्रतिभा के वल पर गरीव-से-गरीब आदमी भी क्या कुछ नही कर सकता, रामानुजन के जीवन से हमे यही सीख मिलती है ।

(1)

सुखी गृहस्थ जीवन

आदमी को शरीर के सुख के साथ-साथ मन का भी सुख चाहिए। मन के सुख के लिए आदमी को दूसरो से प्रेम, आपसी विश्वास, मेल-मिलाप और सगति चाहिए। आदमी खाना-कपडा आदि शारीरिक सुख की चीजे पाने के लिए मेहनत करता है और आम तौर से उस मेहनत का फल वह उन लोगो के साथ मिल कर भोगता है, जिन्हे वह अपना समझता है और जिनसे उसका प्रेम का नाता होता है। इसलिए आदमी घर या परिवार बना कर रहता है। घर या परिवार समाज की बुनियाद है। घर ही वह जगह है, जहा आदमी को शरीर और मन, दोनो का सुख प्राप्त हो सकता है।

घर का महत्व

किन्तु हर घर मे तन और मन, दोनो के सुख के पूरे साधन नही होते। साधन हो, तो भी यह जरूरी नही है कि उनके होने भर से ही आदमी को सुख प्राप्त हो जाए। ऐसे अनेक परिवार है, जहा सामान की कमी नही है। फिर भी समय पर चीज नही मिल पाती। इसलिए सुखी जीवन के लिए यह भी जरूरी है कि घर का प्रबध अच्छा हो। उदाहरण के लिए, सभी घरो मे कपडा सीने की सूई होती है। यदि उस सूई को एक स्थान पर सदा एक ही डिब्बे मे रखा जाए, तो जरूरत पडने पर अधेरे मे भी वह आसानी से मिल सकती है। किन्तु यदि सूई रखने का स्थान निश्चित न हो, तो काम पडने पर वह तुरन्त न मिल पाएगी। फल यह होगा कि जिसको सूई की आवश्यकता होगी, उसे झुझलाहट होगी और गुस्सा आएगा। यदि चीजे कम भी हो, पर ठीक ढग से रखी और बरती जाए, तो उनसे सबको सुख मिल सकता है।

घर का प्रबंध

जिस घर का प्रबध ठीक नही होता, उस घर मे सुख-शान्ति नही होती और जिस घर मे सुख-शान्ति नही होती, वहा बच्चो मे तरह-तरह की मानसिक बुराइया पैदा हो जाती है। सुखी घर मे ही बच्चे की बुद्धि का ठीक विकास होता है। इसलिए सुखी गृहस्थी के लिए जरूरी है कि गृहिणी यानी घर की मालकिन बुद्धिमती, चतुर और घर का प्रबध करने मे कुशल हो। गृहिणी का सबसे पहला कर्तव्य यह है कि वह परिवार के जीवन को सुखी और सम्पन्न बनाए रखे। उसे घर का प्रबध इस तरह करना चाहिए कि घर-परिवार के हर आदमी के लिए सुख और आनन्द का केन्द्र बन जाए। जहा पति-पत्नी के बीच आपसी प्रेम और समझौते की भावना नही होती, जहा सहयोग की जगह झगडे चलते रहते है और हर वक्त तू-तू मै-मै होती रहती है, वहा घर के सब लोग दुखी और परेशान रहते है, वहा बच्चो का जीवन नष्ट हो जाता है।

जहा सहयोग की जगह झगडे बने रहते हैं

घर मे तरह-तरह की चीजो की जरूरत पडती रहती है। उन्हे जुटाने के लिए धन की आवश्यकता होती है। इसलिए धन कमाना गृहस्थ जीवन के लिए आवश्यक है। स्त्री और पुरुष मिल कर परिवार की नीव रखते है। परिवार को ठीक ढग से चलाने की भी जिम्मेदारी उन्ही पर होती है। परिवार की आवश्यकता पूरी करने के लिए धन कमाना मुख्य रूप से पुरुष की जिम्मेदारी होती है। आम तौर से पुरुष के पैदा किए हुए धन से ही जरूरत की चीजे खरीदी जाती है। पर उस धन का सदुपयोग करना स्त्री का काम होता है। केवल धन जुटाने से ही काम नही चलता। धन का ठीक उपयोग भी उतना ही आवश्यक है, जितना धन पैदा करना। यह कहना कठिन है कि एक मामूली सुखी गृहस्थी के लिए कितना धन कमाना जरूरी है। अलग-अलग देशो मे यह हिसाब लगाया गया है कि कितने धन मे साधारण खाना-कपडा और मामूली आराम मिल सकता है। पर उतना धन हर आदमी पैदा कर ले, इसका कोई पक्का रास्ता अभी तक अधिकतर देशो मे नही निकल पाया है। हर देश मे कुछ लोग कम और कुछ लोग अधिक धन पैदा करते है। इसलिए परिवारो का रहन-सहन भी उनकी आमदनी के

अनुसार होता है। जिसकी जैसी आमदनी होगी, वैसा ही उसका रहन-सहन होगा। पर घर के प्रबंध में चीजों के जमा करने, उन्हें कायदे से रखने और बरतने का सबसे अधिक महत्व है।

स्त्री अपने नए घर में

स्त्री जब पत्नी बन कर अपने नए घर में आए, तब उसको उस घर का रंग-ढंग भली-भांति समझ लेना चाहिए। यदि गृहिणी अपने नए घर को न समझ कर मायके के रंग-ढंग पर ही चलती रहे, तो घर का रंग भंग हो जाता है। उसके नए परिवार में पति-पत्नी के अलावा पति के माता-पिता, भाई-भाभी, बहन, सभी शामिल होते हैं। धीरे-धीरे बच्चों की संख्या भी बढ़ती जाती है। इन सबकी आवश्यकताएं और मांगें अलग-अलग होती हैं, जिन्हें गृहिणी को अपने पति की आमदनी के अनुसार पूरा करना पड़ता है। इसलिए गृहिणी में यह गुण होना चाहिए कि वह शान्ति, सहानुभूति, समझदारी और धीरज के साथ घर-वालों की आवश्यकताओं को समझे और उन्हें पति की आमदनी के अनुसार पूरा करने के उपाय सोचे। ऐसा करने में कठिनाइयां आ सकती हैं। पर उन कठिनाइयों को हँसी-खुशी पार करना ही गृहिणी का सबसे बड़ा गुण है। इस गुण के बिना कोई स्त्री अच्छी गृहिणी नहीं बन सकती।

कजूसी और किफायत

कजूसी और किफायत में बहुत अन्तर है। बेकार खर्च को रोकना किफायतशारी है, और जरूरी चीजों पर खर्च न करना कजूसी है। जब परिवार के लोगों की उचित मांगें कजूसी के कारण पूरी नहीं होतीं, तब उन्हें गुस्सा आता है। अच्छी गृहिणी संभाल कर खर्च करती है, पर कजूसी नहीं करती। इसी तरह अच्छी गृहिणी शान बघारने के लिए या दूसरों की होड़ में फिजूलखर्ची भी नहीं करती। बेकार कामों में रुपया उड़ा देने से वक्त पड़ने पर दूसरों के आगे हाथ फैलाना पड़ता है। कजूसी परिवार की सुख-शान्ति नष्ट कर देती है, तो फिजूलखर्ची भीख मंगवाती है, जिससे सब चिन्ता के जाल में फंस जाते हैं। चिन्ता उन्हें क्रोधी और चिड़चिड़ा बना देती है और घर अशान्ति का अखाड़ा बन जाता है। इसलिए चतुर गृहिणी इस तरह समझ-बूझ कर खर्च करती है कि न उस पर कजूसी का कलंक लगे, न फिजूलखर्ची का दोष।

स्वास्थ्य

बीमारी परिवार के सुख का कोढ है । घर का एक भी व्यक्ति बीमार हो जाए, तो खर्च और चिन्ताए दोनो बढ जाती है । यदि कही दुर्भाग्य से वह घर का मालिक हुआ, तो घर की आमदनी भी बद हो जाती है । इसी तरह यदि कही गृहिणी बीमार हो जाए, तो घर का सारा प्रबध चौपट हो जाता है । इसलिए घर की सुख-शान्ति बनाए रखने के लिए घर वालो का तन्दुरुस्त रहना जरूरी है । और तन्दुरुस्ती ठीक रखने के के लिए और बातो के साथ-साथ नीचे लिखी तीन बातो का ध्यान रखना भी आवश्यक है ।

1 खाना सादा हो, मगर साफ-सुथरा हो, तो वह हितकर होता है । महगा होने से ही कोई खाना अच्छा नही हो जाता । खाने की साधारण चीजे यदि साफ-सुथरे ढग से पकी हुई हो, तो वे तन्दुरुस्ती को ठीक रख सकती है ।

2 खाने के बारे मे दूसरी बात यह है कि खाना खाने का समय निश्चित होना चाहिए । माताए अपने बच्चो को जबरन और बार-बार खाना खिलाती रहती है । इससे बच्चो का स्वास्थ्य बिगड जाता है । वे बीमार रहते है, और घर वालो के लिए दुख का कारण बन जाते है । इसलिए कुशल गृहिणी बच्चो ही को नही, बल्कि परिवार के सब लोगो को निश्चित समय पर खाना देती है ।

3 गृहिणी को यह भी देखना चाहिए कि घर के लोग सोने, जागने और रोजाना के रहन-सहन मे स्वास्थ्य के नियमो का पालन करे । थोडा ध्यान देने से बच्चो मे ऐसी आदत डाली जा सकती है, जिससे वे स्वास्थ्य के नियमो के पाबन्द बन जाए ।

नौकरो की समस्या

ज्यादातर घरो मे नौकर नही होते । बिना नौकर के घर चलाना ज्यादा अच्छी बात है । इससे किसी का मोहताज नही रहना पडता और अपने ऊपर विश्वास बढता है । इसके अलावा जिन घरो मे नौकर होते है, वहा वे घर वालो को सुख पहुचाने के साथ-साथ दुख भी पहुचा सकते है । इसलिए गृहिणी को इतना चतुर होना चाहिए कि यदि नौकर हो, तो वह नौकरो से ठीक ढग से काम ले सके । बहुत-से झगडे ठीक समय पर काम करने और काम लेने से खत्म हो सकते है । अपनी आवश्यकता के अनुसार नौकर को सिखा लेना चाहिए । ऐसा करने मे गृहिणी को धीरज और सहानुभूति से काम लेना चाहिए । काम ऐसे ढग से और प्रेम से लेना चाहिए कि वह नौकर

होते हे कि पति-पत्नी एक-दूसरे को नही समझते । दोनो एक-दूसरे को अपने ही ढग पर चलाना चाहते हैं । इसका फल यह होता है कि आपस मे कलह शुरू हो जाती है । जब ऐसा होता है, तब उस परिवार की इज्जत मिट्टी मे मिल जाती है । समाज मे उस परिवार का मान नही रहता और जब समाज मे मान नही, तब धन-दौलत किस काम की ? समाज मे परिवार का मान बनाए रखने की बहुत कुछ जिम्मेदारी घर की मालकिन पर होती है । इसलिए समाज मे अपना और अपने परिवार का उचित स्थान बनाने का काम भी घर की मालकिन ही को करना चाहिए । उसे अपने पडोसियो से अच्छा व्यवहार रखना चाहिए । उसे पडोसियो के हित के लिए सबके भले के काम करने और करवाने चाहिए । पढी-लिखी औरतो को अपनी अपढ और कम पढी-लिखी बहनो को पढाना-सिखाना चाहिए । खास तौर से उन्हे समाज-शास्त्र और बच्चो के मनोविज्ञान के मोटे नियम बताने चाहिए, जिससे वे अपनी सन्तान और गृहस्थी को अच्छी तरह सभाल सके ।

यदि हमारी माताए और बहने इन बातो का ध्यान रखे, तो वे परिवार को सुखी बना सकती है ।

नारी-लोक

(2) ऊन की बुनाई

स्त्रियो के लिए ऊन की बुनाई जानना आवश्यक है, क्योकि एक तो घर के बुने हुए ऊनी कपडे सस्ते और टिकाऊ होते है, और दूसरे बुनाई के द्वारा स्त्रियो के खाली समय का अच्छा उपयोग हो जाता है ।

ऊन की बुनाई में न किसी महंगी मशीन की जरूरत पड़ती है और न दूसरे औजारों की। बस दो पतली-पतली सलाइयां और कुछ ऊन हो, तो बातें करते, कथा सुनते, या रेल में सफर करते हुए भी बुनाई हो सकती है।

(1)

बच्चों के लिए ऊन नरम होनी चाहिए। बुनाई में मोटी ऊन महीन के मुकाबले कुछ अधिक लगती है। किन्तु इसमें लाभ यह होता है कि मोटी ऊन की पोशाक बहुत फैलती है, इसलिए वह जल्दी छोटी नहीं पड़ती।

सलाइयां कई प्रकार की होती हैं। लोहे की रंगीन और लचकदार सलाइयां अच्छी समझी जाती हैं। सलाई पकड़ने का ढंग यह है कि सलाई का माथा बुनने वाले के शरीर की ओर हो और उसकी नोक बाहर की ओर।

ऊन बाजार में गोले या लच्छियों के रूप में मिलती है। लच्छियों को खरीद कर उनके गोले बना लेना चाहिए। गोले बनाते समय ऊन को कभी कस कर नहीं लपेटना चाहिए। इससे ऊन खराब हो जाती है।

गोले बनाने के बाद सलाई पर पोशाक की चौड़ाई के अनुसार कम या ज्यादा फन्दे डाले जाते हैं। फन्दे दो तरह से डाले जाते हैं। एक तरह के फन्दे एक ही सलाई पर हाथ से डाले जाते हैं, और दूसरी तरह के दोनों सलाइयों की मदद से डाले जाते हैं। एक सलाई पर चढाए गए फन्दे अच्छे रहते हैं। लगभग एक इंच ऊन में चार अथवा पांच फन्दे पड़ जाते हैं। किसी भी तरह से फन्दे डालने के लिए सबसे पहले सलाई पर एक सरकने वाली गांठ का फन्दा डालना चाहिए (चित्र सं० 1)। एक सलाई में फन्दे डालते समय गोले को दाहिने हाथ की ओर से छोड़ देना चाहिए। बाएं हाथ की ओर जितने फन्दे डालने हो, उसी हिसाब से काफी ऊन छोड़ कर पहला फन्दा डालना चाहिए।

(2)

उसके बाद एक सलाई से बाएं हाथ की पहली अंगुली पर बाईं ओर को ऊन का एक भाग चढ़ा कर उसे बीच की अंगुली से दबा लिया जाता है। फिर पहली अंगुली से दाहिनी ओर बची ऊन के नीचे से सलाई निकाल कर दाहिने हाथ की, बीच की अंगुली से सलाई पर ऊन को लपेट लिया जाता है (चित्र सं० 2)।

(3)

(4)

तव वाए हाथ की पहली अगुली पर बने हुए ऊन के घेरे को सलाई की लपेट के ऊपर से निकाल कर गिराया जाता है और ऊन का सिरा खीच लिया जाता है। इस प्रकार दूसरा फन्दा बन जाता है (चित्र स० 3 और 4)। इसी तरह जितने फन्दे जरूरी हो, सलाई पर उतने फन्दे चढा लिए जाते है।

दो सलाइयो की मदद से फन्दे डालने के लिए पहले दोनो हाथो मे, एक-एक सलाई लेकर वाए हाथ की सलाई पर सरकने वाली गाठ लगाई जाती है। पर इस ढग से फन्दे

(5)

(6)

लगाने मे बाई ओर ऊन छोडना आवश्यक नही है। गाठ लगा कर दाहिने हाथ की सलाई को वाए हाथ की सलाई के फन्दे मे डाला जाता है (चित्र स० 5)। फिर दाहिने हाथ से दाहिनी सलाई पर ऊन की एक लपेट लेकर (चित्र स० 6)। दाहिने हाथ से ही उस लपेट को फन्दे के नीचे से निकाल कर वाई सलाई पर चढा लिया जाता है (चित्र स० 7)।

(7)

तब दाहिने हाथ की सलाई बाहर निकाल कर दाहिने हाथ की तरफ के गोले की ओर ऊन का धागा खींच लेने से फन्दा पड़ जाता है। इसी प्रकार चाहे जितने फन्दे डाले जा सकते है।

फन्दे डालने के बाद फन्दे वाली सलाई को बाए हाथ मे और खाली सलाई को दाहिने हाथ मे लेकर बुनाई शुरू की जाती है। पहले दाहिने हाथ की सलाई को बाए हाथ की फन्दे वाली सलाई के पहले फन्दे के नीचे से नोक द्वारा डाल कर ऊपर की ओर निकालते है, और तब दाहिने हाथ से ऊन का धागा ऊपर करके दोनो सलाइयो की नोको के बीच में डाल लेते है। इसके बाद दाहिने हाथ की सलाई से बीच मे पड़ी हुई ऊन को धीरे-से आगे की ओर निकाल लेते है (चित्र स० 8)। इस प्रकार खाली सलाई अथवा दाहिने हाथ की सलाई पर एक नया फन्दा पड़ जाता है। तब बाई सलाई के जिस फन्दे मे से धागा लेकर दाहिनी सलाई पर नया फन्दा बनाया गया था, उस फन्दे को बाई ओर सलाई से उतार लेते है। इस प्रकार एक-एक करके बाई सलाई पर से सभी फन्दे दाहिनी सलाई पर नए-नए फन्दे बना कर ले लिए जाते है, और अन्त में बाई सलाई खाली हो जाती है। इसके बाद खाली सलाई को दाहिने हाथ मे और फन्दो वाली सलाई को बाए हाथ में लेकर पहले की तरह खाली सलाई पर नए फन्दे बनाए जाते है, और बुनाई होती जाती है। बुनते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि फन्दे न तो बहुत कसे हो, न बहुत ढीले, और सब फन्दे एक-से ही कसे या ढीले हो।

(8)

ऊपर बताए हुए ढग को सीधे फन्दे की बुनाई कहते है। पर बुनाई का एक और ढग भी है, जिसको उल्टे फन्दो की बुनाई कहते है (चित्र स० 9)। इसमें दाहिने हाथ की सलाई को बाए हाथ की सलाई के पहले फन्दे में ऊपर से नीचे की ओर डाल कर निकालते

(9)

है। फिर ऊन के धागे को दाहिनी सलाई के ऊपर से लेकर दोनो सलाइयो के बीच मे से निकाल कर बाई सलाई के फन्दे वाली ऊन के ऊपर लपेट लेते है। तब इस लपेट को दाहिने हाथ की सलाई द्वारा पुराने फन्दे के बीच से निकाल लेते है। इस प्रकार दाहिने हाथ की सलाई पर एक नया फन्दा बन जाता है। इसके बाद बाई सलाई वाले पुराने फन्दे को सरका कर गिरा देते है।

बुनाई खत्म हो जाने पर जितने फन्दे रह जाते है, उन्हे बद करना पडता है, नही तो धागा खिचते ही बुनाई खुलने लगती है। फन्दे बद करने के लिए पहले एक फन्दा बुन लेते है और उसे बिना गिराए ही दूसरा फन्दा भी बुन लेते है। तब बाई सलाई से पहले बुने हुए फन्दे को दूसरे पर उतार कर नीचे गिर जाने देते है। इस प्रकार दाहिनी सलाई पर एक ही फन्दा रह जाता है। बार-बार ऐसे ही करते रहने पर जब बाई ओर की सलाई खाली हो जाती है और दाहिनी पर एक ही फन्दा रह जाता है, तब ऊन के धागे को दाहिनी सलाई पर बने फन्दे के बीच से निकाल कर खींच लेते है, और बुनाई बद हो जाती है (चित्र स० 10 और 11)।

ब्लाउज आदि के दोनो पल्लो को कन्धो पर से जोडने के बाद दोनो ओर के फन्दो को एक हाथ बुन कर बुनाई बद की जाती है। मोजे मे एडी के पास चौकोर बुनाई मे भी ऐसा ही किया जाता है। ऐसा करने के लिए बुनी जा रही पोशाक को

(10)

(11)

उलट कर अपनी ओर कर लेना चाहिए। फिर दोनो सलाइयो के फन्दे बराबर-बराबर रख कर तीसरी सलाई से एक-एक फन्दा दोनो सलाइयो से लेकर उन्हे साथ-साथ बुनते जाना चाहिए। जब दो सलाइयो के फन्दो को बुन कर एक फन्दा तीसरी सलाई पर आ जाए, तब अगले दो फन्दे बुन लेने चाहिए। इसके बाद पहले फन्दे को बाई सलाई की नोक द्वारा दूसरे फन्दे पर से उतार कर गिरा दिया जाता है। इसी प्रकार करते-करते जब एक फन्दा रह जाता है, तब ऊन के धागे के अन्तिम छोर को उस फन्दे में से निकाल कर सलाई को खींच लिया जाता है और धागे को खींच कर फन्दा कस दिया जाता है (चित्र सं० 12)।

(12)

बुनते-बुनते ऊन का धागा समाप्त हो जाने पर दूसरा धागा ऐसे जोड़ना चाहिए कि एक तो गाठ देखने में भद्दी न लगे, और दूसरे धोने मे वह टूटे नही। इसके लिए जिन दो सिरो को जोडना होता है, उन्हें कई-कई इन्च तक लम्बाई में चीर लेते है और दोनो धागो की चारो फाको को एक-दूसरे में मिला कर हल्का-सा बट लेते है। इस प्रकार बटी हुई और जुडी हुई ऊन से फिर बुनाई शुरू कर लेते है।

ऊन और सलाइयो की किस्म बदल कर तरह-तरह के नमूने बनाए जा सकते है। किन्तु ज्यादातर नमूने बनावट की किस्मो में फर्क के कारण ही दिखाई देते है। बुनाई के कुछ नमूने ये है।

बनियाननुमा बुनाई : इसका उपयोग किसी भी पोशाक के बुनने मे हो जाता है, किन्तु आम तौर से इसका उपयोग बनियान बुनने में ही किया जाता है। बनियाननुमा बुनाई बहुत आसान होती है। पहली सलाई मे दो सीधे और दो उल्टे फन्दे बुनते है और दूसरी सलाई में एक फन्दा बिना बुने ही उतार लेते है। फिर दो सीधे और दो उल्टे बुनते है। फिर तीसरी सलाई मे पहली की तरह और चौथी मे दूसरी सलाई की तरह बुनते है। यही क्रम अन्त तक जारी रहता है, और चीज तैयार हो जाती है।

(13) (14)

(चित्र स० 13) । दो ओर से सीधी बुनाई । इसमे एक सलाई पूरी सीधी बुन लेते है और दूसरी उसी तरह पूरी उल्टी । इसी क्रम से बुनाई जारी रहती है । बुनाई खत्म हो जाने पर रगीन ऊनी धागे और ऊन काढने की सूई से बुनी हुई चीज पर छोटे-छोटे फूल काढे जा सकते है (चित्र स० 14) ।

लहरदार बुनाई : इसमे पहली सलाई के नौ फन्दे सीधे और नौ उल्टे बुन लेते है । शुरू मे उल्टी सलाई मे एक फन्दा घटाते और सीधी सलाई मे बढाते जाते है। अन्त मे जब एक ओर के पूरे नौ फन्दे उल्टे के स्थान पर सीधे या सीधे के स्थान पर उल्टे हो जाते है, तब बुनाई के पहले क्रम को उलट देते है । इस तरह उल्टे और सीधे फन्दो की लहरे पडती जाती है (चित्र स० 15) ।

छेद और गाठदार बुनाई : इसमे पहली सलाई मे दो-दो फन्दे जोड के रूप मे बुन लेते है । फिर दूसरी सलाई मे सब फन्दे आगे ऊन करके सीधे बुनते है । यानी एक-एक फन्दा जो घटा था, इस बार बढ जाता है । तीसरी सलाई मे सीधा बुन डालते है । इस तरह गाठ और छेद बन जाते है । अगर गाठे और छेद दूर-दूर रखने हो, तो इसके बाद एक सलाई पूरी उल्टी बुन कर तब फिर इस बुनाई को दोहरा लीजिए, या फिर तीसरी सलाई मे दोहराइए । यदि दूसरी बार नमूना डालते समय कुछ बदलना चाहे, तो पहला फन्दा सादा उतार कर फिर नमूना डाल दे, और फिर तीसरी बार नमूना डालते समय पहली बार की तरह बिना फन्दा उतारे ही नमूना डाल दे । इस प्रकार खडी गाठे और छेद भी बन सकते है (चित्र स० 16) ।

(15) (16)

फलिया डालना : अक्सर स्वेटर आदि की बुनाई में किनारी के रूप मे फलिया डाली जाती है। आम तौर से यह बुनाई एक सीधा और एक उल्टा बुन कर तैयार होती है। एक सलाई सीधे बुन चुकने पर दूसरी सलाई मे उल्टे बुनते जाते है और वस्त्र की लम्बाई के अनुसार किनारा (वार्डर) वना लेते हैं।

दो उल्टे, दो सीधे अथवा तीन या चार उल्टे-सीधे बुन कर भी फलिया बनाई जा सकती है। यदि आठ सीधे और दो उल्टे बुनते जाए, तो भी फलिया सुन्दर पडेगी। इसमे दूसरी तरफ से सीधे पर सीधा और उल्टे पर उल्टा बुनना चाहिए। यदि फलिया खडी न रख कर टेढी डालनी हो, तो आठ सलाइया एक ओर पूरी सीधी और दूसरी ओर से पूरी उल्टी बुन कर, फिर सीधी तरफ से एक सलाई पूरी उल्टी बुन कर दूसरी ओर से पूरी सीधी बुनी जाएगी।

उभरी फलियो की बुनाई का नमूना दो लाइनो मे पडेगा।

पहली लाइन मे दो फन्दे उल्टे बुने जाते है और अपनी तरफ से ऊन डालते हुए एक फन्दा सीधा बुनते है। इसके वाद एक लपेट देकर एक फन्दा और उल्टा बुनते है और दोवारा ऊन अपनी तरफ से डालते हुए एक फन्दा सीधा बुनते है। इसके वाद लपेट लेकर दुवारा दो फन्दे उल्टे बुनते है। इसी क्रम से बुनते जाते है।

दूसरी लाइन मे सीधे पर सीधे और उल्टे पर उल्टे बुनते है। नमूने के तीन फन्दो को एक साथ उल्टा बुन लेते है। उसी तरफ पट्टी पडती है। नमूना डालने से पहले और पीछे सलाई के इधर और उधर कुछ फन्दे सादे बुन लेते है (चित्र स० 17)।

चौडी उभरी फलियो के लिए एक फन्दा उल्टा बुन लेते है। फिर ऊन आगे करके नीचे से वीच मे सलाई डाल कर एक फन्दा छोड कर दूसरा फन्दा नीचे से सीधा बुनते है। फिर पहला फन्दा सीधा और उसके वाद एक फन्दा उल्टा बुनते है।

दूसरी सलाई मे पीछे से सीधे पर सीधा और उल्टे पर उल्टा बुनते है। बुनाई के दोनो फन्दे उल्टे बुनते है और इधर-उधर के सीधे (चित्र स०18)।

(17) (18)

छेद वाली बुनाई : इसमे पहले तीन फन्दे सीधे बुनते हैं। तब ऊन को अपनी ओर करके एक फन्दा बिना बुने उतार लेते हैं। फिर ऊन ऊपर डालते हुए एक जोडा बुनते हैं। इसके बाद उतारे हुए फन्दे के अन्दर से जोडा बुना हुआ फन्दा उतार लेते हैं। तब अपनी तरफ फन्दा करके दोबारा तीन फन्दे सीधे बुनते हैं और तीन फन्दो मे बुनाई का नमूना डालते हैं। दूसरी सलाई पूरी-की-पूरी उल्टी बुनी जाती है। फिर बुनाई को तीसरी सलाई मे पलट देते हैं। दोबारा यही क्रम फिर शुरू होता है। ऊन को पहले अपनी तरफ करके एक फन्दा बिना बुने उतार लेते हैं और ऊन को ऊपर से डालते हुए एक जोडा बुनते हैं। इसके बाद नए फन्दे को उतारे हुए फन्दे के अन्दर से उतारते हैं। तब अपनी ओर ऊन करके तीन सीधे बुनते हैं और तीन फन्दो पर बुनाई का नमूना डालते हैं। इसी क्रम से बुनते चलते हैं।

चोटी की बुनाई : इसमे पहले कुछ फन्दे सीधे बुन लेते हैं और एक उल्टा, फिर सामने ऊन करके दूसरा फन्दा नीचे से अन्दर करके सीधा बुनते हैं। इसके बाद पहला फन्दा ऊपर से सीधा बुनते हैं। इसी प्रकार सलाई पूरी बुन ली जाती है।

दूसरी सलाई मे उल्टे पर उल्टा और सीधे पर सीधा बुनते हैं। बुनाई के नमूने के फन्दो मे से दूसरे फन्दे पीछे, पहले उल्टे बुनिए। फिर पहला फन्दा भी उल्टा बुनिए। इस प्रकार चोटी पडती जाएगी। नमूने के इधर-उधर जितने चाहे, सीधे फन्दे बुन ले (चित्र स० 19 और 20)। स्वेटर बुनने के लिए जरूरत के अनुसार फन्दे डाल लीजिए। स्वेटर के आकार के अनुसार डेढ इच से चार इच तक का किनारा बुना जाता है। किनारा बुन लेने पर जरूरत के अनुसार दो-दो फन्दे दोनो ओर बढाए जा सकते हैं। अब जैसा भी स्वेटर बनाना हो, नमूना डाल कर बना ले। बच्चो के लिए जालीदार बुनाई नहीं करनी चाहिए। स्वेटर सदा नीचे से ही शुरू करना चाहिए। बगल से नीचे स्वेटर की जितनी लम्बाई रखनी है, उतनी बुन कर दोनो ओर से पहले चार, फिर तीन, फिर अगली सलाई मे दो फन्दे घटा देने चाहिए। मर्दो के स्वेटरो मे तीन, दो और एक के हिसाब से फन्दे घटाए जा सकते हैं। गले की काट भी लगभग बगल की काट के साथ ही शुरू होती है। तिकोना गला बनाने के लिए बगल घटा चुकने पर सारे फन्दो के ठीक बीच से

(19) (20)

एक फन्दा घटा दे। अब तीन सलाई छोड़ कर दो-तीन बार दोनो ओर से एक-एक फन्दा घटाने का क्रम रखे। बाद मे सलाइयो का अन्तर कुछ अधिक करके घर घटाते जाइए। कन्धे जितने रखने हो, उतने ही फन्दे दोनो और बचा कर बगल की काट पूरी कर लीजिए। इसी प्रकार स्वेटर के आगे-पीछे के भाग बुन कर उन्हे कन्धो पर से जोड दीजिए। अब गले तथा बगलो के फन्दे उठा कर कसे हाथ से एक सीधा, एक उल्टा करके लगभग पौन इच की पट्टी बुन कर कस कर बद कर दीजिए। स्वेटर को दोनो ओर से जोड दीजिए। यदि गला चौकोर करना हो, तो जितने फन्दे घटाने हो, वे सब एक ही बार मे घटा दीजिए, किन्तु उस अवस्था मे बगल की काट आधी बुन चुकने पर ही गला घटाया जाता है। अधिकतर महिलाओं को स्वेटर ही बुनना होता है। ब्लाउज बनाने के लिए अगले भाग को दो हिस्सो मे बुना जा सकता है और सामने पट्टी बुन कर चटपट बटन लगा कर उनके ऊपर फँसी बटन लगाए जा सकते हे। आगे से खुला रखने पर पहनने मे सुविधा होती है। पूरी बाह का स्वेटर या ब्लाउज बनाना हो, तो बाहे अलग से बना कर जोडी जा सकती हे। बाहो का आरम्भ कलाई से होना है। वहा किनारा बना चुकने के बाद धीरे-धीरे फन्दे बढाए जाते हे और बगल के भाग तक आकर बगल की काट की तरह ही घटा देते हैं। बिना बाहो के स्वेटर की बगल कुछ ज्यादा रहती है और पूरी बाहो के स्वेटर की कुछ कम होती है। आधी बाहो के ब्लाउज मे कुहनी के ऊपर से बाह बुनी जाती है।

नारी-लोक

(3) कढ़ाई का काम

सूई का काम जानना सबके लिए एक-सा जरूरी है। आजकल मशीनो द्वारा सिलाई की जाती है, फिर भी सूई का एक अपना स्थान है। पैबन्द लगाने मे, कपडो की मरम्मत करने मे, काज, बटन, रफू, कच्ची तथा पक्की तुरपाई, जरी, चिकन, कढ़ाई, इत्यादि मे सूई की ही मदद लेनी पड़ती है। मशीनो का प्रचार होते हुए भी हाथ

की सिलाई और जरी के कामो की कदर कम नही है । ब्लाउज के गले पर, सामने की पट्टी लगाने तथा साड़ी की किनारी आदि मे जहा मशीन द्वारा ठीक तरह से तुरपाई नही की जा सकती, वहा सूई का प्रयोग करना पडता है । सूई मे रगीन डोरे डाल कर अच्छे-से-अच्छे कपडो पर वडी सुन्दर कढाई की जाती है । इसके अलावा चुन्नी, पोत और मोतियो का बढिया काम भी सूई से ही किया जा सकता है ।

कढाई मे इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि कढाई का नमूना कपडे के अनुसार ही हो । छोटे रुमाल पर बहुत वडा फूल और पलग की चादर पर छोटे फूल नही लचेंगे । यह भी देखना आवश्यक है कि जिस रग के कपडे पर कढाई की जा रही है, उस पर कढाई मे इस्तेमाल किए जाने वाले रग फबते है या नही । कढाई मे पक्के रगो के डोरो का उपयोग करना चाहिए । कढाई करते समय सूई में इतना लम्वा धागा नही डालना चाहिए कि धागे मे गाठे पड जाए । यह काम बहुत ही सधे हुए हाथो से होना चाहिए । कढाई न तो बहुत ढीली हो, न बहुत कसी । इससे धुलने मे आसानी होती है, और कढाई खराब भी नही होने पाती । जब तक खूब अभ्यास न हो, फ्रेम पर कपडा चढाए बिना कढाई नही करनी चाहिए । सूई पकडते समय अगूठा नीचे और अगुलिया ऊपर रखना सही तरीका है और सवसे जरूरी है काढने की जगह पर काफी रोशनी का होना, नही तो आखे खराब हो जाने का अदेशा रहता है ।

कढाई के लिए कुछ टाको का इस्तेमाल किया जाता है । बहुत-से नमूने सीधे टाके यानी सूई से थोडी-थोडी जगह छोड कर टाके लगाने से बन जाते है, लेकिन कुछ नमूनो मे लगातार एक तरकीब मे धागे द्वारा किसी फूल की पखुडी अथवा पत्ती को भरना होता है । इसे सैटीन टाका कहते है (चित्र स० 21) ।

(21)

(22) (23) (24)

जजीर की तरह टाके लगा कर भी किनारे आदि वनाए जाते है (चित्र स० 22)। सूई द्वारा एक क्रम से आर-पार टाके लगाने पर एक सुन्दर नमूना वन जाता है (चित्र स० 23)। तिरछे टाके और विल्कुल पास-पास वारीक टाके लगा कर भी कढाई की जाती है (चित्र स० 24)।

टाके लगाने के लिए सूई पर धागे के लगभग आठ-दम फेरे देकर सूई को अन्दाज से तनिक दूर रखे, इतना कि लपेट कपडे के ऊपर रह जाए और जितना चाहिए, उससे न तो ज्यादा जगह घिरे और न कम। फिर होशियारी से सूई को कपडे के नीचे की ओर निकाल लिया जाए। धागे के ऊपरी भाग की आखिरी लपेट पर टाका लगा दिया जाए। इस तरह गुलाव के अन्दर फूल वन सकते है। फिर उनके आसपास भराव-दार टाको से पत्तिया आदि वनाई जा सकती है (चित्र स० 25)।

सूई को एक जगह कपडे पर ऊपर की ओर निकाल लिया जाए। उसके आगे अडा-कार धागे वना कर फिर उसी स्थान पर सूई ऊपर से नीचे डाली जाए। धागे के अडाकार सिरे को, सूई से नीचे निकाल कर तथा धागे को वीच मे लेकर ऊपर से नीचे ले जाकर टाक दिया जाए। इस तरह भी कढाई के सुन्दर नमूने वनाए जा सकते है (चित्र स० 26)।

(25) (26)

वटन के काज वनाने मे जिस टाके का इस्तेमाल किया जाता है, वह भी कढाई मे काम आता है (चित्र स० 27) ।

(27) (28)

यदि वारीक कपडे पर रगीन धागे से निचली ओर से कढाई की जाए अथवा पेंसिल से खीचे हुए चित्र के भागो को भरा जाए, तो उसकी छाया सीधी और वहुत सुन्दर दिखाई देती है। इस प्रकार का काम इस्तिरी करने मे ठीक रहता है। इसे छाया-कार्य कहते हैं (चित्र स० 28) ।

जिस रग का कपडा हो, उसी रग के धागे से जाली अथवा गुर्री वना कर जो काम किया जाता है, उसे चिकन का काम कहते है। लखनऊ की यह कला दूर-दूर तक प्रसिद्ध है (चित्र सं० 29) ।

(29)